



1. श्री कैलास-शिखर

कैलास-मानसरोवर

लेखक
स्वामी प्रणवानंद
(श्री कैलास-मानसरोवर-तीरवासी)

संपादक
श्री विभूति मिश्र



संवत 2058, सन् 2001

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
12, सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद - 211003

प्रथम संस्करण : 500 प्रतियाँ, सन् : 1943 ई0
द्वितीय संस्करण : 1100 (पुनर्मुद्रित) प्रतियाँ

मुद्रक : दि इलाहाबाद ब्लाक वर्क्स प्रा0 लि0
255, चक, जीरो रोड, इलाहाबाद

समर्पण

ॐ

भावनगर (काठियावाड़) के यशस्वी महाराजा हिज हाइनेस

महाराजश्री सर कृष्णकुमार सिंह जी,

के० सी० एस० आई०

ने

लेखक के

श्री कैलास-मानसरोवर

संबंधी अन्वेषणों और गवेषणाओं के

प्रति जिस रुचि तथा सहानुभूति का परिचय दिया है,

और विशेषकर मानसरोवर की झीलों में उसकी नौका-विहार-

संबंधी सुविधा की ओर जो ध्यान दिया है, उसके

लिए कृतज्ञता-ज्ञापनार्थ यह पुस्तक उनके

करकमलों में सप्रेम

समर्पित है

प्रकाशक का वक्तव्य

(प्रथम संस्करण)

इस पुस्तक के लेखक स्वामी प्रणवानंद जी ने 10 बार कैलास और मानसरोवर की यात्रा की है और उन्होंने एक वर्ष घोर शीतकाल में भी मानसरोवर के तट पर निवास किया है। आध्यात्मिक-साधना के बीच-बीच में अवकाश पाने पर उन्होंने कैलास-मानसरोवर प्रांत से संबंध रखने वाली कुछ ऐसी बातों की खोज की है, जो वास्तव में महत्वपूर्ण हैं। ब्रह्मपुत्र, सिंधु और करनाली के उद्गम-स्थानों के संबंध में उनका अन्वेषण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। स्वामी जी की खोज की महत्ता स्वीकार कर कलकत्ता विश्वविद्यालय ने अपने यहाँ से उनकी 'एक्सप्लोरेशन इन टिबेट' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की है। लंदन की रॉयल जिओग्राफिकल सोसाइटी ने भी अपने मुखपत्र में पूर्वोक्त नदियों के उद्गम-स्थानों के संबंध में स्वामी जी के लेख को भी स्थान दिया है।

स्वामी जी की कैलास-संबंधी पुस्तक हिंदी में अपने ढंग की नई है। यह न केवल कैलास-मानसरोवर के यात्रियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी, बल्कि उसे पढ़कर साधारण पाठक घर बैठे उक्त पुनीत स्थानों के संबंध में बहुत-सी महत्वपूर्ण और रोचक बातों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

स्वर्गीय श्रीमान बड़ौदा-नरेश सर सयाजीराव गायकवाड़ महोदय ने बंबई सम्मेलन में स्वयं उपस्थित होकर 5000/- रुपए की जो सहायता सम्मेलन को प्रदान की थी, उससे सम्मेलन ने सुलभ साहित्य-माला के अंतर्गत कई उत्तमोत्तम पुस्तकें प्रकाशित की हैं। प्रस्तुत पुस्तक उसी माला में प्रकाशित हो रही है।

रामचंद्र टंडन
साहित्य-मंत्री

प्रकाशक का वक्तव्य

(प्रथम संस्करण)

इस पुस्तक के लेखक स्वामी प्रणवानंद जी ने 10 बार कैलास और मानसरोवर की यात्रा की है और उन्होंने एक वर्ष घोर शीतकाल में भी मानसरोवर के तट पर निवास किया है। आध्यात्मिक-साधना के बीच-बीच में अवकाश पाने पर उन्होंने कैलास-मानसरोवर प्रांत से संबंध रखने वाली कुछ ऐसी बातों की खोज की है, जो वास्तव में महत्वपूर्ण हैं। ब्रह्मपुत्र, सिंधु और करनाली के उद्‌गम-स्थानों के संबंध में उनका अन्वेषण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। स्वामी जी की खोज की महत्ता स्वीकार कर कलकत्ता विश्वविद्यालय ने अपने यहाँ से उनकी 'एक्सप्लोरेशन इन टिबेट' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की है। लंदन की रॉयल जिओग्राफिकल सोसाइटी ने भी अपने मुखपत्र में पूर्वोक्त नदियों के उद्‌गम-स्थानों के संबंध में स्वामी जी के लेख को भी स्थान दिया है।

स्वामी जी की कैलास-संबंधी पुस्तक हिंदी में अपने ढंग की नई है। यह न केवल कैलास-मानसरोवर के यात्रियों के लिए उपयोगी सिद्‌ध होगी, बल्कि उसे पढ़कर साधारण पाठक घर बैठे उक्त पुनीत स्थानों के संबंध में बहुत-सी महत्वपूर्ण और रोचक बातों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

स्वर्गीय श्रीमान बड़ौदा-नरेश सर सयाजीराव गायकवाड़ महोदय ने बंबई सम्मेलन में स्वयं उपस्थित होकर 5000/- रुपए की जो सहायता सम्मेलन को प्रदान की थी, उससे सम्मेलन ने सुलभ साहित्य-माला के अंतर्गत कई उत्तमोत्तम पुस्तकें प्रकाशित की हैं। प्रस्तुत पुस्तक उसी माला में प्रकाशित हो रही है।

रामचंद्र टंडन

साहित्य-मंत्री

प्रकाशकीय

(द्वितीय संस्करण)

स्वामी प्रणवानंद प्रणीत 'कैलाश-मानसरोवर' का द्वितीय संस्करण आपके हाथों में है। इस ग्रंथ का प्रथम संस्करण आज से 58 वर्ष पूर्व संवत् 2000, तद्नुसार सन् 1943 मे प्रकाशित हुआ था। तब से आज तक इस देश का ही नही, वरन् विश्व का इतिहास और भूगोल परिवर्तित हो गया। इसलिए, उस समय स्वामी जी ने भारत, तिब्बत, नेपाल के राजनैतिक और भौगोलिक परिवेश का जो उल्लेख किया था, अब वह नहीं रहा। उस दृष्टि से यह पुस्तक आद्योपांत संशोधन-परिवर्धन और सम्पादन की अपेक्षा रखती है। परंतु यदि वर्तमान को दृष्टि में रखकर परिवर्तन कर दिया जाय, तो ग्रंथ की मौलिकता नष्ट हो जाएगी। अतः बिना किसी नए संशोधन-परिवर्धन के ग्रंथ का द्वितीय संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। वर्तमान के आधार पर जैसे स्कंदपुराण के मानसखंड की महत्ता नष्ट नहीं हो जाती, वैसे ही इस ग्रंथ की भी महत्ता अक्षुण्ण है।

सम्मेलन इस ग्रंथ की महत्ता को देखते हुए, इसका पुनर्प्रकाशन करना चाहता था, परंतु आर्थिक कारणों से वह ऐसा नहीं कर सका। इसके पुनर्प्रकाशन का प्रस्ताव भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के पास भेजा गया और उन्होंने इस ग्रंथ की उपयोगिता और महत्ता का मूल्यांकन कर आर्थिक सहायता देना स्वीकार किया और उसके इस सहयोग से ही सम्मेलन इस ग्रंथ का प्रकाशन कर रहा है। इस सहयोग के लिए सम्मेलन भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के प्रति आभारी है।

सम्मेलन इलाहाबाद ब्लाक वर्क्स के प्रति भी आभारी है, जिसने ग्रंथ को शीघ्र एवं सुंदर मुंद्रित कर अपना तकनीकी सहयोग प्रदान किया।

विभूति मिश्र
प्रधानमंत्री
हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

प्रस्तावना

हिंदी में अब तक कोई ऐसी पुस्तक नहीं थी, जिसमें श्री कैलास तथा पुनीत मानसरोवर का विस्तृत विवरण दिया गया हो। कुछ ऐसी पुस्तकें अवश्य हैं, जिनमें उनके लेखकों ने अपनी यात्रा एवं अनुभवों के वर्णन किए हैं, पर इस प्रकार की पुस्तकों से कैलास-मानसरोवर-संबंधी विस्तृत विवरण की आशा नहीं की जा सकती। मेरे पास तो ऐसे सहस्रों पृष्ठ पड़े हैं, जिनमें अपनी यात्रा की दिनचर्या को लिखता गया हूँ, पर उक्त रूप में देने का मेरा विचार नहीं है। ईश्वर की कृपा से गत पंद्रह वर्षों से मैं पुनीत मानसरोवर के तट पर प्रति वर्ष कुछ मास तपस्या के लिए व्यतीत करता आया हूँ, और बीच-बीच में मैंने अवकाश के समय मानसखंड के कोने-कोने में भ्रमण भी किया है। अतः मुझे विश्वास है कि मैं कैलास-मानसरोवर का पूर्ण विवरण प्रस्तुत कर सकता हूँ। प्रस्तुत पुस्तक को पाठकों के सम्मुख लाने का प्रयास मैंने अपनी इसी विश्वास के बल पर किया है। सारी पुस्तक केवल 25 दिन के भीतर शीघ्रता में लिखी गई है। इसके अतिरिक्त, मेरी कैलास-यात्रा का समय बिलकुल समीप आ जाने से, प्रेस-संबंधी शीघ्रता के कारण पुस्तक की भाषा तथा छपाई में कुछ अशुद्धियाँ रह जाना स्वाभाविक है।

इस छोटे से वक्तव्य में मैं पुस्तक में वर्णित विषय की पुनरुक्ति नहीं करना चाहता—उसे तो पाठक स्वयं ही पुस्तक पढ़कर जान सकेंगे, केवल यह निर्देशित कर देना चाहता हूँ कि मैं किन-किन विषयों को इस पुस्तक में नहीं दे सका। मेरी इच्छा थी कि पुस्तक में एक ऐसी सूची दी जाती, जिसमें श्री कैलास तथा मानसखंड का वर्णन संस्कृत वाङ्मय में जहाँ-जहाँ आया है, उनका उल्लेख किया जाता। एक इस प्रकार की भी सूची देना चाहता था, जिसमें हिंदी, अंग्रेजी तथा भारत की अन्यान्य भाषाओं के कैलास-संबंधी ग्रंथों एवं उनके लेखकों का परिचय दिया जाता। एक और भी सूची संकलित करना चाहता था, जिसमें मेरे निवास एवं यात्राकालीन कुछ प्रमुख घटनाओं (एडवेंचर्स) का उल्लेख रहता। पर इन सब को भी शीघ्रता के कारण नहीं दे सका। उन्हें पुस्तक के दूसरे संस्करण में देने का विचार है। फिर भी जो सज्जन कैलास-मानसरोवर-संबंधी किसी विशेष विषय की जानकारी प्राप्त करना चाहते हों, वे इन दो में से किसी एक पते के मार्फत मुझसे पत्र-व्यवहार कर सकते हैं—(1) मेसर्स लक्ष्मीलाल आनंद ब्रदर्स, जनरल मर्चेंट्स, अल्मोड़ा, (2) एसिस्टेंट लाइब्रेरियन, हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस।

पुस्तक की प्रत्येक तरंग को स्वतंत्र और अपने-आप में पूर्ण बनाने में कुछ ऐसी बातों की पुनरुक्ति हो गई है, जिसके लिए मैं विवश था।

इस अवसर पर मैं अपने गुरुदेव पूज्यपाद श्री 1108 स्वामी ज्ञानानंद जी महाराज

के प्रति अतिशय कृतज्ञता ज्ञापन करता हूँ, जिनकी असीम अनुकंपा से आध्यात्मिक साधना की ओर मुझे प्रेरणा मिली।

बरवारी (भागलपुर) के राजा श्री भूपेंद्रनाथ सिंह जी ने सन् 1936-37 में प्रायः पूरे वर्ष का व्यव-भार स्वीकार कर मुझे कैलास-मानसरोवर की पुनीत तपोभूमि में निवास करने का सदवसर प्रदान किया था, जिसके परिणामस्वरूप मैंने मानसरोवर की चार महानदियों के उद्गम-स्थानों का पता लगाया, तथा इस पुस्तक में दिए हुए अधिकांश विषयों की जानकारी प्राप्त की।

काठियावाड़ के भावनगर राज्य के यशस्वी महाराजा हिज़ हाइनेस महाराजश्री कृष्णकुमार सिंह जी, के0सी0एस0आई0 ने अतिशय उदारता के साथ एक आधुनिक ढंग के 'सेलिंग डिंघी-कम-मोटरबोट' मानसरोवर में संतरण करने के लिए मुझे प्रदान किया है। इससे मानसरोवर के इतिहास में एक नवीन युग का प्रारंभ ही समझना चाहिए।

मद्रास की दलाल एंड को0 के श्री टी0एन0 कृष्णस्वामी जी ने परम सदाशयता के साथ राक्षसताल और कपाली सरों के प्रांतों में अन्वेषण करने का व्यय-भार वहन किया; परिणामतः कैलास-शिखर के समीपवर्ती कपाली सरों से मैं महत्वपूर्ण प्रस्तरावशेष तथा अन्य वस्तुओं का संग्रह कर सका।

उक्त तीनों महानुभावों की इस अयाचित सहायता द्वारा ही मैं अपनी चिरवांछित अभिलाषाओं को पूर्ण कर सका, जिसके लिए मैं उनका परम कृतज्ञ हूँ। इनके अतिरिक्त रायबहादुर लाला रामशरणदास जी, सी0आई0ई0 (लाहौर), श्री रोहनलाल जी, चतुर्वेदी, बी0ए0 (प्रयाग), श्री केशवमोहन जी ठाकुर, जमींदार, बरारी (भागलपुर), श्री दयाशंकर जी दुबे, एम0ए0, एल-एल0 बी0 अर्थशास्त्र के प्रोफेसर, प्रयाग विश्वविद्यालय तथा श्री चैतमणि सिंह जी, जमींदार, सुखपुर (भागलपुर) का भी मैं कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने मानसरोवर के एक-एक चातुर्मास का व्यय-भार वहन किया।

दिवंगत श्री के0 नागेश्वर राव जी, संपादक, 'आंध्रपत्रिका' (मद्रास), श्री पं0 बालकाक जी दर, जमींदार, श्रीनगर (काश्मीर), श्री त्यागमूर्ति गोस्वामी गणेशदत्त जी शास्त्री, मंत्री अखिल भारत सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा (लाहौर), श्री तारानंद सिंह जी, जमींदार, बनैली (पूर्णिया), श्री सूर्यमोहन जी ठाकुर तथा श्री नरेश मोहन जी ठाकुर, जमींदार बरारी (भागलपुर), श्री ठाकुरप्रसाद सिंह जी, जमींदार, सुखपुर (भागलपुर) के प्रति भी मैं कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, जिन्होंने समय-समय पर मेरी कैलास-यात्राओं में पर्याप्त सहायता प्रदान की है।

इनके अतिरिक्त मेरे कई अन्य मित्रों ने समय-समय पर यथाशक्ति सहायता प्रदान की है। अल्मोड़े में मेसर्स लक्ष्मीलाल आनंद ब्रदर्स, तथा कई भोटिया और तिब्बती मित्रों

ने मेरी कैलास-यात्रा में समय-समय पर कई प्रकार की सहायता एवं सुविधाएँ प्रदान की हैं, जिनके लिए मैं उनका आभारी हूँ। मेरे मित्र पंडित योगीन्द्रनाथ जी झा शांतिसदन, सुखपुर (भागलपुर) ने पुस्तक की पांडुलिपि प्रस्तुत करने में अति कष्ट उठाकर पर्याप्त सहायता दी है, जिसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साहित्यिक संपादक श्री पं० इलाचंद्र जी जोशी ने पुस्तक की भाषा को सुधारने एवं प्रूफ-संशोधन आदि कार्यों में जो सहायता की है, उसके लिए मैं उनका भी कृतज्ञ हूँ।

अंततः हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साहित्यमंत्री श्री रामचंद्र जी टंडन एम०ए०, एल-एल०बी० का तो मैं अतिशय अभारी हूँ, जिन्होंने कार्य-बाहुल्य के होते हुए भी पुस्तक के प्रकाशन में पर्याप्त सहायता एवं सुविधाएँ प्रदान करने की कृपा की है, जिसके बिना कागज के वर्तमान अभाव में एवं इतने अल्प समय में पुस्तक का प्रकाशन कठिन था। साथ ही डॉक्टर श्री वासुदेवशरण जी अग्रवाल, क्यूरेटर, प्रांतीय म्यूजियम, लखनऊ का भी मैं कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने समस्त पुस्तक पढ़कर भूमिका लिख देने की कृपा की है।

प्रयाग
वैशाख पूर्णिमा, 2000 वि०
19 मई, 1943 ई०

स्वामी प्रणवानंद
(श्री कैलास-मानस-तीरवासी)

भूमिका

कैलास और मानसरोवर के पुण्य प्रदेश जगतीतल में अपनी रमणीयता के लिए अद्‌वितीय हैं। उनके अनुपम सौंदर्य के साथ घनिष्ठ परिचय प्राप्त करना हमारे ऊपर मानों एक राष्ट्रीय ऋण है। हमारे पूर्वजों ने अपने इस कर्तव्य को ठीक प्रकार समझा था। उन्होंने अपने चरणों के तप से इन स्थानों की यात्रा की, अपनी वाणी की विभूति को इनके माहात्म्य-गान से सफल किया और अपने उदार भावों से सोने और चाँदी के रंग-बिरंगे रूप भरकर इन हिममंडित प्रदेशों को अमर सौंदर्य के दिव्य प्रतीकों की भाँति हमारे साहित्य में चिर-प्रतिष्ठित किया। कैलास-मानसरोवर के साथ हमारा सौहार्द्र भाव आज का नहीं, बहुत पुराना है। किसी देवयुग में जब गंगा-यमुना ने अपने कर्मठ ताने-बाने से मिट्‌टी के सुंदर-सुंदर पट उत्तरापथ की भूमि में फैलाने शुरू किए और जब प्रथम बार अंतर्वेदी के राजहंस अपनी वार्षिक यात्रा के सिलसिले में आकाश में पंख फैलाए हुए मानसरोवर के तट पर जाकर उतरे, तभी से मानों कैलास के साथ हमारा सख्य भाव शुरू हुआ और वह संबंध आज तक उसी प्रकार अविचल है। हमारे शरत्कालीन निर्मल आकाश की गोद को प्रतिवर्ष क्रौंच पक्षियों की कलरव करती हुई पंक्तियाँ आज भी भरती रहती हैं। उस समय वे कैलास और मानसरोवर का कुशल संदेश लेकर लौटती हैं। हमने अपने बचपन से उनको देखा है और बालपन के तरंगित स्वरों से उनका सहर्ष स्वागत भी किया है। व्योम के उन यात्रियों का हमें उपकार मानना चाहिए जो कैलास-मानस की स्मृति को हमारे लिए हरी-भरी बनाए रखते हैं।

इसी प्रकार की कृतज्ञता प्रस्तुत यात्राग्रंथ के लेखक के प्रति हमारे मन में आती है। प्राचीन ग्रंथों के अनुसार यात्रा के दो प्रकार होते हैं, एक शुकमार्ग और दूसरा पिपीलिका मार्ग। शुकादि पक्षी एक स्थान से दूसरे स्थान तक उड़कर पहुँच जाते हैं, पर अपने पीछे वे कोई पदचिह्न नहीं छोड़ते। परंतु चींटी एक-एक पैर उठाती हुई श्रमपूर्वक मार्ग को तय करती है और उसकी पूरी पगडंडी स्पष्ट हमारे सामने दिखाई पड़ती है। यों तो अनेक भारतवासी हर साल हिमालय के दुर्गम पथों को पार करके कैलास-मानसरोवर के दर्शनों को जाते हैं, परंतु स्वामी प्रणवानंद का कैलास-दर्शन एक स्तुत्य घटना है। उसका कारण यह है कि उन्होंने अपनी कैलास-यात्रा की पिपीलिका गति को हमारे सामने स्पष्ट मूर्तिमान करने का एक सुंदर और सराहनीय प्रयत्न किया है। कैलास-मानसरोवर के दर्शन से उनको जो स्फूर्ति प्राप्त हुई और उनके मन तथा नेत्रों को जो स्वर्गीय सुख पहुँचा, उसमें उन्होंने सबको हिस्सा दिया है। वे अपने प्रसाद में सबको सम्मिलित करने के उत्साह से प्रेरित हुए हैं। कैलास–यात्रा पर इतनी पूर्ण और प्रशस्त पथ-प्रदर्शक पुस्तक शायद ही किसी भाषा में अब तक लिखी गई हो। पुस्तक की तीसरी और चौथी तरंगों को पढ़ने के बाद कैलास के

दुरूह मार्ग की अनेक कठिनाइयाँ पिघलती हुई जान पड़ेंगी। पुस्तक पढ़ते-पढ़ते भावी यात्रा के लिए हमारे मन में एक नया उत्साह और संकल्प उत्पन्न होने लगता है।

पुस्तक की दूसरी विशेषता यह है कि उससे कैलास और मानसखंड के जीवन का एक जीता-जागता चित्र हमारे सम्मुख उपस्थित होता है। पहली तरंग में मानसरोवर की जो काव्यमय प्रशस्ति है, उसे पढ़कर बाणभट्ट के अच्छोद सरोवर के वर्णन का ध्यान हो आता है। स्वामी जी ने कैलास-मानसरोवर में 1936-37 में एक वर्ष तक रहकर स्वयं वहाँ के प्राकृतिक परिवर्तनों का, कैलास के कुंद के समान श्वेतवर्ण महाकूटों का तथा विपुलोदका मानस की हिमराशि का सूक्ष्म निरीक्षण किया और वैज्ञानिक पद्धति से उसका वर्णन किया है। दूसरी तरंग में उन्होंने उस देश के मानवों के जीवन का परिचय दिया है। हमारे प्राचीन साहित्य में पहले भी हृष्ट-पुष्ट नर-नारियों से आकुल शैलराज की कुक्षियों का कई बार वर्णन आया है। इस परिचय को नई आँख से देखने का एक प्रयत्न इस पुस्तक में किया गया है।

स्वामी प्रणवानंद ने 1928 में प्रथम बार कैलास-मानस की यात्रा की थी। अब तक आपने पुनीत कैलास की पंद्रह और मानसरोवर की सत्रह परिक्रमाएँ की हैं। इन परिक्रमाओं में हमारा कुतूहल विशेष इस कारण से है कि हर बार स्वामी जी ने कैलास और मानस के भूखंड को एक वैज्ञानिक की आँख से समझने का मार्ग हमारे लिए प्रशस्त किया। कैलास और मानस का जो ऊँचा कूट है, उसके चार तटांतों से चार महानदियों का उद्गम हुआ है—उत्तर में सिंधु, पूर्व में ब्रह्मपुत्र, दक्षिण में कर्णाली और पश्चिम में शतद्रु या सतलज। इन चार महानदों की जीवन-गाथा का उद्घाटन संसार के भूगोलवेत्ताओं का एक अत्यंत प्रिय विषय रहा है। इनके उद्गम-स्रोत का निर्णय करने का प्रयत्न सर्वप्रथम स्वीडन के प्रसिद्ध यात्री स्वेन हेडिन ने किया था और अब तक उन्हीं की खोज मान्य समझी जाती रही है। स्वामी जी ने अपने अन्वेषण से इन नदी-मुखों के असली उद्गमों का निर्णय करके एक अत्यंत प्रशंसनीय कार्य किया है। आपकी खोज को सर्वे ऑफ इंडिया कलकत्ता तथा लंडन की राजकीय भूगोल परिषद् ने भी आदर के योग्य ठहराकर तत्संबंधी प्रकाशन की सुविधाएँ प्रदान कीं। उनका संकेत रूप से उल्लेख इस पुस्तक में (प्रथम सं० पृष्ठ 53-54) भी हुआ है, पर विस्तृत वर्णन कलकत्ता विश्वविद्यालय से प्रकाशित 'एक्सप्लारेशन इन टिबेट' नामक ग्रंथ में हुआ है। उसके साथ जो सर्वे ऑफ इंडिया द्वारा प्रकाशित केदारखंड और मानसखंड का एक सुंदर मानचित्र है, वह किसी भी यात्रा-ग्रंथ के लिए एक गौरव की वस्तु हो सकती है। स्वामी जी ने उसको बनाकर हिमालय के साथ हमारे परिचय को कई कदम आगे बढ़ाया है।

लेखक ने एक स्थान पर लिखा है—'आज से सहस्रों वर्ष पहले हमारे पूर्वजों ने सारे हिमालय का अन्वेषण कर डाला था। वे उसके कोने-कोने पर पहुँच चुके थे।' (प्र० सं० पृ० 56) इस वाक्य में जो बात पहले अतिशयोक्ति जान पड़ती है,

वही संस्कृत साहित्य की छान-बीन करने पर सत्य में बदल जाती है। हिमालय की त्रैकालिक सत्ता हमारी आँख से कभी ओझल न होने पाए, इसीलिए मानों कवि ने कुमारसंभव के दिव्य संगीत का प्रारम्भ इस प्रतिज्ञा के साथ किया है—

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः ।
पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य स्थितः पृथिव्या न मानदण्डः ॥

अर्थात् हमारी उत्तर दिशा में पर्वतराज हिमालय विद्यमान है। वह मिट्टी-पानी और पत्थरों का ऊँचा ढेर नहीं, वरन् देवतात्मा है, अर्थात् देवत्व के अमर भावों से संयुक्त है। वह हिमालय पूर्व और पश्चिम के समुद्रों के बीच के भूभाग को व्याप्त करके पृथिवी के मानदंड की तरह स्थित है।

इसी के साथ कवि ने हिमालय की एक काव्यमयी प्रशस्ति दी है, जिसमें भारतवर्ष का हिमालय के प्रति जो सात्त्विक भाव है, उसको सुंदरतम शब्दों में कहा गया है। अनंत रत्नों के प्रभव स्थान हिमालय पर सुंदरता और शोभा की विविध सामग्री है। कहीं शिखरों पर रंग-बिरंगी धातुओं का प्रवाह है, कहीं सनातनी हिमराशि है, कहीं चोटियों पर ऊपर धूप और नीचे मेघों की छाया है, कहीं तुषार-स्रुति या बर्फानी गल हैं, कहीं भूर्जपत्रों की शोभा है, कहीं देवदारु के वृक्षों की सुगंधि वायु के द्‌वारा पर्वतों में फैलती है, कहीं चमकने वाली औषधियाँ और कहीं दरीगृह या कंदराओं के प्राकृतिक भूमिगृह (भुईहरें) बने हुए हैं, कहीं मार्ग शिलीभूत हिम से अवरुद्‌ध है, कहीं अंधकार से भरी हुई गुफाएँ हैं, कहीं पर सुरभि या चमरी गाएँ अपनी पूँछ का चमर डुलाकर गिरिराज के ऐश्वर्य की वृद्‌धि करती हैं, कहीं पर भागीरथी के निर्झरों से शीतल मंद सुगंध वायु बहती है और कहीं पर्वत की चोटियों के पास खिले हुए कमलों से भरे हुए सरोवर हैं। यह हिमालय बड़ा सारयुक्त है। यह सचमुच धरणीधर है, पृथिवी को दृढ़ता से अपने स्थान में टिकी हुई रखने की इसकी क्षमता को देखते हुए कहना पड़ता है कि ब्रह्मा ने उपयुक्त ही इसको शैलाधिपति की पदवी से विभूषित किया है। (कुमारसंभव 1/1-17)

हिमालय का फैला हुआ गिरिजाल, सहस्रों शैलों को धारण करके बहने वाली महानदियाँ, चित्र-प्रपात, पुण्योदक-सरोवर, निकुंज और कंदरदरी, पुष्पश्री से भरे हुए क्रीड़ावन और लताद्रुमों से शोभित बिहार-भूमि—इन सबका सूक्ष्म वर्णन मत्स्यपुराण (अ० 117), वायुपुराण (अ० 41-42) महाभारत (वनपर्व 108-109) तथा पुराणों के भुवनकोषों में आया है। इस साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन होना चाहिए। यदि हिमालय पर एक पूरा ग्रंथ लिखा जाय, तो इन वर्णनों से बहुत-से पारिभाषिक शब्दों का उद्‌धार किया जा सकता है। परंतु इस साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता उसका सूक्ष्म भूगोल है। इस भौगोलिक ज्ञान का युक्ति-युक्त सचित्र संपादन एक अत्यंत आवश्यक कार्य है। हिमालय की नदियों के नामकरण का श्रेय भारतवासियों को है।

यह बात हमारे लिए कुछ कम गौरव की नहीं है कि हर एक शैल से निकलने वाली क्षुद्र नदियों के, जिन्हें कुमायूँनी भाषा में गधेरे कहते हैं और उन नदी सहस्त्रों से अनुगत महानदियों के, जिन्होंने करोड़ों वर्षों के पराक्रम से अपने वेग को रोकने वाले गंडशैलों को चीरकर अपने प्रवाह के लिए मार्ग बनाया है, सुंदर-सुंदर नामों का चुनाव सर्वप्रथम हमारे पूर्वजों ने संस्कृत भाषा के द्वरा किया। मालूम होता है कि किसी नियमित संघ के अधिवेशनों में उन्होंने इस कार्य को संपादित किया होगा। उदाहरण के लिए, हम गंगा के नामों को ही देखते हैं। बंदरपूँछ से लेकर नंदादेवी तक गंगा का प्रस्रवण क्षेत्र फैला है। उसके पूर्व और पश्चिम दो भाग हैं। पूर्व के क्षेत्र में बदरीनाथ की ओर से अवतीर्ण विष्णुगंगा (जिसे सरस्वती भी कहते हैं) और द्रोणगिरि के पश्चिम से धौलीगंगा की धाराएँ जोशीमठ के पास मिली हैं, उस संगम का नाम विष्णुप्रयाग है। इससे कुछ ही पहले नंदादेवी से आने वाली ऋषिगंगा धौलीगंगा में मिली है। विष्णुप्रयाग के बाद संयुक्तधार अलकनंदा कहलाती है। कुछ दूर आगे चलकर उसमें नंदाकना पर्वत से आई हुई नंदाकिनी मिलती है। उस स्थान का नाम नंदप्रयाग है। फिर कुछ आगे नंदाकोट और त्रिशूल शिखरों के जलों को लाकर पिंडरगंगा कर्णप्रयाग के संगम पर अलकनंदा से मिलती है। इसके आगे केदारनाथ की ओर से आकर मंदाकिनी रुद्रप्रयाग के संगम पर अलकनंदा से मिली है। और उसके आगे भागीरथी और अलकनंदा का संगम देवप्रयाग में होता है। अब अपने पूर्ण विकसित रूप में अलकनंदा गंगा बनकर ह्षीकेश में होती हुई हरिद्वार में उतरी है, जिसे गंगाद्वार कहा गया है। इस द्वार में प्रवेश करने पर गंगा अपनी हिमालय-यात्रा का मनोरम अध्याय समाप्त करती हैं, इसीलिए कवि ने मेघ को मार्ग बताते हुए कहा है—

तस्माद्गच्छेरनुकनखलं शैलराजावतीर्णाम्
जह्नोः कन्यां सगरतनय स्वर्ग सोपान पंक्तिम् । (मेघ0 1/50)

जह्नु की कन्या जाह्नवी गंगा का एक पर्याय होते हुए भी गंगा की एक उपरली धारा का नाम है। महान हिमालय की ऊँची चोटियों के उस पार गंगोत्तरी से भागीरथी का उद्गम है। यह जाह्नवी की धारा गंगोत्तरी से कुछ ही मील नीचे भागीरथी में मिली है। पर वह हिमालय के भी उस पार जस्कर पर्वत-शृंखला से निकली है, जो सतलज और गंगा के बीच में जल–विभाजक है। जाह्नवी का उद्गम टीहरी रियासत का सब से ऊपरी छोर है। इस प्रकार अक्षांश के हिसाब से जाह्नवी सबसे उत्तरी धारा है, जिसका जल गंगा में मिला है। अलकनंदा-मंदाकिनी-भागीरथी-जाह्नवी, यद्यपि ये सब गंगा के ही नाम हैं, पर हिमालय में पृथक्-पृथक् धाराओं के द्योतक हैं। यह नामकरण का अध्याय किस युग में रचा गया और किन कारणों से इसकी प्रेरणा हुई, इन प्रश्नों का अनुसंधान अत्यंत रुचिकर होगा, जो किसी भावी स्थान-नाम-परिषद् के लिए सुरक्षित है। परंतु इतना अवश्य कहना पड़ता है कि गंगा की धाराओं के संगम के लिए विष्णुप्रयाग-कर्णप्रयाग-रुद्रप्रयाग-देवप्रयाग सदृश प्रयागों का नामकरण, जिसका पर्यवसान गंगा–यमुना के संगम प्रयाग में होता है, अवश्य ही एक

अत्यंत रहस्यपूर्ण और रोचक घटना है, जिसमें क्रमिक व्यवस्था की छाप स्पष्ट है। यह तो हम स्पष्ट देख सकते हैं कि इस प्रकार नदियों और पर्वत-शिखरों की खोज, उनका नामकरण और उन नामों का देशव्यापी प्रचार—इन महान कार्यों के संपादन में हमारे पूर्वजों को, जब इस भूमि के साथ उन्होंने अपने संबंध को दृढ़ किया था, भरसक प्रयत्न करना पड़ा होगा। इस नामकरण के विषय का पूरा अनुसंधान होना चाहिए और हिमालय की संपूर्ण नदियों का इस दृष्टि से विवेचन किया जाना चाहिए। हिमालय की नदियों का एक दूसरा गुच्छा कूर्माचल (कुमाऊँ) और पच्छिमी नेपाल में है। जिस प्रकार गंगा हिमालय के केदारखंड को व्याप्त करके बही है, उसी प्रकार सरयू-काली-कर्णाली का यह संस्थान-चक्र हिमालय के मानसखंड में है और नंदाकोट और गुरला-मांधाता के प्रस्रवण क्षेत्र के जलों को लेकर खीरी और गोरखपुर के बीच के मैदानों को सींचता है। मैदान में इसे शारदा, चौका, घाघरा कई नामों से पुकारते हैं। सरयू-काली-गोरीगंगा और धौलीगंगा कूर्माचल की प्रधान नदियाँ हैं। जिस प्रकार विशाला—बदरी के मार्ग की धमनी अलकनंदा नदी है, उसी प्रकार कैलास-मानसरोवर का अल्मोड़े से जाने वाला मुख्य रास्ता काली नदी के किनारे-किनारे गया है। यही नदी नेपाल और अल्मोड़े के बीच की सीमा है। इसके पूर्व में करनाली नदी है, जिसे कौड़ियाला भी कहते हैं। इस कर्णाली का स्रोत राक्षसताल (पुराणों के बिंदुसरोवर) के दक्षिण में है, जिसकी यात्रा स्वामी प्रणवानंद ने उसका उद्‌गम-स्थान जानने के लिए की थी। मध्य नेपाल और पूर्वी नेपाल में दो नदी-गुच्छक और हैं, जिन्हें नेपाली अपनी भाषा में बहुत समय से सप्तगंडकी और सप्तकोसी (सप्तकौशिकी) के नाम से पुकारते रहे हैं। इन नामों के साथ उसी से मिलते-जुलते नाम 'सप्तगंग' और 'सप्तगोदावरं' याद आते हैं। जान पड़ता है कि वैदिक सप्तसिंधु के ढंग पर इन सब नामों का विकास हुआ था। सप्तगंडकी और सप्तकोसी के बीच की पतली पटरी वाग्मती और उसकी शाखा विष्णुमती की घाटी है, जिसमें नेपाल की राजधानी काठमांडू है। कर्णाली, गंडकी, वाग्मती और कोशी या कौशिकी की सम्मिलित चार द्रोणियों का नाम ही नैपाल है, जो हिमालय का एक विशिष्ट खंड है। इसी के साथ इसके सबसे ऊँचे भूधर शृंग, गोसाईं थान, गौरीशंकर और कांचनजंगा सटे हुए हैं। गौरीशंकर के भूगोल का उल्लेख वनपर्व के तीर्थयात्रा पर्व में आया है। उसमें महादेवी गौरी के शिखर को त्रैलोक्य-विश्रुत कहा गया है और उस वर्णन से ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में भारतवासी इस ऊँचे शिखर की चढ़ाई करते थे—

शिखरं वै महादेव्या गौर्यास्त्रैलोक्यविश्रुतम् ।
समारुह्य नरः श्राद्धः स्तनकुंडेषु संविशेत् ॥
(पूना संस्करण, वनपर्व 82/131)

पुराने मानचित्रों के अनुसार यह गौरीशंकर ही एवरेस्ट शिखर था, पर अब उन दोनों का निर्देश पृथक् किया जाता है। इसी प्रसंग में महाभारतकार ने ताम्रारुण संगम

और कौशिकी अरुण संगम का भी उल्लेख किया है (वन0 82/133-135)। ताम्र नदी आधुनिक तामड़ है और अरुण अब भी इसी नाम से विख्यात है। ताम्र कांचनजंगा और अरुण गौरीशंकर से उतरकर सुनकोसी के साथ मिल जाती है। यह अरुण नदी संसार की सब नदियों में विलक्षण है। स्वीज़रलैंड के दो पर्वतारोही हाइम और गंसेर 1936 में कैलास-मानसरोवर गए थे। उन्होंने अपनी पुस्तक 'सेंट्रल हिमालय' में लिखा है कि अरुण नदी ने पहाड़ को चीरकर अपने लिए जो द्रोणी बनाई है, वह संसार की सब नदी-घाटियों से गहराई में अधिक है (डीपेस्ट ट्रेंसवर्स गॉर्ज ऑफ अवर ग्लोब, पे0 16)। अरुण नदी को अपने इस वीर्यशाली पराक्रम के लिए अवश्य ही हमारे समाज में अधिक ख्याति मिलनी चाहिए। एवरेस्ट चोटी के ऊँचे बिंदु से अरुण नदी की भीमकाय दरी की तलहटी अठारह-बीस हजार फुट गहरी है (सेंट्रल हिमालय पृ0 229)। उन वैज्ञानिकों का यह भी कहना है कि इस अरुण नदी की यशोगाथा का ठीक प्रकार गान करने के लिए कोई भी भूगर्भशास्त्री अभी तक वहाँ नहीं गया है। पश्चिम में सिंधु की गिलगित के पास गंभीर दरी और पूर्व में अरुण की गहन द्रोणी, ये हिमालय के दो अपूर्व दृश्य हैं और नदियों ने पर्वतों पर जो विजय पाई है, उसके अमर कीर्ति–स्तम्भ हैं। हिमालय का विशाल प्रदेश इस प्रकार के आश्चर्यों की खान है और इसीलिए उसके रहस्यमय अस्तित्व के प्रति हमें अधिक सचेत होने की आवश्यकता है। यदि हिमालय के प्रति हमारी उदासीनता का पूर्व युग समाप्त होकर उसके विश्वमुखी परिचय की प्रबल जिज्ञासा का हमारे हृदयों में उदय हो जाय, तो यह परिवर्तन हमारे सांस्कृतिक अभ्युदय में भी सहायक होगा। जिस नदी का संबंध जितने ऊँचे गिरिशिखर से होता है, उसकी धारा का वेग भी उतना ही शक्तिशाली होता है। जैसे आध्यात्मिक अर्थों में हमको अपने ज्ञान के हिमालय से जुड़ने की आवश्यकता है, वैसे ही भौतिक अर्थों में भी हिमालय के हिममंडित उच्छ्रित शृंगों का सान्निध्य और परिचय हमारे राष्ट्र-शरीर के रुके हुए संस्कृति स्रोतों में नवीन हरकत और चेतना उत्पन्न कर सकता है। स्वामी प्रणवानंद का यह प्रयत्न इसी दिशा में होने के कारण विशेष अभिनंदनीय है।

कैलास पर्वत भी हिमालय का ही एक विशेष प्रदेश है। प्राचीन हिमालय की व्यापक परिभाषा यही थी—

मध्ये हिमवतः पृष्ठे कैलासो नाम पर्वतः । (मत्स्य पु0 121/2)

उस कैलास-मानसरोवर तक पहुँचने के लिए सुमहान मध्य हिमवान (ग्रेट सेंट्रल हिमालया) को पार करके जाना पड़ता है। अतएव कुमायूँ में फैले हुए हिमालय के शिलाजाल के साथ अच्छा परिचय कैलास-यात्री को प्राप्त करना चाहिए। मध्य हिमवान के दो खंड कहे गए हैं, पश्चिम में गंगा से परिपूत केदारखंड और पूर्व में सरयू से मानसरोवर तक विस्तृत मानसखंड। मानसखंड का वर्णन मानसखंड ग्रंथ में है, जो स्कंदपुराण का एक अंश माना जाता है। पर पंडित बदरीदत्त जी पांडे का अनुमान

है कि यह धार्मिक भूगोल का संग्रह-ग्रंथ कूर्माचल में कूर्माचली पंडितों के द्वारा किसी समय रचा गया (कुमाऊँ का इतिहास, पृ0 177)। इस पुराण की यह काव्यमय कल्पना कितनी मधुर है कि विष्णु हिमालय के रूप में, शिव कैलास के रूप में और ब्रह्मा विंध्याचल के रूप में प्रगट हुए। पृथिवी के विष्णु से यह पूछने पर कि 'आप अपने रूप को छोड़कर पर्वत रूप में क्यों प्रगट होते हैं?' विष्णु ने पर्वतों की महिमा में क्या ही ठीक कहा है—'पर्वत के रूप में जो आनंद है,. वह प्राणीरूप में नहीं है, क्योंकि पर्वतों को गर्मी, जाड़ा, दुःख, क्रोध, भय, हर्ष आदि विकार तंग नहीं करते।' प्राचीन दृष्टि से कैलास और मानसखंड के भूगोल का स्पष्टीकरण करने के लिए मानसखंड ग्रंथ का समुचित संपादन होना चाहिए। तिब्बती कैलास पुराण का, जिसका स्वामी जी ने उल्लेख किया है, प्रकाशन होना भी आवश्यक है। इस प्रकार कैलास-मानसखंड एवं हिमालय के भूगोल का फिर से उद्धार किया जा सकता है।

हिमालय के अध्ययन की एक और दृष्टि भी है, जो हमें पश्चिमी वैज्ञानिकों से प्राप्त होती है। वह है हिमालय की प्रस्तर रचना और भूगर्भशास्त्र की दृष्टि से उसके आयुष्य का निर्धारण। हाइम और गंसेर का 'सेंट्रल हिमालय' नामक ग्रंथ, जिसका ऊपर उल्लेख हो चुका है, इस विषय में अत्यन्त रोचक है। उसमें और भी सहायक ग्रंथों के नाम आए हैं, जिनमें बुरार्ड और हेडन कृत 'हिमालय के भूगोल और भूगर्भ की रूप-रेखा' (ए स्केच ऑफ़ दि जिओग्रॉफी एंड जिओलॉजी ऑफ़ दि हिमालयाज़, दिल्ली 1934) नामक ग्रंथ अत्यंत उपयोगी है। इनसे ज्ञात होता है कि कैलास और हिमालय पर्वत का जन्म मध्य जंतुक युग के अंत में और तार्तीयक युग टर्शियरी के आरंभ में किसी समय हुआ। भूगर्भ-शास्त्रियों के अनुसार भूरचना के मुख्य युग-विभाग निम्नलिखित हैं—

1. प्रत्यग्रजंतुक	केनोज़ोइक	4 करोड़ वर्ष—स्तन्यपायी जंतु
2. मध्यजंतुक	मेसोज़ोइक	14 करोड़ वर्ष—सरीसृप, दानवसरट आदि
3. अपर पुराजंतुक	लेटर पेलीओज़ोइक	26 करोड़ वर्ष—मीन झष आदि
4. पूर्व पुराजंतुक	अर्ली पेलीओज़ोइक	36 करोड़ वर्ष—अमेरु जीव, समुद्रबिछू आदि
5. प्रारंभ जंतुक	प्रोटेरोज़ोइक	60 करोड़ वर्ष—काई, श्यान मास्य आदि
6. अजंतुक	एज़ोइक	80 करोड़ वर्ष—कोई जीव नहीं

अपर पुराजंतुक युग से बाद के काल को वैज्ञानिक आर्ययुग और उससे पूर्व को द्राविड़ युग कहते हैं। मध्यजंतुक काल में बड़े-बड़े दानवसरट (डाइनोसॉर्स) जैसे सरीसृपों का जोर था। जब वह युग बीता, तो प्रत्यग्रजंतुक नामक नया युग आरंभ हुआ। उसका पूर्वकाल विभाग 'टर्शियरी' या तृतीयक और पिछला 'क्वार्टरनेरी' या तुरीयक कहलाता है। इस तृतीयक युग के आरंभ में भारतीय भूगोल में बड़ी चकनाचूर करने वाली घटनाएँ घटीं। बड़े-बड़े भूभाग बिलट गए, पर्वतों की जगह समुद्र और समुद्र की जगह पर्वत प्रगट हो गए। बंगाल की खाड़ी (महोदधि) और अरब समुद्र

(रत्नाकर) की धरती डूब गई और उसका संतुलन पूरा करने के लिए मध्य हिमवान का उत्तुंग भाग समुद्र तल से ऊपर फेंक दिया गया। उस युग में समस्त पृथिवी पर भारी हड़कंप मचा हुआ था। वैदिक शब्दों में धरित्री व्यथमान थी और पर्वत प्रकुपित थे—

यः पृथिवीं व्यथमानामदृहद्
यः पर्वतान् प्रकुपिताँ अरम्णात् । (ऋ० 2/12/2)

पृथिवी पर हजारों मीलों की दूरी में तक्षणात्मक धक्के (टेकटोनिक अर्थ-बिल्डिंग मूवमेंट्स) लग रहे थे, भूधर लड़खड़ा कर अपना संतुलन सँभाल रहे थे। कुछ काल बाद पृथिवी पर स्तंभन का युग आया, धरती अपने स्थान पर दृढ़ हुई। यह भगीरथ घटना तृतीयक काल विभाग के ऊषःकाल में लगभग चार करोड़ वर्ष पूर्व घटी। उसी समय हिमालय और कैलास भूगर्भ से बाहर आए। उससे पूर्व हिमालय में एक अर्णव या पाथोधि था, जिसे वैज्ञानिक 'टेथिस' का नाम देते हैं। जो हिमालय इस अर्णव के नीचे छिपा था, उसे 'टेथिस हिमालया' कहा जाता है, जिसे हम अपनी भाषा में अर्णव हिमालय या पाथोधि-हिमालय कह सकते हैं। अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त में भी लिखा है कि यह भूमि पहले अर्णव जल के नीचे छिपी हुई थी।

यार्णवेऽधि सलिलमग्र आसीद् । (अथर्ववेद 12-1-8)

जब से इस पाथोधि-हिमालय का जन्म हुआ, तभी से भारतवर्ष का वर्तमान स्वरूप, जो कुमारी अंतरीप से आरंभ होकर शिवालक तक फैला है, स्थिर हुआ और जो कूर्म संस्थान (कॉनफिगरेशन) उस समय बना वह प्रायः बिना परिवर्तन के अभी तक चला जाता है। इस प्रकार पाथोधि-हिमालय और कैलास के जन्म की कथा अत्यंत रोचक है।. और चट्टानों के ऊपर–नीचे जमे हुए परतों को खोल-खोलकर इन शैलसम्राटों के इतिहास का अध्ययन विज्ञान का एक आश्चर्यजनक चमत्कार है। हमारे भूगर्भवेत्ता हिंदी भाषा में जब इस विषय पर विवेचन प्रस्तु करेंगे, उस समय इस शिलीभूत पुरातत्व का सम्यक महत्व हमारी समझ में आ सकेगा। हिमालय के साथ हमारे परिचय की गति में जिस प्रकार उत्तरोत्तर वृद्धि होगी, उसी प्रकार के रहस्य भी प्रकाश में आने लगेंगे। हमारी अभिलाषा है कि जिस प्रकार स्वीडन और स्वीज़रलैंड के उत्साही विद्वान शास्त्रीय चक्षुष्मत्ता लेकर हिमालय के शिखरों का आरोहण करते हैं और उसके सूक्ष्मातिसूक्ष्म मानचित्र प्रस्तुत करते हैं, उसी प्रकार की भावना हमारे विद्वानों में भी जाग्रत हो और हम भी सर्वलोक नमस्कृता अलकनंदा या यशोमती अरुण नदियों की जीवन कथा एवं हिमालय के शालग्रामीय प्रस्तरों (एमोनाइट फ़ॉसिल्स) की कहानी को स्वयं समझें और उसका उद्धार करें।

हिमालय की पूर्व-पश्चिमगामिनी त्रिपुंड्र रेखा से परिचत होने का हम जितना भी प्रयत्न करें, हमारे लिए श्रेयस्कर है। हमारे देशवासियों ने प्राचीन काल में हिमालय

की बाहरी शृंखला, भीतरी शृंखला और गर्भशृंखला की तीन समानांतर वाहियों को पास से देखा था और उनके भेद को पहचान लिया था। उन्हें वे उपगिरि (सिवालिक रेंज), बहिर्गिरि (लेसर हिमालयाज़) और अन्तर्गिरि (ग्रेट सेंट्रल हिमालयाज़) कहते थे। ये तीन गिरि हिमालय पर चढ़ने की निसेनी के तीन डंडे हैं या हिमालय रूपी विष्णु के चक्रमण के तीन पैर हैं, जिन्हें हर एक यात्री बदरीनाथ या कैलास की यात्रा में तुरंत पहचान सकता है। उपगिरि दो-ढाई हजार फीट तक ऊँचा है। उसके बाद एक दम बहिर्गिरि का सिलसिला आ जाता है, जो 6 हजार से 10 हजार फुट तक ऊँचा है। हिमालय की सुंदरतम बस्तियाँ और घाटियाँ जैसे काश्मीर, कुल्लू, गढ़वाल, कूर्माचल और नेपाल, इसी बहिर्गिरि में हैं। इसके बाद सबसे ऊँची चोटियों से भरा हुआ सुमहान हिमवंत (ग्रेट हिमालया) है, जिसमें बंदरपूँछ, बदरीनाथ, केदारनाथ, द्रोणगिरि, नंदादेवी, त्रिशूली, पंचशूली, गौरीशंकर आदि ऊँचे शिखर हैं, जिन पर सनातन हिमराशि जमी रहती है और जिनके ढाल पर अनेक हिमनदी और हिमश्रथों के अद्भुत मनोहारी दृश्य विद्यमान हैं।[1] इस पर्वतमाला के उस पार तिब्बत की ओर कैलास श्रेणी है, जिसे हिमालय के उत्तरी ककुद की ही एक बाढ़ कहना चाहिए। कैलास के दक्षिण में मानों उसके दोनों चरणों को धोने के लिए निर्मल पाद्योदक से भरे हुए दो सुंदर सरोवर हैं, जिनमें से एक राक्षसताल या रावणह्रद कहलाता है और दूसरा मानसरोवर है, जहाँ देवों का निवास कहा जाता है। राक्षसताल और मानसरोवर के जमने, दड़कने और उनके द्वीपों का अत्यंत रोचक अध्ययन प्रस्तुत ग्रंथ में दिया गया है, जिसमें खोज की बहुमूल्य सामग्री पहली बार ही दी गई है। इसी प्रकार दोनों सरोवरों को मिलाने वाली गंगा छू धारा के विषय में भी अधिकांश सामग्री पहली बार ही ग्रंथ-लेखक ने प्रस्तुत की है। शीतकाल में मानसरोवर का और गंगा छू का अध्ययन करने का सौभाग्य किसी यूरोपी अन्वेषक को भी अभी तक प्राप्त नहीं हुआ। स्वामी जी का यह कार्य अत्यंत मौलिक है। इस प्रकार यह ग्रंथ हिंदी जगत के लिए एक नवीन संदेश लाता है। आशा है हमारे साहित्यिक, लेखक की तरह ही, हिमालय की देव-भूमियों में स्वयं अपने पैरों से विचरण करेंगे और हिमालय का इस भारत-भूमि पर जो ऋण है, उसके मूल को और विस्तार को भली प्रकार समझने का उद्यम करेंगे।

31-5-43 **वासुदेवशरण अग्रवाल**

लखनऊ

---

1. हिमालय के विभागों का अत्यन्त विशद वर्णन श्री जयचंद्र जी ने अपनी 'भारतभूमि' पुस्तक में किया है, जो अत्यंत पठनीय है। (पृ० 108)

यह संस्करण

कैलास-मानसरोवर नामक ग्रंथ का प्रणयन स्वामी प्रणवानंद ने आज से 58 वर्ष पूर्व सन् 1943 में किया था। तब भारत का ही नहीं, वरन् विश्व के अनेक देशों का इतिहास और भूगोल कुछ और था। तत्कालीन भारत का तीन खंड हो गया है। हमारी सीमाएँ संकुचित हुई हैं और इसी कारण कल का भूगोल आज की तुलना में असत्य भाषित होने लगा है।

जगतीतल के स्वर्ग और जगद्गुरु - जैसे गौरवपूर्ण विशेषणों को धारण करने वाली भारत की विशेषता रही है कि उसके ऋषियों-मनीषियों ने सांसारिकता के प्रति विमोहित होने का उपदेश दिया। श्रेय और प्रेय की प्राप्ति के मार्ग बताए हैं। श्रेय को श्रेष्ठ और प्रेय को द्वितीय कोटि का प्राप्तव्य माना। यमराज ने नचिकेता को ब्रह्मविद्या का उपदेश देने के पूर्व पृष्ठभूमि के रूप में कहा-

अन्यच्छ्रेयोऽन्यदुतैव प्रेयस्ते उभे नानार्थे पुरुषं सिनीतः ।
तयोः श्रेय आददानस्य साधु भवति हीयतेऽर्थाद्य उ प्रेयो वृणीते ॥

हे नचिकेता, एक वस्तु श्रेय है और दूसरी वस्तु प्रेय है (श्रेय मनुष्य के वास्तविक कल्याण-मोक्ष का नाम है और प्रेय स्त्री-पुत्र, धन-मानादि प्रिय लगने वाले पदार्थों का नाम है) इन दोनों का भिन्न-भिन्न प्रयोजन है और ये अपने-अपने प्रयोजन में मनुष्य को बाँधते हैं। इन दोनों में से जो श्रेय को ग्रहण करता है, उसका कल्याण-मोक्ष होता है और जो सांसारिक उन्नति के साधन को स्वीकार करता है, वह यथार्थ लाभ से भ्रष्ट हो जाता है।

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः ।
श्रेयो हि धीरोऽभि प्रेयसो वृणीते प्रेयो मंदो योगक्षेमाद् वृणीते ॥

श्रेय और प्रेय—ये दोनों ही मनुष्य के सामने आते हैं। बुद्धिमान मनुष्य उन दोनों के स्वरूप पर भलीभाँति विचार करके उनको पृथक्-पृथक् समझ लेता है। वह बुद्धिमान मनुष्य परम कल्याण के साधन को भोग-साधन की अपेक्षा श्रेष्ठ समझकर ग्रहण करता है। परंतु मंदबुद्धि मनुष्य लौकिक योगक्षेम की लालसा से भोगों के साधनरूप प्रेय को स्वीकार करता है।

यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि हमारे मंत्रद्रष्टा ऋषियों ने प्रेय को 'श्रेय का साधन रूप' स्वीकार किया है। ईशावास्योपनिषद् में ऋषि ने कहा—

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधःकस्य स्विद्धनम् ।।

अखिल ब्रहमांड में जो कुछ भी जड़-चेतनस्वरूप जगत् है, यह समस्त, ईश्वर से व्याप्त है। उस ईश्वर को साथ रखते हुए (ईश्वर का स्मरण करते हुए), त्यागपूर्वक उपभोग करो, इसमें आसक्त मत होओ, क्योंकि धन-भोग्यपदार्थ किसका है, अर्थात् किसी का भी नहीं।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।
एवं त्वयि नान्यथे तोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ।।

शास्त्र द्वारा निर्धारित कर्मों को करते हुए जगत् में सौ वर्षों तक जीने की इच्छा करनी चाहिए। इस प्रकार (त्यागभाव से परमेश्वर के लिए) किए जाने वाले कर्म तुझ मनुष्य में लिप्त नहीं होंगे।

प्रेय से श्रेय की ओर अग्रसर होना यह हमारी भारतीय परंपरा है। और इसी मार्ग को प्रशस्त करने के लिए ही वर्णाश्रम-व्यवस्था में तृतीय और चतुर्थ आश्रम-वाणप्रस्थ एवं संन्यास की प्रतिष्ठा की गयी। वाणप्रस्थ आश्रम देशाटन–तीर्थाटन का है और संन्यास आश्रम एकांतिक साधना का। उस सत्य के अन्वेषण और प्राप्ति का है, जो मनुष्य-जीवन का चरम लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

इस एकांतिक साधना के लिए जनपद कोलाहल से दूर प्रकृति के सुरम्य क्रोड में अवस्थित कंदराएँ एवं उच्चस्थ शिखर सर्वाधिक उपयुक्त स्थान होते हैं। गुफाओं में बैठकर सूक्ष्म चिंतन होता है, तो उत्तुंग शिखरों पर ऊर्ध्वगामी चिंतन परम तत्त्व की ओर उन्मुख होता है। और इसीलिए हिमाच्छादित शैल-शिखरों वाले कैलास और चित्त के चांचल्य को सुस्थिर कर देने वाले मानसरोवर की यात्रा एवं साधना का आदेश और परम्परा हजारों वर्षों से चली आ रही है।

परंतु हिंदुओं के भूतल-स्वर्ग कहलाने वाले कैलास और मानसरोवर के दर्शन की आकांक्षा मन में रहते हुए भी कुछ ही ऐसे बड़भागी हैं, जिन्हें यह सुअवसर प्राप्त होता है।

आज विज्ञान के इस युग में 15-20 दिन में यह यात्रा पूरी हो जाती है। परंतु ग्रंथकार स्वामी प्रणवानंद ने एक नहीं, अनेक बार इन सुरम्य स्थलों के दर्शन-परसन किए और 'ख़ाक' छानी। इसीलिए कैलास-मानसरोवर का जितना विशद विवेचन इस ग्रंथ में हुआ है, अन्यत्र दुर्लभ है।

यह तथ्य हमने पहिले ही रेखांकित किया कि जिस समय यह ग्रंथ लिखा गया, तब से अब तक देश का इतिहास ही नहीं, भूगोल भी परिवर्तित हुआ है। किसी समय हिंदू पुराणों द्वारा निर्दिष्ट भारत की सीमा में ही ये सब रहे हैं। कालांतर में आध्यात्मिक साम्राज्य के स्थान पर भौतिक साम्राज्य स्थापित करने की स्पर्धा ने नए-नए इतिहास रचे और नई-नई भौगोलिक रेखाएँ खींचीं।

प्रस्तुत ग्रंथ मूलतः स्वामी जी का यात्रा-विवरण है। परंतु यह यात्रा-विवरण भी अनुसंधित्सुओं के लिए संदर्भ-ग्रंथ है।

आज के परिप्रेक्ष्य में यदि ग्रंथ का संपादन किया जाय, तो पूरा ग्रंथ नूतन हो जायगा और ग्रंथकार की मौलिकता नष्ट हो जाती। इसलिए ग्रंथ की मौलिकता और ऐतिहासिकता अक्षुण्ण रखने के उद्देश्य से ग्रंथ के भीतर किसी प्रकार का बदलाव या छेड़छाड़ नहीं किया गया है। नई पीढ़ी के पाठकों के लिए बोधगम्य हो सके, अतः ग्रंथ के अंत में 'आधुनिक पैमाना' शीर्षक के अंतर्गत ग्रंथ के भीतर विभिन्न पृष्ठों पर दिए नाप, माप और परिमाण को आधुनिक प्रणाली में इंगित कर दिया गया है। ग्रंथ में कुछ चिह्न भी दिए गए हैं, जिनका उपयोग अब नहीं होता; और यदि उन्हें आधुनिक प्रणाली में ढालकर पढ़ा जाय, तो प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है। उदाहरणार्थ $\frac{1}{4}$, $\frac{1}{2}$, $\frac{3}{4}$, $3\frac{3}{4}$ को यदि सही बटा में पढ़ा जाय, तो प्रवाह में अवरोध उत्पन्न हो जाता है। अतः इन्हें चौथाई या पाव, आधा, पौने चार और इसी प्रकार डेढ़, पौने दो, पौने तीन करने से प्रवाह बना रहेगा। ।।) को आठ आना, ।।।=) को चौदह आना, 1। सेर को सवा सेर, 1।। सेर को डेढ़ सेर ही पढ़ना उचित रहेगा।

इसी प्रकार जहाँ देश की जनसंख्या का उल्लेख है या किसी वस्तु के मूल्य का उल्लेख है, वह आज के परिप्रेक्ष्य में हास्यास्पद प्रतीत होगा। इसलिए जहाँ मूल्य आदि का उल्लेख है, उसे पच्चीस से सौ गुना अधिक समझाना चाहिए। कहीं-कहीं ग्रंथकार ने अपने अनुसंधान के आधार पर भविष्य में लिखने का उल्लेख किया है। परंतु आगे कोई लेख प्रकाशित नहीं हुआ।

द्वितीय तरंग के अध्याय 7 में दलाई लामा की नियुक्ति के समय अंग्रेज सरकार के प्रतिनिधि के सम्मिलित होने का उल्लेख हुआ है। यह उस समय की बात है, आज ऐसा नहीं है। इसी प्रकार शासन-विधान, अंग्रेजों का व्यापार-प्रतिनिधि तथा अन्य कई ऐसे प्रकरण हैं, जिनका वर्तमान से कोई संबंध नहीं है। तृतीय तरंग के प्रथम अध्याय में प्रवेशाज्ञा-पत्र के संबंध में उल्लेख किया गया है कि इसकी आवश्यकता नहीं है। परंतु वर्तमान में इसके लिए चीन सरकार से बिना आज्ञा-पत्र प्राप्त किए यात्रा संभव नहीं है। व्यय-विवरण के प्रसंग में जो राशि दी गई है, वह राशि आज औचित्यहीन है। इसी

तरंग में 'यात्रा में कितना समय लगता है' शीर्षक में जो समय दिया गया है, वह उस समय का है, जब यातायात का साधन घोड़े, खच्चर या पद यात्रा ही था। अब यह यात्रा बारह से पन्द्रह दिन में पूरी हो जाती है।

तृतीय तरंग के ही अध्याय दो में अल्मोड़ा के प्रसंग में जो सूचनाएँ दी गई हैं, वे अब असामयिक हो चुकी हैं तथा संप्रति उसका कितना आशातीत विकास हो चुका है और जिन लोगों का नामोल्लेख हुआ है, वे सब भी कालकवलित हो चुके हैं।

इस ग्रंथ के मूल स्वरूप में, भारत सरकार की नीति के अनुसार, देवनागरी अंक और पुरानी वर्तनी में परिवर्तन करते हुए नई वर्तनी और अंतर्राष्ट्रीय अंकों का उपयोग किया गया है।

अट्ठावन वर्षों के इतिहास और भूगोल में भले ही परिवर्तन हुआ है, परंतु ग्रंथ आज भी अपनी महत्ता और इयत्ता अक्षुण्ण रखने में सक्षम है।

विजया दशमी
संवत 2058
सन् 2001

विभूति मिश्र
शेषमणि मलैयाँ

श्री कैलास-मानसरोवर

विषय-सूची

प्रस्तावना 9
भूमिका..... 13
यह संस्करण 23

प्रथम तरंग–श्री कैलास-मानसरोवर में बारह मास

अध्याय 1– श्री कैलास तथा पुनीत मानसरोवर

1. हिमालय 37
2. श्री कैलास 40
3. पुनीत मानसरोवर 41
4. तिब्बती पुराण-गाथाएँ 42
5. हिंदू पुराण–गाथाएँ 45
6. परिक्रमा 47
7. कैलास-मानसरोवर की चार महानदियों के उद्गम–स्थानों पर नवीन प्रकाश 53
8. मानस और राक्षसताल, सह-सरोवर 57
9. राक्षसताल के द्वीप 59
10. गंगा छू 61
11. गंगा छू—गंगा-सतलज भ्रम 64
12. मानसरोवर का विस्तृत वर्णन 66
13. कमल और राजहंस 71
14. महात्मा, सिद्ध और योगी 72

अध्याय 2– मानसरोवर का जमना

1. ताप-प्रमाण 79
2. मानसरोवर के जमने के पहले का उपक्रम 79
3. मानसरोवर का जम जाना 80
4. मानसरोवर में दरार, शब्द और उनके कारण 81
5. मानसरोवर और राक्षसताल की तुलना 82
6. जमे हुए सरोवर में विचित्रताएँ 85
7. यात्रियों के एक दल का मनोरंजक वार्तालाप 87

अध्याय 3– मानसरोवर का पिघलना

1. मानसरोवर के पिघलने से पहले का उपक्रम 91
2. मानसरोवर का पुनः द्रवीभूत होना 93
3 उपसंहार 94

द्वितीय तरंग–कैलास-मानसखंड

अध्याय 1– मानसखंड

1. तिब्बत 99
2. कैलास-मानसखंड की स्थिति 100
3. पर्वत 101
4. नदियाँ 101
5. झीलें 101
6. जलवायु 101
7. वनस्पति 102

अध्याय 2– खनिज

1. सोना 106
2. सोहागा 106
3. अन्यान्य खनिज 107
4. उष्ण जल के स्रोत 108
5. प्रस्तरावशेष और शालग्राम 109

अध्याय 3– निवासी

1. निवासी 111
2. घर 111
3. खानपान 112
4. वेश-भूषा 115
5. अभिवादन 116
6. विवाह 117
7. अंत्येष्टि 118

अध्याय 4– धर्म

1. तिब्बत में बौद्ध धर्म का आगमन 119
2. भाषा तथा लिपि 120
3. विविध संप्रदाय 120
4. भिक्षु 123
5. गोम्पा 125
6. पुस्तकालय 129
7. पंचांग 130
8. पर्व एवं त्योहार 135
9. ॐ मणिपद्मे हुं 136
10. सिंबिलिङ गोम्पा 138
11. खोचार गोम्पा 140

अध्याय 5– कृषि और आर्थिक स्थिति

1. खेती 144
2. जंगली पशु 144
3. कस्तूरी-मृग 145
4. पालतू पशु 150
5. याक 151
6. भेड़-बकरियाँ 151
7. कुत्ता 153
8. गव्य 153
9. व्यापार और मंडियाँ 154
10. मानसखंड की संग्रहणीय वस्तुएँ 155
11. डाकू तथा बटमार 157

अध्याय 6– शासन

1. दलाई लामा 158
2. शासन-विधान 160
3. अंग्रेजों का व्यापार-प्रतिनिधि 163
4. चिकित्सालय 164
5. डाकघर 165
6. जोरावर सिंह 165
7. कज्जाकी घुमक्कड़ों की लूटमार 168
8. नेपाल और तिब्बत 170
9. भूटान के उपनिवेश 171
10. सिक्का 171
11. मानसखंड के प्रसिद्ध यात्री 172
12. मानसरोवर पर 'ज्ञान-नौका' 185

तृतीय तरंग–श्री कैलास-मानसरोवर-पथप्रदर्शक

अध्याय 1– यात्रा की तैयारी

1. श्री कैलास और मानसरोवर जाने के विविध मार्ग 191
2. इस यात्रा को कौन कर सकते हैं? 192
3. प्रवेशाज्ञा–पत्र (पासपोर्ट) 192
4. यात्रा के लिए आवश्यक वस्तुएँ
   (क) वस्त्र 193
   (ख) औषधि 193
   (ग) विविध सामग्रियाँ 194
5. व्यय 196

6. सवारी 198
7. साहाय्य और ख्यातनामा व्यक्ति 201
8. बटमार, बंदूक, पथप्रदर्शक और दुभाषिए 202
9. कैलास से बदरीनाथ 204
10. ठहरने के स्थान और डेरे 204
11. जलवायु 205
12. यात्रा का उचित समय 207
13. यात्रा में कितना समय लगता है? 207
14. डाक 207
15. खाद्यपदार्थ 208
16. ईंधन 209
17. सिक्का 210
18. यात्रा में होने वाली व्याधियाँ 210

अध्याय 2- लीपूलेख घाटा होकर कैलास जाने का मार्ग

1. अल्मोड़ा कैसे पहुँचें? 212
2. अल्मोड़ा 213
3. कठिन चढ़ाइयाँ 214
4. कठिन उतार 215
यह मार्ग छह खंडों में विभक्त किया जा सकता है—
5. पहला खंड—जागेश्वर, गंगोलीहाट, पाताल भुवनेश्वर, बेरीनाग, बागेश्वर, गोरी उड्यार और बैजनाथ 216
6. दूसरा खंड—छिपला कोट, मृत्यु गुफा (खर उड्यार), भोट क़ी बातें, दारमा सेवा-संघ, श्रीनारायण आश्रम और याक तथा झब्बू 219
7. तीसरा खंड—लीपूलेख घाटा, तकलाकोट, सिंबिलिङ मठ, गुकुङ और खोचारनाथ 226
8. चौथा खंड—तोयो, गुरला ला, पुनीत मानसरोवर, राक्षसताल, गंगा छू, राजहंस, परखा या बरखा, तीर्थपुरी, भस्मासुर की कथा, गुरुगेम और दुलचू गोम्पा 228
9. पाँचवाँ खंड—कैलास-परिक्रमा, तरछेन या दरछेन, सेरशुङ, डोलमा ला, गौरीकुंड, सेरदङ-चुकसुम्, तथा छो कपाल 231
10. छठाँ खंड—मानसरोवर-परिक्रमा 231
11. प्रसाद—कैलास और मानसरोवर 233
उपसंहार 234

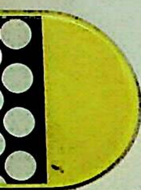
चतुर्थ तरंग–मार्ग–तालिकाएँ

तालिका 1.	श्री कैलास और मानसरोवर का पहला मार्ग, अल्मोड़े से लीपूलेख घाटा होकर—239 मील	239
तालिका 2.	श्री कैलास-परिक्रमा—32 मील	256
तालिका 3.	पुनीत मानसरोवर की परिक्रमा, आठों मठों का दर्शन करते हुए—64 मील	262
तालिका 4.	तकलाकोट से खोचारनाथ—12 मील	269
तालिका 5.	तकलाकोट से कैलास (तरछेन), ज्ञानिमा मंडी और तीर्थपुरी होकर—111 मील	271
तालिका 6.	तकलाकोट से तीर्थपुरी, सीधा मार्ग—65 मील	274
तालिका 7.	कैलास (तरछेन) से ज्ञानिमा मंडी—38 मील	277
तालिका 8.	अल्मोड़े से लीपूलेख घाटा होकर कैलास और मानसरोवर, संपूर्ण यात्रा की संक्षिप्त तालिका—600 मील	278
तालिका 9.	कैलासखंड और केदारखंड के कुछ प्रधान स्थानों के मध्य की दूरी	279
तालिका 10.	श्री कैलास और मानसरोवर का दूसरा मार्ग, अल्मोड़े से दारमा घाटा होकर—230 मील	281
तालिका 11.	श्री कैलास और मानसरोवर का तीसरा मार्ग, अल्मोड़े से ऊँटाधुरा घाटा होकर—210 मील	282
तालिका 12.	श्री कैलास और मानसरोवर का चौथा मार्ग, जोशीमठ से गुनला–नीती घाटा होकर—200 मील	286
तालिका 13.	श्री कैलास और मानसरोवर का पाँचवाँ मार्ग, जोशीमठ से डमजन-नीती घाटा होकर—160 मील	288
तालिका 14.	श्री कैलास और मानसरोवर का छठा मार्ग, जोशीमठ से होती-नीती घाटा होकर—158 मील	289
तालिका 15.	कैलास और मानसरोवर का सातवाँ मार्ग, बदरीनाथ से माना घाटा होकर—238 मील	290
तालिका 16.	श्री कैलास और मानसरोवर का आठवाँ मार्ग, मुखुवा (गंगोत्तरी) से जेलूखागा घाटा होकर—243 मील	292
तालिका 17.	श्री कैलास और मानसरोवर का नवाँ मार्ग, शिमले से गरतोक होकर—445 मील	294
तालिका 18.	श्री कैलास और मानसरोवर का दसवाँ मार्ग, शिमले से थुलिङ होकर—473 मील	296
तालिका 19.	श्री कैलास और मानसरोवर का ग्यारहवाँ मार्ग, काश्मीर-श्रीनगर से लदाख होकर—605 मील	296

तालिका 20.	श्री कैलास और मानसरोवर का बारहवाँ मार्ग, ल्हासा से ग्यांची और शिगर्ची होकर—800? मील	298
तालिका 21.	तरछेन से सिंधु नदी का उद्गम, ल्हे ला होकर जाना और तोपछेन ला होकर लौटना—92 मील	299
तालिका 22.	तरछेन से ब्रह्मपुत्र और टग नदी के उद्गम, गुरला ला होकर तकलाकोट लौटना–197 मील	301
तालिका 23.	तकलाकोट से मप्चा चुंगो, करनाली का उद्गम—21 मील	304
तालिका 24.	कैलास से दुलचू, सतलज का उद्गम—21मील	305
तालिका 25.	अल्मोड़े से पिंडारी ग्लेशियर—74 मील	305
तालिका 26.	श्रीनगर से अमरनाथ, पहलगाँव होकर $59+28\frac{3}{4}=87\frac{3}{4}$ मील	306
तालिका 27.	रक्सौल से पशुपतिनाथ—77 मील	310
परिशिष्ट 1.	कुछ तिब्बती और अन्य शब्दों का कोश	314
परिशिष्ट 2.	पुरङ दून के गाँवों के नाम	318
परिशिष्ट 3.	चित्र-सूची	319
परिशिष्ट 4.	आधुनिक पैमाना	323



2. हिज़ हाइनेस यशस्वी महाराजश्री सर कृष्णकुमार सिंह जी, के०सी०एस०आई०, महाराजा साहब, भावनगर (काठियावाड़)



प्रथम तरंग

श्री कैलास-मानसरोवर में बारह मास



अध्याय 1

श्री कैलास तथा पुनीत मानसरोवर

1. हिमालय

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः ।
पूर्वाऽपरौ तोयनिधीवगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः ॥1॥
यं सर्वशैलाः परिकल्प्य वत्सम् मेरौ स्थिते दोग्धरि दोहदक्षे ।
भास्वन्ति रत्नानि महौषधींश्च पृथूपदिष्टां दुदुहुर्धरित्रीम् ॥2॥

कुमारसंभव, सर्ग 1, श्लोक 1-2

उत्तर दिशा में देवताओं की आत्मा, अर्थात् देवता-स्वरूप पर्वतराज हिमालय पृथिवी के मानदंड की भाँति पूर्व और पश्चिम समुद्रों का अवगाहन करते हुए स्थित है ।1। राजा पृथु की आज्ञा से सभी पर्वतों ने हिमालय को बछड़े की कल्पना कर एवं सुमेरु पर्वत को कुशल दोग्धा (दुहने वाला) बनाकर धरित्री का दोहन किया, जिससे बहुत-से चमकीले रत्न और महौषधियाँ प्राप्त हुईं ।2।

हिमालय पर्वत प्राचीन काल से परम पवित्र माना गया है। संस्कृत ग्रंथों में यह हिमाचल, हैमवत, हिमालय, हिमाद्रि, हेमाद्रि, हिमगिरि, हेमवंत, गिरिराज इत्यादि नामों से प्रसिद्ध है। बहुत-से विद्वानों का मत है कि वेदवर्णित सुमेरु या मेरु पर्वत यही है। हिमालय संसार में सबसे ऊँचा पर्वत है, जिसका विस्तार पश्चिम में गांधार और काश्मीर से लेकर पूर्व में ब्रह्मदेश तक है। इसकी लंबाई लगभग 1600.एवं चौड़ाई 300 मील है। यह भारत की उत्तरी सीमा में दुर्भेद्य प्राकृतिक दीवाल के रूप में अवस्थित है। काश्मीर, काँगड़ा, कुल्लू, लाहुल, गढ़वाल, कुमाऊँ, नेपाल, भूटान आदि रमणीक प्रदेश इसी की गोद में हैं। वृहत् हिमालय, क्षुद्र हिमालय, काराकोरम, हिंदूकुश[1], हिंदूराज, कैलास, लदाख, जस्कार, महाभारत, पीरपंजाल, धवलधार, व्यास, नागटिब्बा, शिवालिक इत्यादि पर्वतमालाएँ इसके अंतर्गत हैं। इसमें गगनचुंबी एवरेस्ट शिखर (गौरीशंकर का चोमो लुङमा[2], ऊँचाई समुद्रतल से 29141 फीट) काराकोरम का दूसरा शिखर (गाड्विन आस्टिन, 28250 फीट), कांचनजंघा (28146 फीट), मकालू (27790 फीट), धवलगिरि (26795 फीट), नंगापर्वत (26660 फीट), गोसाइथान (26291 फीट), नंदादेवी (25645 फीट), कामेट (गणेश शिखर 25447 फीट), मांधाता (25355 फीट), जोङसोङ (24472 फीट), चोमोल्हारी (23930 फीट), द्रोणगिरि (23184 फीट), गौरीशंकर (23440 फीट),

---

1. ए० विल्सन रॉयल (सन् 1875) का मत है कि हिंदूकुश भी हिमालय के अंतर्गत है।
2. इसकी ऊँचाई पिछली माप के अनुसार 29002 फीट है।

त्रिशूल (23406, 22490, और 23360 फीट), स्वर्गारोहिणी (चौखंभा 23240 फीट), पंचचूल्ही (22650 फीट), नंदाकोट (22510 फीट), कैलास (22028 फीट) इत्यादि कई बर्फीले शिखर हैं। ऐसे शिखर पचास से भी अधिक हैं, जो समुद्रतल से 25000 फीट से अधिक ऊँचे हैं और इनके अतिरिक्त सैकड़ों ऐसे शिखर भी हैं, जो समुद्रतल से 20000 फीट से अधिक ऊँचाई के हैं।

पुराणों तथा प्राचीन ऐतिहासिक ग्रंथों में इसे देवगणों की तपोभूमि, विहारस्थल और समावेश-स्थल कहा गया है एवं हिमालय को एक राजा, पार्वती को उसकी पुत्री तथा शिव नाम के एक महायोगेश्वर को पार्वती के पति रूप में वर्णित किया गया है। हिमालय पर्वत अनंतकाल से शिव-पार्वती का निवासस्थान माना गया है। सुर, असुर, नर, यक्ष, किन्नर, किंपुरुष, गंधर्व, सिद्ध, विद्याधर, नाग, अप्सरस्, हाहा-हूहू इत्यादि पौराणिक पात्रों के लिए यह पर्वत एक क्रीड़ाभूमि रहा है। कहा जाता है कि यक्षराज कुबेर की राजधानी अलकापुरी या कांचन नगरी कैलास के आसपास है। लक्ष्मण के मूर्च्छा-निवारण के लिए हनुमान ज्योतिष्मती संजीवनी बूटी को जिस द्रोणगिरि से लाए थे, वह इसी हिमालय में है। पांडवों ने अपने राजसूय यज्ञ के लिए जिस गंधमादन पर्वत से सुवर्ण प्राप्त किया था, वह भी यहीं है। वीराग्रणी अर्जुन ने इसी पर्वत पर शिव की तपस्या करके पाशुपत आदि दिव्यास्त्रों को प्राप्त किया था। अश्वमेध के अनंतर इसी हिमालय के स्वर्गारोहण पर्वत से पांडवों ने स्वर्ग के लिए प्रस्थान किया था। यहीं के वनों में रहकर वाल्मीकि और वेदव्यास आदि महर्षियों ने रामायण, महाभारत - जैसे ग्रंथरत्नों की रचना की थी। अनुपमेय महाकवि कालिदास के अंतस्तल में कविता के अविरल प्रवाह को इसी पर्वत ने जागरित किया था।

हिमालय में ही प्राचीन काल से नर-नारायण, मुचकुंद आदि ऋषि, अत्रि, भरद्वाज, वशिष्ठ आदि महर्षि, कपिल, कणाद, गौतम आदि दार्शनिक, गौड़पाद, शंकर आदि आचार्य तथा कतिपय साधक, सिद्ध, योगी, ऋषि आदि महात्माओं ने तपस्या की है। इसी के गर्भ में अलौकिक, पवित्र और उत्कृष्ट आध्यात्मिक स्पंदनों से युक्त गंगोत्तरी, यमुनोत्तरी, बदरीनाथ, केदारनाथ, कल्पनाथ, तुंगनाथ, रुद्रनाथ, उत्तरकाशी (सौम्यकाशी), पशुपतिनाथ, मुक्तिनाथ, दामोदर कुंड, (शालग्राम तीर्थ), त्रिलोकनाथ, अमरनाथ, शारदा, नारदा, विष्णुपाद, ज्वालामुखी, पद्मसर (रेवाल सर), श्री कैलास और मानसरोवर इत्यादि अनेक तीर्थस्थान विराजमान हैं। गंगा, यमुना, सिंधु, ब्रह्मपुत्र, भागीरथी, जाह्नवी, मंदाकिनी, करनाली, अलकनंदा, सरस्वती, सरयू, गंडकी, गोमती, शतद्रु (सतलज), वितस्ता (झेलम), व्यास, चंद्रभागा (चेनाब), रावी इत्यादि महानदियों का उद्गम-स्थान यहीं पर है। इसका प्राकृतिक सौंदर्य अनुपम और वर्णनातीत है। इसी में काश्मीर–जैसे भूतल-स्वर्ग प्रदेश, संसार-प्रसिद्ध ऊँचे से ऊँचे शिखर, प्रदीप्त ज्वालामुखी और उष्ण तथा शीतल जल के स्रोत[1] स्थित हैं। उत्तुंग अधित्यकाएँ, अति रमणीय पुष्पों से सुशोभित घाटियाँ और शस्य-श्यामला

---

1. पर्वत या पृथिवीतल का भेदन कर जो निरंतर जल-प्रवाह निकलता है, उसे स्रोत, सोता या चश्मा की संज्ञा दी गई है, अंग्रेजी भाषा में उसे स्प्रिंग कहते हैं। स्रोत या सोता यहाँ नदी के अर्थ में नहीं प्रयुक्त हुआ है।

उपत्याकाएँ[1] भी यहाँ विद्यमान हैं। गिल्गित और ब्रह्मपुत्र गंभीर गर्त वाले कगार (गोज), खैबर- जैसे दर्रे, पिंडारी और बालतरो- जैसी बड़ी-बड़ी हिमनदियाँ (ग्लेशियर), अति सुंदर और मनोमोहक दिव्य दृश्य और आत्मविस्मरणकारी जलप्रपात इसी में स्थित हैं। अष्टवर्ग, ज्योतिष्मती, ममीरा, ब्राह्मी, संधानकरणी, सोमा, ठुमा इत्यादि अगणित महौषधियाँ सबसे अधिक यहीं उत्पन्न होती हैं। विविध जातियों के रंग-बिरंगे सुगंधित पुष्प और सैकड़ों प्रकार के कंद-मूल फल, भूर्ज, देवदारु, चीड़, टीक, शीशम इत्यादि महावृक्ष जातियों को उत्पन्न करने का गौरव इसी को है। सोना, चाँदी, सोहागा, लोहा, सीसा, राँगा, पारा, चूना, शोरा, गंधक, हरताल इत्यादि धातुओं की खानें इसी के गर्भ में हैं। कई प्रकार के सुंदर पक्षी, मृग, हाथी, शेर, चीता,भालू, साही, कस्तूरी-मृग, चँवरी गाय, हरिण, जंगली घोड़े आदि जंतु भी यहाँ पाए जाते हैं। श्रीकृष्ण भगवान ने गीता में अपनी विभूतियों का वर्णन करते हुए कहा है—**"स्थावराणां हिमालयः"**, (10, 25) अर्थात्, स्थावरों में मैं हिमालय हूँ।'

मनोरम और विशाल दृश्यों में हिमालय यूरोप के आल्प्स और अमेरिका के रॉकी पर्वतमाला के सुंदर से सुंदर दृश्य को तिरस्कृत करता है। संस्कृत साहित्य में इसका चित्ताकर्षक वर्णन है तथा इसकी प्रशंसा में पाश्चात्य देशवासियों ने सैकड़ों पुस्तकें लिखी हैं। महाकवि कालिदास ने कुमारसंभव तथा मेघदूत नामक काव्यों में इसका बहुत ही सुंदर वर्णन किया है। लंदन नगर के रॉयल जिओग्राफिकल सोसाइटी के भूतपूर्व अध्यक्ष सर फ्रेंसिस यंगहस्बेंड ने सन 1937 में लिखा था—"भारतीयों में धार्मिक भावना को जागरित करने के लिए हिमालय ही उत्तरदायी है। इसीलिए उन्होंने यहाँ कई तीर्थस्थानों का निर्माण किया है। हम लोगों का पूर्ण विश्वास है कि हिमालय में उत्तम और सुंदर स्थानों का पता लगाने के लिए भारत और इग्लैंड में समान उद्योग किया जाय, तो इसके प्रति भारतवासियों की श्रद्धा पहले से कहीं अधिक बढ़ जायगी। यदि इस पर्वतराज के उत्तम और रमणीक दृश्यों का पता लगाकर उनसे बाह्य संसार को परिचित करा दिया जाय, तो ये स्थल भी तीर्थस्थान बन जाएँगे और आजकल के तीर्थों के समान सुरक्षित रखे जाएँगे।"

हिंदुओं के भूतल-स्वर्ग कहलाने वाले कैलास और मानसरोवर नामक दो महातीर्थ हिमालयांतर्गत कैलास पर्वतमाला के मध्यङरी नाम से प्रसिद्ध, पश्चिमी तिब्बत में हैं। तीर्थपुरी, जहाँ पुराणों में वर्णित भस्मासुर भस्म हुआ, रावणह्रद, जहाँ लंकाधीश रावण ने शिव की तपस्या की थी, तथा मांधाता पर्वत, जहाँ चक्रवर्ती मांधाता ने तपस्या की थी, कैलास और मानसरोवर के निकट हैं। इन्हीं के आसपास शतद्रु, सिंधु, ब्रह्मपुत्र और करनाली नदियों के उद्गम-स्थान हैं।

---

1. कोई नदी यदि दो पहाड़ों के बीच में होकर बहती है और उसके दोनों ओर समतल भूमि है, तो उसे नदी की 'घाटी' कहते हैं। यदि भूमि बहुत संकीर्ण है, तो उसे प्रस्तुत पुस्तक में 'संकीर्ण घाटी' संज्ञा दी गई है; यदि बहुत विशाल है, तो 'दून' नाम से सूचित किया गया है। ये तीनों अंग्रेजी के 'वेली' शब्द के समान अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं। साधारणतया 'उपत्यका' शब्द भी 'वेली' के ही अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

2. श्री कैलास

(क) **केलयोर्जलभूम्योः आसनम् स्थितिः यस्य केलासः स्फटिकम्, तस्याऽयम् कैलासः।** जल और भूमि में स्थिति है जिसकी उसे 'केलास' अर्थात् स्फटिक कहते हैं और स्फटिकस्वरूप होने से इसे कैलास कहते हैं।

(ख) **कुबेरस्य स्थानम् कैलासः** । कुबेर का निवास-स्थान होने से इसका नाम कैलास है। (सचमुच कैलास के आसपास सोने और सोहागे की खानें हैं)।

(ग) **के शिरसि (शिवयोः) लासः नृत्यम् अस्मिन् इति कैलासः।** शिखर पर शिव-पार्वती के नृत्ययुक्त होने से इसका कैलास नाम पड़ा।

(घ) **केलीनाम् समूहः कैलम् तेन आस्यते स्थीयत इति कैलासः,** (आस् उपवेशने)। केलियों (क्रीड़ाओं) के समूह का नाम कैल है। उसके (केलियों के समूह के) साथ होने के कारण इसका कैलास नाम पड़ा।

ऊपर केलियों का तात्पर्य मंगल एवं आनंदस्वरूप शिव तथा हिमवान पर्वत की पुत्री एवं सम्मोहिनी स्वरूपा पार्वती की केलियों से है। अतः कैलास का अर्थ हुआ जहाँ पर आनंद एवं प्रकृति का तांडव नृत्य हो रहा हो। यही कारण है कि कैलास के समीप जाने वाले सभी प्राणी वहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य से आकृष्ट होकर आनंदविभोर हो उठते हैं।

इस कैलास के समीप जाने वाले मानव अपनी ग्राह्यशक्ति के अनुसार शिव तथा पार्वती का साक्षात्कार कर तन्मय या समाधिस्थ हो जाते हैं। इसलिए पुराणों में शिव तथा पार्वती के निवास-स्थान स्वरूप जिस कैलास का वर्णन किया गया है, वह इस दृष्टिकोण से सर्वथा सत्य है।

श्री कैलास और पुनीत मानसरोवर युक्तप्रांत के अंतर्गत अल्मोड़ा नगर से 240 मील ईशान-कोण में और तिब्बत की राजधानी ल्हासा से 800 मील पश्चिम की ओर हिमालय में स्थित हैं। इनके विशाल एवं मनोरम दृश्य हिमालय के अत्यंत रमणीक दृश्यों में से अन्यतम हैं। विश्वकर्मा की अति प्राचीन और प्रसिद्ध कारीगरी की शुभ्र और निर्दोष आदर्श छवि स्वरूप कैलास-शिखर अपनी सम्मोहिनी और विवश करने वाली सौंदर्य-राशि के साथ सर्वदा स्वच्छ श्वेत हिम से आच्छादित होकर, पीठिका के ऊपर स्थापित महान रजत-लिंग के समान शोभायमान है। वास्तव में यह श्री कैलास-शिखर जगत्स्रष्टा की ऐश्वर्यमयी विभूति का अनुपम एवं निराला चमत्कार है। भूमंडल में हिमाच्छन्न तथा नैसर्गिक शिवालय का प्रथम नमूना है। जब इसके विशाल शिखर के ऊपर सूर्य की किरणें पड़ती हैं, तो उस समय इसकी शोभा शुभ्र चाँदी-जैसी प्रतीत होने लगती है और आँखों को चकाचौंध कर डालती है। इसीलिए इसका रजताद्रि नाम सार्थक है। इसके लिंग-स्वरूप शिखर में बर्फ के गिरते रहने से गोलाकार का त्रिपुंड्र एवं दक्षिण मुख में सीढ़ी-जैसा ऊर्ध्वपुंड्र विराजमान है। यह तिब्बती भाषा में 'कङरिंपोछे' (पवित्र हिम) के नाम से प्रसिद्ध है। इसे 'तिसी' भी कहते हैं। आध्यात्मिक

दृष्टिकोण से यहाँ पर सर्वोत्कृष्ट साधनोपयोगी वातावरण विद्‌यमान है। इसके ऊपर दृष्टिपात करते ही ऐसा प्रातीत होने लगता है मानो यह सर्वशक्तिमान की प्रत्यक्ष मूर्ति है, जो किसी भी दर्शक को श्रद्‌धा और भक्ति से अपने सामने नतमस्तक होने के लिए विवश करती है। इसका जाज्वल्यमान रजत शिखर अपनी निराली और अद्‌भुत छटा से सर्वदा शोभित रहता है। इसके मनोहर गगनचुंबी धवल शृंग की दिव्य छटा गिरिराज हिमालय को स्वर्गीय शोभा प्रदान करती है। समुद्र के वक्षस्थल से 22028 फीट की ऊँचाई पर अवस्थित यह कैलास अपने मस्तक को उन्नत कर अपनी उज्ज्वल छवि का प्रदर्शन करता हुआ नीलाकाश का भेदन कर रहा है। इसकी परिक्रमा की परिधि 32 मील है। उसके चारों ओर पाँच गोम्पा (बौद्‌ध मठ) हैं, जिनमें दिन-रात शिखर पर स्थित प्रबुद्‌ध भगवान बुद्‌ध और उनके पाँच सौ बोधिसत्वों का यशोगान होता रहता है। संस्कृत ग्रंथों में श्री कैलास-शिखर की अनंत महिमा गाई गई है और उसके ऊपर सर्वमंगलकारक शिव का निवास–स्थान माना गया है। यह शुभ्र शिखर दक्षिण में 20 मील की दूरी से राजहंसों से सुशोभित मानसरोवर और रावणह्रद का अवलोकन कर रहा है।

3. पुनीत मानसरोवर

मानस-सरोवर सर्वोत्कृष्ट आध्यात्मिक स्पंदनों से युक्त परम पवित्र, सर्वप्रसिद्‌ध, अति प्राचीन, गरिमामय एवं मनोमोहक सरोवरराज है। "भूगोल जगत के सर्वप्रथम ज्ञात सरोवर में मानसरोवर ही सर्वप्रथम है। हिंदू पुराणों में भी मानसरोवर अति प्रसिद्‌ध है। जिनेवा सरोवर के प्रति किसी सभ्य मनुष्य के हृदय में प्रशंसा के भाव उठने के कई शताब्दी पहले ही यह सरोवर अलौकिक प्रसिद्‌धि प्राप्त कर चुका था। इतिहास के प्रादुर्भाव के पहले ही यह परम पुनीत सरोवर बन चुका था और चालीस लाख वर्षों से अब तक वैसा ही रहता चला आया है।"[1] यह मानसरोवर गंभीर और प्रशांतभाव से दो महान रजतमय पर्वतों के बीच में जड़े हुए महोज्ज्वल नीलमणि या पिरोजा पत्थर की भाँति उत्तर में श्री कैलास और दक्षिण में गुरला-मांधाता, पश्चिम में रावणह्रद और पूर्व में कई छोटी पहाड़ियों के मध्य में अवस्थित है। इसका तरंगपूर्ण वक्षस्थल अस्तकालीन सूर्य की प्रोज्ज्वल स्वर्ण रश्मियों और सांध्य आकाश के आनंददायक चित्र-विचित्र रंगों को प्रतिबिंबित करता हुआ तथा तरंगरहित प्रशांत निर्मल नीलोदक का तल उदयकालीन सूर्य की रश्मियों एवं पूर्णिमा के चंद्रमा की रजत किरणों को प्रतिबिंबित करता हुआ अपनी अलौकिक प्रतिभा, शोभा तथा सम्मोहक सौंदर्य को और भी सम्मोहित और सुशोभित करता है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण से वह मानसरोवर तन्मय करने वाले अपने उच्चकोटि के आध्यात्मिक स्पंदनों से चंचल से भी चंचल मन को एकाग्र कर देता है; तथा अपने साथ लय मिला सकने वालों को अनायास ही तन्मय और समाधिस्थ कर देता है। इसी कारण लाखों की संख्या में न केवल भारतवासी, प्रत्युत अन्य प्राच्य और पाश्चात्य देशों के निवासी भी इस पुनीत मानसरोवर के दर्शन के लिए लालायित रहते हैं।

---

1. एस0 जी0 बर्राड और एच0 एच0 हाइडेन, 'ए स्केच ऑफ़ दी जॉग्रफी ऑफ़ दी हिमालया मौंटेंस एण्ड टिबेट', सर्वे ऑफ़ इंडिया (1934), भाग 30, पृ0 228।

समुद्रतल से 14950 फीट की स्वर्गीय ऊँचाई पर 54 मील की परिधि में और लगभग 300 फीट की गहराई के साथ, इस सरोवर का विशाल विस्तार 200 वर्गमीलों में साम्राज्य वैभव के साथ तिब्बती अधित्यका रूपी एक विस्तृत पालने में फैला हुआ है। इसके पवित्र तट पर आठ बौद्ध मठ हैं, जिनमें भिक्षु लोग जीवनपर्यंत निर्वाण-प्राप्ति के लिए प्रयत्न करते रहते हैं।

मानसराज के महत्व को पूर्णरूप से जानने एवं उसके सौंदर्य को देखकर आनंद लूटने के लिए कम से कम सरोवर के तीर पर बारह महीने निवास करना चाहिए। जिन्होंने मानसरोवर को एक बार भी नहीं देखा है, उनके लिए प्रत्येक ऋतु में होने वाले परिवर्तनों को निकट में रहकर देखने वालों के आनंद की कल्पना करना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। तथापि शीतकाल में सरोवर के जमते समय एवं वसंत में पिघलते समय स्वच्छ नीलोदक के रूप में उसका दृश्य सचमुच अद्वितीय और रोमांचोत्पादक होता है। बहुधा सूर्योदय और सूर्यास्त के दृश्य तो वर्णनातीत होते हैं। कुशल चित्रकार अपने चित्रों से या भावुक कवि अपनी भावमयी कविता से इसके सौंदर्य का केवल आंशिक वर्णन करने में समर्थ हो सकता है। इन लोगों के अतिरिक्त औरों का वर्णन तुच्छ और अपूर्ण होगा। इसके अपार सौंदर्य से मुग्ध होकर अपने अपार आनंद की अनुभूति को अल्प योग्यता द्वारा व्यक्त करने का प्रयास मात्र ग्रंथकार का उद्देश्य है।

4. तिब्बती पुराण-गाथाएँ

तिब्बती भाषा में कैलास-पुराण के दो पाठ हैं, जिनमें से एक कैलास के उत्तरी मठ डिरफुक् गोम्पा में और दूसरा दक्षिण के गेङ्टा गोम्पा में प्रकाशित किए गए हैं।[1] वे 'कङरी—करछक' नाम से प्रसिद्ध हैं। उनमें से पहला 32 और दूसरा 124 पृष्ठों का है। इनके अतिरिक्त 'कङरी-सोलदेप' नामक एक छोटी-सी पुस्तिका के संस्करण भी उन मठों से अलग-अलग प्रकाशित हुए हैं। ये दोनों पुस्तिकाएँ 14 और 13 पृष्ठों की हैं। इनमें क़रछक के संक्षिप्त विवरण हैं, जो नित्यपाठ के लिए लिखे गए हैं। ऐसा हिंदुओं का विश्वास है कि श्री कैलास-शिखर पर शिव-पार्वती का निवास है और पाँच सौ बोधिसत्वों के साथ बुद्ध भगवान वहाँ पर विराजते हैं, इसीलिए यह स्थान सत्तर करोड़ हिंदू और बौद्ध धर्मावलंबियों के लिए परम पवित्र तीर्थस्थान बन गया है। तिब्बती पुराणों में कहा गया है कि चक्की के मध्यदंड की भाँति भूमंडल के मध्यभाग में अवस्थित यह श्री कैलास–शिखर आकाश का भेदन करते हुए शोभित हो रहा है। इसके वर्गाकार पार्श्व भाग स्वर्ण और रत्न-खचित हैं; तथा इसका पूर्व मुख स्फटिक-निर्मित, दक्षिण मुख नीलमणि-जटित, पश्चिम मुख माणिक्य-खचित, और उत्तरमुख स्वर्ण-जटित है। इसके शिखर सुगंधित पुष्पों और औषधियों से सुसज्जित हैं तथा शिखर पर पहुँचने के मार्ग में अमरत्व प्रदान करने वाला कल्पवृक्ष है।

---

1. ग्रंथकार की इच्छा है कि इन दोनों ग्रंथों को भाषाविशेषज्ञों की सहायता से हिंदी में अनुवाद करके उनका तुलनात्मक संपादन और प्रकाशन करे।

कैलास–शिखर के उत्तर तल पर कङ्लुङ की घाटी में एक प्रकार की औषधि होती है, जिसे खाने से कोई व्यक्ति सारे संसार को देख सकता है।

'बुद्ध भगवान ने इस आशंका से कि कहीं यक्षगण इस शिखर को उखाड़कर ऊपर न ले जायँ, इसे चारों ओर से अपने पैरों से दबा रखा है (कैलास के चारों ओर बुद्ध भगवान के चार पद-चिह्न हैं) तथा नाग लोग कहीं इसे पाताल में न ले जायँ, इस डर से इसके चारों ओर साँकलें लगाई गई हैं। कैलास का अधिष्ठातृ देवता देमछोक है, जो 'पावो' के नाम से पुकारा जाता है। वह व्याघ्र चर्म का परिधान और नर-मुंडों की माला धारण करता है। उसके एक हाथ में डमरू और दूसरे में त्रिशूल है। इसके चारों ओर ऐसे ही आभूषणों से आभूषित प्रत्येक पंक्ति में पाँच सौ की संख्या से नौ सौ नब्बे पंक्तियों में अन्यान्य देवगण बैठे हुए हैं। देमछोक के पार्श्व में 'खडो' या 'एकाजती' नामक देवी विराजमान है। इस कैलास–शिखर के दक्षिण भाग में वानरराज 'हनुमानजू' आसीन हैं। इसके अतिरिक्त कैलास और मानसरोवर में शेष अन्य देवगण का निवास है'। यह कथा 'कङरी-करछक' नामक तिब्बती कैलास-पुराण में विस्तृत रूप में वर्णित है। उपर्युक्त देवताओं के दर्शन किसी-किसी पुण्यात्मा अथवा उच्च कोटि के लामा को ही हो सकते हैं। कैलास के शिखर पर मृदंग, घंटा, ताल, शंख आदि और अन्य कतिपय वाद्यों का रव सुनाई पड़ता है।

गोंबोफेङ नामक राक्षस अपना एक पद भारत में और दूसरा कैलास के पश्चिम भाग में रखकर कैलास को ले जाने के प्रयत्न में इसके अधिष्ठातृ देवता द्वारा शापित होकर शिला रूप में परिणत हो गया है। आजकल कैलास के पश्चिम में जो गोंबोफेङ नामक पहाड़ है, वह वही राक्षस है।

एक समय लङगक् छो (रावणह्रद) का राजा केवल तीन पग में भारत जाकर बुद्ध भगवान की स्वर्ण-मूर्ति लाकर राक्षसताल में रखने के उद्देश्य से कैलास गया और उसको चारों ओर से रस्सी में बाँधकर उठाने को उद्यत हुआ। इस बात को बुद्ध भगवान दिव्य दृष्टि से जानकर अपने पाँच सौ बोधिसत्वों के साथ हंस रूप में वायु-पथ से उड़कर सेरशुङ पहुँच गए। वहाँ मनुष्य रूप धारण कर उन्होंने ऐसा सम्मोहन नृत्य किया, जिसे राजा मुग्ध होकर देखता रहा। देखते-देखते प्रातःकाल हो गया। वह कैलास को पीठ पर बाँधकर ले जाना चाहता था, परंतु उठाने से पहले ही बुद्ध भगवान ने कैलास को चारों ओर से अपने पैर से दबा दिया और उस राजा को शाप दिया कि वह पत्थर हो जाय। उस शिलीभूत का स्वरूप गोंबोफेङ नामक पर्वत है। कैलास–शिखर की मेखला में आजकल जो रेखा दिखाई पड़ती है, उसे तिब्बती लोग गोंबोफेङ की तथा हिंदू–यात्री रावण की रस्सी का चिह्न मानते हैं। कैलास के पश्चिम की ध्वजा के पास टचुङ-मपग्या (500 पद–चिह्न) नामक पहाड़ है, जिसके ऊपर कई पद-चिह्न दिखाई देते हैं।

कहते हैं कि कैलास और दोर्जेदेन (वज्रासन या बुद्धगया) के मध्य में नौ पर्वत विद्यमान हैं।

तिब्बती कैलास-पुराण में मानसरोवर के संबंध में निम्नलिखित बातें कही गई हैं—एक बड़ी भारी मछली ने भारत से जाकर सरोवर में ऐसे प्रवेश किया जैसे कोई बच्चा अपनी माँ की गोद में पड़ जाता है। इसलिए यह 'छो मफम' (सरोवर-माता की गोद) कहलाने लगा। इसे तिब्बती भाषा में 'छो मवङ' (सर-अजेय) भी कहते हैं! छो मवङ या मानसरोवर के चारों ओर वृक्षों की सात पंक्तियाँ हैं। सरोवर के मध्य में एक महान भवन है, जिसमें नागों के राजा निवास करते हैं। यह सरोवर समतल नहीं है, धनुषाकार है। मध्यभाग में ऊँचा है। उस ऊँचे स्थान प्रर एक बड़ा वृक्ष है, जिसके बड़े-बड़े फल सरोवर में 'जम्' शब्द के साथ गिरते हैं। इसीलिए आसपास का भू–भाग जंबूलिङ या हिंदू पुराणों में वर्णित जंबूद्वीप कहलाता है। सरोवर में गिरे हुए कुछ फलों को नाग खा डालते हैं और बचे हुए फल सोना बनकर सरोवर के तल में चले जाते हैं। इसके दक्षिण भाग में ठुगोल्हो के पास सोना, चाँदी, मूँगा, पिरोजा और मोती—इन पाँचों से युक्त पंच जल हैं; पूर्वी किनारे पर सेरलुङ के पास सोना, चाँदी, पिरोजा, मूँगा और लोहे की पंचरेत है, जो चेमानेङ्ग के नाम से प्रसिद्ध है। दक्षिण तट पर पाँच प्रकार की धूप हैं, पश्चिमी किनारे पर पाँच प्रकार के शंख हैं और उत्तरी किनारे पर पाँच प्रकार के पत्थर हैं।

इस मानसरोवर के पश्चिम में लङ्चेन खंबब् या हस्ति-मुख नदी (शतद्रु), उत्तर में सिंगी खंबब् या सिंह-मुख नदी (सिंधु), पूर्व में तमचोक खंबब् या अश्व-मुख नदी (ब्रह्मपुत्र) और दक्षिण में मप्चा खंबब् या मयूर-मुख नदी (करनाली) के उद्गम-स्थान हैं। इन नदियों में प्रत्येक की पाँच-पाँच सौ सहायक नदियाँ हैं। शतद्रु का जल शीतल, सिंधु का जल गरम, ब्रह्मपुत्र का जल ठंडा और करनाली का जल उष्ण है। शतद्रु में सुवर्ण, सिंधु में वज्रमयी, ब्रह्मपुत्र में नीलम और करनाली में रजतमय बालू है। शतद्रु के जल को पान करने वाले प्राणी हाथी-जैसे बलवान, सिंधु के जल को पीने वाले सिंह-जैसे शूरवीर, ब्रह्मपुत्र के जल को पीने वाले अश्व–जैसे बलिष्ठ और करनाली के जल को पीने वाले मयूर-जैसे सुंदर होते हैं। ये चारों महानदियाँ कैलास और मानसरोवर की सात प्रदक्षिणा करके क्रमशः पश्चिम, उत्तर, पूर्व और दक्षिण दिशा में प्रवाहित होती हैं। शतद्रु नदी प्रारंभ में कैलास की पूर्व दिशा से निकलकर पश्चिम की ओर, सिंधु नदी दक्षिण दिशा से निकलकर उत्तर की ओर, ब्रह्मपुत्र पश्चिम दिशा से निकलकर पूर्व की ओर और करनाली उत्तर दिशा से निकलकर दक्षिण की ओर बह रही है। मानसरोवर के किनारे सीधी रेखा में पैंतालिस मील के भीतर ही इन चारों नदियों के उद्गम-स्थान होने के कारण तिब्बती पुराणों में, मानसरोवर से इनके निकलने का जो कवित्वमय वर्णन आया है, वह सत्य से दूर नहीं है; क्योंकि कैलास-पुराण के ग्रंथकर्ताओं ने कैलास, मानसरोवर और इन नदियों के उद्गम तक के भाग को कैलास-मानसरोवर प्रांत माना है। इसीलिए और अन्य कुछ कारणों से मैं भी कैलास-मानसरोवर के पश्चिम में छिनकु नदी तक, उत्तर में सिंधु नदी के उद्गम तक, पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी के उद्गम तक और दक्षिण में भारत की सीमा तक के प्रांत को कैलास-मानस प्रांत, कैलासखंड

या मानसखंड के नामों से प्रयोग करता हूँ।

5. हिंदू पुराण-गाथाएँ

गत्वा चोर्ध्वं दशमुखभुजोच्छ्रवासितप्रस्थसंधेः
कैलासस्य त्रिदशवनितादर्पणस्यातिथिः स्याः ॥
शृङ्गोच्छ्रायैः कुमुदविशदैर्यो वितत्य स्थितः खम्
राशीभूतः प्रतिदिनमिव त्र्यम्बकस्याट्टहासः ॥

मेघदूत, पूर्व , 58

(यक्ष कहता है) हे मेघ ! तुम आगे जाकर कैलासपर्वत पर पहुँचना, जिसके प्रांत रावण ने हिला दिए थे और जो देवांगनाओं के दर्पण के समान है। यह पर्वत शुभ्र कुमुदों के समान अपने श्वेत शिखरों को आकाश में फैलाए हुए है, और उसे देखकर ऐसा बोध होता है जैसे शिव जी के प्रतिदिन का अट्टहास एक स्थान पर इकट्ठा हो गया हो।

भारत में आर्यों के आगमन–काल से ही तिब्बत और विशेषकर कैलास-मानसरोवर प्रांत हिंदू पुराणों में हिमालय के अंशरूप में वर्णित है। रामायण और महाभारत में, विशेष रूप में स्कंदपुराण के 'मानसखंड'[1] में और साधारणतया सभी पुराणों में मानसरोवर का माहात्म्य वर्णित है।

भगवद्गीता में भी कैलास भगवान की विभूतियों में वर्णित है—

"मेरुः शिखरिणामहम्" (10, 23)। अर्थात् शिखरों में मैं मेरु (कैलास) हूँ।

एक पौराणिक गाथा है कि जंबूद्वीप के मध्य में विविध वर्णों से युक्त दिव्य मेरु पर्वत या कैलास है। उसका पूर्वभाग ब्राह्मण-जैसा श्वेत, दक्षिण भाग वैश्य-जैसा पीत, उत्तर भाग क्षत्रिय-जैसा रक्तवर्ण, और पश्चिम भाग शूद्र-जैसा श्याम वर्ण है। चारों दिशाओं में रक्षा के लिए चार पर्वत हैं, जिन पर क्रमशः कदंब, अश्वत्थ, जंबू और औदुंबर या वट के वृक्ष हैं। रामायण के किष्किंधाकांड में लिखा गया है कि कैलास के जिस भाग में मानसरोवर स्थित है, वह क्रौंच पर्वत है। महाभारत के भीष्मपर्व में कैलास को हेमकूट कहा गया है। इसी प्रकार महाभारत के वन, द्रोण तथा अनुशासन पर्वों में भी कैलास का वर्णन मिलता है।

---

1. मानसखंड की तीन हस्तलिखित प्रतियाँ अल्मोड़े में विद्यमान हैं। एक प्रति श्री लक्ष्मीचंद्र जी जोशी रईस के ईश्वरी भवन पुस्तकालय में है। दो अन्य प्रतियाँ मैंने दो अन्य व्यक्तियों के पास देखा भी। इनमें से दो एक ही पुस्तक की प्रतिलिपियाँ हैं। तीसरी कैसी है, इसे मैंने ध्यान से नहीं देखा। ये तीनों प्रतियाँ आधुनिक हैं। स्कंदपुराण के अंतर्गत न होकर अल्मोड़े के किसी पंडित द्वारा लिखी गई हैं। क्योंकि कोई भी प्रति दो-तीन सौ वर्ष से पुरानी नहीं जान पड़ती। इनके अतिरिक्त 'कैलासखंड' नामक एक और हस्तलिखित पुस्तक को भी मैंने अल्मोड़े में देखा था।

एक समय लंकाधीश रावण ने लगातार कई वर्षों तक कैलासपति शंकर की घोर तपस्या की। तिसपर भी वे प्रसन्न न हुए और उसे दर्शन तक नहीं दिए। इसपर रावण एक दिन कैलास–शिखर के नीचे घुसा और चाहा कि कैलास को जोर से हिला दें, ताकि शिव अपनी समाधि से उठकर इष्ट वरदान दें। उसके इस उद्देश्य को पहले ही से जानकर शिव ने रावण को कैलास के नीचे दबा दिया, जिससे कि वह बाहर न निकल सके। तब रावण ने अपने दश शिरों में से एक को काटकर उसका सितार बनाया और शिव के परम प्रिय तांडव-नृत्य का स्तोत्र रचकर गाने-बजाने लगा। इस बात से प्रसन्न होकर शिव ने रावण को वरदान दिया।

एक समय सनक, सनंदन, सनत्कुमार, सनत्सुजात आदि ऋषि कैलास-शिखर पर शिव को प्रसन्न करने के लिए तपस्या कर रहे थे, इसी अवधि में बारह वर्ष तक अनावृष्टि होने के कारण आस-पास की सब नदियाँ सूख गईं। स्नान आदि के लिए ऋषियों को बहुत दूर मंदाकिनी तक जाना पड़ता था, इसलिए उनकी प्रार्थना पर ब्रह्मा ने अपने मानसिक संकल्प से कैलास के पास एक सरोवर का निर्माण कर स्वयं हंस-रूप हो उसमें प्रवेश किया। ब्रह्मा की मानसिक सृष्टि होने के कारण इसका नाम मानस-सरोवर पड़ा। अब इसे मानसरोवर या केवल मानस भी कहते हैं। इसके जल के ऊपर सरोवर के मध्य भाग में एक कल्पवृक्ष उत्पन्न हुआ।

एक अन्य गाथा के अनुसार महाराज मांधाता ने इस सरोवर का पहले-पहल पता लगाया या निर्माण किया। मानसरोवर के दक्षिण की ओर के पर्वत पर मांधाता ने तपस्या की, जिससे वह अब भी मांधाता के नाम से प्रसिद्ध है। इसे गुरला-मांधाता भी कहते हैं। तिब्बती भाषा में तो इसे नमोनानी या मेमोनामी कहते हैं। मांधाता तिब्बत में सबसे ऊँचा पर्वत है।

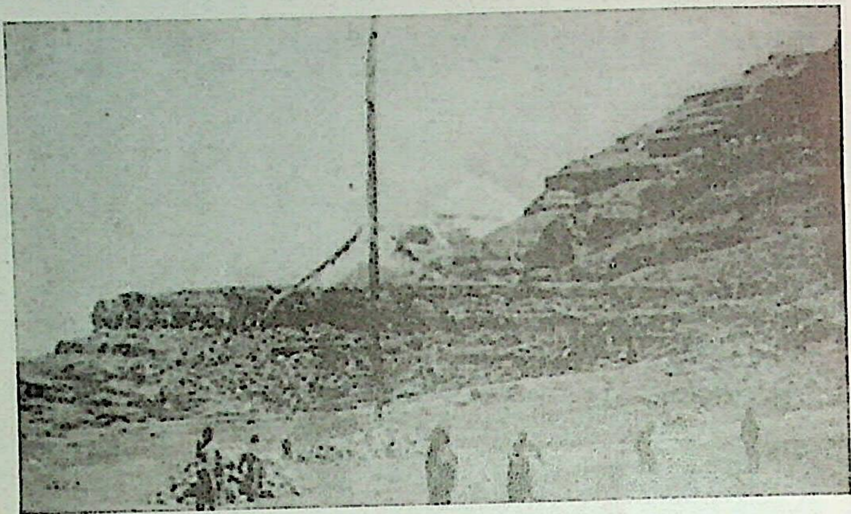
दत्तात्रेय ऋषि विंध्याचल से हिमालय का अवलोकन कर हिमालय के दर्शनार्थ गए। उन्होंने मानसरोवर में स्नान कर राजहंसों का दर्शन किया। तदुपरांत कैलास की एक गुफा में आसीन शिव-पार्वती के दर्शन प्राप्त किए और पूछा—"संसार में सबसे पवित्र स्थान कौन-सा है?" शिव ने कहा—"सबसे पवित्र स्थान हिमाचल है, जिसमें कैलास और मानसरोवर विराजमान हैं। हिमालय का दर्शन तो दूर रहा, जो उसका ध्यान भी करता है, उसके सभी पाप तत्काल धुल जाते हैं। हिमाचल का ध्यान-मात्र काशी की यात्रा से अधिक पुण्यदायक है। मेरे मूल वासस्थान कैलास के ध्यान, दर्शन, स्पर्श आदि का अनंत फल है। उसका वर्णन शब्दों द्वारा नहीं किया जा सकता, वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरुषार्थों का प्रदाता है।"

कैलास के प्रति, स्वीडन देश के विख्यात भूगोल-शास्त्री डॉक्टर स्वेन हेडिन लिखते हैं—"कोई परदेशी भी क्यों न हो, कैलास के पास एक गंभीर मनोभाव और श्रद्धा के साथ जाता है। निस्संदेह कैलास संसार भर में विख्यात पर्वत है। एवरेस्ट शिखर और माउंट ब्लाँक उसके सामने प्रतियोगिता में ठहर नहीं सकते।"

ईसाई धर्म के प्रसिद्ध प्रचारक साधु सुंदरसिंह मानसरोवर के संबंध में लिखते हैं—



3. पूज्यपाद श्री 1108 स्वामी ज्ञानानंद जी महाराज



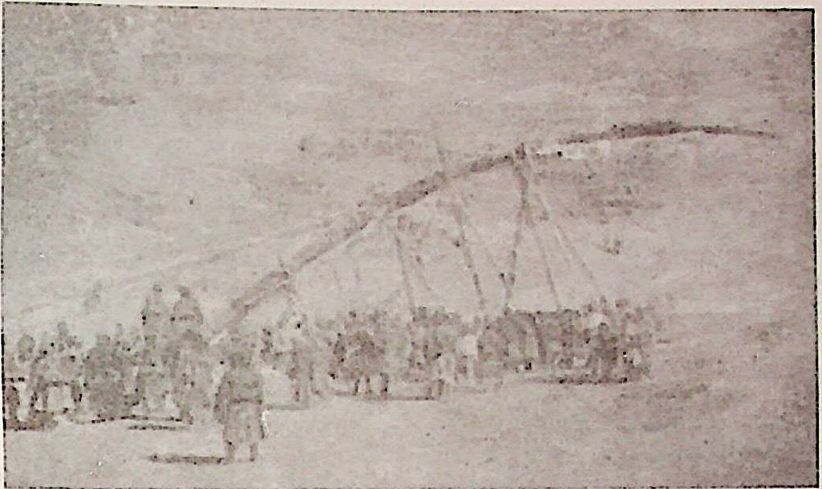
4. तरबोछे (ध्वजा) और कैलास-शिखर

[देखिए पृ० 48



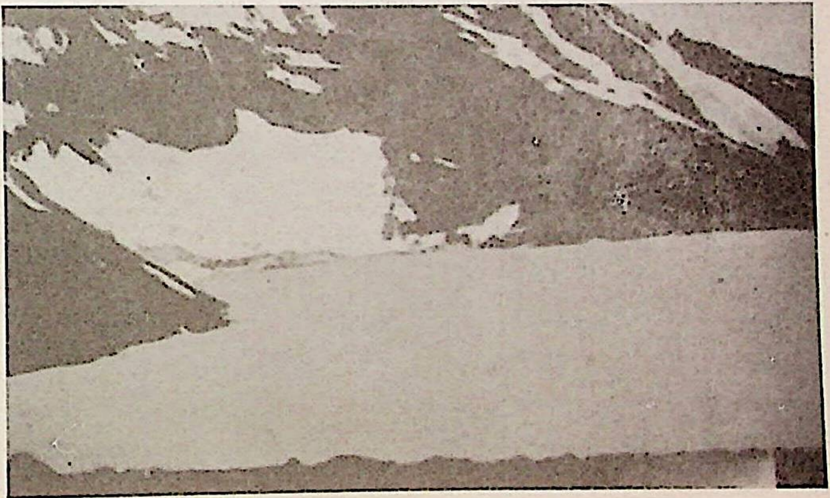
5. धनोल्टी के जंगल में बरवारी (जिला भागलपुर) के राजा साहब श्री भूपेंद्रनाथ सिंह जी तथा लेखक

[देखिए पृ० 48



6. वैशाख पूर्णिमा के दिन कैलास के पश्चिम में ध्वजारोहण-समारोह

[देखिए पृ० 49



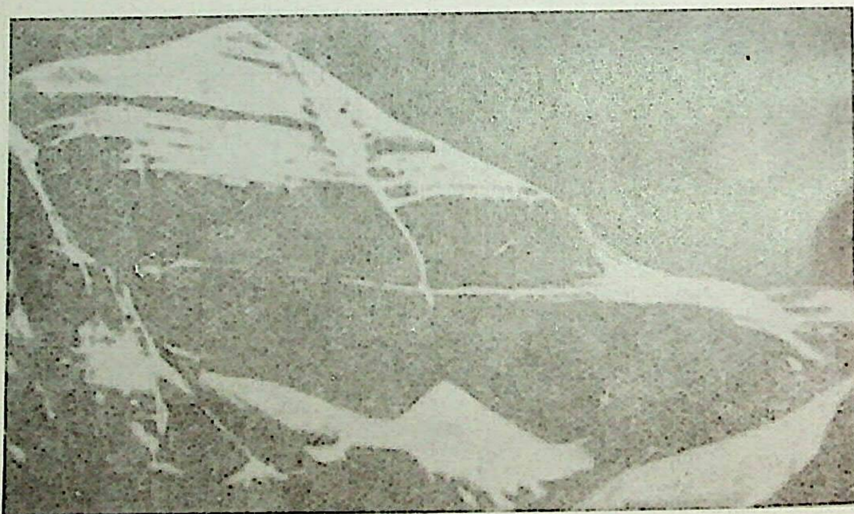
7. गौरी कुंड

[देखिए पृ० 50, 259



8. गौरी कुंड में गिरने वाले हिमखंड

[देखिए पृ० 50



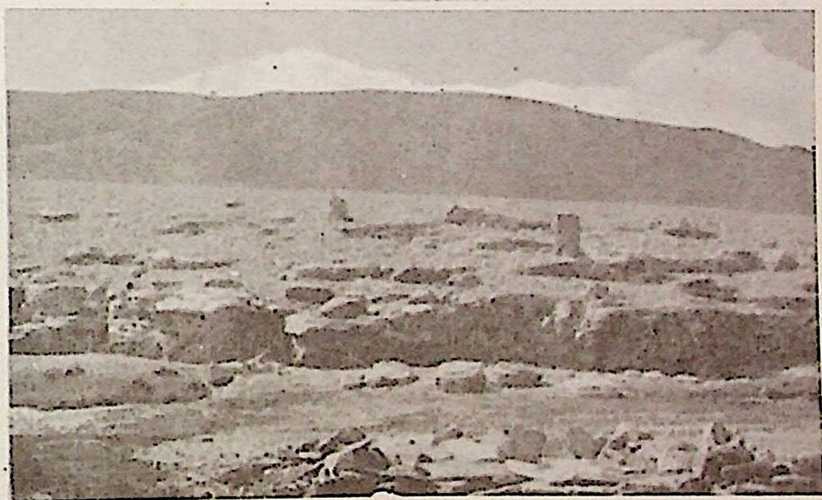
9. दक्षिणी पादतल से कैलास-शिखर का दृश्य

[देखिए पृ0 50



10. कैलास-शिखर के पूर्वी पार्श्व में गिरता हुआ एक बहुत बड़ा हिमखंड

[देखिए पृ० 50



11. सिंगी खंबब् के सोते–सिंधु नदी का उद्गम

[देखिए पृ० 53



12. चेमायुङडुङ-पू हिमनदी–ब्रह्मपुत्र के उद्गम की एक हिमनदी

[देखिए पृ० 53



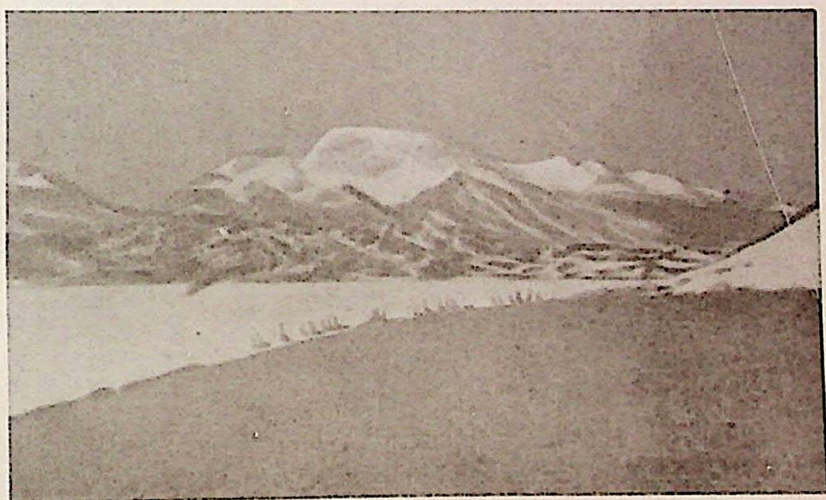
13. तमचोक खंबब् कङरी हिमनदी-ब्रह्मपुत्र के उद्गम की मुख्य हिमनदी

[देखिए पृ० 53



14. कङलुङ कङरी की हिमनदियाँ–टग नदी का उद्गम

[देखिए पृ० 54



15. लाचातो द्वीप पर हंस

[देखिए पृ० 59



16. लाचातो–राक्षसताल का छोटा द्वीप

[देखिए पृ० 59



17. राक्षसताल से सतलज का निकास

[देखिए पृ० 59

"यह सरोवर अति रमणीक और पवित्र स्थान है। मेरे देखे हुए स्थानों में यह सबसे सुंदर है।"

एटकिंसन का मत है कि राक्षसताल ही पुराणों में वर्णित बिंदु-सरोवर है।

बौद्ध धर्म के अनेक पालि और संस्कृत ग्रंथों में यह कहा गया है कि मानसरोवर 'अनवतप्त' है, या शीतोष्णादि दुःखों से विमुक्त है। इसके मध्य में समस्त शारीरिक और मानसिक रोगों को दूर करने वाला, फल को प्रदान करने वाला एक वृक्ष है। इसी कारण से वह देवता और मनुष्यों द्वारा विशेष रूप से सेवित है। यही अनवतप्त भूतल-स्वर्ग है। अमिताभ-बुद्ध के आकार के समान बड़े-बड़े कमल पुनीत सरोवर में खिलते हैं, जिन पर बहुधा बुद्ध भगवान और उनके पाँच सौ बोधिसत्व आसन लगाकर बैठते हैं। इसमें स्वर्गीय राजहंस तैरते समय दिव्य गीत गाते रहते हैं। इसके आसपास के पहाड़ों पर शतमूलिका नामक दिव्यौषधि पाई जाती है। जैन ग्रंथों में कैलास को अष्टपद कहा गया है।

कैलास से लगभग 28 मील की दूरी पर तीर्थपुरी नामक एक स्थान है, जहाँ पुराण-प्रसिद्ध भस्मासुर भस्म हुआ था। यहीं पर गर्म जल के स्रोत हैं जो बहुधा स्थान बदलते रहते हैं या कभी-कभी कुछ समय के लिए बंद भी हो जाया करते हैं। इन स्रोतों के पास बहुत-से चूने-जैसे श्वेत पदार्थ के ढेर हैं, जिन्हें भस्मासुर का ढेर कहते हैं। यात्रीगण इस श्वेत पदार्थ को पवित्र मानकर प्रसाद के रूप में ले जाते हैं।

हिंदू पौराणिक कथाओं तथा देवी-देवताओं को कुछ-कुछ परिवर्तनों के साथ बौद्ध धर्म ने अपनाया। इसलिए कैलास–मानसरोवर-संबंधी कई तिब्बती गाथाएँ पौराणिक गाथाओं से बिल्कुल मिलती-जुलती हैं।

6. परिक्रमा

कैलास पर्वत-श्रेणी काश्मीर से लेकर भूटान तक फैली हुई है। इसमें से ल्हा छू और झोङ छू नदियों से घिरे हुए भाग को कैलास पर्वत कहते हैं, जिसके उत्तरी सिरे पर शिवलिंग के आकार में कैलास-शिखर अवस्थित है। यदि कैलास पर्वत की परिक्रमा करनी हो, तो ग्रीष्म और वर्षा ऋतु में ही की जा सकती है। इसका कारण यह है कि शीतकाल में कैलास के चारों ओर 10 से लेकर 20 फीट तक बर्फ गिरती है। कैलास पर्वत की परिक्रमा शीघ्रता से दो दिन में और सुगमता से तीन दिन में कर सकते हैं। परंतु कुछ तिब्बती लोग 'निङकोर' नामक परिक्रमा को एक ही दिन में पूरा कर डालते हैं। तिब्बती पुराण में लिखा है कि कैलास की एक परिक्रमा एक जन्म में किए हुए और 10 परिक्रमाएँ एक कल्प में किए हुए पापों को नष्ट करती हैं; और 108 परिक्रमाएँ करने से इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त होता है। एक अन्य गाथा के अनुसार एक परिक्रमा करने से मरने के बाद जीव मनुष्य-योनि में जन्म ग्रहण करता है, 12 परिक्रमाएँ करने से मुनि या देवता हो जाता है, और 13 परिक्रमाएँ करने से साक्षात बुद्ध हो जाता है।

धर्मपरायण तिब्बती लोग कैलास की तीन या तेरह परिक्रमाएँ करते हैं। कुछ विशेष धार्मिक व्यक्ति बड़ी श्रद्धा-भक्ति से कैलास की साष्टांग दंडवत् परिक्रमाएँ पंद्रह दिन में और मानसरोवर की अट्ठाईस दिन में करते हैं। जिस प्रकार भारत में लोग ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर अपने लिए पूजा-पाठ, शान्ति और अभिषेक आदि कराते हैं, उसी प्रकार तिब्बत में धनी और रोगी, गरीब और भिखमंगों को पैसा और भोजन देकर परिक्रमा करवाते हैं। सभी तिब्बती कैलास या मानसरोवर की परिक्रमा पैदल ही करते हैं। घोड़े या याक पर चढ़कर परिक्रमा करने से यात्रा का फल तो यात्री को होता है, परंतु परिक्रमा का फल उसके वाहन को मिल जाता है। यदि कोई संपन्न व्यक्ति मरता है, तो उसकी आत्मा की शांति के लिए लोग गरीबों को कुछ रुपये या एक-एक भेंड़ देकर कैलास और मानसरोवर की अनेक परिक्रमा करवाते हैं। मैंने कैलास की पंद्रह परिक्रमाएँ की हैं। पोनधर्म या बौद्धधर्मावलंबी तिब्बती कैलास और मानसरोवर की उल्टी परिक्रमा करते हैं। इन लोगों में भी साष्टांग दंडवत् प्रदक्षिणा की प्रथा प्रचलित है।

कैलास के (1) पश्चिम में न्यनरी[1] या छुकू गोम्पा, (2) उत्तर में डिरफुक् या डिथिनफुक् गोम्पा, (3) पूर्व में जुंठुलफुक् गोम्पा, (4) दक्षिण में गेङ्टा, और (5) सिलुङ गोम्पा हैं। श्री कैलास की परिक्रमा में बुद्ध भगवान के चार पद-चिह्न हैं—(1) पश्चिम में ध्वजा से थोड़ी दूर पर टचुङ मप्ग्या के पास, (2) गोंबोफेड के आगे तमडिन डोङखङ के पास, (3) पूर्व में गौरीकुंड के उतार के अंत में शपजे–डक्थोक् के पास और (4) दक्षिण में जुंठुलफुक् और गेङ्टा गोम्पा के मध्य में शपजे-करमो। चौथा शपजे बारह वर्ष पूर्व गेङ्टा गोम्पा में ले जाया गया। इसके अतिरिक्त चार चक्तक् या संकल हैं—(1) गेङ्टा गोम्पा के पास, (2) लङ्चेनफुक् के पास (न्यनरी गोम्पा के नीचे), (3) चरोक डोङखङ के पास (डिरफुक् गोम्पा और डोलमा ला के मध्य में) और (4) ल्हलम-थरथक्-तोलमो-करमो के पास।

कैलास के चारों ओर निम्नलिखित चार 'थुटुप' हैं। इन स्थानों पर यात्री गण अपने रक्त और बालों को चढ़ाते हैं एवं चित लेटकर मरने का अभिनय करते हैं और कैलास के इन स्थानों में देह-त्याग करना पुण्यप्रद मानते हैं—(1) तरबोछ के पास टचुङ-मप्ग्या, (2) डोलमा ला के मार्ग में चरोक डोङखङ के पास शिवाछल थुटुप, (3) जुंठुलफुक् गोम्पा के ऊपर, और (4) गेङ्टा गोम्पा और सिलुङ के मध्य मार्ग में। कैलास के चारों ओर चार

1. तिब्बती भाषा में 'न्यन' हिरन को कहते हैं। एक बार एक न्यन (हिरन) इस पर्वत में घुस गया। इसलिए इसका नाम न्यनरी (हिरन-पर्वत) पड़ा है। वहाँ के मठ को न्यनरी गोम्पा कहते हैं। भारतवासी अपभ्रंश कर इसे नंदी कहते हैं। परंतु कुमाऊँ के कत्यूरी राजा नंदीदेव या शिव के नंदीगण से इसका कोई संबंध नहीं है। क्योंकि कत्यूरी राजा नंदीदेव अशोक के समय में था, उसका काल ईस्वी सन् से ढाई सौ वर्ष पहले का है, और बुद्ध धर्म का आरंभ तिब्बत में ईसा की सातवीं शताब्दी में हुआ। न्यनरी गोम्पा का निर्माण इससे बहुत ही पीछे हुआ है। इसलिए कुछ ऐतिहासिकों ने (उदाहरण के लिए 'कूर्माचल कांति' के लेखक ने) न्यनरी को नंदी समझकर उसे नंदीदेव के और नंदीगण के साथ जोड़ने का जो यत्न किया है, वह सर्वथा अशुद्ध, भ्रमात्मक और सत्य से दूर है।

छकछल-गङ हैं, जहाँ से साष्टांग दंडवत् नमस्कार किया जाता है; इन्हें चंगजा-गङ भी कहते हैं—(1) तरछेन के 2¼ मील आगे, (2) न्यनरी गोम्पा से करीब 3 मील पर, (3) डोलमा ला के पास, और (4) खंडोसङलम छू[1] के मुखद्वार पर।

कैलास के पश्चिम भाग में सेरशुङ नामक स्थान में तरबोछे या एक बड़ी ध्वजा है। यहाँ प्रतिवर्ष वैशाख शुक्ल चतुर्दशी और पूर्णिमा के दिन बड़ा भारी मेला लगता है। यात्री लोग चतुर्दशी के दिन उस ध्वजा को उतारकर रंग-बिरंगी, मंत्रयुक्त पताकाओं और झंडों को बाँधकर शाम के समय आधा खड़ा कर देते हैं, और पूर्णिमा के दिन सबेरे नौ बजे तक पूरा खड़ा करके परिक्रमा के लिए आगे बढ़ जाते हैं। गरतोक से पश्चिमी तिब्बत के दोनों वायसरायों (गरपोन) के दो प्रतिनिधि आकर ध्वजारोहण के उत्सव की देखभाल करते हैं। ध्वजा को खड़ा करने का काम पुरङ-तकलाकोट की जनता द्वारा संपन्न होता है। मैं इस मेले में दो बार जा चुका हूँ। वैशाख पूर्णिमा बुद्ध भगवान के जन्म, ज्ञानोदय और निर्वाण का दिवस है। यह तिथि बौद्ध धर्मावलंबियों के लिए परम पवित्र है। यहाँ घोड़े के वर्ष में एक बृहत मेला लगता है। उस समय चीन, साइबेरिया, मंगोलिया, जापान, ब्रह्मा, श्याम, लंका इत्यादि देशों के बौद्ध यात्री परिक्रमा के लिए जाते हैं। उस वर्ष भारत से भी बहुत यात्री परिक्रमा के लिए जाते हैं। इस विशेष वर्ष की कैलास या मानसरोवर की परिक्रमा अन्य समय की तेरह परिक्रमाओं के समान मानी जाती है।

ध्वजा के पश्चिम में दो सौ गज की दूरी पर छोरतेन-कङनी नामक एक लाल द्वार है, जिसमें से होकर पशुओं को भी ले जाना कल्याणप्रद माना जाता है। ध्वजा से एक मील आगे ल्हा छू के दाहिने किनारे के पर्वत न्यनरी गोम्पा के दक्षिण में प्रख्यात सिद्ध मिलरेपा की गुफा और नदी के बाएँ किनारे पर मार्ग से 200 गज दूरी पर पोनधर्मी (वाग-मार्गी) नरोपुंजुंग की गुफाएँ हैं। सन् 1937 में मैंने मानसरोवर पर निवास किया था। उस समय जब मैं इस मेले में गया, तो कैलास की परिक्रमा के समय इसके उत्तर डोलमा ला के पास पाँच-छह फीट बर्फ पड़ी हुई थी। दिन में बर्फ गलकर भीतर धँस जाने का भय रहता था। इसलिए मैंने उस घाटा को रात के बारह बजे के समय पार किया था। तिब्बतियों का कहना है कि मानसरोवर की अपेक्षा कैलास के चारों ओर देवी-देवताओं के स्थान (फुटङ) अधिक हैं।

कैलास–शिखर कैलास पर्वत की उत्तर दिशा में वज्रपाणि (छानादोर्जे) और अवलोकितेश्वर (चेनरेसी) नामक दो चोटियों के मध्य भाग से उत्तरादि मठ डिरफुक् के भिक्षुओं के साथ एकांत में मौन-वार्तालाप करता रहता है। कैलास–शिखर का उत्तरी दृश्य अति चंचल प्रकृति के व्यक्तियों को भी पूर्णरूप से सम्मोहित करके एकाग्र बना देता है। उसकी नैसर्गिक शोभा और प्रतिभा यात्रियों को स्वर्गीय आनंद प्रदान करने वाली है।

---

1. नदी या नाले ।

डिरफुक् गोम्पा से $1\frac{1}{4}$ मील आगे चलने के पश्चात, राजमार्ग छोड़कर दाहिनी ओर उतरकर जाने से सामने जंबयङ और छोगेल-नोरसङ नामक पहाड़ों के मध्य में एक सुंदर बर्फीला घाटा दिखाई पड़ता है, जिसका नाम खंडोसङलम ला[1] है। तिब्बती पुराणों का आदेश है कि कैलास की 12 परिक्रमाएँ करने के बाद यात्री तेरहवीं परिक्रमा में उस मार्ग से जाने का अधिकारी हो जाता है। यह पथ डोलमा ला के आगे $4\frac{3}{4}$ मील पर परिक्रमा-मार्ग पर मिल जाता है। अब तक इस घाटे को तिब्बतियों के अतिक्त अन्य कोई न तो जानता था, न कोई उस रास्ते से होकर गया ही था। पहलेपहल मैंने इस घाटे को दो बार, 11.7.1941 और 13.9.42 में पार किया था।

कैलास के पूर्व में, डोलमा ला से दो सौ गज उतरकर गौरीकुंड नामक एक छोटा-सा सर है, जिसे तिब्बती भाषा में ठुकीजिङ्बू कहते हैं। यह सर कपाल के आकार का लगभग पौन मील लंबा और आधा मील चौड़ा है, जो बारहों महीने बर्फ से ढका रहता है। यहाँ प्रतिदिन किसी न किसी समय कुछ न कुछ बर्फ पड़ती ही रहती है। यात्रीगण पत्थरों या लाठियों से बर्फ को तोड़कर उसमें स्नान करते हैं। शीताधिक्य से स्नान न कर सकने वाले केवल मार्जन और आचमन करके ही तृप्त हो जाते हैं। इसमें दक्षिण की ओर के पहाड़ों से बड़े-बड़े हिमखंड सदा गिरते ही रहते हैं। यात्रीगण गौरीकुंड का जल प्रसाद के रूप में ले जाते हैं। मैं वैशाख की पूर्णिमा के अवसर पर जब इसके ऊपर से होकर गया, उस समय यह मोटी बर्फ से ढका हुआ था, जिसको तोड़ने पर भी आचमन के लिए जल नहीं मिला।

गौरीकुंड के संबंध में कङरी-करछक में लिखा हुआ है कि एक समय खम् देश की एक स्त्री अपनी गोद में बच्चे को लेकर कैलास की परिक्रमा कर रही थी। बारहवीं परिक्रमा करते समय गौरीकुंड में जब वह पानी के लिए झुकी, तो बच्चा गोद से गिरकर जल में डूब गया। बच्चे के गिर जाने से कुंड अपवित्र हो गया। इस प्रकार की अन्य दुर्घटना फिर घटित न हो जाय, इस आशंका से गौरीकुंड बारह मास जमा हुआ ही रहने लगा।

तरछेन से, जहाँ से कैलास की परिक्रमा प्रारंभ होती है, सिलुङ मठ होकर सात मील की दूरी पर, शिखर की जड़ में, खड़ी दीवाल की मेखला में सेरदुङ-चुकसुम (सोने का स्तूप-तेरह) नाम से उन्नीस छोर्तेन या स्तूप हैं, जो तीन झुंडों (8, 9, 2) में विभक्त हैं। डेकुङ[2]

---

1. विशेष विवरण श्री कैलास-परिक्रमा की तालिका में दिया गया है। प्रायः पर्वत–मालाओं को सभी स्थानों से आर-पार लाँघ नहीं सकते। पहाड़ की रीढ़ पर कोई निचला स्थान, जहाँ से होकर एक ओर से चढ़कर दूसरी ओर उतर सकते हैं, उसका नाम 'घाटा' है। इसी को हिमालय से पहाड़ों में 'धुरा', 'जोत', और कभी-कभी 'डाँडा' भी कहते हैं। घाटा चौड़ा भी हो सकता है और तंग भी हो सकता है। यदि घाटा बहुत ही संकीर्ण हो और दोनों पार्श्व के पर्वत ऊँचे और दीवाल की भाँति हों, तो उसे 'दर्रा' कहते हैं, जैसे खैबर दर्रा। कम ऊँचाई के घाटों को अल्मोड़े जिले में 'छीना' और गढ़वाल में 'खाल' कहते हैं। इन सभी को अंग्रेजी में केवल 'पास' कहते हैं और तिब्बती में 'ला'।
2. यह विहार ल्हासा के ईशान कोण में सौ मील की दूरी पर है।

नामक विहार के प्रधान लामाओं की यहाँ समाधि है। कैलास–शिखर से दक्षिण मुख की सीढ़ियों से होकर सेरदुङ-चुकसुम के पार्श्व में बर्फ गिरकर चावल का ढेर-सा लगा देती है। यहाँ से चरोकफुरदोद ला होकर उतरकर चार मील नीचे छो कपाला[1] या कपाल सर नामक पत्थरों के मध्य में दो छोटे-छोटे तालाब हैं। इनमें से ऊपर वाले का जल काला और नीचे वाले का श्वेत होता है। तिब्बती भाषा में काला जल वाला कुंड 'रुक्ता' और श्वेत जल वाला कुंड 'दुरची' के नाम से प्रसिद्ध है। रुक्ता की परिधि 660 और दुरची की 1320 फीट है। कङरी-करछक में लिखा हुआ है कि रुक्ता का जल 'छंग'-जैसा काला और दुरची का दूध-जैसा श्वेत है। कहा जाता है कि कैलास की कुंजी (दिमिक) दुरची में और मानसरोवर की कुंजी लङछेनफुक् में है।

तिब्बती पुराणों में यह नियम है कि श्री कैलासं की तेरह परिक्रमा करने वालों को छोड़कर और कोई दूसरा इस सेरदुङ-चुकसुम और कपाली सर में नहीं जा सकता। मैं इन दोनों तीर्थों पर सन् 1937 में दो बार और 1942 में एक बार गया था। तिब्बतियों को छोड़कर मेरे सिवा किसी अन्य देश का कोई भी व्यक्ति इन स्थानों में अब तक नहीं पहुँच पाया है। स्वीडेन निवासी भूगोल-शास्त्रवेत्ता, डॉक्टर स्वेन हेडिन ने इन कपाली सरों को बिना देखे ही कैलास-शिखर के पूर्व में अवस्थित गौरीकुंड को ही छो कपाला का नाम दे दिया है। इन्होंने छो कपाला का नाम तो सुना होगा, परंतु इस नाम का एक भिन्न सरोवर है, इसका उन्हें पता नहीं था।

गतवर्ष (15.9.42) मैं छो कपाला के रुक्ता तालाब से 7 सेर वजन का सामुद्रिक जंतुओं का एक प्रस्तरावशेष (फ़ॉसिल-बेड) लाया। छो कपाला की ऊँचाई समुद्र-तल से 17000-18000 फीट के मध्य में होगी। मैंने इन प्रस्तरावशेषों को निरीक्षण के लिए 'जुओलॉजिकल सर्वे ऑफ़ इंडिया' के अध्यक्ष डॉक्टर बेनीप्रसाद जी को दे दिया है। वे परीक्षा करके उसकी रिपोर्ट शीघ्र ही देने वाले हैं। ये प्रस्तरावशेष उस समय के सीप और घोंघा जातीय जंतुओं के हैं, जब कि कैलास लाखों वर्ष पहले समुद्र के गर्भ में अंतर्निहित था। इनके बारे में यह पता चला है कि अब तक कैलास पर्वत-माला से (जो आधुनिक ट्रेंस-हिमालया के अंतर्गत है) संगृहीत सामुद्रिक जंतुओं के सबसे पहले प्रस्तरावशेष ये ही हैं। यदि ये कुछ विशेष महत्व के निकले, तो इस वर्ष (1943 में) जब मैं कैलास जाऊँगा, तो कुछ और भी प्रस्तरावशेषों को लाने का मेरा विचार है।

कैलास पर्वत के पश्चिम होकर बहने वाली ल्हा छू, पूर्व होकर बहने वाली झोङ झू, और बीच में होकर बहने वाली तरछेन छू नामक नदियाँ तिब्बती धर्म ग्रंथों में केङमा, रेङमा और उमा या इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाम से, तथा कैलास सहस्रार चक्र के रूप में वर्णित है। ये तीनों मिलकर राक्षस-सरोवर में गिरती हैं।

---

1. इस नाम की दो गुफाएँ हैं, जिनमें से एक मानसरोवर के उत्तरी तट पर और दूसरी न्यनरी गोम्पा के पास अवस्थित है।

मानसरोवर की वास्तविक परिधि अधिक-से-अधिक 54 मील की है। मानसरोवर के पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तरी तट क्रम से 16, 10, 13 और 15 मील लंबे हैं। सरोवर की लंबाई व चौड़ाई इस पार से उस पार तक लगभग 13-14 मील होगी। यह उत्तर में कपाल-जैसा चौड़ा और दक्षिण में संकीर्ण है। एकाई कावगूची ने एक बार भी मानसरोवर की परिक्रमा पूरी नहीं की, यद्यपि तिब्बत में तीन वर्ष तक भ्रमण किया। उनके साथ उन्हीं के समान अन्य व्यक्तियों के अनुसार, इसकी परिधि 200 या 80 मील बताई जाती है। परंतु यह बात नितांत भ्रमपूर्ण और अशुद्ध है।

सरोवर के किनारे पर (1) पश्चिम में गोछुल गोम्पा, (2) वायव्य कोण में च्यू गोम्पा, (3) उत्तर में चेरकिप, (4) लङपोना, (5) पोनरी गोम्पा, (6) पूर्व में सेरलुङ गोम्पा, (7) दक्षिण में येर्नगो गोम्पा, और (8) ठुगोल्हो गोम्पा अवस्थित हैं। सभी मठों को देखते हुए परिक्रमा करने से 64 मील का पूरा चक्कर हो जाता है। शीतकाल में जब सरोवर और उसमें गिरने वाले नदी-नाले जम जाते हैं, तब उनके किनारे-किनारे परिक्रमा की जा सकती है। उस समय या तो वसंत या शरद ऋतु में, जब छोटी-छोटी नदियाँ सूख जाती हैं और बड़ी नदियों में जल कम रह जाता है, जिससे सुगमता से उन्हें लाँघा जा सके, तब तिब्बती लोग परिक्रमा करते हैं। ग्रीष्म और वर्षा ऋतु में नदी में बाढ़ आने के कारण कोई भी यात्री किनारे से होकर नहीं जा सकता। उत्तर में तो किनारे को छोड़कर बहुत ऊपर होकर जाना पड़ता है। इसके अतिरिक्त ग्रीष्म ऋतु में गलती हुई बर्फ के कारण बाढ़ आ जाने से सरोवर में गिरने वाले सभी नदी-नाले बहुत भयानक और वेगशील हो जाते हैं और बहुधा दोपहर के बाद तो अलंघनीय हो जाते हैं। ऐसे समय यात्री को उसी किनारे पर रुकना पड़ता है और दूसरे दिन जब पानी घटता है, तब नदी को पार करना पड़ता है। इसके अतिक्ति जिस समय भारत से यात्री जाते हैं, उस समय मानसरोवर के किनारे पर पूर्व दिशा से डाकुओं के झुंडों के आने की संभावना रहती है; इसलिए ग्रीष्म और वर्षा ऋतु में कैलास-यात्रा की इच्छा रखने वाले लोगों को चाहिए कि वे झुंड बाँधकर बंदूक और अच्छे घोड़ों को साथ लेकर जाएँ।

मानसरोवर के चारों ओर चार लिङ या छोरतेन (चैत्य या स्तूप) हैं, जो वहाँ के विख्यात लामाओं के स्मारक हैं और च्यू गोम्पा, लङपोना गोम्पा, सेरलुङ गोम्पा और ठुगोल्हो गोम्पा में बने हुए हैं। मोमोदुनगु (नैर्ऋत कोण), सेराला (पश्चिम), हवासेनी-मदङ (पूर्व) और रिलजुङ (आग्नेय कोण)—यहाँ पर चार छकछल-गङ हैं।

सरोवर की परिक्रमा चार या पाँच दिनों में सुगमतापूर्वक की जा सकती है। शीतकाल में शीघ्रता से तीन दिन में और अति शीघ्रता से दो दिन में भी परिक्रमा पूरी की जा सकती है। मैंने शीतकाल में मानसरोवर की जमी हुई अवस्था में छह और अन्य ऋतुओं में ग्यारह (कुल 17) परिक्रमाएँ की हैं, जिनमें से कुछ चार दिन में, कुछ तीन दिन में और एक दो दिन में समाप्त की थी।

7. कैलास-मानसरोवर की चार महानदियों के उद्‌गम-स्थानों पर नवीन प्रकाश

नदियों के उद्‌गम-स्थान का निर्णय करते समय यह समस्या सामने खड़ी होती है कि यदि किसी नदी की एक से अधिक प्रधान उपनदियाँ हों, तो उनमें से कौन-सी प्रधान मानी जाय? इसके उत्तर में पाँच और प्रश्न उठते हैं—(1) जिस उपनदी को स्थानीय जनता परंपरा से प्रधान नदी मानती है, क्या उसको प्रधान नदी मान लिया जाय? (2) जो उपनदी सब से लंबी हो, उसको प्रधान मान लिया जाय? (3) जो सबसे बड़ी या अधिक जल वाली नदी हो, उसको प्रधान मान लिया जाय? (4) जो हिमनदी से निकल रही हो, उसको प्रधान मान लिया जाय? (5) जो उपनदी इन चारों लक्षणों की पूर्ति करती हो, उसको प्रधान नदी मानकर उसके सिरे को उद्‌गम-स्थान निर्धारित किया जाय? कोई यह कहे कि सब कसौटियों को ध्यान में रखकर निर्णय करना चाहिए, तो इन चार नदियों या हिमालय की अन्य नदियों का उद्‌गम-स्थान निर्णय करना ही असंभव हो जायगा, क्योंकि कोई भी नदी इन चारों लक्षणों को पूरा नहीं करती है। ऐसी परिस्थिति में एक अन्य प्रश्न भी उठ खड़ा होता है कि किन लक्षण या लक्षणों को प्रधानता देनी चाहिए? और क्यों?

यदि नदी की लंबाई की प्रधानता दे दी जाय, तो गंगा का उद्‌गम-स्थान हिमालय में नहीं रहेगा, अपितु मध्यभारत में महू के पास चंबल नदी के सिरे पर होगा; क्योंकि चंबल नदी गंगा की सहायक नदियों में सबसे लबी है। इसका अर्थ यह होगा कि गंगा-जैसी हिमालय की विख्यात नदी का उद्‌गम विन्ध्याचल में मानना पड़ेगा जो कि हास्यास्पद है। अधिक जल के प्रमाण से निर्णय करना हो, तो गंगा का निकास अलकनंदा का (जो गंगा से दुगुनी बड़ी है) मूल सतोपंथ या माना-घाटा में रखना पड़ेगा। इसलिए बहुत दूरदर्शिता के साथ सर्वे ऑफ़ इंडिया ऑफिस ने गंगा का उद्‌गम-स्थान गोमुख में ही निश्चित किया है, जो परंपरा से चलता आया है।

इसलिए मैंने भी श्री कैलास-मानसरोवर की चार महानदियों का उद्‌गम-स्थान निर्णय करने में तिब्बती परंपराओं को प्रधानता दी है। कभी कालांतर में इन नदियों के उद्‌गम का निर्णय करने में कसौटियों के बदलने पर इनके बारे में मेरे अन्वेषण का निर्णय वृथा या विस्फोटित न हो जायँ, इस बात को दृष्टि में रखकर सभी दृष्टिकोणों से परंपरा, लंबाई, अधिक जल और हिमनदी की कसौटियों से इन चार महानदियों के विविध उद्‌गम-स्थानों पर मैंने स्वयं जाकर जाँच की है।

तिब्बती परंपरा के अनुसार सतलज (लङ्चेन खंबब्) का उद्‌गम-स्थान मानसरोवर से 37 मील पश्चिम में दुलचू गोम्पा के समीप वाले स्रोतों में है। सिंधु नदी (सिंगी खंबब्) का उद्‌गम कैलास के उत्तर में और मानसरोवर से 62 मील की दूरी पर सिंगी खंबब् नामक स्रोतों में है। ब्रह्मपुत्र नदी (तमचोक खंबब्) सरोवर के आग्नेय कोण में 63 मील की दूरी पर चेमायुङ्डुङ नाम की हिमनदियों से निकलती है और करनाली (मप्चा खंबब्) का निकास

मानसरोवर के वायव्य कोण में 30 मील की दूरी पर मप्चा चुंगो नामक स्रोतों में है।

यदि जल के परिमाण के विचार से देखा जाय, तो सतलज का उद्‌गम, दारमा-याङती नदी के सिरे पर दारमा घाटा के पास; सिंधु नदी का उद्‌गम, गरतोङ छू के सिरे पर या लुङढेप छू के सिरे पर तोंपछन घाटे में; ब्रह्मपुत्र का उद्‌गम-स्थान कुबी कङरी हिमनदियों में, और करनाली का निकास लंपिया घाटा के समीप सिद्‌ध होगा। इस अवस्था में इन चारों नदियों के उद्‌गम-स्थान हिमनदियाँ ही हैं; परंतु तिब्बती परंपरा के अनुसार करनाली को छोड़कर अन्य नदियों का उद्‌गम-स्थान च्युत हो जाता है, या बदल जाता है।

यदि लंबाई की दृष्टि से देखा जाय, तो सतलज का उद्‌गम टग छम्पो के सिरे पर कङलुङ कङरी हिमनदियों में, या टग नदी की दक्षिणी उपनदी गंगा के सिरे पर, या समो छम्पो के सिरे पर, या ल्हा छू के सिरे पर सिद्‌ध होगा। इसी प्रकार सिंधु नदी का उद्‌गम-स्थान तोपछेन घाटा के समीप; ब्रह्मपुत्र का चेमायुङडुङ में, और करनाली का लंपिया घाटा में होगा। लंबाई के दृष्टिकोण से सिंधु को छोड़कर अन्य तीनों नदियों के उद्‌गम, परंपरा से आए हुए स्थानों में होंगे; परंतु इन सभी नदियों के उद्‌गम हिमनदियों में ही होंगे।

इन नदियों के उद्‌गम-स्थान के संबंध में बहुत वर्षों से चर्चा होती चली आती थी। सन् 1907-8 में डॉक्टर स्वेन हेडिन के अन्वेषणों से यह चर्चा समाप्त-सी मान ली गई। उक्त डॉक्टर ने उद्‌गम-स्थानों का निर्णय करते हुए ब्रह्मपुत्र के विषय में जल के परिमाण को महत्व देकर, सिंधु के विषय में अन्वेषण करते समय तिब्बत सरकार की रुकावट और समयाभाव के कारण परंपरा को मुख्य मानकर, और सतलज के विषय में लंबाई को प्रधानता देकर संपूर्ण तार्किक, शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक प्रमाण और नियमों को उल्लंघित करके ठुकरा दिया है। साथ ही वे इस बात का गर्व करते हैं कि "इन नदियों का पूरा अन्वेषण करने वाला पहला पाश्चात्य और श्वेत व्यक्ति मैं ही हूँ।" परंतु स्वेन हेडिन के निर्णय के अनुसार सतलज का उद्‌गम-स्थान कङलुङ कङरी में, सिंधु का सिंगी खंबब् के सोतों में और ब्रह्मपुत्र का कुबी कङरी में होगा। उनका यह निर्णय उक्त परंपरा, जल का परिमाण और लंबाई इन तीनों कसौटियों में से किसी एक पर भी पूर्ण रूप से खरा नहीं उतरता। उनके लेख या कृतियों में प्रमादवश या अज्ञात रूप से कोई त्रुटि हो गई तो कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। परंतु महान खेद की बात यह है कि इन नदियों के उद्‌गम पर स्वयं जाकर पहले-पहल पता लगाने का महान गौरव पाने के यत्न में उन्होंने जान-बूझकर कई बातों को तोड़-मरोड़ दिया और कई बातों को दबा दिया। इनके बारे में जो अपूर्ण और त्रुटि-युक्त निर्णय दिए गए हैं, वे स्वेन हेडिन–जैसे आजन्म भूगोल-शास्त्रवेत्ता, वैज्ञानिक तथा अन्वेषक (एक्सप्लोरर) के लिए उचित नहीं जँचते। इसलिए इन नदियों के उद्‌गम-स्थान के पहले पता लगाने वाले वे नहीं कहे जा सकते। उन्होंने स्वप्न में भी यह न सोचा होगा कि मानसरोवर पर तपस्या के लिए गया हुआ एक साधारण संन्यासी, जिसके पास पाश्चात्य वैज्ञानिकों की भाँति आधुनिक साधन संपत्ति किंचित मात्र भी नहीं है, उनके निर्णयों को ठुकराकर त्रुटिपूर्ण सिद्ध कर देगा।

स्वेन हेडिन के ठीक तीस वर्ष बाद, सन् 1937 में, मैंने इन चारों नदियों के उद्गम-स्थानों का सभी दृष्टिकोणों—परंपरा, जल का परिमाण, लंबाई और हिमनदियों—से स्वयं उन स्थानों में जाकर पता लगाया।[1] मेरे इन नदियों के संबंध में किए हुए निर्णय और मानसखंड में किए हुए अन्य अन्वेषणों को सर्वे ऑफ़ इंडिया ऑफिस ने स्वीकार कर लिया है, और दिसंबर 1941 के अपने मानचित्रों में भी छाप दिया है।

इन नदियों के संबंध में मेरे लेख और पुस्तक की समालोचना करते हुए 'रॉयल ज्याग्रफिकल सोसाइटी' के सदस्य डॉक्टर लांगस्टेफ और एवरेस्ट एक्सपेडिशन के डॉ0 सोमरवेल ने लिखा है—"पाश्चात्यों की धृष्टता है कि अपने विचार-भावों को दूसरी जातियों पर उनकी परंपरा के विरुद्ध अनुचित रूप से लादना चाहते हैं। कैलास-मानस के इन चार महानदियों के उद्गमों के संबंध में स्वामी जी के निर्णय से हम पूर्णरूप से सहमत हैं।"

सिंधु नदी की लम्बाई 1700 मील, ब्रह्मपुत्र की 1680 मील, सतलज की प्रायः 900 मील, करनाली की (जो गंगा की उपनदी है) प्रायः 600 मील और गंगा की 1514 मील है। भौगोलिक जटिल वाद-विवादों को छोड़कर, साधारण जनता के लिए सीधी भाषा में यह कहा जा सकता है कि सतलज ही एक ऐसी नदी है, जो राक्षसताल के वायव्य कोण से निकलती है।

लीपूलेख से आने वाली काली नदी नंदाकोट–शिखर से आने वाली सरयू से मिलकर टनकपुर से चलकर शारदा नाम से प्रसिद्ध हो जाती है। मप्चा-चुंगों से आने वाली करनाली या मप्चा खंबब् मानसखंड और नेपाल से उतरकर घाघरा नाम से प्रसिद्ध हो जाती है। शारदा और घाघरा चौकाघाट के पास मिलकर वहाँ से गंगा में गिरने तक सरयू और घाघरा इन दोनों नामों से पुकारी जाती हैं। सरयू नदी मानसरोवर से निकलती है—ऐसा कितने लोगों का भ्रमपूर्ण विश्वास है। इसीलिए यहाँ इसका स्पष्टीकरण किया गया है।

हृषीकेश के श्री स्वामी शिवानंद जी अपनी 'ए ट्रिप टू कैलास-मानसरोवर' नामक पुस्तक में लिखते हैं—"ब्रह्मपुत्र मानसरोवर से निकलती है; डिरफुक् गोम्पा के सामने, कैलास-शिखर के उत्तरी जड़ पर, हिमखंडों से सिंधु नदी निकलती है और सतलज नदी गौरीकुंड से निकलकर कैलास के पूर्व में बहती है।"

श्री पुरोहित स्वामी 'दी होली मौंटेन' नामक पुस्तक में लिखते हैं—"सिंधु नदी मानसरोवर से निकलकर कैलास के दक्षिण पाद-तल पर पश्चिम दिशा में बहती है। कैलास

---

1. इसके विषय में विशेष जानने की इच्छा रखने वाले कलकत्ता विश्वविद्यालय से छपे हुए ग्रंथकर्ता के 'एक्स्प्लोरेशन इन टिबेट्' नामक ग्रंथ को, देख सकते हैं। ग्रंथकार ब्रह्मपुत्र के उद्गम-स्थान पर 17, 18-6-1937 को, सिंधु नदी के उद्गम पर 4-7-1937 को, दुलचू गोम्पा पर 30-8-1936 और 6-7-1941 को, कङलुङ कङरी पर 16-6-1937 को, मप्चा-चुंगो पर 9-9-1928 और 23-8-1936 को, गरतोङ छू के मूल पर 19-9-1928 को और तोपछेन घाटा पर 7-7-1937 को गया था।

के ईशान कोण में 19000 फीट की ऊँचाई पर गौरीकुंड नामक ताल है, जिसके पूर्व भाग से निकलकर ब्रह्मपुत्र, कैलास-शिखर की तलहटी के किनारे-किनारे बहती है।''

ऐसा ही 'डायरी ऑफ़ ए पिलग्रिमेज टू लेक मानसरोवर एंड मौंट कैलास विद एच0एच0 दी महाराजा ऑफ़ मैसूर इन 1931' नामक पुस्तक में श्री रंगाचार लिखते हैं—''मानसरोवर के पूर्व से ब्रह्मपुत्र और पश्चिम से सतलज या सिंधु निकलती है।''

'कैलास का दर्शन' नामक पुस्तक में श्री रामशरण विद्यार्थी लिखते हैं—''कैलास के चारों ओर से चार महानदियाँ निकलती हैं। इसके दक्षिण से सिंधु, पश्चिम से लाक्षू, उत्तर से सतलज और पूर्व से गुंग छू नदी निकलती है; इनमें से दो नदियाँ तिब्बती हैं और दो भारत में प्रवेश करती हैं। यहाँ हम सतलज नदी के तट पर पहुँचे। इसका निकास गौरीकुंड के समीप में ही है।'' स्पष्ट मालूम पड़ता है कि रामशरण जी ने इन अशुद्धियों का अनुकरण ऊपर उल्लिखित पुस्तकों से ही किया है।

यद्यपि पूर्वोक्त भ्रमात्मक वार्ताओं तथा कल्पनाओं का उत्तर देना आवश्यक नहीं है, क्योंकि उनके लेखक भूगोल-शास्त्रवेत्ता नहीं हैं, तथापि कई सज्जन उक्त पुस्तकों को पढ़कर अब भी इन नदियों के उद्गमों के बारे में पत्र द्वारा और स्वयं मिलकर मुझसे बहुत वादविवाद करते हैं। इसलिए जनता के प्रश्नों के उत्तर के रूप में उक्त वार्ताओं का संक्षेप में विवरण दे देना मैं उचित समझता हूँ, जिससे भविष्य में बहुतों को व्यक्तिगत रूप से उत्तर देने की आवश्यकता न पड़े। कैलास-मानसखंड की महानदियों के बारे में पूर्वोक्त सारी वार्ताएँ त्रुटिपूर्ण और भ्रमजनक हैं। वायव्य कोण में गंगा छू के अतिरिक्त मानसरोवर से अन्य कोई नदी नहीं निकलती। कैलास-शिखर की उत्तरी तलहटी से जो छोटी-सी नदी निकलती है, उसका नाम कङ्जम छू है। यह डिरफुक् गोम्पा के सामने ल्हा छू में जाकर गिरती है। जिस नदी को सतलज के नाम से इन लोगों ने पुकारा है, वह झोङ छू है। यह आगे चलकर ल्हा छू में मिलती है। कैलास के दक्षिण में सिंधु का होना केवल काल्पनिक है। कैलास की दक्षिण दिशा से तरछेन छू निकलती है और झोङ छू में जाकर मिलती है। पूर्वोक्त लेखकों ने जिस नदी को उत्तर में सतलज और पूर्व में गुंग छू बतलाया है, वे वास्तव में झोङ छू है। पश्चिम की लाक्षू, ल्हा छू है। झोङ छू और तरछेन छू मिलकर ल्हा छू में गिरती हैं। ल्हा छू राक्षसताल में जाकर गिरती है।

यह एक शोचनीय विषय है कि इस हिमालय के महान प्राकृतिक सौंदर्य का दर्शन कर आनंदित होने या इस दुर्भेद्य साम्राज्य में अन्वेषण करने के लिए देश-देशांतरों से कितने साधारण यात्री, वैज्ञानिक, अन्वेषक या पर्वतारोहण करने वाले आते हैं। किंतु भारत-संतान, स्थाणु की भाँति जड़भाव से बैठी है। जिज्ञासा करने पर इस जड़भाव के सैकड़ों कारण उपस्थित कर दिए जाते हैं। हमारे देशवासी प्रायः सभी कार्यों के लिए राजकीय दासता की दुहाई दे-देकर संतोष कर लेते हैं। वास्तविक बात तो यह है कि एवरेस्ट के उत्तुंग शिखर पर आरोहण करने के लिए, नंदादेवी, सतोपंथ या त्रिशूल की चोटियों पर स्थित होकर वास्तविक आनंद

का अनुभव करने के लिए, बालतरो की हिमनदी का अन्वेषण करने के लिए, सिंधु या ब्रह्मपुत्र के उद्गम-स्थानों का निर्णय करने के लिए, या मानसरोवर तथा राक्षसताल के ऊपर नौकाविहार में आनंद लूटकर उसकी अतल गहराई का पता लगाने के लिए भले ही कोई अँगरेज, अमेरिका–निवासी, जापानी, जर्मन, स्वीडेन–निवासी, स्वीटज़रलैंड या किसी अन्य देश के यात्री सात समुद्र और तेरह नदियों को पारकर यहाँ आते हों, पर यहाँ के निवासियों के कान पर जूँ तक नहीं रेंगती।

पूर्वकाल में अवस्था ऐसी नहीं थी। जब संसार के अन्य देशवासी, पर्वत और कंदराओं से भय खाते थे और प्रकृति नटी की सुंदरता का आनंद उपभोग करना भी नहीं जानते थे, उस समय अर्थात् आज से सहस्रों वर्ष पहले, हमारे पूर्वजों ने सारे हिमालय का अन्वेषण कर डाला था। वे उसके कोने-कोने पर पहुँच चुके थे। एकांत में रहकर प्रकृति नटी से मौन-वार्तालाप किया करते थे। उन्होंने सुंदर से सुंदर स्थानों का पता लगाया और उनके सौंदर्य तथा शोभा का पूरा आस्वादन किया। इसका प्रमाण यही है कि आजकल के दुर्भेद्य और दुर्गम पर्वत, नदी, नाले और घाटों का नामकरण-संस्कार तक वे कभी कर चुके थे। एक शब्द में, उन्होंने जीवन के सार-रूप लौकिक और पारलौकिक रचनाओं—वेद आदि ग्रंथों—की प्रेरणा पर्वतों से ही पाई। पर हम लोग आजकल इतने गिर गए हैं कि कोई किसी को 'पहाड़ी' कहे तो अपमान-सा समझते हैं।

आठवीं और दसवीं शताब्दी में महापंडित आचार्य शांतरक्षित और दीपंकर श्रीज्ञान हिमाच्छादित पर्वत-पंक्तियों के दुर्गम घाटों को पारकर 100 या 63 वर्ष की अवस्था में भी तिब्बत देश में बौद्ध धर्म का प्रचार करते थे। इनके अतिरिक्त प्राचीन काल के सैकड़ों पंडित धर्मप्रचारार्थ दुर्गम हिमालय को लाँघकर तिब्बत में भी जाते थे; पर आज उसी उत्साही देश में लोग अवसन्न हैं—मूक हैं! भारत में भी लक्ष्मी के लाड़ले सेठ और राजा-महाराजाओं की कमी नहीं है। यहाँ भी विद्वान हैं, संस्कार-संपन्न व्यक्ति हैं, वैज्ञानिक हैं, विख्यात विश्वविद्यालय हैं; पर दुःख की बात है कि हिमालय में भ्रमण और अन्वेषण की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। यहाँ पर न रुपए का अभाव है और न साधन-सामग्री की ही न्यूनता है। मेरी सम्मति में इसका एक ही कारण हो सकता है, वह यह कि भारतीयों में महान तूष्णीभाव छाया हुआ है—तटस्थता है, आलस्य है। इन दोषों को त्याग देने पर रुपया अपने आप आ जाता है, सहायक अनायास मिल जाते हैं और प्रकृति नटी अपने सुपुत्र के भव्य भाल पर विजयश्री का तिलक लगाकर उसे कृतार्थ कर देती है।

8. मानस और राक्षसताल, सह-सरोवर

मानसरोवर के पश्चिम में $1\frac{1}{2}$ से लेकर 6 मील की दूरी पर रावणह्रद है, जो आजकल रक्कसताल, राक्षसताल, राक्षससरोवर और रावणसरोवर के नामों से प्रसिद्ध है। मानसखंड के चीनी तथा पाश्चात्य मानचित्रों में भी दो-तीन सौ वर्ष पहले तक इसका नाम रावणह्रद ही पाया जाता है। इससे प्रतीत होता है कि 'राक्षसताल' नाम बहुत अर्वाचीन है। तिब्बती

लोग इसे लंगक् छो कहते हैं। इस सरोवर के किनारे पर लंकापति रावण ने कैलासाधिदेव शिव की तपस्या की थी। मानसरोवर और राक्षसताल कभी एक ही ताल रहे होंगे। उन दोनों को विभक्त करने वाली पर्वतश्रेणी बाद के भूगर्भ के आंदोलनों से निकल आई है। मानसरोवर का अधिकांश जल वायव्य कोण में स्थित गंगा छू नामक एक नाले से राक्षस-सरोवर में प्रवाहित होता है।

कई वर्षों के यत्न के पश्चात् रावणह्रद की पूरी परिक्रमा मैं गतवर्ष अक्टूबर मास में (13 से 17.10.1942) कर सका। पथ-प्रदर्शक के न मिलने और ऋतु अनुकूल न होने के कारण परिक्रमा असावधानी और शीघ्रता से करनी पड़ी। आँधी की भाँति प्रचंड वायु चल रही थी, मार्ग दुर्गम और पथरीला था। रात में इतनी शीत पड़ती थी कि तापमान हिमांक से 16 डिग्री (फारिनहाइट) नीचे रहता था। तंबू के भीतर बालटी में रखा हुआ जल एकदम जम जाता था। परंतु रावणह्रद का प्राकृतिक सौंदर्य भी निराला था। एक-एक मोड़ पर एक-एक नया दृश्य था। प्रायः ताल में लहरें इस प्रकार उछलकर टक्कर खा रही थीं कि फेन से चारों ओर सफेद ही सफेद दीख रहा था। थोड़ी दूर आगे चलकर एक मोड़ पर बिलकुल सन्नाटा छाया हुआ था। जल ऐसा निर्मल और निश्चल था कि नीचे का एक-एक पत्थर और छोटी-छोटी मछलियाँ स्पष्ट देखने में आ रही थीं। किसी और कोने में सैकड़ों लाल बतखें पानी में गोते लगा-लगाकर निर्भयतापूर्वक तैर रही थीं। एक मोड़ पर दक्षिण दिशा में अवस्थित मांधाता सामने हो जाता था। थोड़ी ही दूर पर एक दूसरी खाड़ी में सारा जल काँच-जैसा जम गया था और उत्तर का कैलास प्रतिबिंबित हो रहा था। यात्रा में यद्यपि बहुत कष्ट हुआ, परंतु कष्ट से अधिक आनंद भी आया।

रावणह्रद की परिधि 77 मील है। पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के तट क्रम से 18, 22, $28\frac{1}{2}$, $8\frac{1}{2}$ मील लंबे हैं। फिर से सावधानी के साथ परिक्रमा करने से संभव है कि ये अंक कुछ घट जायँ। उत्तर से दक्षिण की लंबाई लगभग 17 मील और पूर्व से पश्चिम की चौड़ाई 13 मील होगी। पश्चिमी किनारे पर एक गाँव है, जहाँ एक ही घर है।

वायव्य कोण में तट से $2\frac{1}{2}$ मील की दूरी पर चार संकीर्ण घाटियों के मेल में एक गंभीर और रमणीक स्थान में छेपगे नामक गोम्पा है। बिना मंजिल का एक साधारण मकान है। इसके चारों ओर के पहाड़ों पर मणि-दीवालें[1] और कई छोरतेन हैं। यह पहले तकलाकोट के सिंबिलिङ गोम्पा की एक शाखा थी, परंतु आजकल यह मशङ गोम्पा की शाखा हो गई है। इसके चारों ओर एक हजार फीट से अधिक ऊँचाई के पहाड़ की दीवालें हैं और गोम्पा घाटी में बना हुआ है। पास ही दो-तीन स्वच्छ जल के सुंदर स्रोत विद्यमान हैं। इनसे निकला हुआ जल एक छोटे-से नाले के रूप में नीचे बहता है। अनेक भिक्षु-भिक्षुणियाँ और गृहस्थ लोग पहाड़ की दीवालों पर ऊँची-ऊँची गुफाओं में मकान बनाकर रहते हैं। छेपगे गोम्पा लाल टोपी संप्रदाय वालों का है। मशङ गोम्पा के लामा की जन्मभूमि यहीं है। इस समय

1. वे दीवालें, जिन पर मणि-पत्थर रखे रहते हैं। मणि-पत्थर एक ऐसा पत्थर है, जिस पर मणि-मंत्र खुदा रहता है।

उनकी आयु 6 या 7 वर्ष की है। वे अवतारी लामा हैं और सन् 1941 में गद्दी पर बैठाये गए। मशङ गोम्पा की गद्दी पर बैठने वाले दूसरे लामा यही हैं। इनका भी एक मकान गोम्पा के समीपवर्ती पहाड़ की गुफा में विद्यमान है। सन् 1941 में जब कज्जाकी लुटेरों ने पश्चिम तिब्बत पर चढ़ाई की, तब छेपगे गोम्पा वालों ने ही उनकी अगुआ एक स्त्री को मार डाला और शेष लुटेरों को भारत की सीमा में प्रवेश करने से रोका।

स्वेन हेडिन ने राक्षसताल में भी नौका-यात्रा की थी और लाचातो द्वीप में गए थे। पर झंझावात के कारण पूर्ण रूप से राक्षसताल की गहराई का मानचित्र तैयार नहीं कर सके।

गतवर्ष परिक्रमा करते समय मैंने राक्षसताल के चारों ओर से पत्थरों के नमूने लाकर हिंदू-विश्वविद्यालय के भूगर्भशास्त्र-विभाग के अध्यक्ष, डॉ0 राजनाथ जी को अवलोकनार्थ दिए थे। ताल के पूर्वी तट पर भी अर्दङ फुक् से एक मील वायव्य कोण में मानसरोवर की भाँति चेमानेङा नामक एक रेत मिलती है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें हरे कणों का आधिक्य है।

राक्षसताल के वायव्य कोण से सतलज नदी निकलती है। जहाँ से वह निकलती है, वहाँ इतनी गहराई थी कि मैं 15.10.1942 को नदी पार करने में असमर्थ रहा। पार करने के लिए मुझे एक मील नीचे जाना पड़ा। नदी का बहाव लेजनडक तक सन 1935 में भी मैंने स्वयं देखा था। सतलज नदी जहाँ से निकलती है, उसके पास ही कुछ ऐसे छोटे-छोटे स्रोत हैं, जिनका जल राक्षसताल में गिरता है। इसी कारण कुछ लोग इस भ्रम में पड़ गए कि राक्षसताल से जल बाहर नहीं निकलता। इसके किनारे-किनारे दोनों ओर दुलचू गोम्पा तक दलदल प्रदेश है।

9. राक्षसताल के द्वीप

राक्षसताल में लाचातो और तोप्सेरमा (दोप्सेरमा) नामक दो द्वीप हैं। इन्हें 1937 की 15 और 16 अप्रैल को, जब समस्त ताल बर्फ से ढका हुआ था, मैं देखने गया था। याक पर चढ़, जमे हुए राक्षसताल के ऊपर होकर पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तट तक मैं गया था। लाचातो राक्षसताल से दक्षिणी तट के एक प्रायद्वीप की ओर अपनी ग्रीवा को बढ़ाए हुए कछुए के आकार का एक पहाड़ी टापू है। पहाड़ का पत्थर कुछ नीले रंग का है। देखने में यह 'पेरीडोटाइट' मालूम पड़ता है, जो धीरे-धीरे 'सर्पेंटाइन' (जहरमोरा) के रूप में बदल रहा है। इसी प्रकार के पत्थर कैलास में जुंठुलफुक् गोम्पा से चार मील नीचे और गुरला ला के नीचे भी पाए जाते हैं। इसकी ग्रीवा और प्रायद्वीप के सिरे के मध्य की दूरी आधे मील की होगी। टापू की परिधि लगभग एक मील की है। इसके पहाड़ की चोटी पर एक विशेष प्रकार के सफेद पत्थरों का लपचे (पत्थरों का ढेर) और मणि-पत्थर हैं। पहाड़ के पश्चिमी और पूर्वी भागों में हंसों के अंडे जमा करने वालों ने पत्थरों की दीवालों के घेरे डाल रखे हैं। द्वीप के पूर्वी भाग में थोड़ी-सी समतल पथरीली भूमि पर हंस बहुत रहते हैं। अप्रैल के अंतिम सप्ताह में जब हंस अंडे देते हैं, तो करदुङ के गोबा (प्रधान) के

नौकर अंडे जमा करने के लिए जाया करते हैं।

आज से बहुत वर्ष पहले राक्षसताल में घटी हुई दो घटनाओं का हाल एक बूढ़े तिब्बती ने मुझे सुनाया था। एक रात को जब अंडे जमा करने वाले दो तिब्बती लाचातो पर थे, तो अचानक राक्षसताल की बर्फ फट जाने से टापू किनारे से अलग हो गया। दोनों मनुष्य टापू में ही रह गए और उन्हें अपने पास के कुछ सामान, खरगोश के मांस और कुछ अंडों से ही दूसरे वर्ष के शीतकाल में बर्फ जमने के समय तक निर्वाह करना पड़ा। भोजन की कमी के कारण वे बहुत दुबले-पतले हो गए और दूसरे साल जब बाहर निकले, तो उनमें से एक दुर्बलता के कारण कुछ ही दिनों में मर गया। परंतु किसी को यह नहीं सूझी कि एक छोटी-सी चमड़े की नाव या लकड़ियों की तख्ती बनाकर उन बेचारों को वहाँ से बाहर ले आते। ऐसे ही दूसरी बार वसंत के प्रारंभ में, बोझ से लदा हुआ एक याक तालाब को पार करते समय बर्फ के टूट जाने से बोझ के साथ बर्फ के नीचे तालाब में डूब गया।

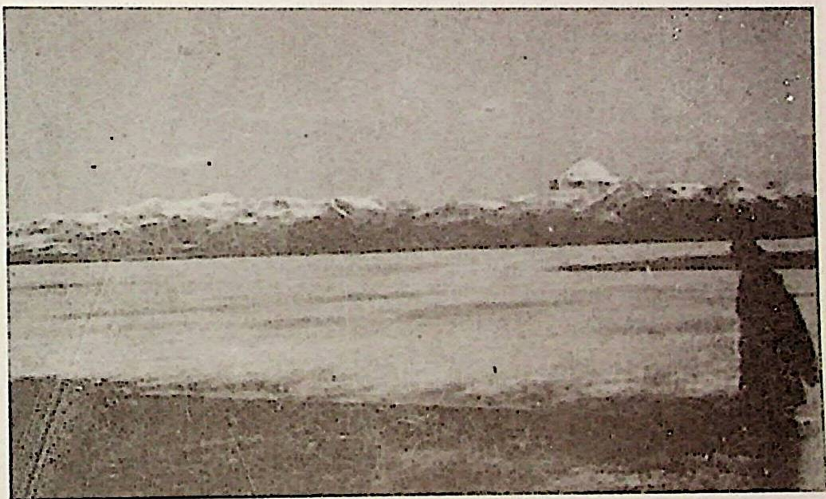
लाचातो के समान तोप्सेरमा भी एक पर्वतीय टापू है, पर यह उससे बहुत बड़ा है। इस टापू का दक्षिणी भाग तोनक (पत्थर—काला) के नाम से पुकारा जाता है, क्योंकि वहाँ का पहाड़ काला है। यह टापू पूर्व से पश्चिम की ओर एक मील और उत्तर से दक्षिण की ओर पौन मील लंबा है। पहाड़ के पूर्वी सिरे पर पक्की दीवाल के मकान के खंडहर हैं। कहा जाता है कि एक खंपा लामा ने इसमें सात वर्ष तक निवास किया था। वे शीतकाल में बर्फ जमने के बाद द्वीप से बाहर आकर वर्ष भर की लकड़ी और खाने-पीने का सामान आदि ले जाया करते थे। उस द्वीप के पर्यवेक्षण के स्मारक के रूप में मैं इन टूटी दीवालों में से चेनरेसी (अवलोकितेश्वर) की छोटी-सी मूर्ति लाया था, जो इस समय कलकत्ता विश्वविद्यालय के आशुतोष संग्रहालय में रखी गई है। तिब्बतियों को छोड़ इन पंक्तियों का लेखक ही ऐसा पहला व्यक्ति है, जो राक्षसताल के इन टापुओं के पहाड़ों की चोटियों पर खड़ा हुआ है। इन खंडहरों के नीचे के मैदान में दीवालों के घेरे हैं। यह द्वीप शुङबा के गोबा के अधिकार में है। जब लेखक यहाँ गया था, तो कोई भी जलपक्षी यहाँ नहीं था।

स्वेन हेडिन के और गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया सर्वे के मानचित्रों में तीन टापुओं को दिखलाया गया है, पर उनमें से दो के ही नाम दिए गए हैं। तीसरा टापू, जिसका नाम नहीं दिया गया है, और तोप्सेरमा—ये दो स्थान टूटी लकीरों द्वारा दिखलाए गए हैं। अपने पर्यवेक्षण और अन्वेषण से लेखक ने राक्षसताल में दो ही टापुओं को पाया। राक्षसताल प्रांत के शुङबा के गोबा ने, जिनके अधिकार में तोप्सेरमा का टापू है, टापू से तीन मील की दूरी पर राक्षसताल के पश्चिमी किनारे पर 1930 में अपना मकान बनवाया है। उनका भी कहना है कि राक्षसताल में दो ही टापू हैं। सन् 1938 में तकलाकोट के सिंबिलिङ मठ के एक भूतपूर्व लामा द्वारा चित्रित कैलास-मानसरोवर का एक चित्रपट हमें प्राप्त हुआ। राक्षसताल के पश्चिमी किनारे पर छेपगे नाम से सिंबिलिङ मठ की एक शाखा है। इसलिए उक्त लामा को राक्षसताल के संबंध में विश्वस्त ज्ञान हुआ होगा। उन्होंने अपने चित्र में राक्षसताल में केवल दो टापुओं को चित्रित किया है। एक बात और है; जिस समय स्वेन हेडिन राक्षसताल



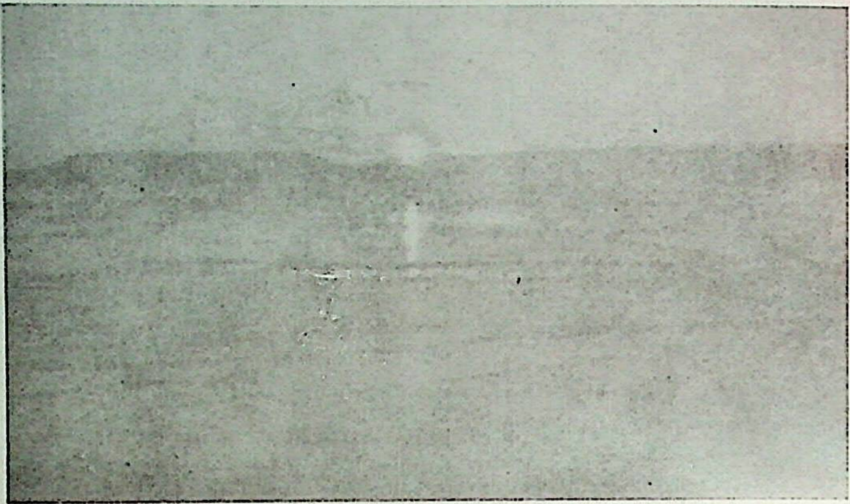
18. तोप्सेरमा–राक्षसताल का बड़ा द्वीप

[देखिए पृ० 60

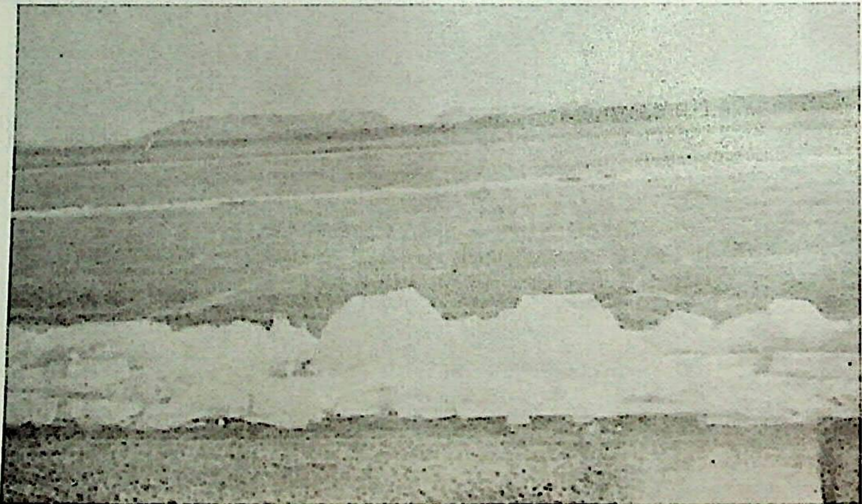


19. गंगा छू के मुखद्वार से कैलास का दृश्य

[देखिए पृ० 61



20. शीतकाल में मानसरोवर पर सूर्योदय



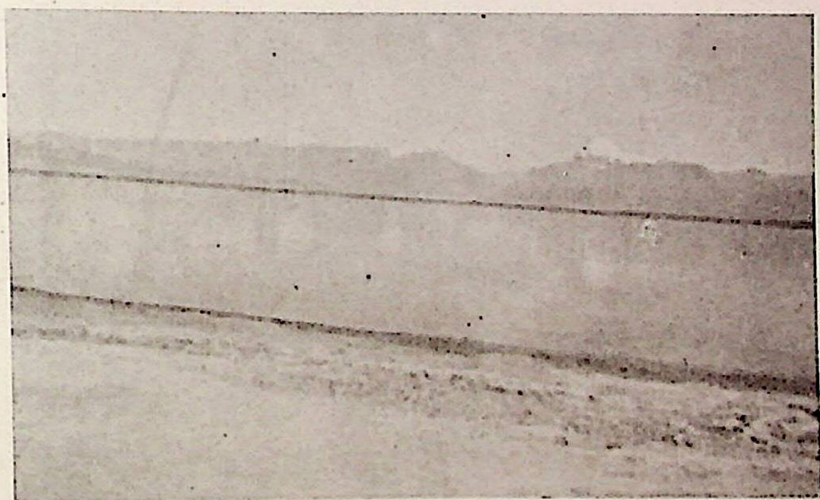
21. शीतकाल में जमे हुए मानसरोवर में टेढ़े-मेढ़े हिमखंड

[देखिए पृ० 82



22. दरार रहित राक्षसताल–लांचातो से तोप्सेरमा की ओर

[देखिए पृ० 83



23. दूसरे कोने में जमा हुआ रावणह्रद और कैलास-शिखर

[देखिए पृ० 83



24. शीतकाल में 'जेब्रा' के समान बर्फ की धाराओं से युक्त राक्षसताल का दक्षिणी तट

[देखिए पृ० 83



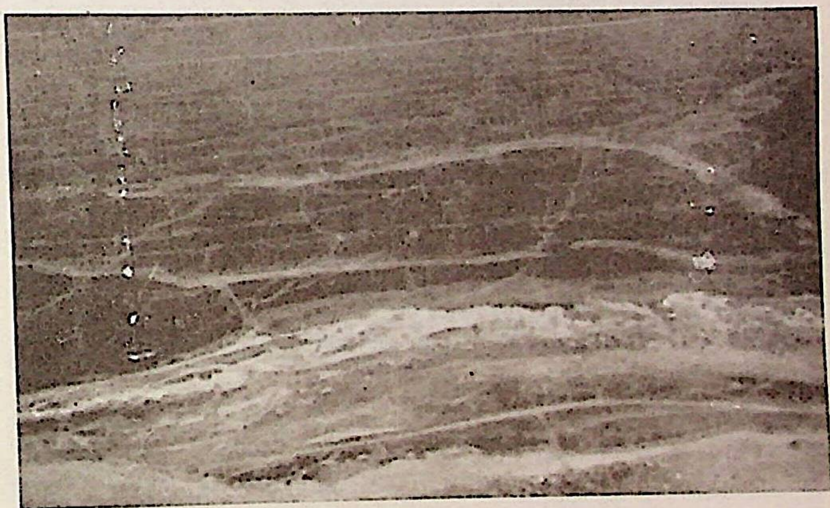
25. एक कोने में तरंगों से युक्त राक्षसताल और मांधाता

[देखिए पृ० 84



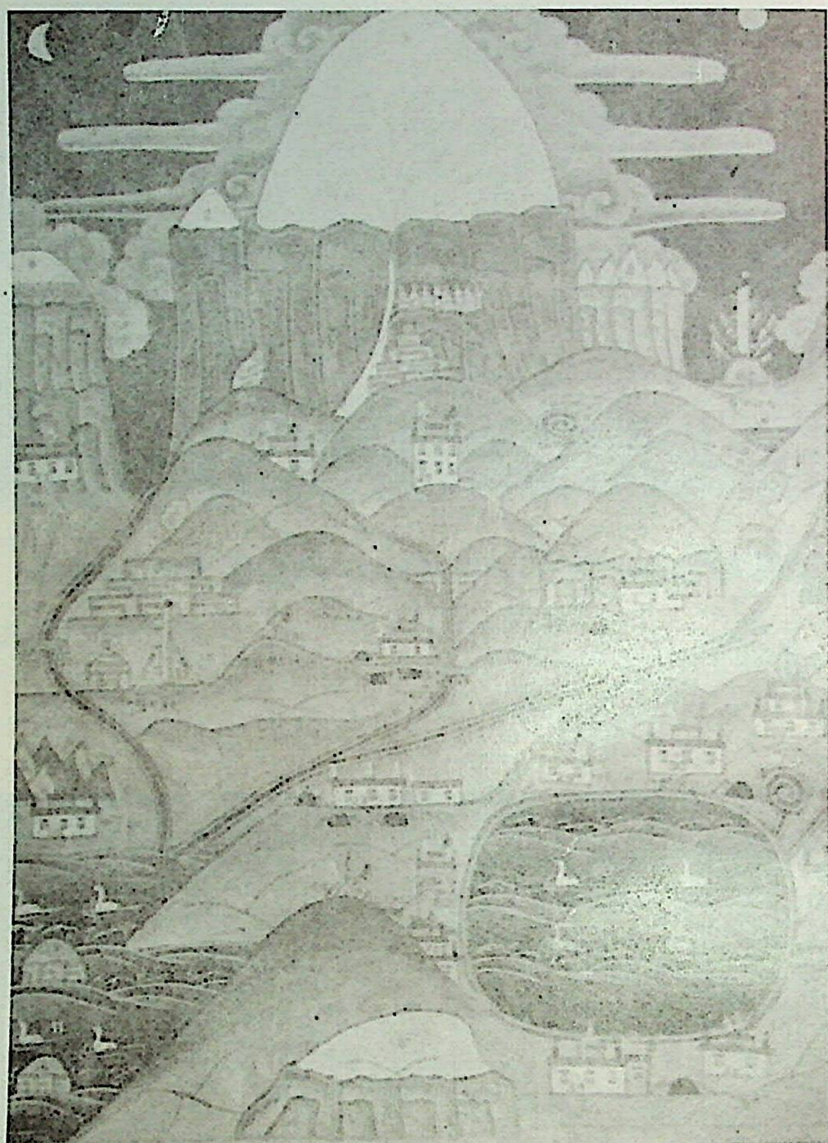
26. शीतकाल में जमे हुए मानसरोवर में बड़े-बड़े सीधे हिम खंड

[देखिए पृ० 85



27. दरार और फाड़ों से युक्त जमा हुआ मानसरोवर

[देखिए पृ० 87

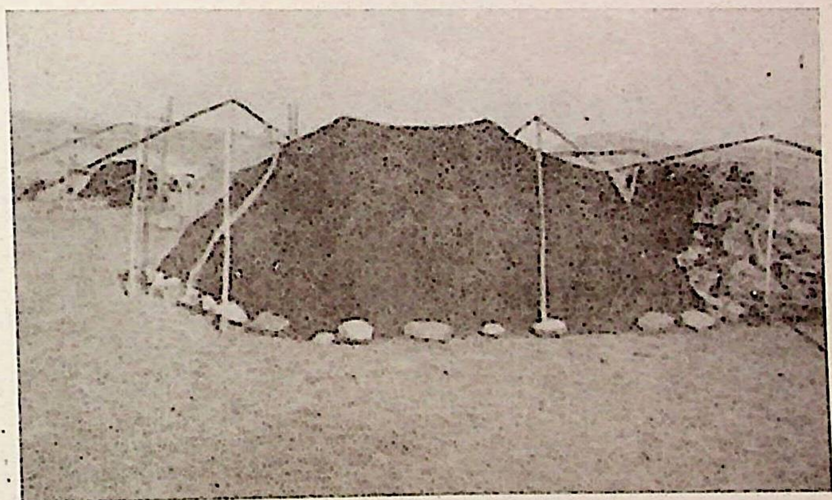


28. एक तिब्बती थंका (चित्रपट) से कैलास-मानसखंड

[देखिए पृ० 100

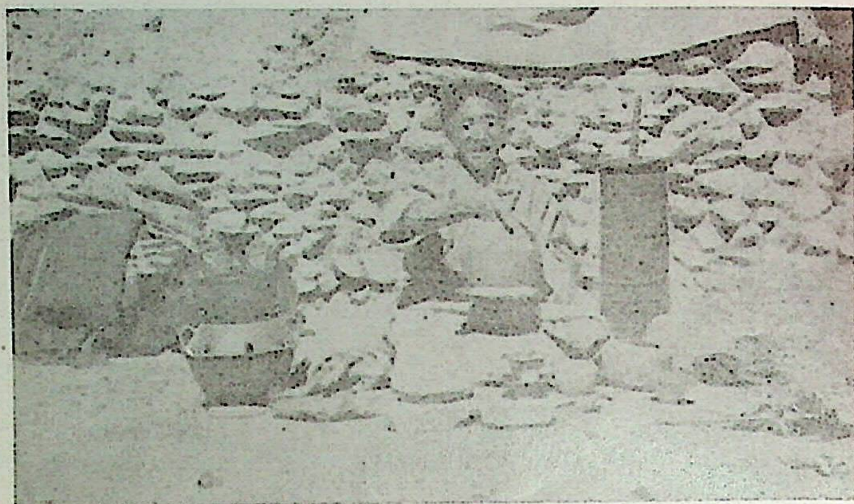


29. चोंगों में चाय का मंथन [देखिए पृ0 102



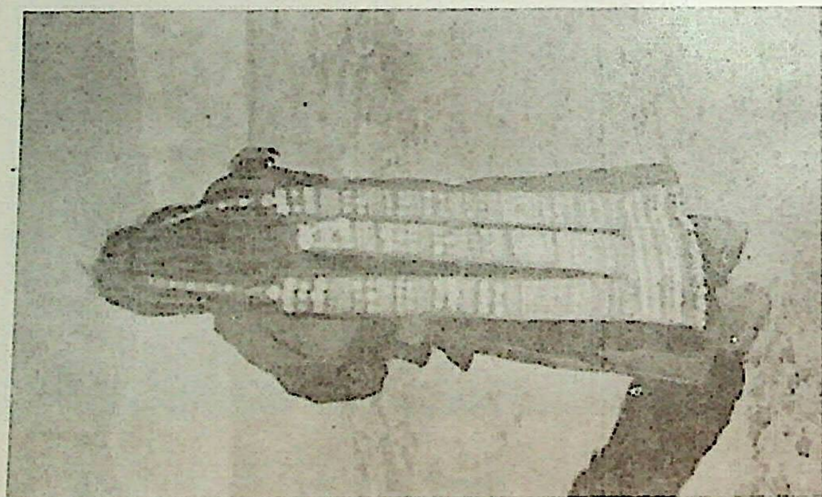
30. तिब्बती काला तंबू

[देखिए पृ० 111



31. ठुगोल्हो में चाय की केटली बनाना

[देखिए पृ० 112



32. बालों का शृंगार

[देखिए पृ० 115

की परिक्रमा कर रहे थे, उस समय उनके साथ तिब्बती मार्गदर्शक भी थे। यदि मानसरोवर में तीसरा टापू रहा होता, तो वे लोग उन्हें अवश्य बता देते। इसलिए यह स्पष्ट है कि सर्वे वालों, और स्वेन हेडिन के मानचित्र तीसरे द्वीप के अस्तित्व और तोप्सेरमा की ठीक स्थिति के संबंध में संदेहास्पद हैं। इतने संदेहास्पद होते हुए भी दोनों मानचित्रों में तीसरा टापू दिया गया है। इस उद्धरण से यह स्पष्ट है कि स्वयं स्वेन हेडिन को इन टापुओं के संबंध में पक्का और विश्वस्त ज्ञान नहीं था।

"ये दोनों टापू सरोवर के नैऋत्य कोण से सुगमतापूर्वक दिखलाई पड़ते हैं, परंतु इस बात का निर्णय कठिनाई से किया जा सकता है कि ये यथार्थ में टापू हैं या किसी पहाड़ के निकले हुए भाग। संभवतः यहाँ तीन टापू हैं। सबसे बड़े का नाम डोप्सेरमा है, यद्यपि कुछ अन्य तिब्बती लोग इसे डोप्सर भी कहते हैं।"[1]

गत वर्ष मैंने केवल इन द्वीपों का निर्णय करने के लिए किनारे-किनारे चलकर ताल की पूरी परिक्रमा की, परंतु वहाँ दो ही टापू देखने में आए। यही मेरा अंतिम निर्णय है। इतना अवश्य कहूँगा कि सरोवर के मोड़ और उनकी बनावट ऐसी है कि दूर से देखने पर या किनारे-किनारे चलकर भी ध्यानपूर्वक न देखने से कई टापुओं का भ्रम हो जाता है। इसीलिए मानसरोवर प्रांत के कई लोगों ने मुझे बताया कि राक्षसताल में चार-पाँच टापू हैं। परिक्रमा में इन टापुओं के पास से जाते समय मुझे ऐसी उमंग आती थी कि उड़कर एकदम उनपर जा बैठूँ। सोचता कि यदि नाव पर बैठकर इनपर सैर की जाती, तो कैसा आनंद आता।

10. गंगा छू

मानसरोवर और राक्षसताल को मिलाने वाली नदी या नाला का नाम गंगा छू है। यह तिब्बती नाम है। राक्षसताल और गंगा छू के बारे में एक तिब्बती पौराणिक गाथा इस प्रकार है—"पूर्व काल में राक्षसों का निवास-स्थान होने के कारण राक्षससरोवर का जल कोई नहीं पीता था। एक समय मानसरोवर की दो सुनहली मछलियाँ आपस में लड़कर एक–दूसरे का पीछा करती हुई राक्षसताल में जा पड़ीं। उनके जाने वाले मार्ग का ही नाम गंगा छू है। उसी समय से मानसरोवर का जल राक्षससरोवर में जाने लगा और तभी से वह पवित्र माना जाने लगा और लोग उसका जल पीने लगे।"

जब मानसरोवर का पानी बढ़ जाता है, तब गंगा छू में बहकर राक्षसताल में जाता है, न कि राक्षसताल से मानसरोवर में। प्रायः जुलाई से लेकर अक्टूबर तक इसमें जब पानी का बहाव रहता है, तब यह 40 से लेकर 100 फीट तक चौड़ा और 2 से 4 फीट तक यह गहरा रहता है। इसकी गति टेढ़ी-मेढ़ी है, जिसकी लंबाई 6 मील है। मैंने इसके दक्षिणी तट पर किनारे-किनारे चलकर राक्षसताल से लेकर मानसरोवर तक 14.4.1937 को जाँच की थी। मैं 26 बार भिन्न-भिन्न ऋतुओं एवं भिन्न-भिन्न स्थानों से गंगा छू के आर-पार

1. डॉ0 स्वेन हेडिन 'सदर्न टिबेट्' खंड 2, पृ0 167।

जा चुका हूँ। प्रायः सभी समय और प्रत्येक वर्ष इसमें जल मौजूद मिला। कभी-कभी जब सरोवर में पानी की सतह नीची हो जाती है, तब यह सूख भी जाता है और कभी-कभी इस नाले में प्रारंभ में सौ गज तक सूख जाने पर भी आगे चलकर पानी बहने लगता है, क्योंकि इसमें सरोवर के नीचे ही नीचे पानी आता रहता है। शीतकाल में इसका प्रवाह बंद हो जाता है या जम जाता है। यदि किसी वर्ष अनावृष्टि से सरोवर में जल की सतह बहुत गिर जाय, तो संभव है कि गंगा छू में पानी का बहाव बिलकुल बंद हो जाय। 15 वर्षों में (सन् 1928 से लेकर 1942 तक) नौ वर्ष तो मैंने स्वयं गंगा छू में पानी का बहाव जारी देखा; शेष 6 वर्षों के बारे में भी प्रतिवर्ष कैलास में व्यापार के लिए जाने वाले भोटियों से पूछ-ताछ की, पता चला कि उन छह वर्षों में भी बहाव जारी ही रहा। दारमा के कई बूढ़े भोटिए व्यापारियों से भी सन् 1928 से पहले के वर्षों के बारे में पूछा था; परंतु संयोग से कोई ऐसा नहीं था, जो यह कह सके कि अमुक वर्ष में गंगा छू पूरा सूख गया हो।

मानसरोवर का पानी बढ़ने और गंगा छू से पानी राक्षसताल में बहने का कारण वर्षा ही नहीं है; विशेष गर्मी के कारण बर्फ का गलना भी है। मानसरोवर से जल बढ़कर गंगा छू द्वारा राक्षसताल में जाने वाले जल के प्रवाह से, राक्षसताल से सतलज में जाने वाला जल-प्रवाह संबंधित है।

श्री वल्लभदास तुलसीदास भाटिया नामक एक सज्जन, जो सन् 1931 में कैलास यात्रा को गए थे, लिखते हैं—"राक्षसताल का जल नीचे ही नीचे होकर अलकनंदा के उद्गम पर जाता है।" अलकनंदा का उद्गम-स्थान चाहे सत्यपथ में मानें या माना घाटा में मानें, समुद्रतल से 15000 फीट से अधिक ऊँचाई पर है और राक्षसताल 14900 फीट की ऊँचाई पर। अब पाठकगण स्वयं सोच सकते हैं कि राक्षसताल का जल अलकनंदा के उद्गम पर जा सकता है या नहीं। मानसरोवर की कई परिक्रमाएँ करने के अनंतर जाँच करने पर यह निश्चित हुआ कि मानसरोवर से बाहर जाने वाला नाला गंगा छू को छोड़कर और कोई नहीं है; अन्य सभी नदी-नाले इसी में गिर रहे हैं। इसलिए मानसरोवर की एक बार भी बिना परिक्रमा किए हुए व्यक्तियों की यह उक्ति कि "ब्रह्मपुत्र और सिंधु नदी मानसरोवर से निकलती हैं," ठीक उसी प्रकार मिथ्या और निराधार है, जैसे यह धारणा कि सिंधु कैलास के उत्तर या दक्षिण तल से निकलकर उसके पश्चिम या दक्षिण की दिशा में बहती है, या सतलज गौरीकुंड से निकलकर कैलास के पूर्व होकर बहती है।

गंगा छू में जल के बहाव का विवरण

क्रम संख्या	पार करने की तिथि	गहराई अंगुलों में	बहाव कैसा था	पार करने का स्थान	मानसरोवर से बहाव आरंभ है या नहीं	वर्षा ऋतु कैसी
1	4.9.1928	42	बहुत वेग	सरोवर से 100 गज पर	है	अनावृष्टि

2	21.8.35	34	मंद वेग	राक्षस से दो मील पर	है	साधारण
3	5.9.36	27	मध्य वेग	सरोवर से 3 फर्लांग पर	,,	,,
4	28.1.37	18 अंगुल जल का जमा हुआ बर्फ		मानसरोवर से लेकर ½ मील नीचे तक अलग-अलग स्थान		
5	2.2.37					
6	6.2.37					
7	13.3.37					
8	18.3.37					
9	14.4.37	6 से 24	मंद	सारा गंगा छू	,,	
10	30.4.37	6	,,	गर्म सोतों के पास	,,	
11	20.5.37	7	,,	,,	,,	
12	26.6.37	10	मंद	गर्म सोतों के पास	है	
13	12.7.37	10	,,	,,	साधारण	
14	27.7.37	16	मध्य वेग	,,	,,	
15	20.8.38	36	वेग	मानस से 100 गज	,,	अतिवृष्टि
		21	,,	मानस से ½ मील	,,	,,
16	26.8.38	42	बहुत वेग	मानस से 100 गज	,,	,,
		27	,,	,, ½ मील	,,	,,
17	20.8.39	20	मंद वेग	राक्षस से 2 मील	,,	,,
18	22.8.40	9	मंद	गर्म कुंड के पास	,,	अनावृष्टि
19	26.9.40	6-9	,,	सरोवर के पास	,,	,,
20	1.10.40	6	,,	सरोवर से 100 गज	,,	,,
21	13.7.41	6	,,	गर्म कुंड के पास	सरोवर से 100 गज बहाव नही है	साधारण
22	31.7.41	15	,,	मानस से 1 मील	है	,,
23	5.8.41	20	मध्य वेग	,,	,,	,,
24	12.8.42	12	,,	गर्म कुंड	,,	अतिवृष्टि
25	10.9.42	12	,,	,,	,,	,,
26	18.10.42	13	,,	सरोवर से 10 गज	,,	,,

11. गंगा छू–गंगा-सतलज भ्रम

कई पीढ़ियों से गंगा और सतलज के संबंध में बहुत से भ्रम जनता में प्रचलित हैं। ये प्रायः दो प्रकार के हैं। स्वेन हेडिन के पहले, अर्थात् सन् 1907 से पहले, बहुत से पाश्चात्य और प्राच्य भूगोल-शास्त्री, सर्वे वाले, अन्वेषक एवं यात्री इस भ्रम में थे कि गंगा और सतलज मानसरोवर और राक्षसताल से निकलती हैं। कुछ लोगों ने गंगा को सतलज या सतलज को गंगा मान लिया था। कुछ एक को दूसरे की सहायक नदी मान बैठे थे। हिंदू पुराणों में यह कहा गया है कि गंगा कैलास-शिखर से उतरती है। इसब्रैंट्स आईड्स को सन् 1704 में चीन की राजधानी पेकिंग में टिके हुए जेसुइट पादरियों से ज्ञात हुआ था कि गंगा का उद्गम-स्थान मानसरोवर और राक्षसताल में ही है। यह समाचार उन पादरियों को चीनियों से मिला था। डेसीडेरी (सन् 1715) ने लिखा है कि गंगा नदी कैलास और मानसरोवर से निकलती है। पादरी गौबिल (सन् 1729) कहते हैं कि गंगा की तीन सहायक नदियाँ मानसरोवर में गिरती हैं। डी0एनविल (सन् 1735) लङ्चेन खंबब् (सतलज) और गंगा को एक मान लेते हैं। पादरी जोसेफ टिफेनथलेर (सन् 1765?) गंगा और सतलज को एक कर देते हैं। पंडित पूर्णगिरि जी, जो बोगल और टर्नर के साथ तिब्बत गए थे (सन् 1773), लिखते हैं कि गंगा कैलास से निकलकर मानसरोवर में प्रवेश करके फिर बाहर बहती है। मेजर जे0 रेन्नल (सन् 1782) कहते हैं कि गंगा मानसरोवर से निकलती है। कैप्टन एफ0 विलफोर्ड (सन् 1800) लिखते हैं कि वास्तव में मानसरोवर से निकलने वाली गंगा ही एक मात्र नदी है। अंततः लेफ्टिनेंट वेब् ने (सन् 1808) यह पता लगाया कि गंगा का वास्तविक उद्गम गोमुख में है। इसपर भी वेब्बर (सन् 1886) गंगा के उद्गम-स्थान को गुरला-मांधाता पहाड़ के दक्षिण पार्श्व में ही मान बैठे। जापानी बौद्ध भिक्षु एकाई कावगूची ने, जिन्होंने 1896-1903 में भारत और तिब्बत में यात्रा की थी, मानसरोवर के आग्नेय कोण में बीस मील की दूरी पर स्थित छूमिक-थुङ्टोल नामक स्रोत से 'गंगा जी का पवित्र जल' पान किया था। उन्होंने सतलज को गंगा की सहायक नदी मान लिया है। यहाँ पर मैं उन बहुत से धार्मिक तीर्थयात्रियों और महात्माओं के नामों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं समझता, जिनका अब भी विश्वास है कि पवित्र गंगा का उद्गम-स्थान मानसरोवर ही में है।

अब तक स्वेन हेडिन भी इसे संतोषजनक रीति से नहीं बता सके कि बड़े-बड़े अन्वेषकों और लेखकों से लगातार इस प्रकार की भयंकर भूलें क्यों होती आई हैं। इसमें कोई ऐसा कारण तो अवश्य होना चाहिए, जिसने अब तक लगातार इतने व्यक्तियों को भ्रम में डालकर उनके द्वारा ऐसा मिथ्या वर्णन करवाया। आज भी बहुत-से पूर्वाचारपरायण एवं पाश्चात्य विद्या के शिक्षित भारतीय, मानसरोवर से राक्षसताल में गिरने वाले 'गंगा छू' को गंगा नदी से मिलाकर गड़बड़ी उत्पन्न कर देते हैं, क्योंकि गंगा शब्द दोनों में समान है; और मिथ्या धारणा में पड़कर ऐसा कहते हैं कि सिंधु, ब्रह्मपुत्र और सतलज की भाँति श्री गंगा जी भी मानसरोवर से निकलती हैं। स्वेन हेडिन ने यह बताया कि गंगा मानसरोवर से नहीं निकलती, पर वह इतने व्यक्तियों द्वारा हुई भूलों का कोई मूल कारण नहीं बता सके। इसलिए यह

समस्या हमारे हल करने समय तक बिना सुलझी जैसी की तैसी ही बनी रह गई।

इसका समाधान बहुत ही सरल है। हाँ, यदि किसी को कङरी-करछक नामक तिब्बती पुराण देखने का अवसर प्राप्त हुआ हो, तो उसके अनुसार लङ्चेन खंबब् या सतलज का भारतीय नाम गंगा है। तिब्बती लोग हरिद्वार को छोमो गंगा या छमो गंगा कहते हैं, जिनके अर्थ क्रमशः उनकी भाषा में गंगा माई और बड़ी नदी हैं। कैलास पुराण में ऐसा वर्णन आया है कि सतलज का उद्गम-स्थान मानसरोवर के पश्चिम में है और वह तिब्बत और कुछ दूर तक भारत में पश्चिम की ओर प्रवाहित होकर, पूर्व की ओर मुड़कर बुद्धगया से उत्तर होते हुए, पूर्वी समुद्र में जाकर गिरती है। इन तीनों कारणों के आधार पर तिब्बती लोग गंगा छू और परिणामतः सतलज को हरिद्वार के पास की गंगा ही मानते हैं; या यह भी संभव है कि इस मिथ्या और उलझन पैदा करने वाली समझ (परिज्ञान) के आधार पर सतलज के संबंध में पूर्वोक्त वर्णन कङरी-करछक में लिखा गया हो। जो हो, इसमें नाम और भावों की अशुद्धि और गड़बड़ी है, जिसमें संशोधन की आवश्यकता है।

	तिब्बती नाम	हिंदी अनुवाद	कैलास पुराण के अनुसार भारतीय नाम	वर्तमान समय के प्रचलित भारतीय नाम	मानसरोवर से किस दिशा में स्थित
1.	लङ्चेन खंबब्	हाथी के मुख से निकली हुई नदी	गंगा	सतलज या शतद्रु	पश्चिम
2.	सिंगी खंबब्	सिंह के मुख से निकली हुई नदी	सिता	सिंधु	उत्तर
3.	तमचोक खंबब्	अश्व के मुख से निकली हुई नदी	पक्षु वा वक्षु	ब्रह्मपुत्र	पूर्व
4.	मप्चा खंबब्	मयूर के मुख से निकली हुई नदी	सिंदु	करनाली	दक्षिण

इसलिए यही 'गंगा छू' शब्द है, जिसने भारतीयों और विदेशी अन्वेषकों को भ्रम में डालकर इस निष्कर्ष पर पहुँचाया है कि गंगा जी मानसरोवर से निकलती हैं। कङरी-करछक में वर्णित लङ्चेन खंबब् (सतलज) के भारतीय नाम 'गंगा' ने तिब्बतियों को धोखा देकर यह विश्वास कराया कि हरिद्वार के पास की गंगा और मानसरोवर के पास की गंगा छू और परिणामतः सतलज एक हैं। भारतीयों और तिब्बतियों में फैली हुई यही मिथ्या धारणा है, जिसने अन्वेषकों, भूगोल-शास्त्रज्ञों और सर्वे करने वालों को बहुत अंश में प्रभावित किया है।

गंगा-सतलज भ्रम का एक कारण और भी है। फादर एंटोनियो एंड्रेड सन् 1624 में माना घाटा होकर छबरङ गए थे। उन्होंने माना घाटा के पास के दो बहुत छोटे से बर्फानी

तालाबों का वर्णन किया है, जिनमें से एक का नाम राक्षसताल और दूसरे का देवताल है। देवताल से बर्फानी सुरंग द्वारा एक नदी निकलकर अलकनंदा में आकर मिलती है। यही सरस्वती नदी है। एंड्रेड द्वारा वर्णित छोटे-से राक्षसताल और देवताल को जगत्प्रसिद्ध राक्षसताल और मानसरोवर समझकर प्राच्य और पाश्चात्य अन्वेषक भी भ्रम में पड़ गए। बाद में तो यह भ्रमात्मक वार्ता यहाँ तक फैल गई कि गंगा नदी मानसरोवर और राक्षसताल से निकलती है। सतलज तो राक्षसताल से निकलती ही है। इसलिए 'सतलज और गंगा दोनों मानसरोवर से निकलती हैं'—यह भ्रम लोगों में फैल गया। इन काल्पनिक बातों के आधार पर यह कल्पना भी की गई है कि गंगा और सतलज एक हैं, या एक–दूसरे की सहायक हैं।

मुझे पूरी आशा है कि मेरा यह छोटा-सा उपयोगी अन्वेषण उक्त विषय पर पूर्ण प्रकाश डालकर कई शताब्दियों से फैले हुए 'गंगा-सतलज भ्रम' को समूल निराकृत कर देगा। गंगा नदी का वास्तविक उद्गम टिहरी राज्य के अंतर्गत गोमुख में है। इस संबंध में यह स्मरण रखने की बात है कि मानसरोवर और गंगा जी के उद्गम-स्थान 'गोमुख' के मध्य की दूरी बहुत-से पहाड़ और नदियों के ऊपर होकर सीधी रेखा में 135 मील है।

12. मानसरोवर का विस्तृत वर्णन

अति गंभीर और गुरुतर आध्यात्मिक स्पंदनों से युक्त पुनीत मानसरोवर चारों दिशाओं में पर्वतों से घिरा हुआ है। जब उतुंग तरंगें उठती हैं, तो यह महासागर की भाँति भीषण रूप धारणकर प्रणवनाद करने लगता है। कभी तो अति प्रशांत होकर कैलास, पोनरी, मांधाता आदि शिखरों और सूर्य नक्षत्रादिकों के लिए महादर्पण बन जाता है, और कभी मंदहास करता हुआ छोटी-छोटी लहरियों से युक्त होकर उत्तर और दक्षिण में स्थित कैलास और मांधाता, चंद्र और ताराओं को अपनी छोटी-छोटी लहरों पर झुलाता है। कभी जब जम जाता है, तो पूर्व में उदय होने वाले सूर्य या पूर्णेंदु की कांतियों को पूर्व से लेकर पश्चिम तट तक स्वर्ण या रजतमयी धारा प्रतिबिंबित करके अपने आपको दो रूपों में भासमान करता है। कभी निशीथ में तरंगों से युक्त होकर चंद्रकांति से मिलकर चाँदी के बिखरे हुए पत्रों की भाँति जगमगाता है और साथ ही मध्य भाग में निर्मल और निश्चल होकर चंद्र-ताराओं को प्रतिबिंबित करता है। किसी और समय मध्याह्न में अपनी उत्ताल तरंगों से मिलकर सूर्य-किरणों को विकीर्ण स्वच्छ मौक्तिक के समान बनाकर आँखों को चकाचौंध कर देता है। कभी विविध वर्णों से युक्त मेघमालाओं से क्रीड़ा करते हुए, प्रतिभाषित होकर अपने नील वर्ण को छिपाकर, कुछ काल के लिए मेघों के विविध वर्णों को ही धारण कर लेता है। कभी मांधाता से ऐसी प्रचंड आँधी का अह्वान करता है, जिसमें पड़कर मनुष्य, भेड़ और बकरे गिरकर लोटपोट हो जाते हैं, और कभी आँधियों द्वारा उठी हुई अपनी महान तरंगों से गोद में क्रीड़ा करती हुई मछलियों की पाँखों को तोड़ तथा मारकर यात्रियों के धूप के काम में लाने के लिए उन्हें किनारे पर पहुँचाता है। एक क्षण महा प्रणवनाद का उद्घोष करता है और दूसरे ही क्षण महाशून्य की भाँति निश्शब्द हो जाता है; कभी लहरों और नीली जलराशि से युक्त होता

है, तो कभी अकस्मात रातोंरात स्वच्छ निर्मल बर्फ के रूप में जमकर निश्चल और गंभीर हो मौन-मुद्रा धारण कर लेता है।

यह मानसराज कभी तो राजहंसों के झुंडों को अपने वक्षस्थल पर चढ़ाकर क्रीड़ा करता है; और कभी इसके ऊपर वसंत में हंस के जोड़े दस-दस पाँच-पाँच बच्चों को बीच में रखकर गर्व से पूँछ फैलाए एवं छाती अकड़ाकर बातचीत करते और खेलते हुए दिखाई देते हैं। उनके अनुपम सौंदर्य और मंद गमन को देखकर यह आनंद और उमंग से फूला नहीं समाता। कभी-कभी उन्हें कहीं अन्यत्र भेज देता है; उसकी आज्ञा को न मानकर जो हंस वक्षस्थल पर खेलते ही रहते हैं, उन्हें ढिठाई के लिए दंड देने के विचार से अकस्मात एक रात में ही झुंड के झुंड को पानी जमाकर मार डालता है। जब एक समय (जन्माष्टमी के पश्चात) सूर्यास्त हो जाने पर दो-दो, तीन-तीन सौ हंस और ङरूसिरचुङ के बच्चों के झुंड उसके ऊपर उड़-उड़कर थक जाते हैं, तो वह उन्हें अपने वक्षस्थल पर विश्राम कराकर, शीतकाल में परदेश की दीर्घयात्रा करने के लिए उड़ने का अभ्यास कराता है।

कभी चारों दिशाओं में—अवनि से अंबर तक—सघन श्वेत मेघपुंजों के स्तंभों से सारे भू-भाग को छिपाकर, गंभीर अतल समुद्र–मध्य स्थित नौका-निवास की भाँति मठ–निवासियों को भ्रम में डालकर ऐसा भान कराता है कि मानो वे पर्वतों के बीच में नहीं हैं। कभी श्रद्धा से परिक्रमा करने वाले भक्तों को किनारे-किनारे जाने के लिए मार्ग दे देता है; तो कभी ''अपनी इच्छा से जब चाहो तब इस मार्ग से नहीं जा सकते, दूर से जाओ।'' इस प्रकार का आदेश सुनाता है। साष्टांग प्रदक्षिणा करने के लिए आए हुए भक्तों के पैर न भींगने पाएँ, इस उद्देश्य से यह कभी कई नदियों को सुखा और कभी कई नदियों को जमा देता है। किसी और समय ''तुम इतने विलंब से आए, इसलिए तुम्हें आगे नहीं जाने दूँगा''—मानों ऐसा कहकर सारी नदियों को बर्फ से गले हुए जल से भरकर इतने वेग से बहा देता है कि उसमें बलिष्ठ घोड़े और याक भी नहीं चल सकते; किन्तु फिर थोड़ी ही देर में उनके ऊपर दया करके, ''जो आए हो तो आज इसी किनारे पर ठहरकर दूसरे दिन जाओ''—कहकर नदियों के पानी को घटाकर उन्हें जाने के लिए मार्ग भी देता है। एक समय एक प्रांत के यात्री को बुलाता है, तो फिर दूसरी ऋतु में किसी अन्य प्रान्त के यात्रियों का स्वागत करता है। कभी भक्तों को अपनी गोद में बिठाकर ध्यानावस्थित करके उन्हें योगनिद्रा में मग्न कर देता है और कभी ''जाओ, अब बाहर नहीं आ सकते, अपनी कुटिया में बैठकर ध्यान करो''—इस प्रकार का अनुशासन करता है। कभी बौद्ध भिक्षुओं को श्रोत्रिय ब्राह्मणों की भाँति तट पर बिठाकर देवार्चन कराता है और सरोवर में उनसे फेंके हुए निर्माल्य को खाने के लिए मछलियों के झुंडों को भेज देता है। कभी प्रचंड वायु और ठंढ उत्पन्न करके अपने किनारे पर खड़े भी नहीं होने देता। एक समय समधिक जल प्रदानकर संतरण कराता है तो दूसरे समय आचमन के लिए भी एक बूँद जल देखने में न आए, इस उद्देश्य से सारे जल को चतुरतापूर्वक अपनी श्वेत चादर के नीचे छिपा लेता है, उस समय सब्बर से तोड़े जाने पर चूहे के बिल-बराबर छेद से भी किसी को जल नहीं प्रदान करता।

कभी सूर्यास्त के समय अपने उत्तर में स्थित सारी कैलास-पंक्तियों को अचानक अग्निमंडल की भाँति बनाकर मनुष्य को खड़े-खड़े ही समाधिस्थ करा के, स्मृति होने पर फिर पूर्व रजताचल को ही दिखा देता है। और किसी दूसरे सूर्यास्त के समय दक्षिण में स्थित मांधाता में आग लगाकर पश्चिम दिशा को अग्निज्वालाओं से भर देता है। किसी दिन सूर्योदय होने के पहले सारी कैलास-पंक्ति को श्वेत मेघमालाओं से छिपा देता है और किसी दिन सूर्योदय के समय कैलास और मांधाता की चोटियों को शुद्ध स्वर्णांबरों से अलंकृत कर समस्त अवशिष्ट भागों को कृष्णांबरों से आच्छन्न कर देता है। एक समय (शीतकाल में) सारे मानसखंड को श्वेत वसनों से ढककर कई दिनों तक अखंडैकरस ब्रह्म के समान एक-रूप रहता है।

भोज महाराज की कीर्ति के संबंध में महाकवि कालिदास के जो निम्नलिखित श्लोक बताए जाते हैं, वे केवल कवि-चातुरी के प्रमाण और अतिशयोक्तिमात्र हैं—वास्तविक नहीं।

महाराज श्रीमन् ! जगति यशसा ते धवलिते,
पयः पारावारं परमपुरुषोऽयं मृगयते ।
कपर्दी कैलासं करिवरमभौमं कुलिशभृत्,
कलानाथं राहुः कमलभवनो हंसमधुना ॥
नीरक्षीरे गृहीत्वा निखिलखगततीर्याति नालीकजन्माः,
तक्रं धृत्वा तु सर्वानटति जलनिधींश्चक्रपाणिर्मुकुन्दः ।
सर्वानुत्तुङ्ग शैलान्दहति पशुपतिः फालनेत्रेण पश्यन्,
व्याप्ता त्वत्कीर्तिकान्ता त्रिजगति नृपते भोजराज क्षितीन्द्र ॥

हे महाराज ! हे श्रीमान ! जगत में आपके विमल यश की कांति की सफेदी फैलने से परम पुरुष विष्णु क्षीर-समुद्र को खोजने लगे हैं। महादेव कैलास को ढूँढ़ रहे हैं। इंद्र अपने सफेद हाथी—ऐरावत को, राहु चंद्रमा को, और ब्रह्मा राजहंस को खोज रहे हैं। (आशय यह है कि आपके यश ने अपनी सफेदी समस्त विश्व को एकाकार, श्वेतमय कर दिया है,. और किसी वस्तु या व्यक्ति को पहचानना असंभव-सा हो गया है।) ब्रह्मा नीर और क्षीर को मिलाकर निखिल जगत के पक्षियों के पास इस आशा से ले जा रहे हैं कि जो कोई पक्षी दूध से पानी को अलग कर देगा, उसी को हंस समझ लेंगे; विष्णु भगवान मट्ठा लेकर सब समुद्रों में उसे इस उद्देश्य से डाल रहे हैं कि जो समुद्र इसे डालने से फट जायगा, उसी को क्षीर-सागर के रूप में पहचान लेंगे; और शिव समस्त ऊँचे शिखर वाले पर्वतों को अपना तीसरा नेत्र खोलकर इस आशय से जला रहे हैं कि जो कैलास-पर्वत होगा, वह भस्म नहीं होने पाएगा। हे भोजराज ! आपकी कीर्तिरूपी कांता तीनों लोकों में व्याप्त हो गई है।

परंतु यहाँ पर बर्फ से आवृत होने पर सभी स्थलों के श्वेतमय हो जाने से ऊँचाई-नीचाई, तट-सरोवर, टीला-मठ, घर-तंबू आदि वास्तव में एक-से हो जाते हैं, और कौन कहाँ है और कैसा है, इसका निर्णय नहीं हो पाता। किसी और समय (सरोवर पिघलने के

पहले, मई के महीने में) सूर्योदय के पूर्व रात ही रात सारे दृश्य को श्वेतांबर से ढककर मध्याह्न होने तक ऐंद्रजालिक की भाँति उसे अदृश्य कराकर पुनः विश्व की सृष्टि कराता है। देखिए, अभी अच्छी धूप चमक रही है; कुछ देर कोठरी में विश्राम करके आइए तो मोती-जैसे ओले और चूने-जैसी कोमल बर्फ से भूमि और आसपास के पहाड़ ढके हुए दिखाई पड़ेंगे; और पुनः कुछ ही समय पश्चात मेघों के अदृश्य हो जाने से पर्वतों के ऊपर धूप का पूर्ण प्रकाश फैला हुआ दिखेगा। इसी प्रकार के दृश्यों को देखकर ही किसी कवि ने लिखा है—'मानसरोवर कौन परसे। बिन बादल हिम बरसे।' ऐसे ही अनेक अपूर्व दृश्य कवियों की सामग्री बन जाते हैं।

एक किनारे पर प्रसाद के लिए पंचरंग की रेत (चेमानेङ) देता है, तो दूसरे तट पर पूजा के लिए विविध रंगों के कोमल और छोटे-छोटे पत्थरों को प्रदान करता है, और एक दूसरे किनारे पर पानी के नीचे प्रचुर मात्रा में एक प्रकार की घास उपजाता है। एक प्रांत पंकयुक्त है, तो दूसरा सैकतपूर्ण, तथा तीसरा पर्वतमय। एक ओर भिक्षुओं की तपस्या के लिए गुफाएँ निर्मित हैं, तो दूसरी ओर घर और मठों के निर्माण के लिए उपयुक्त स्थान हैं। कुछ मठों से श्री कैलास का रमणीक दृश्य दिखलाता है, तो कुछ मठों से इस दृश्य को छिपा भी लेता है। एक मठ से राक्षससरोवर का दर्शन कराता है और दूसरे से मांधाता के मनोहर शिखरों को प्रदर्शित कराता है। कुछ मठों का निर्माण जल के समीप, कुछ का छोटे पहाड़ों के ऊपर और कुछ का तट से दूर पर करवाता है। एक मठ काश्मीर को प्रदान कर दिया, दूसरा भूटान को, कुछ गोम्पाएँ पुरङ को और कइयों को ल्हासा के पास के विश्वविद्यालयों के साथ सम्मिलत कर दिया है। कुछ मठों में लामाओं (आचार्यों) को नियुक्त किया है और कुछ में डाबाओं (साधारण भिक्षुओं) को रख दिया है। एक तट को उष्ण रखता है और दूसरे को अति शीतल। कहीं-कहीं तट के आस-पास ही हंसादि जल-पक्षियों के बिहार के लिए छोटे-छोटे तालाबों का निर्माण किया है। उत्तर में देवताओं के स्नानार्थ कुर्क्यल छुंगो नामक छोटे सरोवर का निर्माण किया है, जिसे तिब्बती लोग मानसरोवर का सिर कहते हैं। पश्चिम में संग के लिए अपने ही अंग से रावणह्रद नामक सहसरोवर को निर्मित किया है, जिसमें हंसों और एकांतवासी भिक्षुओं के निवासार्थ लाचातो और तोप्सेरमा नामक दो पर्वतीय द्वीपों को बनाया है।

एक कोने में गर्म सोतों के उबलते हुए पानी को फब्बारे के रूप में फाड़कर निकालता है, तो दूसरे कोने में उष्णकुंडों से गर्म पानी की नहरों को निकालकर लाता है। एक ओर सोने की खानें हैं, तो दूसरी ओर सोहागे की खानें रखता है। किसी-किसी स्थान पर सोडा और शोरा के मैदानों को बिछा दिया है। एक कोने में बर्तन बनाने के लिए चिकनी मिट्टी उत्पन्न करता है। किसी घाटी के एक कोने की गुफा में श्वेत मिट्टी (एक प्रकार का चूना), किसी अन्य घाटी में मठों के रँगने के लिए पीली मिट्टी संचित रखता है। मणिमंत्र खुदवाने के लिए एक ओर गोल और चिपटे पत्थरों को उपजाया है, तो दूसरी ओर गोगण (चँवर), भेड़ और बकरियों के चरने के लिए विशाल चरागाहों को फैलाए हुए है। सात-आठ वर्षों में एक बार गोगणों के ऊपर क्रुद्ध होकर या उनके स्वामियों के किए हुए अपराधों के

दंडस्वरूप, या यमपुरी को शून्य समझकर, या किसी अन्य अज्ञात कारण से प्रचुर परिमाण में बर्फ गिराकर घास और झाड़ियों को अनेक दिनों तक ढककर सैकड़ों चँवर गायों एवं हजारों भेड़-बकरियों को यमालय भेज देता है। कभी-कभी झुंड के झुंड जंगली घोड़ों को बर्फ से अकड़ा कर खड़े-खड़े ही यमपुरी भेज देता है। एक भाग में सुगंधित औषधियों को धूप के लिए उत्पन्न करता है, तो किसी दूसरे भाग में (कैलास-शिखर के तल में) किसी अन्य प्रकार की औषधि का पालन करता है, और कहीं ईंधन के लिए डमा नामक पौधों को प्रचुर मात्रा में उपजाता है। किसी दून में वीर्यवर्धक और बाजीकरण 'ठुआँ' नामक औषधि को, किसी दूसरे भाग में छौंकने के लिए जिंबू और गोक्पा नामक मसालेदार पौधों को अधिक परिमाण में उत्पन्न करता है, और किसी दून में घास को बढ़ाता है। एक ओर मैदान में सैकड़ों जंगली घोड़ों के झुंडों को शरण देता है, तो दूसरी ओर छोटे-छोटे तालाबों में हंसों और सारसों को आश्रय प्रदान करता है।

शीतकाल में, कहीं बंदर–जैसे छोटी पूँछ वाले पहाड़ी चूहों को लंबिकायोग में सुलाकर पाँच-छह महीनों तक बर्फ से ढके रखता है। संभवतः इन चूहों, ध्रुव-प्रदेशीय भालुओं और मेढकों को देखकर ही योगियों ने खेचरी मुद्रा का आविष्कार किया था। एक दिशा में छोटे-छोटे चीतों का और दूसरी दिशा में झुंड के झुंड जंगली बकरियों का पालन करता है। कुछ प्रांतों में तट से दूर, 16000 फीट की ऊँचाई पर, भयानक जंगली चँवर गायों को शरण देता है और इधर-उधर डमा की झाड़ियों में भेड़ियों के आहार के लिए खरगोशों को पालता है। एक स्थान पर रेशम-जैसे कोमल घास को उगाता है, तो दूसरे स्थान में सूई के समान तीखे अंकुर उत्पन्न करता है। एक कोने में देवगणों के विहारार्थ या करुणा वरुणालय गुरु के कृपाभाजन महाभागों को कुछ देर विश्राम कर आनंद लूटने के लिए अति कोमल हरे-हरे कालीनों को बिछाकर उनके ऊपर छोटे-छोटे पीले फूलों से पुष्पशय्या का निर्माण कर देता है। किसी दूसरे कोने में झूमक और करनफूल–जैसे गुलाबी रंग के फूलों को बिछा देता है, तो किसी और ऊँचे दून को बैंगनी और पीले फूलों से सजाता है। कभी-कभी इन हरे कालीनों को छोटी फुल्ली (नाक में पहनने का भूषण) जैसे फूलों से अलंकृत कर देता है। कोई ऐसा न समझने लगे कि मानसखंड शाकविहीन है, इसलिए अपने एक कोने में बिच्छू-बूटी और बकरियों के टिकने के स्थानों में वास्तुकी या बथुआ साग (जो पंचशाकों में एक है) को प्रचुर मात्रा में उत्पन्न करता है।

मानसराज गड़रियों को शीतकाल में एक कोने में बुलाता है तथा ग्रीष्मकाल में दूसरे कोने में भेज देता है। कभी-कभी मीलों तक फैले हुए सरोवर के ढालुओं में चरते हुए सहस्रों भेड़ों के झुंडों को देखने का अति मनोरंजक दृश्य प्रदान करता है। यात्रियों को सभी ऋतुओं में दूध-मक्खन बहुलता से प्रदान करता है। यदि एक कोने में भारतीयों की मंडी लगाता है, तो दूसरे कोने में नेपालियों की और किसी और कोने में तिब्बतियों के छोल्रे लगाता है। प्रतिवर्ष हजारों मन उत्तम ऊन भारत को भिजवाता है। किसी नदी से अल्प और किसी से अधिक जल ग्रहण करता है। इस प्रकार सभी दिशाओं से जलराशि ग्रहणकर राक्षसताल में और वहाँ से शतद्रु नदी के द्वारा भारत-भूमि को पवित्र करने के लिए और कैलास से आई हुई इड़ा,

पिंगला और सुषुम्ना (ल्हा छू, झोङ छू और तरछेन छू) के पवित्र जल का स्वागत करने के लिए गंगा छू नामक नद के द्वारा वायव्य कोण में अपने अधिक जल को रावणह्रद में पहुँचा देता है।

विविध प्रांतों से आने वाले सभी मार्गों को यह यहाँ पर मिला देता है। श्री कैलास और पुनीत मानसरोवर केवल तीर्थयात्रियों के लिए ही नहीं, अपितु कवि और चित्रकार, वेदांती और प्रकृतिवादी, जंतुशास्त्रज्ञ और रसायन परिशोधक, खनिज-परिशोधक और भूगर्भशास्त्रवेत्ता, भौगोलिक और ऐतिहासिक, मनोविज्ञानी और समाजविज्ञानी, नौकाविहारी और वायुयानचारी, अर्थशास्त्रवेत्ता और राजनीतिज्ञ, बड़े और छोटे, स्त्री और पुरुष, हिंदू और मुसलमान, ईसाई और पारसी—सभी प्रकार के लोगों को अपनी-अपनी रुचि के अनुसार यथेच्छ समाग्री मन खोलकर प्रदान करता है, और सब को संतुष्ट और परितृप्त करता है।

13. कमल और राजहंस

मानसरोवर में स्वर्ण-कमल, मोती और राजहंस हैं तथा वहाँ की गुफाओं में कई सौ वर्ष की आयु वाले पुराने महात्मा ऋषिगण, सिद्ध और योगी निवास करते हैं—ऐसी वार्ताएँ समाचार-पत्रों और पुस्तकों में लिखी हैं। वे कहाँ तक सत्य या मिथ्या हैं, इस संबंध में प्रायः अनेक मित्र मुझसे पूछा करते हैं। अतः उस प्रसंग पर कुछ कह देना आवश्यक समझता हूँ। इस संबंध में मैं निश्चयपूर्वक कहूँगा कि स्वर्ण-कमल और मुक्ता के वर्णन तो पूर्ण रूप से पौराणिक ही हैं। हो सकता है, कई लाख वर्ष पहले वे वहाँ होते रहे हों, ऐसा मानकर संतोष करने वालों से मेरा कोई विवाद ही नहीं है।

मानसरोवर में कहीं-कहीं 20-30 फीट के भीतर, जहाँ गहराई कम है, जल के ऊपर एक प्रकार की लता होती है। उस पर $\frac{1}{4}$ इंच व्यास के पीले रंग वाले बहुत-से फूल होते हैं। परंतु नीलकमल या किसी और प्रकार का फूल वहाँ कहीं नहीं दिखाई देता।

मैं यह सूचित कर देना चाहता हूँ कि गत तीन वर्षों से मैं स्वयं मानसरोवर और राक्षसताल में कमल तथा कुमुद (लिली) और राक्षसताल तथा अन्य छोटे-छोटे सरों में सिंघाड़ा उगाने के लिए गवेषणापूर्ण यत्न कर रहा हूँ। इसके लिए काश्मीर और कलकत्ते से मैंने बीज मँगाए हैं। इस वर्ष यदि हो सकेगा तो कमल और कुमुद की गाँठें भी ले जाने का विचार कर रहा हूँ। देखना है कि मेरे प्रयत्न कहाँ तक सफल होते हैं। इस संबंध में रुचि रखने वाले कोई विशेषज्ञ यदि उपयुक्त सम्मति दे सकें, तो बड़ा अनुग्रह होगा।

सरोवर में तीन प्रकार के जलपक्षी पाए जाते हैं। जिनमें से एक श्वेत और भूरे रंग का होता है, जिसे तिब्बती भाषा में ङङबा कहते हैं। यही हंस है। इसके पैर और चोंच लाल रंग के होते हैं। तिब्बतियों का कहना है कि यह मछली, सीप और घोंघों को नहीं खाता, प्रत्युत घास, सिवार आदि ही खाकर रहता है। यहाँ के निवासी इसे पवित्र मानकर खाने के लिए नहीं मारते, पर अंडों को अवश्य खा लेते हैं, जो कि मुर्गी के अंडों से तिगुने बड़े होते

हैं। यह मानसरोवर की अपेक्षा राक्षससरोवर में अधिक पाया जाता है। संभवतः इसका एक कारण यह है कि शीतकाल में कुछ दिनों को छोड़कर मनुष्य या भेड़िए वहाँ नहीं जाते हैं, और न उनपर या उनके अंडों पर हाथ ही लगा सकते हैं। लाचातो के ऊपर के हंस शीतकाल में, जब कि राक्षसताल जमा रहता है, घास और सिवार को खाने के लिए सतलज के किनारे पर चले जाते हैं। अप्रैल के पहले सप्ताह में करदुङ के गोबा के नौकर अंडे जमा करने के लिए टापू पर जाते हैं और वहाँ से दो सप्ताह में ही चले आते हैं, क्योंकि उसके बाद तट के किनारे की बर्फ के फट जाने के कारण टापू प्रधान भूमि से अलग हो जाता है। ऐसा कहा जाता है कि उन दो सप्ताहों में वे लोग दो से चार हजार तक अंडे जमा कर लेते हैं। हंस मानसरोवर में ठुगोल्हो, युशुप छो, गोछुल, छेती छो, च्यू गोम्पा, गंगा छू, कुरक्यल, छुंगो, डिङ छो, टग और समो नदियों के मुखद्वार में अधिक संख्या में पाए जाते हैं। ये सरोवर के बालुकामय तटों पर अंडे देते हैं।

दूसरी जाति का डरू सिरचुङ नामक पक्षी बादामी रंग की बतख़-जैसा होता है। तीसरी जाति वाला चकरमा कहलाता है। सिर, पूँछों और पंखों को छोड़कर इसका सारा शरीर श्वेत रंग का होता है। इन दोनों जातियों के पक्षी विशेषकर मछलियों और घोंघों को खाते हैं। ये कुछ अंशों में बतख़ और कुछ अंशों में बगुले के समान होते हैं। डिङ छो, कुरक्यल छुंगो और सतलज के किनारे सारस भी पाए जाते हैं। मेरी धारणा है कि हंस, बड़ी बतख़ और जंगली बतख़ आदि पक्षी एक ही वर्ग के हैं। भारत के बड़े नगरों की कई जंतुशालाओं में श्वेत रंग के और आस्ट्रेलिया में काले रंग के होने के कारण हंस केवल काल्पनिक पक्षी नहीं कहा जा सकता। इसके अतिरिक्त मैंने एक वैज्ञानिक मासिक पत्र में पढ़ा था कि बंद करके रखने पर भी हंस सौ वर्षों से अधिक जीते पाए गए हैं। किन्तु इस पौराणिक गाथा की परीक्षा मैं नहीं कर सका कि मानसरोवर के हंस नीर और क्षीर को पृथक् कर देते हैं। इस विषय का निर्णय या विशेष विवरण तो पक्षी–शास्त्रवेत्ता ही दे सकते हैं। कालिदास ने इस बात का वर्णन किया है कि राजहंस वर्षा के प्रारम्भ में हिमालय की पर्वतमालाओं को पार करके मानसरोवर में जा पहुँचते हैं और शरद् का आगमन होने पर फिर नीचे गंगा के किनारे वापस चले आते हैं।

14. महात्मा, सिद्ध और योगी

तिब्बत शब्द का नाम लेते ही ऊँचाई, शीत, अलंघ्य पर्वत, बौद्ध भिक्षु, लामा, सिद्ध, महात्मा, सैकड़ों वर्षों की आयु के योगी, मंत्र-तंत्र-यंत्र और जादू के भाव तथा संस्कार एक साथ मन में उत्पन्न हो जाते हैं। भारत और पाश्चात्य देशों में भी समाचारपत्रों और पुस्तकों में दुर्गम तिब्बत के महात्मा, सिद्ध और योगियों के बारे में बहुत-सी सनसनीखेज और चित्र-विचित्र कथाएँ आए दिन छपती रहती हैं। इस प्रकार की प्रचलित कथाओं में, अधिकतर उत्प्रेक्षा, भ्रमोत्पादक, काल्पनिक विनोद और उत्सुकता बढ़ाने वाली वार्ताओं के होने के सिवा और कुछ नहीं है।

सन् 1912 में ईसाई धर्म के प्रसिद्ध प्रचारक साधु सुंदर सिंह ने कैलास और मानसरोवर की यात्रा की थी। उनकी लिखी हुई निम्नलिखित बातें पढ़ने योग्य हैं—"कैलास के महर्षि, एक ईसाई संत को हमने एक गुफा के भीतर ध्याननिमग्न अवस्था में देखा। इनके पास फ्रेंसिस जेवियर की ग्रीक भाषा की इंजील है। इन्होंने हमें एक ऐसी बूटी की पत्ती दी, जिसके खाते ही भूख शांत हो गई और शरीर में ताजापन और प्रकाश आ गया। उन महर्षि का कहना है कि उन्हें यहाँ पर रहते सैकड़ों वर्ष बीत गए तथा ये आस पास के पहाड़ों और जंगलों की बूटियों को ही खाकर निर्वाह करते हैं। ये अपने को गुप्त-संन्यासीमंडल का सदस्य बताते हैं, जिसके 24000 सदस्य भारत के विविध भागों में संन्यासियों के रूप में गुप्त रूप से कार्य कर रहे हैं।" कैलास और मानसरोवर के प्रांत के कोने-कोने की परीक्षा मैंने की है। पर कैलास के सैकड़ों वर्ष की आयु वाले उक्त ईसाई महर्षि का कहीं भी पता नहीं लगा।

सन् 1937 में मि0 स्मिथ ने जेसकार पर्वतमाला की सात चोटियों पर चढ़ाई की थी, उस चढ़ाई में उन्होंने बड़े-बड़े पैरों के चिह्न और चिह्नित-मार्ग देखे थे, जिनके विषय में उस समय के तिब्बती कुलियों ने उनसे कहा था कि वे पाद-चिह्न एक महान ऋषि के थे, जो बर्फ़ के पहाड़ों में नंगे फिरते थे। यह बात बड़ी सनसनी के साथ समाचार–पत्रों में फैली, परंतु अंततः वैज्ञानिकों के अन्वेषणों से यह पता लगा कि ये मार्ग और पाद-चिह्न वहाँ के भालुओं के थे। किंतु भालू वाली पिछली बात पर किसी ने ध्यान नहीं दिया।

भगवान हंस स्वामी ने अपनी कैलास-यात्रा को महाराष्ट्र भाषा में लिखा है। उनके शिष्य श्री पुरोहित स्वामी ने अंग्रेजी में 'दी होली मौंटेन' नामक पुस्तक में उसका अनुवाद किया। इस पुस्तक में कई मनोरंजक बातें लिखी गई हैं। एक स्थान पर श्री हंस स्वामी लिखते हैं—"मयूरपंखी बाबा ने मुझे 'विषपाचन' नामक एक औषधि दी, जो अति शीत में भी शरीर में गरमी पहुँचाती है। बाबा 60 वर्ष की आयु के हैं और रोज 60 मील चला करते थे। वे तकलाकोट से तरछेन तक एक दिन में पैदल चलते थे।" ये बातें असत्य नहीं तो अत्युक्तिपूर्ण अवश्य हैं। मयूरपंखी बाबा कैलास के गेङ्टा गोम्पा में रहकर शीतकाल में ठंड से मर गए, यद्यपि उनके पास बहुत धन और विस्तृत साधन थे। साठ वर्ष के एक भारतीय का मानसखंड में 1500 फीट की ऊँचाई पर रोज 60 मील चलना तो एकदम असंभव है। तरछेन तकलाकोट से 63 मील की दूरी पर है। मार्ग में बर्फीले जल की कई नदियाँ और एक घाटा पार करना पड़ता है। मैं मानसखंड से कई वर्षों से परिचय रखता हूँ, पर अब तक तिब्बतियों में भी कोई मुझे ऐसा नहीं मिला, जो तकलाकोट से तरछेन तक एक दिन में पैदल चलकर गया हो। इसके अतिरिक्त उक्त बाबा जी से परिचय रखने वाला कोई भोटिया या तिब्बती भी इस बात की पुष्टि नहीं कर सका।

आगे चलकर श्री हंस स्वामी लिखते हैं—"मानसरोवर के किनारे एक अगोचर महात्मा द्वारा गाए गए मांडूक्योपनिषद् को एक घंटे तक सुना।......... कैलास के पास मेरे पथ-प्रदर्शक ने बताया कि कैलास के पूर्व में एक हिंदू महात्मा 1000 फीट ऊँचाई की गुफा में रहते हैं। मैं उन महात्मा के पास गया। वे हिंदी, मराठी, अंग्रेजी और कई अन्य भाषाएँ

भी जानते थे। ये वे ही महात्मा हैं, जिन्होंने मानसरोवर पर मांडूक्योपनिषद् को गाया था। उनके साथ मैं तीन दिन तक रहा। गौरीकुंड के पास दत्तात्रेय का सशरीर दर्शन पाया। तीन दिन तक वहीं रहा। दत्तात्रेय ने हवन कराकर संन्यास दीक्षा दी और मेरा नाम हंसगिरि रख दिया। अंत में गौरीकुंड से अपने डेरे पर दत्तात्रेय की कृपा से 15 मिनट में पहुँचा दिया गया, जब कि जाते समय 15 घंटा लगा था; इसके उपरांत तीर्थपुरी में कैलास-महात्मा के शिष्य को मिला।'' इन बातों के बारे में पाठकगण स्वयं विचार कर सकते हैं कि इनमें तथ्य कितना है। ऐसी ही अनेक कथाएँ थियोसोफिकल सोसाइटी के धर्मग्रंथों में महात्मा और सिद्धों के बारे में लिखी गई हैं।

श्री स्वामी सच्चिदानंद सरस्वती जी नामक एक महात्मा प्रायः शीतकाल में कलकत्ता जाया करते हैं। गर्मी के दिनों में नेपाल में रहते हैं; परंतु अपने लिए वे कहते हैं कि मानसरोवर के पास सिद्धाश्रम में रहते हैं और स्नान के लिए नित्य ब्रह्मपुत्र के उद्गम पर जाया करते हैं। कलकत्ता–निवासी उनके एक वकील शिष्य ने ये बातें मुझे सुनाई। मानसखंड भर में सिद्धाश्रम या उक्त महात्मा को मैंने न कभी देखा न उनके बारे में कभी सुना। महात्मा जी के शिष्य स्वयं सन् 1941 में मेरे साथ कैलास-मानसरोवर गए थे, परंतु वह भी उक्त महात्मा जी का कुछ पता न लगा सके। 'स्टूडेंट्स न्यू हाईजीन एंड फिजिकल कल्चर' नामक पुस्तक में 'ऋषि सच्चिदानंद सरस्वती (गिरनारी बाबा) मानसरोवर के परमहंस देव' का एक फोटो दिया गया है। उनकी आयु 750 वर्ष की बताई गई है। ये 'आल इंडिया यंग मेंस बेनिवोलेंस सोसाइटी और आर्यन एसेटिक्स एसोसियेशन ऑफ़ इंडिया' के फौंडर-प्रेसीडेंट हैं। एक मित्र ने मुझे हाल ही में बताया है कि यह महात्मा उपयुक्त सच्चिदानंद जी ही हैं। आजकल भी ऐसी-ऐसी बातें फैलाई जाती हैं। जनता में अंधविश्वास बढ़ाकर स्वार्थसाधन (एक्सप्लोइटेशन) करने का यह एक साधन नहीं तो और क्या है?

तिब्बत के विख्यात सुधारक चोङ्खपा का जन्म सन् 1355 में हुआ था। भगवान बुद्ध की भाँति उनका जन्म भी एक वृक्ष के नीचे हुआ था। इसलिए वह वृक्ष पवित्र माना जाता था। तिब्बती ग्रंथों में यह कथा आई है कि अपने पिता को चोङ्खपा से भेजे हुए कुछ चित्र और 'ॐ मणि प द्मे हुँ' मंत्र के अक्षर उक्त वृक्ष पर एक लाख की संख्या में देखने में आए। वृक्ष के पास ही 'कुमबुम' (कू = मूर्ति, बुम = एक लाख) नामक मठ का निर्माण किया गया। कुछ वर्ष बाद वृक्ष के ऊपर 50 फीट की ऊँचाई पर एक छोरतेन (स्तूप) निर्मित किया गया। सत्रहवीं या अठारहवीं शताब्दी में फ्रांस के पादरी हक् और गेबट 'कुमबुम' गए थे। वे अपनी तिब्बत-यात्रा-संबंधी पुस्तक में लिखते हैं—''जिस वृक्ष के नीचे चोङ्खपा का जन्म हुआ था, उसके पत्ते और स्कंध पर 'ॐ मणि प द्मे हुँ' ये अक्षर हमने स्पष्ट रूप में पढ़े।'' आश्चर्य की बात यह है कि उक्त पादरियों के वहाँ जाने के दो शताब्दी पहले से ही वह वृक्ष एक छोरतेन के भीतर बंद था। अतः उस वृक्ष को या उसके पत्तों को देखना भी मिथ्या है और उन पर मंत्र के अक्षरों को देखना तो निरी गप ही समझनी चाहिए।

सन् 1936 में ल्हासा के एक प्रतिष्ठित लामा से मिलने का सौभाग्य मुझे मिला। वह कुमबुम मठ के दर्शन कर चुके थे। उन्होंने कहा—''कुमबुम के छोततेन के भीतर बंद वृक्ष

की संतति के कुछ वृक्ष अब भी वहाँ मौजूद हैं, परंतु उन पर कोई मंत्राक्षर नहीं दिखाई देते।" स्थानीय लोगों के विश्वासों के अनुसार इन पादरियों ने अपनी पुस्तकों को मनोरंजक बनाने के लिए बहुत-सी विचित्र बातों का वर्णन इस रूप से किया है, जैसे उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से देखा हो। ऐसे ही मनोविनोदार्थ लिखी हुई सैकड़ों मिथ्या कथाओं में से यह एक उदाहरण मात्र है।

मैंने पश्चिमी तिब्बत और लदाख में (प्रायः सभी स्थानों में) पचास मठों का निरीक्षण किया और 1500 लामा और डाबाओं का दर्शन प्राप्त किया। परंतु उनमें एक भी बड़े, नामी, सिद्ध और योगी को नहीं पाया। निस्संदेह ऐसे बहुत से लामा हैं, जो अपने धर्मग्रंथों में पारंगत हैं और बाह्य तांत्रिक क्रियाकलापों में निपुण हैं, जो कई दिनों तक विस्तारपूर्वक चालू रखते हैं। इन तांत्रिक पूजाओं में देवी-देवताओं का विस्तृत रूप से पूजन किया जाता है। मठों में रंग-बिरंग के बड़े-बड़े यंत्र (किलकोर या किड्कोर) और बलिपिंड (तोरमो) चतुरता के साथ बनाये जाते हैं। बहुधा वहाँ के लोग बहुत धार्मिक, भक्तिपरायण, बहमी और भूत-प्रेतों के उपासक होते हैं। भारत के श्रोत्रिय ब्राह्मण गायत्रीमंत्र का जितना जप करते हैं, वहाँ के साधारण स्त्री-पुरुष भी उससे कई गुना अधिक अपने महामंत्र का जप करते हैं। मैंने इन प्रांतों में अपने 15 वर्ष के भ्रमण में, आध्यात्मिक साधना में उन्नत किसी लामा, योगी या 100 वर्ष से अधिक आयु वाले बूढ़े को नहीं देखा, यद्यपि कितने ही लोगों का कहना है कि उन्होंने ब्यास, दत्तात्रेय, अश्वत्थामा और हजारों वर्ष की आयु वाले बूढ़े भिक्षु, ऋषि और महात्माओं को सैकड़ों की संख्या में पंचभौतिक शरीरों में विचरण करते हुए देखा है। मैं स्वयं इन बातों पर विश्वास नहीं करता और न अपनी बात पर दूसरों को विश्वास करने के लिए बाध्य करता हूँ, अतः इस विषय में वास्तविकता पर विचार करने के लिए विचारशील पाठक स्वतंत्र हैं।

इससे कोई यह न समझे कि संसार में बड़े-बड़े महात्मा, संत और योगी लोग हैं ही नहीं, या उनके अस्तित्व को मैं नहीं मानता। हमारे गुरु परम पूज्य भगवान श्री 1108 ज्ञानानंद योगीन्द्र यतीन्द्र पूज्यपाद उच्चकोटि के योगियों में से एक हैं, जो अंग्रेजी की प्रवेशिका परीक्षा उत्तीर्ण नहीं थे, तथापि समाधि द्वारा उच्च विज्ञान संबंधी विषयों का (जो एम० एस-सी० वालों की भी समझ में नहीं आते) परिचय उन्होंने संसार को दिया है,[1] जिसको आधुनिक विज्ञान द्वारा सिद्ध करने के लिए चेकोस्लोवाकिया के चार्ल्स विश्वविद्यालय की अनुसंधान-शाला में उन्हें तीन वर्ष लगे। सारांश यह है कि सच्चे उन्नत महात्मा और योगीजन अपने ही देश के समान तिब्बत में भी अत्यल्पसंख्यक हैं।

हाँ, मैंने तकलाकोट के गवर्नर और अन्य तिब्बती मित्रों से सुना है कि पूर्वी तिब्बत में कुछ लामा और भिक्षु लोग जादू का सामान्य और विशेष रूप से अभ्यास करते हैं, जिसे बाहर के लोग (विशेषकर पाश्चात्य देश के) बहुत बड़ा मानते हैं। ये छोटे-छोटे चमत्कार

---

1. डॉ० स्वामी ज्ञानानंद एम० एम० पी, एफ० आर० एस० एस० (प्राग), न्यू एंड प्रिसाइज़ मेथड्स इन दी स्पेक्ट्रोस्कोपी ऑफ़ एक्स रेडियेशंस ।

अवश्य दिखाते हैं। पर वे ऐसे ही हैं, जैसे यहाँ के जादूगर या मंत्र-यंत्र जानने वाले। किंतु इतना अंतर अवश्य है कि ये लोग अपने शास्त्रों के विद्वान होते हैं। पूर्वी तिब्बत में ऐसे भी लामा पाये जाते हैं, जो चारदीवारी के भीरत एक, दो, या चार वर्ष या अपना समस्त जीवन बिता देते हैं। पर यह उनकी सिद्धता या आध्यात्मिक उन्नति का लक्षण नहीं कहा जा सकता। यह तो उनकी कष्ट-तपस्या और हठकारिता के सूचक हैं।

हाँ, पश्चिमी तिब्बत की कई यात्राओं में सन् 1936 में मुझे ल्हासा से कैलास की यात्रा के लिए आए हुए एक टुलकू लामा (अवतारी लामा) से मिलने का सुअवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने तकलाकोट के सिंबिलिंङ मठ में तीन दिन बड़े-बड़े यंत्रों को बनाकर तांत्रिक अनुष्ठान किया। यद्यपि इन क्रियाओं को देखने का अधिकार गृहस्थों को और परदेशियों को नहीं होता; पर उन्होंने मुझे यहाँ उपस्थित होकर सारी क्रियाओं को देखने का सुअवसर दिया था। उस समय से मेरा नाम भी लामाओं की श्रेणी में गिना जाने लगा और मुझे "ग्यगर लामा-गुरु' के नाम से पुकारने लगे। निस्संदेह ये अच्छे साधक और तांत्रिक हैं। कैलास यात्रा करते समय मैं उक्त लामा के साथ 20 दिनों तक रहा। उनसे तिब्बत के महात्मा और सिद्धों के बारे में बहुत कुछ वार्तालाप हुआ। उसमें से कुछ बातों का सार यहाँ दे देना उचित समझता हूँ—

"पूर्वी तिब्बत में कई 'गोमछेन' और 'नलजोरपा' या 'नलह्योरपा' हैं। गोमछेन वह है, जिसने विशेष तांत्रिक साधना करने से मारण, वशीकरण आदि सिद्धियों को प्राप्त किया हो। वह डाकिनी (खंडोमा) का उपासक होता है। इनका दिया हुआ ताबीज पहनने से किसी तलवार या बंदूक की गोली का प्रभाव नहीं होता[1]। गोमछेन विशेष अनुष्ठान क्रिया-कलाप करके तलवार या खुकरी का अभिमंत्रण करता है, जिससे उस तलवार में शत्रु को संहार करने की शक्ति आ जाती है। उस प्रकार अभिमंत्रित तलवार को 'फुरवा' कहते हैं। 'नलजोरपा' या 'नलह्योरपा' योगी को कहते हैं। योगाभ्यास से इनको कई प्रकार की सिद्धियाँ आ जाती हैं। एक प्रकार का साधन करने से अणिमादि अष्ट सिद्धियों में से लघिमा प्राप्त की जा सकती है, जिससे पर्वत की एक चोटी से दूसरी चोटी पर अनायास कूद सकते हैं। इस सिद्धि को प्राप्त किए हुए योगी को 'लुङ-गोमपा' (लुङ-वायु) कहते हैं। इस प्रकार का योगी ग्रीष्म ऋतु में सूर्योदय के समय ल्हासा से चलकर सूर्यास्त तक कैलास पहुँच सकता है।[2] निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचने तक उनको बाह्य जगत की स्मृति नहीं होती। लुङ-गोमपा की लघिमा की सिद्धि की सीमा यहाँ तक पहुँच जाती है कि जौ की बाल की नोक पर आसन लगाकर बैठने पर

1. भोटियों और मानसखंड के तिब्बतियों का कहना है कि सन् 1940 में और कई अन्य अवसरों पर ऐसे मंत्रयुक्त ताबीज को पहने हुए डाकुओं ने आकर मंडियों में बहुत लूटमार मचाई। परंतु उन पर बंदूक की गोलियाँ कुछ काम की नहीं हुईं और न किसी को उन डाकुओं पर गोली चलाने का साहस ही हुआ।
2. ल्हासा से कैलास की दूरी 800 मील है; इस प्रकार 15 घंटे में 800 मील चलने का अर्थ एक घंटे में 53 मील चलना है, जो एक अच्छी मोटर की रफ्तार है।

बाल तनिक भी नहीं झुकती, अर्थात् उसका तोल नहीं के बराबर हो जाता है।''

''एक विशेष प्रकार का प्राणायाम करने से शरीर में इतनी उष्णता उत्पन्न हो जाती है कि तिब्बत-जैसे शीत प्रदेश में भी नंगा या एक पतला-सा सूती वस्त्र पहनकर रह सकता है। उस साधन को 'टुमो' (उष्ण) कहते हैं तथा उसका अभ्यास करने वाले को 'रेपा' (सूती वस्त्र पहनने वाला, अर्थात् नागा) कहते हैं। मिला रेपा ने इस प्रकार के भी साधन किए। उन्होंने एवरेस्ट शिखर के उत्तरी तलहटी पर 'लचीकङ' नामक बर्फीले स्थान पर रहकर ये साधन किए। किसी एक अन्य प्रकार का योगाभ्यास करने से परकाय-प्रवेश करना, दूरस्थ विषयों का जान लेना या दूर तक अपने संदेश को भेज देना संभव हो सकता है। इन सब सिद्धियों की ओर ध्यान न देकर साधन करने से मनुष्य बुद्धत्व की प्राप्ति करता है।''

उक्त लामा से विदा होने के दिन परस्पर भेंट और लेन-देन के पश्चात मैंने उनसे एक प्रश्न किया—''आपने अपने वर्णन के अनुसार किसी प्रकार की सिद्धि या उन सिद्धियों से युक्त किसी योगी को देखा हो या आप स्वयं उक्त प्रकार का कोई साधन कर रहे हों, तो कृपा करके सचसच बताइए।'' मेरे इस सीधे से प्रश्न पर लामा ने दस-पंद्रह मिनट निश्चेष्ट खड़े होकर धीरे से उत्तर दिया—''ग्यगर लामा-गुरु! जो बातें मैंने आपको सुनाई हैं, वह सब सच हैं। इन बातों को मैंने स्वयं अपने धर्म-ग्रंथों में पढ़ा है और सुना भी है। परंतु इन सिद्धियों को प्राप्त करने वाले किसी व्यक्ति को प्रत्यक्ष नहीं देखा। मैं उन सिद्धियों के पीछे नहीं पड़ता।'' यह ल्हासा का एक प्रतिष्ठित गेशे रिंपोछे (डी0डी0) लामा का उत्तर है।

अब आप स्वयं निर्णय कर लीजिए। भारत में इस प्रकार की कितनी ही कथाओं को साधारण से साधारण व्यक्ति भी जानता है; योग और तंत्रशास्त्र के ग्रंथों में भी वे इस तरह की कथाएँ पढ़ते आए हैं। कितने ही समाधिस्थों और कायाकल्प करने वालों को वे बराबर देखते रहते हैं, परंतु वास्तव में कितने सच्चे योगी और सिद्ध भारत में विद्यमान हैं? यही हाल तिब्बत में भी समझना चाहिए। मैं निश्चयपूर्वक कहूँगा कि भारत से तिब्बत में सच्चे सिद्धों और योगियों की संख्या कम है। भारत में ही जब उँगलियों में गिने जा सकते हैं, तो तिब्बत में कितने होंगे, इस पर पाठक स्वयं विचार करें। अंग्रेजी में एक कहावत है कि नदी अपने उद्गम की सतह से ऊपर कभी नहीं उठ सकती। जो कुछ योग या आध्यात्मिक साधन तिब्बतियों में है, वह सब भारत से ही गया है और वह भी भारतीय योग का एक अंशमात्र है; वह अंश भी अब मिश्रित और विकृत हो गया है। इसलिए जो लोग यह सोचते हैं कि तिब्बत में सिद्धों की भरमार है और वहाँ सिद्धि बड़े सस्ते मूल्य में प्राप्त हो जाती है, वे बड़े भ्रम में पड़े हुए हैं—ऐसी मेरी सम्मति है। इसे मानना न मानना पाठकों के विचार पर निर्भर है।

पाश्चात्य देश निवासी तिब्बत-संबंधी विषयों का वर्णन इतना बढ़ा-चढ़ाकर क्यों करते हैं, इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि आध्यात्मिक क्षेत्र में वे अभी शैशवावस्था में हैं, इसलिए इस संबंध में उनका मापदंड बहुत छोटा है। इसका परिणाम यह होता है कि वे साधारण

से साधारण आध्यात्मिक साधना को बहुत बढ़ा देते हैं। दूसरे, इस प्रकार की चटपटी बातों से वे अपने वर्णनों को रोचक बनाना चाहते हैं। जनता भी सीधी और सच्ची बात की अपेक्षा सनसनी पैदा करने वाली बातों को अधिक पसंद करती है।

गत वर्ष मैंने ठुगोल्हो में एक तिब्बती गड़रिया पर देवता की सवारी होते देखा। देवता का प्रवेश विशेष-विशेष व्यक्तियों पर ही होता है, जो 'ल्हामी' (ल्हा देवता, मी आदमी) कहे जाते हैं। देवता चढ़ते समय वे लोग सिर पर रंग-बिरंगे कपड़ों का पंचपटल वाला मुकुट पहनते हैं। गरुड़ासन पर बैठकर एक हाथ में घंटा या दोर्जे और दूसरे हाथ में डमरू लेकर बजाते हुए सिर को खूब जोर से हिलाते हैं और तरह-तरह की भविष्यवाणी करते हैं या पूछे गए प्रश्नों के उत्तर देते हैं; ठीक जिस प्रकार भारत में देवी और देवता से आविष्ट व्यक्ति करते हैं।

यह एक शोचनीय विषय है कि भोले-भाले और सीधे–सादे लोगों को धोखा देकर अनुचित लाभ उठाने के लिए कुछ लोग मनगढ़ंत और विनोदपूर्ण विचित्र कथाओं को फैलाते हैं, जो सर्वथा मिथ्या और निराधार होती है। हाँ, श्री कैलास और पुनीत मानसरोवर के प्रांत महोत्कृष्ट आध्यात्मिक स्पंदनों से अवश्य व्याप्त हैं, जहाँ पर जाकर मनुष्य तन्मय हो उच्च मानसिक स्थिति में पहुँच सकते हैं।

अध्याय 2

मानसरोवर का जमना

1. ताप-प्रमाण

सन् 1936-37 में जब मैं मानसरोवर के तट पर निवास कर रहा था, तब सितंबर के दूसरे ही सप्ताह से शीतकाल का आगमन हो गया। अक्टूबर की पहली से 14वीं तारीख तक न्यूनतम तापक्रम लगातार हिमांक से नीचे था। उस वर्ष बरामदे में उच्चतम तापक्रम का विस्तार 19वीं जुलाई के दिन 67 अंश (डिग्री) फारेनहाइट था। अल्पतम तापक्रम 28वीं फरवरी के दिन—18.5 अंश था, अर्थात् हिमांक से 50.5° नीचे था। उन दिनों यदि कोई खड़ा होकर थूकता तो थूक ऊपर से ही बर्फ बनकर नीचे गिरता था। 16 फरवरी को तापक्रम दिनभर 2° से ऊपर चढ़ा ही नहीं, अर्थात् हिमांक से 30° नीचे था। उस समय घर के भीतर भी स्याही के जम जाने के कारण फाउंटेन-पेन काम में नहीं आती थी। अधिक क्या, इन दिनों कड़ुआ और तिल का तेल भी पत्थर के समान जम जाता था। घी का तो क्या कहना, बसूले से काटना पड़ता था। साढ़े तीन मास तक उच्चतम तापक्रम हिमांक से नीचे ही रहा। शीतकाल में कई बार मध्याह्न में भी तापक्रम–10° रहा, अर्थात् हिमांक से 42° नीचे रहा। सचमुच सन् 1936-37 में श्री कैलास-मानसरोवर प्रांत में शीतकाल में कड़ाके का जाड़ा पड़ा।

2. मानसरोवर के जमने के पहले का उपक्रम

सितंबर के दूसरे सप्ताह से बर्फ पड़ने लगी। सरोवर के किनारे पर भयंकर वायु के कारण डेढ़ फीट से अधिक कभी बर्फ नहीं गिरी, परंतु गंगोत्तरी की भाँति कैलास के आसपास 10 से 18 फीट की ऊँचाई तक बर्फ गिरने से मठों के लोगों के इधर-उधर जाने का मार्ग अवरुद्ध हो गया। पहली नवंबर से ही प्रचंड वायु दिन-प्रतिदिन तीव्रता से, गर्जना के साथ बढ़ने लगी। मार्गशीर्ष शुक्ल प्रतिपदा (14वीं दिसंबर) के दिन मैंने अपने पूज्यपाद श्री गुरुदेव के जन्म-दिवस को बड़े समारोह के साथ मनाया। उसी दिन से मेरी पहले की शारीरिक और मानसिक दुर्बलताएँ दूर हो गईं और मेरा जीवन सचेत होकर नूतन उत्साह और शक्ति से भर गया। सरोवर के किनारे का जल दो-दो फीट दूर तक जमने लगा। मार्गशीर्ष शुक्ल अष्टमी के दिन (21.12.36) अधिकतम तापक्रम 10° और अल्पतम तापक्रम–2° था। उसी दिन से अत्यधिक ठंड पड़ने लगी। झंझावात का पारावार नहीं रहा। कुछ-कुछ बर्फ भी पड़ने लगी। अधिकतम तापक्रम हिमांक से 32° नीचे ही रहा। सरोवर के मध्य में दो-दो अंगुल मोटी और 50 से 100 गज लंबी बर्फ की तहें जमकर किनारे पर तैरती हुई आने लगीं। मांधाता की ओर आँधी के झोंके सरोवर में अति गंभीर शब्दों से समुद्र की भाँति उत्ताल तरंग उत्पन्न करने लगे। आँधी की भयंकरता और कड़ाके की ठंडक का सामना कर सकूँगा या नहीं—इस आशंका से जो भय अब तक बना था, वह दूर हो गया और मन नये उत्साह और आनंद

में निमग्न होकर अधिक दृढ़ और धैर्यशील हो गया।

3. मानसरोवर का जम जाना

लामा और अन्यान्य तिब्बती लोग पहले से ही कह रहे थे कि पूर्णिमा के दिन समस्त मानसरोवर जम जायगा। अंत में मार्गशीर्ष की पूर्णिमा आ गई। सोमवार का दिन था। प्रातःकाल का समय था। मैं आनंदोल्लसित हो उठा। किसी अज्ञात कारण से, उस दिन नित्य से पहले ध्यान में बैठकर आसन से सात बजे उठकर असमय में ही कोठरी से बाहर आया; आते ही देखता क्या हूँ कि जिस प्रकार गंगोत्तरी में हिमखंडों के गिर जाने से गंगा के प्रवाह के अवरुद्ध होने के कारण पूर्व का प्रणवनाद पूर्णतः बंद होकर निस्तब्धता छा जाती है, उसी प्रकार यहाँ भी महानिशि या महाशून्य-जैसी निस्तब्धता छाई हुई है। प्रकृति नटी के स्वरूप में इस विलक्षण परिवर्तन के कारण का अन्वेषण करने के लिए अपने मठ के ऊपर गया और कुछ समय तक वहीं खड़ा रहा। खड़े-खड़े ही पुलकांकित हो गया और शरीर की सारी सुधि-बुधि भूल गया—ज्ञात नहीं कितनी देर तक!

कुछ देर उसी प्रकार खड़ा रहा। थोड़ी देर बाद, पता नहीं कितने समय, स्फुरण आने पर आँखों के सामने दूर पर नीलाकाश का भेदन करने वाले उदयकालीन भानु के—जिनकी रश्मियाँ अभी धरातल पर कहीं नहीं पड़ी थीं—स्वर्णांबरों से सुसज्जित होने वाले और गंभीरता से सरोवर का अवलोकन करने वाले श्री कैलास-शिखर को देखा। उस समय उसका दिव्य स्वरूप सारे चराचर विश्व को संमोहित करने के लिए आई हुई मूर्तिमती जगन्मोहिनी–जैसा प्रतीत हुआ। ऐसा लग रहा था, मानो साक्षात शिव और पार्वती संमुख आकर खड़े हो गए हैं। भेड़-बकरियाँ घेरों में से मिमियाती तक नहीं थीं। जिस समय विवश करने वाले उस दिव्य दृश्य का आनंद लूट रहा था, श्री कैलास-शिखर विविध रंगों के वस्त्रों को शीघ्रता से बदल-बदलकर, अंत में अपने स्थायी रजत-वस्त्र को धारण करना निश्चित करके सरोवर के मध्यभाग में सुशोभित स्वच्छ नील जलरूपी दर्पण में अपने स्वरूप का अवलोकन कर रहा था। चकाचौंध लगने पर मैंने अपनी आँखों को जरा नीचे कर सामने स्थित सरोवर पर दृष्टि डाली। सरोवर पर दृष्टि पड़ते ही पुलकांकित हो गया और सामने के सरोवर और अपने शरीर को भूलकर निश्चेष्ट हो गया।

फिर स्मृति आने पर देखता हूँ कि भगवान भास्कर पूर्वी पहाड़ के बहुत ऊपर चढ़ गए हैं। सरोवर के किनारे-किनारे पर एक मील भीतर तक चारों ओर दूध-जैसी श्वेत बर्फ जम गई है। उसका मध्यभाग गंभीर, शांत, शुद्ध और निर्मल जल से युक्त होकर श्री कैलास और हिमाच्छादित पोनरी के शिखर तथा प्रातःकालीन प्रकाशमान सूर्यरश्मियों को बड़ी सुंदरता से प्रतिबिंबित करके विराजमान हो रहा था। उस दिन का वह आनंदप्रद और सुंदर दृश्य कभी भी भूलने का नहीं। वह अनिर्वचनीय शोभा केवल अनुभव की वस्तु है, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। वह निराली और अनोखी छवि चिरस्मरणीय और तन्मय करने वाली थी। उस समय वहाँ पर सर्वत्र पूर्ण निस्तब्धता छाई हुई थी। निर्वाण की पूर्ण प्रशांतता की भाँति

सर्वत्र शांति विराज रही थी। इस धराधाम में कौन ऐसा प्राणी होगा, जो उस निर्मल और गंभीर वातावरण को देखकर आनंद-विभोर न हो जायगा! मानस के दर्शन को जाने वाले भक्तों को वह क्षण तन्मनस्क करके निर्जीव प्रतिमा की भाँति निश्चेष्ट कर देता है। अति चंचल चित्त वाले एवं परम शुष्क तार्किकों को भी एकाग्र करके ईश्वरोन्मुख कर देता है। प्लेटफार्मों के ऊपर से दिए गए आडंबरमय व्याख्यानों एवं बने-बनाए उपदेशों की अपेक्षा इस प्रकार का दृश्य भी मनुष्य को अंतर्मुख करने के लिए पर्याप्त है। उस वातावरण के साथ अपनी लय मिलाकर मैं छत की मुड़ेर का सहारा लेकर खड़ा हुआ और पुनः निश्चेष्ट हो गया। संसार भर में परम पुनीत और सर्वोत्कृष्ट आध्यात्मिक स्पंदनों की अनोखी छटा से परिपूर्ण इन दोनों स्थानों ने अपनी विवश करने वाली सौंदर्यराशि से हमें अभिभूत कर दिया। कितना प्रशांत, कितना संमोहक, कैसा आनंददायक वह दृश्य था!

दस बज गए थे। आँख खुलने पर मुड़ेर पर रखे हुए हाथ ठंढ से अकड़ गए। शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक समस्त वातावरण में एक विचित्र प्रकार का परिवर्तन हो गया और ऐसा अनुभव होने लगा कि एक दूसरे लोक में पहुँच गया हूँ। उस समय तीर-वासी जनता अपने मठों और मकानों की छतों पर चढ़कर रंग-बिरंगे झंडों और तोरणों को चढ़ा, धूप जला, प्रार्थना और स्तोत्रों का पाठ कर रही थी। सभी लोग उत्साह में भरकर उच्च स्वर में सो! सो! सो! की ध्वनियों से देवताओं को उद्बोधित कर रहे थे और मंत्र, पुरश्चरण और विशेष रूप से पूजापाठ कर रहे थे। पूरे तीन दिनों में—30 दिसंबर को—सारा सरोवर पुराण-कथित दधि-समुद्र के समान बर्फ से जमकर घनीभूत हो गया था। किंतु आश्चर्य की बात तो यह है कि स्वेन हेडिन लिखते हैं—"सारा मानसरोवर घंटे भर में जम जाता है।"[1] उनका यह कथन सर्वथा भ्रमजनक और निराधार है।

4. मानसरोवर में दरार, शब्द और उनके कारण

पहली जनवरी से ही सरोवर में कभी-कभी विचित्र ध्वनियाँ और गड़गड़ाहट सुनाई पड़ने लगी थी। सातवीं तारीख से लगभग एक महीने तक सरोवर में आंदोलन ने तीव्र रूप धारण कर लिया था। ऐसा प्रतीत होता था कि सरोवर पेट की पीड़ा से व्यथित है या संभवतः परिक्रमा करने वाले यात्रियों को डराने के लिए विविध प्रकार की ध्वनि, शेर का गर्जन, गड़गड़ाहट, गाड़ी की सीटी, विविध पक्षियों के कलरव, कई प्रकार के संगीतमय वाद्यों और कई प्रकार के साधारण और उच्च शब्दों को सुनाता है। ऐसा विदित होता था मानो सरोवर शीतकाल की श्वेत चादर को पहनने की अनिच्छा से, या हृदय से चादर को धारण करने की इच्छा रहते हुए भी प्राथमिक लज्जा या झिझक का प्रदर्शन करने के लिए ऐसा कर रहा है। शीतकाल की अधिकता के साथ यह आंदोलन बहुत घट गया, जिससे ऐसा प्रतीत होने लगा मानो इसने वस्त्र धारण करना अंगीकार कर लिया है। पर वसंतागम में सरोवर के पिघलने के पहले फिर उच्च ध्वनियाँ सुनाई पड़ने लगीं। जहाँ तक मैंने देखा, मानसरोवर और राक्षसताल

---

1. स्वेन हेडिन, 'ट्रेंस-हिमालया', (सन् 1920), खंड 2, पृ0 180 ।

में, जल के ऊपर जमी हुई बर्फ की मोटाई 2 से 6 फीट तक थी।

मानसरोवर और उसमें गिरने वाली नदियों के (च्यू गोम्पा के पास और डिङ्छो और टग नदी के मुहाने के समीप को छोड़कर) जमने के लगभग एक महीने के बाद अंतर्वाहिनियों (सबटेरेनियन चेनल्स) के द्वारा जल राक्षससरोवर में जाता है। इस कारण मानसरोवर के ऊपर की बर्फ के नीचे के जल की सतह बारह अंगुल से अधिक घट गई, जिससे उसमें चारों तटों तक जमी हुई बर्फ का विशाल और भारी स्तर अपने ही महान भार से भयंकर शब्दों के सा" फट गया और बड़ी-बड़ी दरारें (फिश्यूर) बन गईं। उसके बाद शीतकाल में और भी पानी घट गया होगा, जिसे मैं नाप नहीं सका। ये दरारें (जिसे तिब्बती भाषा में 'मयुर' कहते हैं) तीन से छह फीट तक चौड़ी थीं। उनसे सारा सरोवर कई भागों में विभक्त हो गया था। दो-तीन दिनों में पानी जमकर भली भाँति से न जुड़ने के कारण फिर फट गया, जिससे उन दरारों के ऊपर बर्फ के बड़े-बड़े खंडों के छह-छह फीट की ऊँचाई के ढेर लग गए। इन ढेरों के बर्फ के टुकड़े कभी-कभी दरारों के ऊपर वैसे ही एक के ऊपर एक पड़े रहते हैं औ:र कभी दरारों के दोनों किनारों में और आपस में जुड़ जाते हैं। इस प्रकार की दरारें तट के किनारे-किनारे और तट से कुछ दूरी पर सरोवर में भी बन जाती हैं, जिन्हें मैं 'किनारे की दरारें' कहूँगा। इसके उपरांत मई के महीने में जब सरोवर पिघलने लगता है, तो उन्हीं दरारों में फट जाता है। सरोवर के गर्भ में अवस्थित गर्म स्रोतों से उत्पन्न होने वाले आंदोलन भी उसके भीतर के शब्द और दरारों के होने का एक कारण हो सकता है।

इन शब्दों और दरारों से डरकर और सरोवर में नीचे धँस जाने के भय से कोई भी व्यक्ति मानसरोवर की बर्फ के ऊपर से आर-पार जाने का साहस नहीं करता। च्यू गोम्पा के भिक्षु लोगों के मना करने पर भी, शीतकाल में एक बार मैं साहस करके च्यू गोम्पा से चेरकिप गोम्पा जाने के लिए जमे हुए मानसरोवर के ऊपर एक मील तक गया। आगे चलकर अकस्मात एक दरार के सामने पहुँच गया, जिसके ऊपर बिना जुड़ी हुई बर्फ के पाँच फीट की ऊँचाई के बड़े-बड़े टुकड़ों का ढेर लगा हुआ था। मैं उस परिस्थिति के लिए पहले से प्रस्तुत नहीं था। अंत में बड़ी ही कठिनता से विपत्ति के साथ एक घंटे तक इधर-उधर भटकते हुए उसे लाँघ सका। चेरकिप गोम्पा पहुँचने के पहले एक अन्य दरार के ढेर और एक किनारे की दरार को बड़ी कठिनाई से पार करना पड़ा। उस दिन के पूरे ब्यौरे को यदि सुनाऊँ, तो बड़ी ही विस्तृत कथा हो जायगी। उस समय मुझे इस उक्ति का स्मरण हो आया कि "मनुष्य जिसे करना असाध्य कहते हैं, उसे करने में बड़ा आनंद आता है।" यदि कोई वैज्ञानिक साधन-सामग्रियों से संपन्न हो, तो वह शीतकाल के मध्य में प्रातःकाल के समय बर्फ के ऊपर से सरोवर को अच्छी तरह से पार कर सकता है।

5. मानसरोवर और राक्षसताल की तुलना

जैसा कि पीछे कहा जा चुका है, जमे हुए राक्षसताल के ऊपर लदे हुए भेड़, बकरी, याक, और घोड़े पर सवारी करने वाले भी पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक आ-

जा सकते हैं। मैंने एक बार राक्षसताल के टापुओं का निरीक्षण करने के लिए याक पर सवारी की थी। राक्षसताल में मानसरोवर-जैसी बड़ी-बड़ी दरारें और फाड़ न होने का यही कारण हो सकता है कि राक्षसताल से बर्फ के नीचे से बाहर निकलने वाले जल की पूर्ति मानसरोवर की बर्फ के नीचे से आने वाला जल कर देता है। दोनों सरोवरों के मध्यवर्ती पहाड़ के नीचे के रेतीले स्तरों से मानसरोवर का जल सर्वदा राक्षसताल में निःस्यंदित होता रहता है। इसलिए राक्षसताल के ऊपर की बर्फ और नीचे के जल के मध्य में कोई रिक्त स्थान नहीं है। फलतः उसमें अधिक दरारें या फाड़ नहीं होते। हाँ, कहीं-कहीं किनारे की फाड़ और छोटी-छोटी दरारें पर्याप्त मात्रा में होती हैं। राक्षसताल के बीच के टापुओं में जाते समय मैंने भी एक-एक फुट चौड़ी दरारों को पार किया था। एक बूढ़े तिब्बती से मैंने सुना था कि कभी-कभी आठ या दस वर्षों पर राक्षससरोवर में भी फाड़ और दरारें अधिक संख्या में बन जाती हैं। जमने के समय दोनों सरोवर शुद्ध और स्वच्छ, किंतु अपारदर्शी बर्फ के रूप में जम जाते हैं और एक महीने में पारदर्शी और हरे–नीले रंग के हो जाते हैं। बर्फ की मोटाई दो से छह फीट तक रहती है।

राक्षसताल मानसरोवर से 20 दिन या एक मास पहले जम जाता है और 15-20 दिन बाद पिघलता है। वैसे तो राक्षसताल अक्टूबर के महीने के मध्य भाग से ही जमना प्रारंभ हो जाता है, कहीं-कहीं एक-एक मील दूर तक भी जम जाता है। इस स्थान पर यह लिख देना अप्रासंगिक न होगा कि स्वेन हेडिन के इस कथन से कि "मानसरोवर से 15 दिन पहले ही राक्षससरोवर फट जाता है,"[1] हमारा पूर्वोक्त अनुभव एकदम विपरीत है। राक्षसताल मानसरोवर से 20 दिन पहले पूरा जम गया और उस वर्ष एक महीने देर से पिघला। मानसरोवर में बहुत-सी छोटी-छोटी और बड़ी-बड़ी दरारें हैं, पर राक्षसताल में बहुत कम हैं। इन दोनों झीलों में एक और भेद है कि राक्षसताल के पूरे जमने में कम से कम पूरा एक सप्ताह और पूरा पिघलने में उससे कुछ अधिक दिन लग जाते हैं, जब कि मानसरोवर के जमने और पिघलने में तीन ही दिन लगते हैं। राक्षसताल के फटने के समय कई दिनों तक बर्फ के बड़े-बड़े टुकड़े इधर-उधर तैरते हुए दिखलाई पड़ते हैं। जिससे कैलास के पास की तरछेन मंडी को पहले पहल जाने वाले भारतीय भोटिया व्यापारी उक्त ताल पर तैरते हुए बर्फ के टुकड़ों को देखते हैं, पर मानसरोवर में ऐसा नहीं प्रतीत होता।

मैंने राक्षसताल के आसपास का वातावरण मानसरोवर से अधिक ठंढा पाया है और उसके चारों ओर अधिक बर्फ पड़ती है। शीतकाल में राक्षससरोवर के दक्षिण और पश्चिम के किनारों पर ऊँचे-नीचे पर्वत और घाटियों में प्रचुर परिमाण में गिरी हुई बर्फ से बनी हुई विचित्र ढंग की धारियाँ 'ज़ेब्रा' के समान बहुत शोभायमान लगती हैं। खाड़ी, अंतरीप, प्रायद्वीप, जलसंधि, डमरूमध्य और पथरीले तटादिओं से युक्त टेढ़े-मेढ़े किनारे और बीच के पहाड़ी द्वीप राक्षसताल के प्राकृतिक रम्य दृश्य की शोभा को और भी बढ़ा रहे हैं। मानसरोवर का किनारा अपने पश्चिमी साथी के किनारे से अधिक सीधा है।

---

1. स्वेन हेडिन, 'ट्रैंस-हिमालया', खंड 2, पृ0 180 ।

भूगोलशास्त्रवेत्ता के दृष्टिकोण से राक्षसताल मानसरोवर से भी अधिक महत्वपूर्ण है। वह (राक्षसताल) एक कोने में बड़ी-बड़ी उछलती हुई तरंगों से युक्त है, दूसरे कोने में दर्पण-जैसा निर्मल और शांत है, तीसरे कोने में दूर तक पानी जमा हुआ दिखाई देता है और उस पर कैलास प्रतिबिंबित दीख पड़ता है।

मानसरोवर की गहराई प्रायः 300 फीट है, पर राक्षसताल की गहराई उत्तर में उसकी आधी है। संभव है दक्षिण की ओर इसकी गहराई अधिक भी हो, पर अभी तक यह नापा नहीं गया। मानसरोवर तिब्बत के सभी सरोवरों से अधिक गहरा है। इसके किनारे आठ मठ और कई घर बने हुए हैं और राक्षसताल के किनारे पर वायव्य कोण में छेपगे[1] (चपग्ये) गोम्पा और पश्चिम में शुङ्बा के गोबा का केवल एक घर है। मानसरोवर की परिधि लगभग 54 मील और राक्षसताल की 77 मील है। मानस का क्षेत्रफल 200 वर्ग मील और राक्षस का 140 वर्गमील है। मानसरोवर का उत्तरी तट अधिक और दक्षिणी तट कम लंबा है, राक्षसताल का उत्तरी तट संकीर्ण और दक्षिणी तट लंबा है। मानसरोवर उत्तर से दक्षिण 13 मील और पूर्व से पश्चिम 14 मील लंबा है। और राक्षसताल क्रम से 17 और 13 मील है। मानसरोवर के पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के तट 16, 10, 13 और 15 मील लंबे हैं और राक्षसताल के तट क्रमशः 18, 22, $28\frac{1}{2}$ और $8\frac{1}{2}$ मील हैं।

प्राकृतिक सौंदर्य में राक्षसताल मानसरोवर से किसी अंश में कम नहीं है; परंतु आध्यात्मिक दृष्टिकोण से मानसरोवर अद्वितीय, अतुल और निराला है। संभवतः स्थानीय वायु के कारण मानसरोवर की अपेक्षा राक्षसताल के पास अधिक आँधी और ठंढक रहती हैं। मानसरोवर की अपेक्षा राक्षसताल के किनारों के विशेष ठंढे, उसके शीघ्र जमने और विलंब से पिघलने में राक्षसताल की कम गहराई भी एक कारण हो सकती है। यह एक आकर्षण का विषय है कि इन दोनों के साथ रहते हुए एवं परिमाण में लगभग समान होते हुए भी प्रकृति और स्वभाव में इतना महान अंतर है।

स्वेन हेडिन लिखते हैं—"शीतकाल में मानसरोवर का पानी बर्फ के नीचे 20 अंगुल घट जाता है...... परंतु राक्षसताल का जल केवल 2/3 या 1 इंच घटता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि वह सदा पूर्वी सरोवर से पानी ग्रहण करता है और बहुत अल्प जल को बाहर भेजता है।"[2] स्वेन हेडिन जुलाई और अगस्त के महीनों में इन सरोवरों पर गए थे, न कि उस समय जब कि वे जमे हुए थे। इसलिए शीतकाल की उनकी सारी जानकारी उनके तिब्बती नौकरों या पथ-प्रदर्शक से प्राप्त सुनी-सुनाई सामग्री के आधार पर थी, जो कि उन्हें अयथार्थ रूप में बताई गई थी। जब राक्षसताल मानसरोवर से लगातार जल ग्रहण करता है और बहुत अल्प परिमाण में ही बाहर भेजता है, तो मानसरोवर से अंतर्वाहिनियों द्वारा निःस्यंदित होकर आया हुआ 20 अंगुल का जल कहाँ चला गया? वे जैसा लिखते हैं कि राक्षसताल से जल

---

1. इस मठ का प्रधान देवता ल्हमो है। यह मशङगोम्पा की शाखा है।
2. 'ट्रंस हिमालया', खंड 2, पृ० 180 ।

1. लाचातो-राक्षसताल का छोटा द्वीप

2. तोप्सेरमा–राक्षसताल का बड़ा द्वीप ।



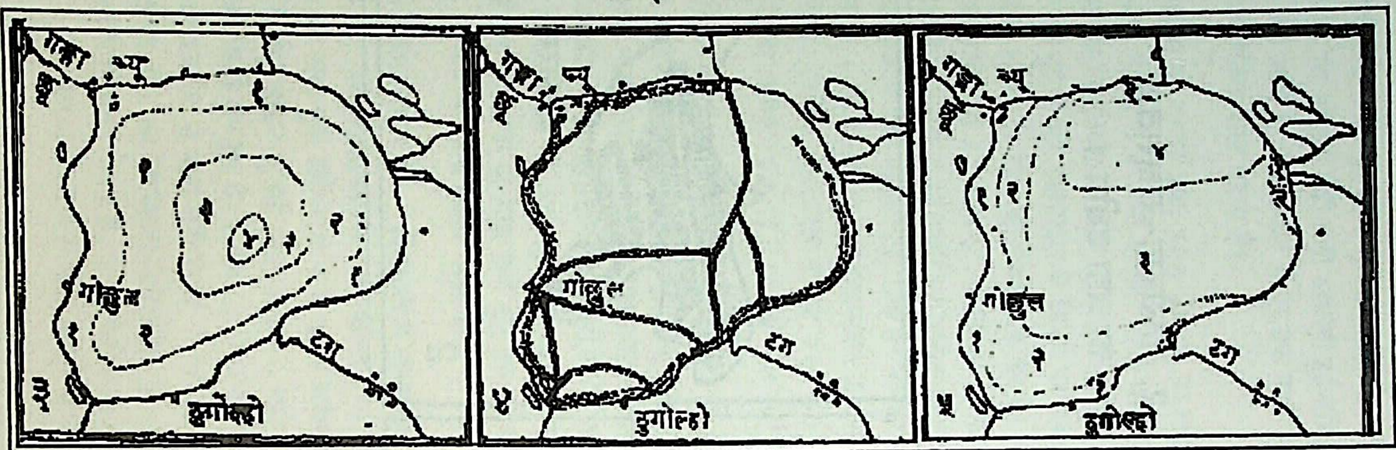
1



2

3. मानसरोवर कैसे जमा।　　4. मानसरोवर में दरारें　　5. मानसरोवर कैसे बिघला।

(सन् 1936-37)



1. पहली रात में जमा ।
2. दूसरी रात में जमा ।
3. तीसरी रात में जमा ।
4. चौथे दिन प्रातः जमा ।

IIIIIII प्रधान दरारें ।
=== किनारे की दरारें ।
+ गर्म जल के सोते

1. मानसरोवर पिघलने से एक महीना पहले गल गया।
2. मानसरोवर पिघलने से दस दिन पहले गल गया।
3. मानसरोवर पिघलने के दिन
4. मानसरोवर पिघलने से तीन दिन बाद

अत्यल्प परिमाण में ही बाहर जाता है, तो उस अवस्था में राक्षसताल के जल की तह बढ़ जानी चाहिए थी और परिणामतः उसके ऊपर की बर्फ फटकर उसमें मानस से अधिक नहीं तो कम से कम उतनी ही दरारें और फाड़ें होनी चाहिए थीं। परंतु वे साथ ही साथ यह भी कहते हैं कि राक्षसताल का जल $\frac{2}{3}$ या 1 इंच ही घटा है! क्या वे उन तिब्बतियों से, जिन्होंने मानसरोवर के जल की सतह के बारे में कई फीट के अंतर बताए थे, यह आशा कर सकते हैं कि वे $\frac{2}{3}$ या 1 इंच का अंतर बता सकेंगे? अतः उनके कथन के विरुद्ध हम डंके की चोट पर यह कहते हैं कि राक्षसताल से, अंतर्वाहिनियों के द्वारा तथाकथित 'सतलज के पुराने रास्ते' (ओल्ड बेड ऑफ़ दी सटलेज) से या किसी अन्य रूप से बाहर जाने वाले जल का परिमाण उतना ही होना चाहिए, जितना कि वह मानसरोवर से ग्रहण करता है, संभवतः अधिक भी।

6. जमे हुए सरोवर में विचित्रताएँ

जमे हुए मानसरोवर में लगातार चित्र-विचित्र और अद्भुत दृश्य दिखलाई पड़ने लगते हैं, जिनका पूर्ण रूप से वर्णन करना असंभव है। तथापि कुछ वर्णन की चेष्टा की जायगी। कभी तो सरोवर दधिसमुद्र की भाँति धवलातिधवल अतिश्वेत हिम से ढका रहता है और कभी दूसरे समय में संभवतः अपने पूर्वरूप को धारण करने की इच्छा से, अकस्मात् रात भर में अपारदर्शी श्वेत हिम को स्वच्छ पारदर्शी हिम के रूप में परिवर्तित करके गर्भस्थ छोटे-बड़े पत्थर, रेत, घास, जमकर मरी हुई और जीवित चलती-फिरती मछलियों को प्रदर्शनियों में रखे हुए शीशे के बक्स की वस्तुओं की भाँति प्रदर्शित करता है। एक बार कभी विविध नादों को सुनाता है और किसी दूसरे समय में एकदम निःशब्द हो जाता है।

ऐंद्रजालिक की भाँति एक समय में निमापेंडी के दक्षिण में बर्फ को तोड़कर पतले-पतले पौन इंच के मोटे शीशों के टुकड़े-जैसे बर्फ के टुकड़ों को धमाधम ऊपर फेंककर ढेर के ढेर लगा देता है। सबेरा होने तक किनारे की दरारों के कारण तीन-तीन, चार-चार फीट मोटे बर्फ के बड़े-बड़े ढेरों और खंडों के छह से नौ फीट तक ऊँचे, 10 से 21 फीट तक चौड़े तथा सैकड़ों गज लंबे बाँध का निर्माण कर देता है। किसी और समय में हठात अंदर के अन्यान्य आंदोलनों से उत्पन्न हुए भूकंप की भाँति तरंगों को उत्पन्न करके, उन बाँधों को ताश के बने हुए महलों के समान धड़ाधड़ गिरा देता है; और किनारे से मन में मगन होकर माला फेरते हुए परिक्रमा करने वाले यात्रियों को चौंका देता है। ये बाँध वाले बर्फ के टुकड़े कुछ तो ठुगोल्हो से शुशुप छो तक टेढ़े होते हैं और वहाँ से गोछुल तक सीधे होते हैं। गोछुल से छेती छो तक एक-एक, दो-दो अंगुल के मोटे और बड़े-बड़े तख्ते-जैसे बर्फ के टुकड़ों के ढेर लगा देता है। ठुगोल्हो से छेती छो तक किनारे के दरारों के फूटने से बीस-बीस, पचास-पचास घनफीट के बर्फ के टुकड़ों को किनारे के ऊपर जल की सतह से पाँच फीट से साठ फीट तक प्रचंड वेग से ऊपर फेंक देता है।

छेती छो से लेकर मल्लाठक नामक ज्वालामुखी पर्वत के सिरे तक, सरोवर में बहकर

आए हुए घास को एकत्रित करके कोमल गद्दी बना देता है। एक कोने में ज्वालामुखी पहाड़ के सिरे पर जल को भूमि तक पारदर्शी हिम के रूप में जमाकर अपने तल को दिखा देता है। तटों पर ही नहीं, प्रत्युत अपने गर्भ में भी गर्म स्रोतों को दिखाने के लिए मध्य-शीतकाल में भी जब सरोवर 2 से 6 फीट बर्फ से ढका रहता है और तापक्रम हिमांक से 30^{0} नीचे रहता है (28-1-1937) तो च्यू गोम्पा के पास ज्वालामुखी पहाड़ की नोक से 50 गज, सरोवर के भीतर, 30 फीट लंबे स्वच्छ और नीले जल का प्रदर्शन करता है, जिसमें उस कठोर शीतकाल में भी कुछ जलपक्षी आश्रय ग्रहण करते हैं। एक कोने में बर्फ का समतल और विशाल मैदान बना देता है। कुछ दूर तक सभी प्रकार के बर्फ के टुकड़ों को एकत्रित कर लेता है।

चङ डोङ्खङ से ग्युमा छू तक आलू की खेती के समान एक-एक फुट ऊँचे और 3 फीट के अंतर पर किनारे से लेकर सरोवर में आधी मील की अपारदर्शी बर्फ की कतारें बना देता है। उसके मुखद्वार पर सैकड़ों छोटी-छोटी मछलियों को तैरते-तैरते पारदर्शी बर्फ के रूप में जमाकर प्रदर्शित करता है। आगे ग्युमा छू से लेकर शम छो तक 8 फीट की ऊँचाई वाले अपारदर्शी बर्फ से बने हुए शिखरों, घाटियों, घाटों और अधित्यकाओं से युक्त पर्वतश्रेणियों के सुंदर नमूने बना रखे हैं। मैंने शीतकाल में मानसरोवर की परिक्रमा करते समय हिमालय के विविध शिखरों के सादृश का पता लगाते-लगाते पूरे दो घंटे बिता दिए थे। इन पर्वत-पंक्तियों में गोले, चौड़े, नुकीले, तिरछे, चौपहले, जुड़े हुए, फणों वाले और ढालू तथा विविध प्रकार के शिखरों को देखा।

शम छो से लेकर गुगटा के मुख तक धान रोपते समय बैलों के खुरों से चिह्नित खेत की भाँति बर्फ के विस्तृत मैदान को फैलाए हुए है। सचमुच पुनीत सरोवर की शीतकाल की प्रथम परिक्रमा के समय उन चिह्नों को मैंने जंगली घोड़े और याकों का खुर-चिह्न समझा था। गुगटा के मुख में बारहों महीने तक जल रखे रहता है, वहाँ से एक मील आगे तक श्वेत बर्फ को प्रवाल की शैलश्रेणी की भाँति बनाए रखता है। और यहाँ से ठुगोल्हो तक निमापेंडी के मुखद्वार को छोड़कर किसी अन्य विशेष दृश्य का प्रदर्शन नहीं करता, वरन सभी प्रकार के बर्फों के टुकड़ों को दिखलाता है। विशेषकर ग्युमा छू और टग के बीच में किनारे-किनारे छह से दस फीट तक चौड़ाई की बर्फ की विशाल सड़क बना रखी है, जिस–पर स्केटिंग सीखने वाले अभ्यास कर सकते हैं। उस पर चलते समय थक जाने पर मैं आनंद से फिसल-फिसलकर दौड़ते हुए चलने लगता था।

इसके अतिरिक्त जमे हुए मानसरोवर की कुछ अन्य मनोरंजक बातों को कहकर फिर सरोवर के फटने के विषय में कहूँगा। कुछ स्थानों पर बर्फ को तोड़कर जल को पिचकारी की भाँति फेंककर एक छोटा-सा तालाब बना देता है और फिर रात में उसको जमा देता है। पर वसंत ऋतु के आरंभ में उस प्रकार के बने हुए तालाब बड़े होते हैं, जो आरंभ में आए हुए हंस के जोड़ों के स्वागत के लिए प्रस्तुत रहते हैं। सर्वदा गंभीर भाव से बने रहना मानस के लिए भी कठिन हो जाता होगा, मानो इसलिए कभी-कभी वह विनोदियों की भाँति पारदर्शी

स्फटिक के समान अपने गंडस्थल में हजारों बड़ी-बड़ी आलपीनों और सूइयों को लगा लेता है। किसी दूसरे समय में दूसरे गाल के ऊपर और भीतर भी छोटी-छोटी बिंदियों, कई प्रकार की चित्र-विचित्र लताओं और फूलों को लगाकर यात्रियों को हँसाकर आनंदित कर देता है। मानो रात के समय देवगण बिहार करके चले गए हैं, इसलिए अपने पारदर्शी नीले बर्फीले वस्त्र के ऊपर कई श्वेत पगडंडियों और लकीरों का निर्माण कर देता है, जिन्हें अचानक किसी रात में इंद्रजाल की भाँति अदृश्य कर देता है। इन मार्गों और लकीरों में फाड़ न होने पर भी इन्हें एक प्रकार की छोटी दरारें कह सकते हैं। दक्षिण भारत में मकर-संक्रान्ति के अवसर पर जिस प्रकार महिलाएँ आँगनों में चौक पुराते समय भाँति-भाँति के पद्म और लताओं को चित्रित करती हैं, ठीक उसी प्रकार किसी समय मानसराज अपनी नीली चादर को तरह-तरह के सफेद बेल-बूटों से सुसज्जित कर देता है। जब सरोवर पिघलने लगता है, तो बर्फ के बड़े-बड़े दरारों में फटने तथा आपस में टकराने से इन पगडंडियों और छोटी-छोटी लकीरों में छोटे-छोटे टुकड़े बन जाते हैं।

किसी समय बालकृष्ण की भाँति अपने मुँह को खोलकर अपने जबड़े के मध्य में उदर-स्थित पत्थर, रेत और मिट्टी को विश्वरूप की भाँति प्रदर्शित करता है। कुछ समय बाद उस विश्वरूप को समेटकर उन पत्थर आदि को किनारे से कुछ दूर तट पर बिछा देता है, या ढेर बना देता है। कभी एक कोने में एक आँख से आँसू बहाता है और कभी दूसरे समय आनंदाश्रु की वर्षा करता है। कभी-कभी रात में कई मनों के भार वाले बड़े-बड़े हिमखंडों को किनारे के ऊपर मध्यमार्ग में फेंककर यात्रियों को अचंभे में डाल देता है। कभी रात में तोप की फायर करके किनारे के पास के उदरस्थित छोटे-छोटे पत्थर आदि वस्तुओं को सात-आठ गज दूर ढकेल देता है। कुछ काल के बाद उनको वहीं ढेर रूप में छोड़कर अंतर्हित हो जाता है। गर्मी के दिनों में जाने वाले यात्रीगण किनारे के ऊपर के मार्गों में पड़े हुए इन पत्थरों के ढेरों को देखकर 'सरोवर के भीतर के ये श्वेत रेत और पत्थरादि किस प्रकार यहाँ जल से इतनी दूर पर आए होंगे।' ऐसा विचारकर अनेक प्रकार के तर्कवितर्क करते हैं। एक यात्री-दल में आपस में जो बातें हो रही थीं, उसका वास्तविक वर्णन यहाँ पर कर रहा हूँ, जो बहुत ही मनोरंजक है।

7. यात्रियों के एक दल का मनोरंजक वार्तालाप

इंजिनीयर—डॉक्टर साहब, यह एक आश्चर्य की बात है कि सरोवर के भीतर के पत्थर, रेत, और मिट्टी किनारे के ऊपर इतनी दूर कैसे आ गए?

पुरोहित—इसके लिए इतने आश्चर्य और विचार की क्या आवश्यकता है। शीतकाल में जब यहाँ पर मनुष्यों का आवागमन नहीं रहता, उस समय देवताओं ने विहार के लिए यहाँ आकर खेल में इन पत्थरों को एकत्रित किया होगा।

डॉक्टर—'ऑर्थोडॉग' लोग तो ऐसे ही भ्रम में पड़ते हैं। जहाँ पर कच्चा मांस खाने वाले राक्षस हों, वहाँ देवताओं का आगमन कैसा?

वकील—शायद उन्हें हंसों ने लाकर इकट्ठा किया होगा।

कालेज का एक सायन्स का विद्यार्थी—नानसेंस! इतने बड़े-बड़े ढेर! इतने बड़े-बड़े पत्थर! (बड़े-बड़े पत्थरों को दिखाते हुए) भला इतने बड़े-बड़े पत्थरों और रेत को हंस कैसे ला सकते हैं? यदि सचमुच में हंस ही लाए हों, तो वे राक्षस-हंस होंगे। ऐसा यदि मान भी लिया जाय, तो उनके पैरों के चिह्न तो कहीं दिखलाई नहीं पड़ते।

पुरोहित—हंस के पद-चिह्न वायु के कारण मिट गए होंगे। उनके अंडे तो मुर्गी के अंडों से तीन-चार गुना बड़े देखे गए हैं। इससे अनुमान होता है कि वे हंस बड़े-बड़े होंगे और संभवतः इन पत्थरों को लाने में समर्थ भी होंगे।

डॉक्टर—संभवतः शीतकाल में सरोवर की बर्फ फटती होगी और उसके बड़े-बड़े टुकड़े सरोवर से इन पत्थरों को ढकेलकर ऊपर लाते होंगे। पीछे बर्फ के गलने पर ये यहाँ रह गए और अब हमें आश्चर्य में डाल रहे हैं।

थोड़ी-सी अंग्रेजी जानने वाले पंडित—आजकल के 'हेट्रोडॉग' और नव-नागरिक लोग ऐसा ही वितंडावाद करते हैं। 'देवताओं द्वारा लाए गए' कहने पर आपने पुरोहित जी को ऑर्थोडॉग कहा। 'हंसों के द्वारा लाए गए' कहने पर उस स्कूलिए लौंडे ने नानसेंस कहा। शीतकाल में सरोवर का फटना कैसा? फिर फटी हुई बर्फ के टुकड़ों का इतनी दूर आना कैसा? यदि आ भी जायँ, तो इतने पत्थर, रेत और मिट्टी का पाँच गज तक ढकेलकर आना। ऐसा ही सायंस है, जिसे तुमने डॉक्टरी में पढ़ा है?

डॉक्टर—हमारे स्वयं न देखने पर भी यदि बर्फ के बड़े-बड़े टुकड़ों के ढकेलने से ये नहीं आए हों, तो सरोवर से इन ढेरों तक दो-दो गज के चौड़े रास्ते-जैसा निशान क्या है?

सायंस का विद्यार्थी—(ताली बजाकर) हाँ, पुरोहित जी, जरा इसका जवाब तो दे दो।

पंडित—(विद्यार्थी की ओर देखकर) रे मूढ़! चुप रह। (डॉक्टर की ओर मुड़कर) सरोवर से इस ढेर तक रास्ता है। अच्छा (दूसरे पत्थरों की ओर निर्देश करके) यहाँ भी तो पत्थर बिछे हुए हैं। सरोवर से यहाँ तक कोई रस्ता या चिह्न नहीं है। इसका क्या उत्तर देते हो! पुरोहित- (उच्चस्वर से) क्यों डॉक्टर! दो, उसका उत्तर दो! अभी देना होगा।

डॉक्टर—देखिए, यह सरोवर के पानी के नजदीक है और इसमें सरोवर की मिट्टी भी है। इससे मालूम होता है कि शायद मानसरोवर के नीचे के पत्थर के साथ जमी हुई बर्फ फटकर ऊपर उछलकर आ गई है। इसीलिए सरोवर से यहाँ तक कोई निशान नहीं है।

पंडित—एक गज लंबे-चौड़े बिछे हुए पत्थरों को लाने वाले बर्फ के टुकड़े कितने बड़े होंगे? फटकर उतने बड़े टुकड़े सरोवर से ऊपर किनारे पर उछलकर चले आए—ऐसा तुम्हारा सायंस कहे तो सच, और देवताओं और हंसों के द्वारा लाए जाने की बात हमारे शास्त्रों की

झूठी है?

डॉक्टर—प्रकृति में कितनी शक्ति छिपी है, इसका भी कुछ पता है आपको? अपनी अटकल और अनुमानों को छोड़कर जरा सरोवर के किनारे पर साल भर निवास करने वाले स्वामी जी से पूछो (मेरी ओर निर्देश करके) कि इन्होंने शीतकाल में किसी देवता को देखा है?

पंडित—हाँ, इसी तरह रास्ते पर आइए। (हमारी ओर होकर) स्वामी जी! आप शीतकाल में यहाँ रहे क्या? आप बता सकते हैं कि सरोवर के बीच से ये पत्थर किनारे पर कैसे आ गए?

मैं—डॉक्टर साहब ने जो कुछ कहा है, वह सत्य है। (और कुछ कहना चाहता था कि बीच में ही पुरोहित जी बोल उठे)

पुरोहित—कहाँ देवताओं का निवास-स्थान मानसरोवर और कहाँ कठोर शीतकाल में स्वामी जी का यहाँ पर रहना! ग्रीष्म में यात्रा करने पर भी तो यहाँ ठंढक के कारण हमारी मरने की दशा हो रही है। शीतकाल में इनके यहाँ रहने की बात को मानने पर भी—पहले तो हम इसे मानते ही नहीं—ये शीतकाल में कैसे बाहर आए होंगे और इन सभी वस्तुओं को किस प्रकार इन्होंने देखा होगा! इसके अतिरिक्त साधु लोग तो बड़ी लंबी-चौड़ी गपें हाँकते हैं।

मैं—(थोड़ा मुस्कराते हुए) हाँ, पुरोहित जी महाराज, मैंने सचमुच वर्षभर मानसरोवर के तीर पर निवास किया है तथा श्री कैलास और पुनीत मानसरोवर की कई परिक्रमाएँ भी की हैं। उसमें भी मानसरोवर के पूरे जमने के बाद छह परिक्रमाएँ पूरी की थीं। इन सभी बातों को घटते हुए तो मैंने स्वयं देखा है।

पुरोहित—वाह! वाह! वाह! इतनी देर तो हमें कुछ विश्वास भी था, अब तो हम आपकी बातों को मानेंगे ही नहीं। सभी सरासर गप और झूठी हैं। क्या स्वामी जी आप भी कुछ इंगलिस पढ़े हैं, जो डॉक्टर की बकवास में हाँ में हाँ मिला रहे हैं?

संस्कृत का एक विद्यार्थी—यह तो मानतलाई है, असली मानसरोवर नहीं है।

अतः ये यदि इसके किनारे पर रहे तो कोई आश्चर्य की बात नहीं।

सायंस का विद्यार्थी—धत् ! तुम्हारी पढ़ाई पर राख पड़ गई। तलाई का अर्थ क्या है, नहीं जानते? तलाई हिंदी का और सरोवर संस्कृत का शब्द है। इसीलिए संस्कृत के विद्यार्थियों की जंगलियों में गिनती है। बस, बस, चुप रहो।

एक दंडी स्वामी—हमने अपने गुरु जी को ऐसा कहते हुए सुना था कि मानसरोवर के पास एक शिला-नदी है, जिसमें अँगुली डालने पर पत्थर हो जाती है। इस प्रकार पत्थर

बनी अँगुली वाले एक महात्मा को हमने स्वयं भी देखा था। इसके अतिरिक्त हमने पुराणों में यह भी पढ़ा है कि मानसरोवर की लंबाई और गहराई कई योजनों की है। उसमें सोने के कमल, बड़े-बड़े मोती और राजहंस होते हैं। यहाँ इनमें से कुछ भी नहीं है। इसलिए यह असली सरोवर नहीं है, नकली होगा।

सायंस का विद्यार्थी—ऐसे एंटीक्वेटेड (पुराने विचार वाले) संन्यासी-पलटनों को रेफॉर्मेटरी स्कूलों में भेजकर उनकी बुद्धि को रेती से तेज कर देना चाहिए। देखिए न, मानसरोवर को कई योजन गहरा कहता है! वाह !

वकील—इन बहसों को छोड़ हम लोग अपने गाइड की गवाही लें। वह तिब्बती घोड़े वालों से पूछकर हमें असली बात बताएगा। (गाइड की ओर मुड़कर) गाइड! इन हूणियों से पूछो कि ये पत्थर के ढेर सरोवर से ऊपर कैसे आए?

पंडित—हाँ, यह तो ठीक है।

गाइड—(घोड़े वालों से देर तक बातचीत करके) बाबू जी! हूणियों का कहना है कि डॉक्टर साहब और स्वामी जी जो कुछ कह रहे हैं, वह सच है। उनमें से कुछ लोगों ने जमे हुए मानसरोवर की परिक्रमा करते हुए और जमे हुए राक्षसताल के द्वीपों के ऊपर जाते हुए स्वामी जी को स्वयं देखा है, क्योंकि ये लोग घोड़े के साथ स्वामी जी की सवारी में थे।

पुरोहित—ऊँह ! वे तो पूरे जंगली हैं। वे क्या जानते हैं?

डॉक्टर—(संभाषण को झगड़े में परिणत होने से रोकने के लिए मीठे स्वर में) पुरोहित जी, अच्छा, आप जो कुछ भी कहें, वही सच है।

पुरोहित—हाँ, बाबू जी, इस प्रकार राह पर आइए।

अध्याय 3

मानसरोवर का पिघलना

1. मानसरोवर के पिघलने से पहले का उपक्रम

मानसरोवर के जमने की सुंदरता की अपेक्षा उसके पिघलने की क्रिया कहीं विशेष मनोरंजक है। सरोवर मानो अपनी श्वेत चादर से संतुष्ट न होकर उसमें आसमानी किनारी लगाकर कहीं राजहंसों के एक जोड़े को, कहीं बादामी रंग के डरूसिरचुङ के एक जोड़े को, किसी स्थान में दो–एक श्वेत चकरमा के जोड़ों को सुसज्जित कर, कहीं-कहीं मध्य में छोटे-छोटे वज्रों को जड़ देता है। कभी-कभी दो-दो तीन-तीन हंसों को अपनी चादर के फटे हुए टुकड़ों पर चढ़ाकर नीली किनारी पर खेलने के लिए छोड़ देता है और कभी उनको अपनी चादर पर बुला लेता है। कभी चादर की किनारी पर वज्रों को झनझना कर कर्णानंद प्रदान करता है और कभी शांत और निर्वात समय में कैलास को भी अपनी चादर की किनारी के ऊपर सुशोभित कर देता है। इस श्वेत चादर की किनारी चारों ओर नहीं होती। जहाँ होती भी है, कहीं बहुत और कहीं कम चौड़ी होती है। कभी उस नीली किनारी के सिरे पर हंसों को रखकर कोणों से सजाता है।

मानसरोवर के पिघलने के महीने भर पहले उसमें गिरने वाली नदियों की बर्फ गलकर उसमें गिरती है। सौ गज से लेकर आधे मील की चौड़ाई की बर्फ गलने से किनारों में नीलोदक बन जाता है, जिसमें पहले-पहल आए हुए हंसों और बतख़ों के एक-एक, दो-दो जोड़े खेलते रहते हैं। किनारे के जल में स्वच्छ पारदर्शी बर्फ के छोटे-बड़े टुकड़े तैरते हुए, एक–दूसरे से टकराकर सुंदर झन-झन शब्द करते रहते हैं। जब वायु विशेष रूप से चलने लगती है, तो बीच की बर्फ के उजले टुकड़े किनारे के पानी में आकर बहते रहते हैं, जिससे हंस सुगमता से जल से ऊपर उठकर उनके ऊपर बैठ जाते हैं तथा धूप का सेवन करने लगते हैं। सूर्योदय के समय हंस प्रायः उदरपूर्ति के लिए जल-क्रीड़ा न करके सूर्याभिमुख हो आतप-स्नान करते हैं और अर्धनिमीलित नेत्रों से नासाग्रदृष्टि हो ध्यानावस्थित भाव से जोड़ों में छोटी-छोटी कागज की नावों की भाँति मंद वेग से बहते हुए दिखालाई पड़ते हैं। उस समय दोनों ओर पानी की लहरें कोणाकृति में उठती हैं। आजकल के मेडीटेशन क्लासों और लेक्चरारों के उपदेशों की अपेक्षा प्रकृति का यह प्रत्यक्ष प्रदर्शन हजारों गुना अधिक हृदयग्राही और प्रभावशाली होता है। इसीलिए हमारे प्राचीन ऋषि-मुनि प्रकृति के साथ सन्निकट संबंध रखकर उस सर्वशक्तिमान की झलक देखा करते थे।

एक विशेष अवसर पर मानसराज कुछ दिनों के लिए चादर की नीली किनारी पर सवेरे के समय छोटे-छोटे मेघ-पुंजों को सजाता है और किसी अन्य अवसर पर उस नीली किनारी के तट के भागों को छोटी लहरियों से सुसज्जित करके चादर की ओर के अंशों को शीशे के समान स्वच्छ रखकर उसमें कैलास और आकाश के तारों को प्रतिबिंबित कर देता है।

एक समय (सरोवर फटने से नौ दिन पहले) बँगला साड़ियों की भाँति अपनी चादर के मध्य में चौड़ी-सी शुद्ध नीली किनारियों को छाप देता है।[1] कभी एक रात में उत्तर के भू-भाग और पहाड़ सबको श्वेत हिम से पूर्णतः ढककर अपनी चादर के टुकड़े का भ्रम उत्पन्न करा चक्कर में डाल देता है। पुनः उस भ्रम को दूर करने के लिए दिन के दस-ग्यारह बजने तक रात की उस बर्फ को उड़ाकर फिर भूमि और पहाड़ से पृथक् अपनी चादर के रूप को दिखा देता है।

मानस पिघलने से ग्यारह दिन पहले हाथी, सिंह, बाघ, चीता, भालू, घोड़ा, बंदर, लंगूर इत्यादि जानवरों से युक्त चिड़ियाघर के समान चिग्घाड़, गर्जन और अन्यान्य बड़ी-बड़ी ध्वनियों को सुनाता है। ठीक मृदंग, रामढोल इत्यादि वाद्यों के शब्द-जैसी ध्वनियों की तो संख्या ही नहीं गिनाई जा सकती। बीच-बीच में तोप-जैसी या पहाड़ के टूटने-जैसी महाध्वनियों को सुनाता है।[2] इन उच्च ध्वनियों और गर्जनों को सुनकर कोई ऐसा न समझे कि मानससरोवर पागल हो गया है, मानो इसीलिए छह बजे से दस बजे तक शब्दों को सुनाकर पुनः निःशब्द हो जाता है। इन ध्वनियों के कारण की परीक्षा करने पर ज्ञात हुआ कि वसंतकालीन वस्त्रों को धारण करने के विचार से मानस अपने शीतकाल में पहने हुए श्वेतांबर को फाड़ रहा है और उसके फटने के शब्द ही छोटे जीवों को शेर, व्याघ्र आदि जंतुओं के गर्जन, तोप और डिनामाइट से पहाड़ों के टूटने के समय के महान शब्द-जैसे प्रतीत होते हैं।

मानसराज अपनी चादर को किस प्रकार बदलता है, इसे देखने की इच्छा से आए हुए दर्शकों को देखकर उसने क्रोधित की भाँति चैत्र पूर्णिमा के दिन (25-4-1937), मध्याह्न में बारह बजे के समय एकाएक समीपस्थ मांधाता से हिम को बुलाकर सारे मानसखंड में रात के बारह बजे तक बर्फ की वर्षा की और अपनी रुचि से श्वेत चादर में लगाई हुई नीली किनारियों को छोड़कर सभी वस्तुओं को श्वेत बना दिया। फटे हुए और फटते हुए कुछ टुकड़ों को इंद्रजाल की भाँति बारह घंटे में इस्त्री की हुई अति स्वच्छ मलमल की चादर जैसी एक बनाकर ऐसा प्रतीत कराया, मानो कहीं भूलकर शीतकाल ही लौटकर आ गया हो। मानस ब्रह्ममानस की सृष्टि होने पर भी 'गुरु गुड़ और चेला चीनी' की उक्ति को चरितार्थ कर रहा है। अतः उसकी अद्भुत और अनंत लीलाओं का वर्णन करना ब्रह्मा से भी असंभव–सा हो रहा है। कुछ शांत होने के बाद किसी भले यात्री के सविनय पूछे जाने पर कि "तुम्हें अपनी नीली चादर पहनते हुए देखने की उत्कट इच्छा है, कब पहनते हो?" मुस्कराते हुए आश्वासन भरे शब्दों में उत्तर देता है—"मैं अपनी लीलाओं की थोड़ी-सी छटा दिखा रहा हूँ, क्रोध की कोई बात नहीं। मेरे भोलेभाले तिब्बती बच्चों की धारणा है कि मैं नियमबद्ध होकर दशमी,

---

1. सरोवर की मध्यस्थ दरारों और फाड़ों के बीच की बर्फ के टुकड़ों के गलने के कारण पचास से अस्सी फीट तक बना हुआ नीलोदक श्वेत हिम के सामने बहुत ही सुंदर दिखाई पड़ता है।
2. इन शब्दों और आंदोलनों का कारण यह है कि गर्मी के आगमन के कारण मानसरोवर बर्फ के ऊपर की बड़ी-बड़ी दरारों, फाड़ों और छोटी-छोटी लकीरों में फटने लग जाता है।

पूर्णिमा या अमावस्या के ही दिन अपनी चादर को बदलता हूँ; परंतु मैं नियमबद्ध–जैसा प्रतीत होते हुए भी किसी नियम के बंधन में नहीं हूँ। जब चाहूँ स्वतंत्रभाव से कपड़े बदल लेता हूँ।'' एक समय (पिघलने के नौ दिन पहले) फटी हुई चादर के तट की ओर के पाँच गज से लेकर आधे मील लंबे छोटे-छोटे टुकड़ों को कुछ भागों में (विशेषकर पश्चिम और दक्षिण तथा पूर्व के किनारों में) छह से लेकर नब्बे फीट दूर तक फेंक देता है और किनारे से परिक्रमा करने वाले ध्यानमग्न यात्रियों को डराकर चौंका देता है। ये टुकड़े जल से ऊपर आते समय पीपिलिका-गति से आते हुए दीख पड़ते हैं। वेगपूर्वक सर्पगति से सरसराहट के साथ ऊपर चढ़ते हुए इन्हें देखकर शरीर में सनसनी फैल जाती है।

उपर्युक्त रीति से फेंके हुए टुकड़े वेग और ढंग के अनुसार कुछ स्थानों में दो फीट से छह फीट ऊँचे ढेर के रूप में लग जाते हैं। कुछ स्थानों में जैसे-तैसे बर्फ के बड़े-बड़े एक-एक, दो-दो फीट मोटे टुकड़े बिछ जाते हैं। कुछ अन्य स्थानों में पौन अंगुल के मोटे लालटेन के शीशे - जैसे टुकडों के छोटे-छोटे ढेर लग जाते हैं। कुछ टुक्ड़े मैदान में गिर जाते हैं और कुछ खड़े किनारों में। किनारे पर चढ़े हुए टुकड़ों में यह एक विशेषता है कि वे किनारे पर चढ़ते ही कुछ ईंट-जैसे टुकड़ों के रूप में फट जाते हैं, जिनके पार्श्व हिंगुल (मेर्क्यूरिक सल्फाइड) के टुकड़ों के समान होते हैं। सरोवर के पिघलने के दो-तीन सप्ताह पहले उसके ऊपर की बर्फ की बनावट और कड़ेपन में एक विचित्र परिवर्तन हो जाता है। शीतकाल में सरोवर के ऊपर की बर्फ को बिना सब्बल से तोड़े छोटे छेदों से पानी निकलना कठिन था, पर वही बर्फ अब इतनी भुरभुरी हो जाती है कि लाठी मारने से उसके टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। संध्या समय जब मैं टहलने के लिए बाहर निकलता, तो भुरभुरी बर्फ के इन ढेरों को लात से ठोकर मार देता और वे छोटे-छोटे शोरे के टुकड़ों के समान बनकर गिर जाते और दो दिनों में पूरे गल जाते थे। शीतकाल में सरोवर से किनारे पर फेंके हुए बर्फ के बड़े-बड़े चट्टान, जिन्हें पाँच-छह आदमी मिलकर भी नहीं हिला सकते, सरोवर के पिघल जाने पर भी वहीं बीस से तीस दिनों तक पड़े रहे। परंतु अब किनारे पर चढ़े हुए इन ढेरों में से नारियल जितने बड़े और कड़े बर्फ के टुकड़े नहीं मिलते। पिघलने के महीने भर पहले और उसके पहले की बर्फ में इतना अंतर है। सरोवर से किनारे पर आए हुए बर्फ के टुकड़े, जिनके कुछ अंश अभी भूमि पर चढ़ गए हैं, जब वायु के द्वारा आपस में टकराते हैं, तो छोटे-छोटे टुकड़े एक दिन में गल जाते हैं, पर बड़े टुकड़े जल में कुछ दिनों तक संतरण करके बाद में उसी गति को प्राप्त होते हैं।

2. मानसरोवर का पुनः द्रवीभूत होना

उपर्युक्त रीति से कई प्रकार की मनोभावन-लीलाओं का प्रदर्शन करके एक रात में, अचानक, बिना किसी के देखे अपनी श्वेत चादर को उतारकर ग्रीष्म के नए नीले वस्त्र को धारण करके सूर्योदय होने तक मानसराज अपने नए वस्त्र में दर्शन दे देता है (7-5-37)।[1]

1. उत्तर भारत के पंचांग के अनुसार वैशाख कृष्ण द्वादशी और दाक्षिणात्य पंचांग के अनुसार चैत्र कृष्ण द्वादशी है।

हे मानसराज! ब्रह्ममानसोद्भव! अद्भुत महिमाशालिन् ! तुम्हारी जय हो! देखो नूतन वस्त्र धारण किए हुए तुम्हें देखकर तीर निवासी फूले नहीं समा रहे हैं। आज वे शीतकाल में तुम्हारे श्वेतांबर धारण करते समय जिस प्रकार आनंद और उल्लास में मग्न थे, उसी प्रकार उत्साह और आनंद को प्रकट करने के लिए अपने घर, मठ और तंबुओं के ऊपर रंग-बिरंगे झंडों को लगाकर धूप-दीप के साथ पूजा-पाठ और स्तोत्रों का गान कर रहे हैं। 'सो-सो-सो' कहकर उच्च स्वर से पुकारकर देवताओं को उद्बोधित कर रहे हैं। तुम्हें मैं नमस्कार कर रहा हूँ, तुम्हारी ही असीम कृपा से मैं इस पावन तट पर वर्ष भर निवास कर सका। धन्योऽस्मि।

वह नूतनवसन निर्मल नील-मणि या स्वच्छ पिरोजे की भाँति महासमुद्र या शरदाकाश के समान अति गंभीर, मनोहर, और मनोमुग्धकारी है। ऐसा प्रतीत होता है कि मानो मुक्तिकांता मूर्तिमती होकर आ गई है, या जगन्मोहिनी या निर्वाण का मूर्तरूप सामने खड़ा है। इन दृश्यों को देखने से ऐसा भ्रम होता है कि यह निद्रा है या समाधि, स्वप्न है या सत्य! थोड़ी देर तक तो दर्शकों को समस्त बाह्य जगत से विस्मृत कराकर तन्मय कर देता है; आनंद-समुद्र में निमज्जित कर देता है।

मांधाता के ऊपर से आई हुई तीव्र वायु चादर के ऊपर की चित्र-विचित्र तहों को बना, लहरों को एक–दूसरे से टकरा और फेनों के द्वारा बनावटी हंसों का निर्माण करके वास्तविक और कृत्रिम हंसों के पहचानने में एक समस्या उत्पन्न कर देती है। देखते-देखते घंटों बीत जाते हैं। कहीं से आकर जलक्रीड़ा करते हुए हंस के झुंडों का मानस गाढ़ालिंगन करता है। कहीं तट पर बच्चों के साथ सूर्यरश्मियों का सेवन करते हुए, परिक्रमा करने वाले यात्रियों से डरकर, अपनी पाँखों को फड़फड़ाते हुए, पानी के ऊपर कुछ दूर भीतर जाकर, अंत में छोटे-छोटे खिलौने की नौकाओं की भाँति हंस-कुटुंब मानस की गोद में उतरकर एक अपूर्व मानसिक आनंद का अनुभव कराते हैं। रात में नूतन वस्त्र को शीघ्रता से धारण करने के कारण पुराने वस्त्र के कुछ बड़े श्वेत टुकड़ों को नए वस्त्र के पिछले भागों (उत्तर) में छूट जाने से न देख, या देखने पर भी अनदेखे की भाँति उन वस्त्रखंडों को वायु के तीव्र झोंकों से परस्पर टकरा एवं टुकड़े-टुकड़े करके,नए वस्त्र के समान ही उनका भी रूप-रंग बना देता है और फिर अदृश्य कर देता है।

3. उपसंहार

इस प्रकार प्रकृति की भाँति प्रतिक्षण बदलते रहने पर भी मानसराज का महोन्नत, सर्वोत्कृष्ट, अद्भुत, अनुपम और अवर्णनीय आध्यात्मिक वातावरण परब्रह्म के समान अखंडैकरस-रूप अपनी छत्रछाया में रहने वालों के मन को—चाहे वे कैसी भी विपरीत परिस्थितियों में क्यों न हों—विक्षेप-रहित बनाकर ब्रह्मानंद में अचल और तन्मय बना देता है। किसी मठ से श्री कैलासराज के दिव्य सौंदर्य का निरीक्षण करते समय या पुनीत मानससरोवर के तट पर ध्यानाविष्ट होकर बैठने में अक्लांत और अज्ञात भाव से सारा दिन

क्षण की भाँति व्यतीत हो जाता है। जिन कवियों ने श्री कैलास और मानसरोवर का भूलोक की नहीं, अपितु स्वर्ग की सृष्टि के रूप में वर्णन किया है, वह अतिशयोक्ति नहीं है। मतों और सिद्धांतों में विभिन्नता होते हुए भी अपनी दिव्याकर्षण शक्ति के कारण ये दोनों तीर्थ सत्तर करोड़ हिंदू और बौद्धों के लिए परम पावन और पूजनीय होकर सारे विश्व को आकर्षणसूत्र में बलात आकृष्ट कर रहे हैं। पर्वतों के समीप जाकर इनके प्रथम दर्शन मात्र से ही मनुष्य पुलकाकुल हो जाते हैं।



द्वितीय तरंग

कैलास-मानसखंड



अध्याय 1
मानसखंड
1. तिब्बत

पुराण और इतिहास में अनुसंधान करने से पता लगता है कि तिब्बत का नाम किन्नरखंड, किंपुरुषखंड, त्रिविष्टप, स्वर्गभूमि या स्वर्णभूमि है। परंतु तिब्बती भाषा में वह पहले कभी बोदयुल्, बोद, बोत्, या पो कहलाता था। उसके बाद विदेशी लोग उसे बोद, टोबोत्, टुबोत्, टुबट् और टेबेट के नामों से पुकारते आए, जो अंत में आजकल के टिबेट या तिब्बत के रूप में प्रचलित हो गया। इन सब नामों का आधार बुद्ध या बोधि-धर्म है। साधारणतया तिब्बती अपने देश को पो और चङ-थङ (उत्तरी अधित्यका) के—नाम से पुकारते हैं। भारत की सीमा के—विशेषकर गढ़वाल और अल्मोड़े के—निवासी भोटिए तिब्बत को हूण देश और तिब्बतियों को हूणिया कहते हैं। मैं भी आगे चलकर प्रस्तुत पुस्तक में इन शब्दों का प्रयोग करूँगा। अनेक भारतीय व्यक्ति तिब्बत को भोट और तिब्बतियों को भोटिया के नाम से पुकारते हैं, परंतु मैं इन शब्दों का प्रयोग नहीं करूँगा, क्योंकि ऐसा करने से भारत की सीमा के प्रांतों में रहने वाले भोटिए और उनकी पट्टियों के नामों से गड़बड़ हो जाती है।

प्राचीन काल में आधुनिक भारत के उत्तर में स्थित तिब्बत, पूर्व में ब्रह्मा[1], श्याम देश, इंडोचायना, आग्नेय कोण में मलाया, सुमात्रा (स्वर्णद्वीप), जावा, बाली आदि द्वीप, दक्षिण में सिंहलद्वीप या लंका और पश्चिम में गांधार (अफगानिस्तान) भारत के अंतर्गत थे, जिसे अभी हम विशाल-भारत कह सकते हैं। इन सभी प्रांतों का भारत से धार्मिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक संबंध होता आया है। तिब्बत समुद्र की सतह से 12000 फीट से लेकर 16000 फीट तक की ऊँचाई की संसार भर की सबसे बड़ी और ऊँची अधित्यका है। इसे संसार की छत भी कहते हैं। यहाँ पर बारह मास बर्फ से ढके रहने वाले पर्वत हैं। 17000 फीट की ऊँचाई पर भी आबादी है। यह प्रदेश भारत की उत्तरी सीमा पर हिमालय की दूसरी ओर 78.5^0 और 108^0 उत्तरी अक्षांश और 39.5^0 और 27.5^0 पूर्वी देशांतर के मध्य में स्थित है। इसकी लंबाई पूर्व से पश्चिम तक 1400 मील और चौड़ाई उत्तर से दक्षिण तक 800 मील, तथा क्षेत्रफल 814000 वर्गमील है।

तिब्बत देश संसार भर से उच्च अधित्यका है। पर्वतों से युक्त और हिमाच्छादित होने के कारण बहुत ठंढा और ऊसर है, सभी ऋतुओं में यहाँ भयंकर वायु चलती रहती है। खेती के योग्य बहुत कम भूमि है। यहाँ कोकनॉर, तेङरीनॉर (नम छो)[2], लाबनॉर जिल्लिङ छो

---

1. बर्मा का प्राचीन नाम श्रीक्षेत्र है, श्याम का कंबोज राष्ट्र और इंडोचायना के मालव तथा अमरावती ये दो प्राचीन नाम हैं।
2. सरोवर को तिब्बती भाषा में 'छो' और मंगोल भाषा में 'नॉर' कहते हैं।

इत्यादि बड़ी-बड़ी खारी झीलें और मानसरोवर, राक्षसताल-जैसे पेयजल के सरोवर हैं। भूमंडल में सबसे अधिक ऊँचाई पर स्थित 'होरा छो' नामक सर यहीं पर है, जो 17390 फीट की ऊँचाई-पर है। ह्वाङ्हो, याङ्छेकियाङ, सिंधु, ब्रह्मपुत्र, सतलज, करनाली आदि बड़ी-बड़ी नदियों के उद्गम-स्थान यहीं पर हैं। इनके अतिरिक्त भी अन्य कई छोटी-बड़ी नदियाँ हैं। कोकनॉर तिब्बत का सबसे बड़ा सरोवर है। इसका क्षेत्रफल 1630 वर्गमील है।

तिब्बत की जनसंख्या 30,00,000 और 50,00,000 के मध्य में अनुमानित की गई है। इसकी राजधानी ल्हासा है।[1] इसकी जनसंख्या लगभग 50,000 है, जिसमें से प्रायः आधे भिक्षु हैं। यहाँ राज-प्रासाद, 'पोतला', गोम्पा, मठ, मंदिर, डाकघर, तारघर, टेलीफोन, अस्पताल, बारूद-घर, टकसाल, बड़े-बड़े भवन और बाजार हैं। ल्हासा के अतिरिक्त शिगर्ची और ग्यांची नामक दो बड़े नगर हैं, जिनमें एक-एक की जनसंख्या 25,000 तक है।

बह्मपुत्र के दून में आबादी अधिक है। ल्हासा से शिगर्ची 144 मील और ग्यांची 150 मील पर है। तिब्बत के रहने वाले प्रायः यहाँ के मूल निवासी हैं और तिब्बती भाषा बोलते हैं। उत्तरी सीमा पर कुछ मंगोल और चीनी भी रहते हैं। यहाँ के लोग विशेषकर पशु-पालक हैं। कताई, बुनाई इनका प्रधान धंधा है। भेड़-बकरी, ऊन, नमक, सोहागा और कस्तूरी को भारत और चीन भेजते हैं। रेशम और चाय चीन से, सूती कपड़े और अनाज भारत से मँगाते हैं।

2. कैलास-मानसखंड की स्थिति

तिब्बत को चार भागों में बाँट सकते हैं—(1) पश्चिमी तिब्बत, जिसे ङरी कोर-सुम (शक्ति-चक्र-तीन) कहते हैं। इसका विस्तार पूर्व में ब्रह्मपुत्र के उद्गम से लेकर पश्चिम में लदाख तक है, (2) मध्य तिब्बत, जिसमें सङ, वूस, और कोङपा सम्मिलित हैं, (3) पूर्वी तिब्बत, जिसमें खम्, अमदो और शङ सम्मिलित हैं, और (4) चङ-थङ (उत्तरी अधित्यका), जो पश्चिमी और मध्य तिब्बत के उत्तर में है।

ङरी या पश्चिमी तिब्बत में पहले तीन सूबे थे—लदाख, शङ शुङ या गूगे (मानसरोवर के पश्चिमी भाग), और पुरङ। परंतु 100 वर्ष हुए लदाख काश्मीर के अधीन हो गया। कैलास-मानसखंड पश्चिमी तिब्बत के आग्नेय कोण में है, जिसके अंतर्गत पुरङ है।

तिब्बती और हिंदू पुराणों के वर्णन के अनुसार तथा कई भौगोलिक हेतुओं से श्री कैलास और मानसरोवर के पूर्व ब्रह्मपुत्र के उद्गम से आगे ठुकसुम तक, दक्षिण में भारत की सीमा, पश्चिम में छिनकु नदी, और उत्तर में गर्तोक और सिंधु नदी के उद्गम के अंतर्गत प्रांतों को कैलास-मानसखंड, कैलासखंड या मानसखंड कहते हैं। इस खंड की लंबाई पश्चिम से पूर्व तक 200 मील और चौड़ाई उत्तर से दक्षिण तक 90 से लेकर 100 मील तक है; यद्यपि

---

1. ल्हासा से फरी 217 मील और फरी से दार्जिलिंग 90 मील पर है। इस प्रकार ल्हासा से दार्जिलिंग कुल 307 मील है और ग्यांची होकर 360 मील है।

थुलिङ और छबरङ तक का प्रांत विशाल मानसखंड के अंतर्गत है।

3. पर्वत

कैलास, मांधाता, सुरङे, और कङलुङ मानसखंड की प्रधान पर्वत-मालाएँ हैं। जेस्कार पर्वत-श्रेणी इसकी दक्षिणी सीमा पर है। यहाँ के सबसे बड़े शिखर मांधाता (ऊँचाई 25355, 22650 और 22160 फीट) और कैलास (22028 फीट) हैं। ये सब पर्वत-मालाएँ सभी ऋतुओं में हिमाच्छादित रहती हैं। प्रायः 20,000 फीट से अधिक ऊँचाई वाले शिखर बहुत हैं।

4. नदियाँ

सतलज, सिंधु, ब्रह्मपुत्र और करनाली—इन चार महानदियों के उद्‌गम मानसखंड में ही हैं। सिब छू, छिनकु, गुनियाङती, दारमयाङती, ज्ञानिमा छू, छूनक, मिस्सर छू, ट्रोकपोनुप, ट्रोकपोशर, गोयक, चुकटा, छेठी, मुनजन, बोखर, लङपोछे, पार छू, गरतोङ, मयुम, गुरला, बलडक,रिंगुंग, गरु, डङगेचेन, गेजिन, कङजे, लालुङबा, चोकरो, ठितीफू, यांगसे आदि उपर्युक्त चार नदियों की सहायक नदियाँ हैं। इनके अतिरिक्त कैलास की डम छू, तोपछेन छू, झोङ छू, तरछेन छू, ल्हा छू, करलेप छू आदि (ये सेब राक्षसताल में गिरती हैं); मानसरोवर में गिरने वाली टग, नीमापेंडी, रिलजेन, रिलजुङ, नमेरेलडी, सेलुङ्हुर्दुङ, कुगलुङ, ग्युमा, लुङनक, पलचेन, पलचुङ, समो आदि; राक्षसताल में गिरने वाली टककरपो आदि; और कोङ्यू छो में गिरने वाली छोटी बड़ी कई नदियाँ हैं। मानसखंड में उत्तर दिशा में बहने वाली नदियाँ बहुत हैं। शीतकाल में इनमें से अनेक नदियाँ सूख जाती हैं, शेष सब जम जाती हैं।

5. झीलें

मानसरोवर और राक्षसताल मानसखंड के मीठे जल की प्रधान झीलें हैं। इनके अतिरिक्त कुर्क्यल छुंगो, डिङ छो, शम छो, गौरीकुंड, न्यक छो, तमलुङ छो आदि और कई छोटी-छोटी झीलें हैं। शुशुप छो, छेती छो, ज्ञानिमा और छकरा के पास के ताल के जल कुछ खारे हैं। कोङ्ग्यू (गुनछू) छो, अरगू छो और अरकोक छो—ये नमकीन जल की झीलें हैं।

6. जलवायु

कैलास-मानसखंड और तिब्बत प्रांत की जलवायु विशेषतया सूखी और ठंढी है। वहाँ बहुधा बड़े वेग से वायु चलती रहती है। वर्षा ऋतु देर से प्रारंभ होती है। वर्षा तो कम होती है, पर जब होती है तो मूसलधार होती है, ग्रीष्म की गरमी से बर्फ बिघल जाने के कारण नदियों में बाढ़ आ जाने से धारा तीव्र हो जाती है, जिसके कारण दोपहर के बाद उनका पार करना बहुत कठिन और कभी-कभी तो असाध्य भी हो जाता है। गरमी के दिनों में धूप असह्य

हो जाती है, पर आकाश में बादल आते ही बहुत ठंढक पड़ने लगती है। दिन में बादल घिर आने पर और रात में सर्वदा बहुत ठंढक पड़ती है। यात्रा के दिनों (जुलाई और अगस्त के महीनों) में श्री कैलास और मांधाता के शिखर प्रायः बादलों से आवृत होकर यात्रियों के साथ 'लुकाछिपी' का खेल खेलते रहते हैं। नवंबर से लेकर मई के महीने के मध्य तक वायु भयंकर आँधी का रूप धारण कर लेती है। बादनुमा की भाँति क्षण-क्षण में ऋतु बदलती रहती है। धूप में जाने पर शरीर से पसीना चूने लगता है, फिर थोड़ी ही देर में शीतल वायु बहने लगती है। अचानक सघन बादलों के समूह आकर बड़े जोर की गड़गड़ाहट और बिजली की कौंध के साथ मूसलधार वृष्टि करने लगते हैं। कभी-कभी सुंदर इंद्रधनुष दिखाई पड़ता है। थोड़े ही समय में छोटे-छोटे मोती-जैसे ओले या श्वेत चूने-जैसी बर्फ गिरने लगती है।

एक स्थान पर प्रखर धूप है, तो दूसरे स्थान पर बूँदाबूँदी या तुषारपात हो रहा है, और आगे चलकर आकाश से मूसलधार वृष्टि हो रही है। पहले पूर्ण प्रशांति और निस्तब्धता छाई रही है, फिर थोड़ी ही देर में बड़े ही प्रचंड वेग से हू-हू करती हुई हवा चलने लगती है। कभी तो धूप में पसीने से लथपथ हो पहाड़ पर चढ़ रहे हैं, और नीचे की 'दून' में उठते हुए धुएँ की भाँति बादलों का समूह दिखलाई पड़ता है, तथा नीचे प्रचंड वृष्टि होती दिखाई देती है। कभी धुएँ के समान अंधड़ की धूल में होकर चलना पड़ता है और कभी वर्षा के कारण कीचड़ में लथपथ होकर चलना पड़ता है। यहाँ पर एक शुभ्र चाँदी-जैसा पहाड़ जगमगा रहा है और वहाँ कैलास के लिंग को सतरंगा इंद्रधनुष आवृत कर रहा है। निकट का मांधाता-शिखर सूर्यास्त के समय आग की लपटों में मग्न है। छोटे बर्फीले मुकुट से सुसज्जित पोनरी–शिखर काले-काले मेघों से संलाप कर रहे हैं, और उधर सामने उदयकालीन सूर्य अपने द्रवित स्वर्णिम रश्मियों से मनोविमुग्धकारी सरोवर की नीली सतह को रंजित कर रहा है। वहाँ दूरवर्ती 'दून' में गंधक का सघन धुआँ, ऋतु की विशेष अवस्था में गर्म सोतों के अस्तित्व को बता रहा है। एक ओर से उष्ण वायु स्वागत करती है और दूसरे दून से कठोर ठण्ढी वायु आक्रमण करके कंपायमान कर देती है। कभी-कभी दिन-रात, सबेरे-शाम, छहों ऋतुएँ एक साथ ही आई हुई-सी प्रतीत होती हैं।

तिब्बत में संध्या-राग बहुत काल तक टिकता है—अर्थात् सूर्योदय से पहले और सूर्यास्त के बाद प्रायः एक या डेढ़ घंटे तक प्रकाश रहता है। अत्यधिक ऊँचाई के कारण यहाँ की वायु बहुत पतली होती है, इसलिए दूर की वस्तुएँ निकट-सी प्रतीत होती हैं। तिब्बत की चाँदनी रात संसार भर में सबसे अधिक प्रकाशयुक्त है; यहाँ का आकाश गाढ़े नीले रंग का और बहुत मनोमोहक होता है।[1]

7. वनस्पति

कैलासखंड में दो-तीन फीट की ऊँचाई के 'डमा' नामक पौधे को छोड़कर और कोई

1. तीसरी तरंग में 'जलवायु' नामक शीर्षक भी देखिए।

बड़े पेड़ नहीं होते। मोटी लकड़ियों के अभाव से तिब्बत में अधिक लोग याक के ऊन से बने हुए कंबल के तंबुओं में रहते हैं। डायजे, नीमापेडी आदि स्थानों में 'पेमा' नामक एक पौधा होता है, जो बहुत चीमड़ होता है। इसलिए इस पौधे को मकानों की छत बनाने के काम में लाते हैं। पुरङ के दून् के गाँवों में कुछ-कुछ 'चङमा' (एक प्रकार के बेदमजनूँ नामक पेड़) होते हैं। इनको लोग लकड़ी और बारूद के कोयलों के लिए काम में लाते हैं तथा बागीचों में लगाते हैं। कङजे छू की घाटी में ये वृक्ष अधिकता से पाए जाते हैं। गुरला छू की एक दून में दो या तीन गज की ऊँचाई पर लाल रंग का 'लङमा' या 'उंबो' नामक एक जंगली पेड़ होता है। कुछ भी हो, कैलास-शिखर के ऊपर एक महावृक्ष के नीचे या मानसरोवर के किनारे पर देवदारु के वन में शिव और पार्वती को विठाना चित्रकार की कुशल तूलिका का प्रसार या कविचातुरी और कल्पना-मात्र है। परंतु थुलिङ में जंगली पीपल, पूर्वी तिब्बत में चीड़, देवदारु, सफेदा (पापलर), अखरोट आदि के पेड़ होते हैं।

टग नदी के गर्म सोतों के पास तीर्थपुरी, नाब्रा, दापा, थुलिङ और कई स्थलों में 'जिंबू' नामक जंगली प्याज प्रचुर परिमाण में उत्पन्न होती है। इसकी जड़ में गाँठ नहीं के बराबर होती है। देशी प्याज के समान उसमें लाल और उजले दोनों प्रकार के फूल होते हैं। गर्मी के दिनों में इस पौधे को फूलों समेत उखाड़ और सुखाकर सैकड़ों मन के परिमाण में खंपा लोग[1] भारत में लाते हैं। विशेषकर पंजाब और युक्तप्रांत में यह बघार के काम में आता है। छौंकने के समय इसकी गंध कुछ अंश में प्याज और कुछ अंश में हींग-जैसी होती है। मानसरोवर के उत्तर में पलचेन और पलचुङ नदियों के पास 'गोकपा' नामक तिब्बती लहसुन मिलती है, जिसकी जड़ गुच्छेदार होकर पतली पेंसिल-जैसी मोटी होती है। इसकी जड़ की चटनी बनाई जाती है और पत्ते जिंबू-जैसे होते हैं। करदुङ के पास और दूसरे स्थानों में एक प्रकार का जंगली जीरा होता है। कई नदियों की दूनों में 'तरुआ' नामक एक काँटेदार पौधा होता है, जिसकी ऊँचाई एक फुट तक होती है। इसके फूल गोलमिर्च से कुछ बड़े और पीले रंग के होते हैं, जो 'तरचेमा' कहलाते हैं। यह खाने में बहुत खट्टा होता है, इसलिए चटनी के काम में आता है। कहीं-कहीं बिच्छू-बूटी नामक एक शाक होता है, जिसे छूअन या शिशूण भी कहते हैं।

मानसरोवर और राक्षसताल में पानी के नीचे एक प्रकार की घास होती है। सरोवर के किनारे पर जाते समय कभी-कभी 'आयोडीन' की-सी गंध प्रतीत होती है। इससे संभव है कि इन घासों में 'आयोडीन' होगा, जो रसायनशास्त्रज्ञों के अन्वेषण की सामग्री है। मानसरोवर

1. पूर्वी तिब्बत में खम् नामक एक प्रांत है। वहाँ के लोगों को खंपा कहते हैं। परंतु इस पुस्तक में यह शब्द विशेषतया उन तिब्बतियों के लिए प्रयुक्त हुआ है, जो हिंदुस्तान में आकर वस गए हैं और छह महीने के लिए व्यापार के उद्देश्य से तिब्बत जाते हैं। इनकी स्त्रियाँ अब भी तिब्बती पोशाक पहनती हैं। पुरुष भारतीयों की भाँति पाजामा, कोट आदि पहनते हैं और तिब्बतियों की भाँति सिर पर बाल रखकर जटा बनाए रहते हैं। घरों में ये लोग तिब्बती भाषा बोलते हैं और बाहर के कार्य के लिए अच्छी हिंदी बोलते हैं।

में तट के पास कम गहराई के जल में एक प्रकार की लता उगती है, जिस पर छोटे-छोटे पीले रंग के फूल खिलते हैं। इन फूलों का व्यास $\frac{1}{5}$ अंगुल होता है। परंतु सरोवर में कमल नहीं हैं। नदियों के ऊपरी भागों की घाटियों में कई प्रकार के रंग-विरंगे फूल होते हैं। बड़े-बड़े मैदानों में याक या भेड़-बकरियों के खाने योग्य घासें होती हैं। कैलास और मानसरोवर के तटों पर भिन्न-भिन्न प्रकार की धूप की लताएँ और पौधे हैं, जिनका विवरण 'प्रसादों' में दिया जायगा। मानसरोवर के पूर्व की ओर 'पंगपो' नामक एक पौधा होता है, जिसकी जड़ को धूप के काम में लाते हैं। इसको भोटिया लोग मासी कहते हैं। यह भारत में गर्व्यांग के ऊपर के पहाड़ों में भी होता है। वत्सनाभ (तेलिया या मीठा) बूटी मानसखंड में 16000 फीट की ऊँचाई पर होती है। इसको कैलास-शिखर की उत्तरी तलहटी में 17000 फीट की ऊँचाई पर बर्फीले स्थानों में भी मैंने देखा है।

मानसखंड में कई घाटियों के ऊपरी भागों में 'आर्चा' या 'डोलू' नामक एक जड़ी होती है। ये नाम भारत के सीमाप्रांत के हैं। इसको रेवदचीनी भी कहते हैं। भारत के बर्फीले स्थानों में यह बहुत होती है। इसकी जड़, जो पीले रंग की होती है, टिंचर के काम में आती है। दर्द और चोटों में तो यह बहुत लाभकारी होती है। घायल होते ही इसे घिसकर लगाने से पीब नहीं पैदा होती। इसके पत्तों के डंठल खट्टे होते हैं, जो चटनी बनाने के काम आते हैं। अंग्रेजी में इसे 'रुबर्ब' कहते हैं। विशेष रूप से मानसरोवर के तट पर, गुरला के आस-पास और कई अन्य स्थानों में एक औषधि होती है, जो दो या तीन फीट ऊँची होती है। अक्टूबर के महीने से इसके पत्ते कुछ लाल होने लगते हैं, इसलिए इसे 'लाल बूटी' भी कहते हैं। जमीन के ऊपर इसकी जड़ में कीप की आकृति की कई तहों में पतली बर्फ बनी रहती है। धूप निकलने पर आस-पास के पाले और बर्फ के गल जाने पर भी यह बर्फ नहीं गलती। इसकी जड़ जमीन में बहुत गहराई तक जाती है। भोटिए लोग इसका सन्निपात और अन्य ज्वरों में प्रयोग करते हैं, जो बहुत लाभदायक माना जाता है।

मानसखंड और तिब्बत के अन्य प्रांतों में 'निर्बिषी' नामक एक जड़ी होती है, जो बिच्छू और सर्प आदि के विषों को दूर करती है। इसको खंपा लोग मंडियों में लाते हैं। ये सब बूटियाँ वैद्यों की गवेषणा की सामग्री हैं।

मैंने मानसरोवर के आस-पास में 15000 फीट की ऊँचाई पर उगने वाली 'ठुमा' नाम की एक औषधि का पता लगाया है। यह भूमि पर फैलने वाली एक छोटी लता है। विशेषकर परखा के मैदान-जैसे दलदल या गीली भूमि पर यह अच्छी तरह फैलती है। इसकी लता बैगनी रंग की होती है, जिसकी मोटाई मोटे धागे जितनी होती है। पत्ते झीने और फूल पीले रंग के होते हैं। जब कार्तिक के महीने में यह पक जाती है, तो उस समय चूहे जड़ों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर अपने बिलों में शीतकाल के आहार के लिए ले जाते हैं। यदि कोई इसकी जड़ को खोदकर इकट्ठा करना चाहे, तो दिन भर खोदने पर भी कठिनता से पाव भर इकट्ठा कर पाएगा। यहाँ के गरीब लोग उन चूहों के बिलों को ढूँढ़कर जड़ के टुकड़ों को इकट्ठा कर लेते हैं। यह औषधि वीर्यरक्षक, वर्धक और स्तंभनकारी है, परंतु

उत्तेजक नहीं। इसका उचित रीति से अवलेह बनाकर सेवन करने से उत्तम बाजीकरण हो जाता है। मेरी इस कथन की पुष्टि और विशेष परीक्षा के लिए यह औषधि सरकारी रसायनशाला में और काशी विश्वविद्यालय के आयुर्वेद–विभाग की प्रयोगशाला के अधिष्ठाता को दी गई है। जिस प्रकार वैद्य और कविराज लोगों के द्वारा औषधियों में प्रयुक्त होने वाले एक-एक विदारीकंद को जंगली लोग एक ही दो दिन में खा जाते हैं, उसी प्रकार इसकी जड़ को यहाँ की निर्धन जनता भोजन के रूप में खाकर समाप्त कर देती है। धनी लोग नए वर्ष के उत्सव में तथा अन्य विशेष अवसरों पर इसे उबालकर घी और मिश्री के साथ एक-एक कटोरे खा लेते हैं। यहाँ पर यह लिख देना अप्रासंगिक न होगा कि इस प्रकार के कंद, अवलेह आदि जो थोड़ी मात्रा में खाने की वस्तुएँ हैं, यदि अधिक मात्रा में खाई जायँ, तो औषधि का विशिष्ट गुण न होकर केवल भोजन का ही फल होता है। आशा है, आयुर्वेद के अन्वेषणशील वैद्य इस औषधि के संबंध में विशेष छान-बीन करेंगे।

अध्याय 2
खनिज

1. सोना

गंगा छू के दक्षिण में एक मील की दूरी पर, मानसरोवर के तट से लेकर राक्षसताल के तट तक, सोने की खानों की एक लड़ी फैली हुई है। वहाँ कुछ वर्ष पहले सोना निकाला जाता था। एक बार खानों को खोदकर सोना निकालते समय चेचक की बीमारी बड़े उग्र रूप में फैली। इस बीमारी को खानों के अधिदेवता के क्रोध का कारण मानकर तिब्बती सरकार ने तभी से सोना निकालना बंद कर दिया है। खानों को अंतिम बार खोदते समय एक कुत्ते जितनी बड़ी (कुछ लोगों के मतानुसार कुत्ते के आकार की) सोने की डली (नगेट) निकल पड़ी। उस स्थान में एक छोरतेन बनी है, जिसे 'सेरका-खीरो' (सोने का कुत्ता) के नाम से पुकारते हैं। यह च्यू गोम्पा से एक मील दक्षिण में है। उस समय की खोदी हुई खानों का ढेर और मिट्टी इस समय भी देखने में आती है। मैं इन खानों में एक सिरे से दूसरे सिरे तक घूमा हूँ। किसी स्थान में कोई गढ़ा दो गज से अधिक गहरा नहीं है। इससे प्रतीत होता है कि यहाँ की खानों में सोना गहराई में मिलता है।

कैलास के उत्तर में पंद्रह दिनों की यात्रा की दूरी पर थोकजलुङ, मुनकथोक, रुङ्मर और तिब्बत के कई अन्य प्रदेशों में सोने की बड़ी-बड़ी खानें हैं, जहाँ से अब भी उसी पुराने ढंग से ही सोने को निकालते हैं, जिसे वास्तव में सोने की खुदाई नहीं कहा जा सकता। कहा जाता है कि तिब्बत में पानी से धोकर सोने निकालने वाले (गोल्ड वाशर्स) सहस्रों की संख्या में हैं। एक बार सोने की खान से 525 औंस (लगभग 16 सेर) के तौल की सोने की डली खोदी गई थी। इन सोने की और अन्य अमूल्य खानों के ऊपर आस-पास के देशों की दृष्टि गड़ी हुई है। न जाने ये किनके भाग्य में बदी हैं। सन् 1937 में तकलाकोट के गवर्नर से मैंने सुना था कि बीस वर्ष पहले ल्हासा में सोने का भाव दस रुपए तोला था।

2. सोहागा

गंगा छू के दक्षिण की सोने की खानों के समान ही यहाँ भी सोहागा निकालते समय चेचक की बीमारी फैलने के कारण तिब्बती सरकार ने यह मानकर कि खानों का अधिदेवता क्रुद्ध हो गया है, खानों से सोहागा निकालना स्थगित कर दिया। कहते हैं कि यहाँ सोहागा बहुत बढ़िया होता था। इस तालाब के आस-पास से एक श्वेत पदार्थ को हाथ और कपड़ों को धोने के लिए लोग ले जाते हैं। मानसरोवर से वायव्य कोण में 140 मील की दूरी पर लङ्मर नामक प्रदेश में सोहागे की बड़ी-बड़ी खानें हैं, जहाँ एक रुपए में दस से बीस सेर तक या एक बकरी के ढोने भर का सोहागा मिलता है। सोहागे की खानें तिब्बत के कई स्थानों

में हैं। मानसरोवर के उत्तर में सात या आठ दिन के मार्ग में बहुत-सी सोहागे की खानें पड़ती हैं।

नमक के तालाब भी हैं, जहाँ से तिब्बती प्रचुर परिमाण में नमक मंडियों में बिक्री के लिए लाते हैं। प्रतिवर्ष तिब्बत के तालाबों का नमक हजारों मन के परिमाण में भारत में, हिमालय के प्रांतों में, आता है।

3. अन्यान्य खनिज

पूर्वी तिब्बत में सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा, सीसा, पारा और शिलाजीत भी मिलते हैं। कुछ लोगों का अनुमान है कि तिब्बत में मिट्टी के तेल की खानें भी हैं। पश्चिमी तिब्बत की राजधानी गरतोक से तीन दिन के मार्ग की दूरी पर गेमुक नामक स्थान में सीसे की खानें हैं। ज्ञानिमा, छकरा और कई अन्य प्रदेशों में धोने वाले सोडे के बहुत-से मैदान हैं। कई बर्फीले स्थानों से चरवाहे 'हिमफुली' नामक पत्थर लाते हैं, जो श्वेतवर्ण स्फटिक के आकार का होता है। लोगों की धारणा है कि सहस्त्रों वर्षों की पुरानी बर्फ दबाव के कारण ऐसी बन जाती है और इसे पानी में घिसकर लगाने से मोतियाबिंद गल जाता है। परीक्षा करने पर यह 'केलसाइट' सिद्ध हुआ, जो 'केलसियम कार्बोनेट' का स्फटिक रूप है। कुङरीबिङरी धुरा के नीचे छिरचिन के आस-पास में, तकलाकोट से पश्चिम के पर्वतों में, मशङ के पास हरिताल (ट्राइसल्फेट ऑफ़ आर्सेनिक) और मणिशिला (बाईसल्फेट ऑफ़ आर्सेनिक) मिलती है। ये खनिज तिब्बत के अन्य प्रांतों में भी बहुत मिलते हैं।

कई स्थानों में जहरमोरा नामक पत्थर मिलते हैं, जो हरे, श्वेत, लाल, गुलाबी, भूरे, भस्म के रंग के या इनके मिश्रित वर्णों के होते हैं। यह विशेषकर कैलास की परिक्रमा में जुंठुलफुक् गोम्पा से 3 मील नीचे उतरने के पश्चात मार्ग से कुछ ऊपर और कुङरीबिङरी घाटे के नीचे छिरचिन के आस-पास पाए जाते हैं। यह पत्थर स्निग्ध और मृदु है और घिसने से सुगमता से घिस जाता है। यह 'सर्पेंटाइन' है। इसका कड़ापन 2.7 है। आँखों की ललाई आदि बीमारियों में इसको पानी में घिसकर लगाते हैं। इस पत्थर को जल में कुछ देर तक रखकर उस पानी को पीने से उसका प्रभाव ठंढा होता है। पानी में घिसकर पिलाने से बच्चों की उलटी और पतला दस्त बंद हो जाता है। अधिकतर यूनानी और सामान्य रूप में आयुर्वेदिक वैद्य लोग इसे काम में लाते हैं। इसका भस्म भी बनाते हैं।

कैलास में जुंठुलफुक् गोम्पा के नीचे, गुरला ला के नीचे, राक्षसताल के दक्षिणी तट पर, लाचातो के पहाड़ पर और कई अन्य प्रदेशों में 'पेरिडोटाइट' के पत्थर धीरे-धीरे जहरमोहरा बन रहे हैं। ये पेरिडोटाइट पहाड़ के खंड 'एक्सोटेरिक' (बाहर कहीं से कई मीलों की दूरी से पहाड़ों के दोहराव की क्रिया में फेंके हुए) प्रतीत होते हैं। जुंठुलफुक् गोम्पा के दक्षिण में 'सर्पेंटाइन' में जड़ी हुई पीली 'डोलोमाइट' भी विद्यमान है। मानसखंड के कई स्थानों में 'स्फटिक' या 'बिल्लौर' पत्थर भी मिलते हैं।

कैलास-शिखर और उसका उत्तरी भाग 'कांग्लोमोरेट' पत्थर का है और शिखर का पश्चिमी और दक्षिणी भाग 'ग्रेनाइट' का है, जो आदिम-काल या 'उषा-काल' (इयोसीन) से पूर्व का माना जाता है। आधुनिक युग का यह आदिम-काल 55000000 वर्ष पूर्व का माना जाता है।

'थनेरी पत्थर' एक प्रकार का मुलायम पत्थर है, जो ऊँटाधुरा और कुङरीबिङरी घाटों के पास मिलता है। लोगों का विश्वास है कि इसको घिसकर लगाने से स्त्रियों के स्तन पर निकला हुआ व्रण अच्छा हो जाता है। 'बिजली की हड्डी' भी कहीं-कहीं मिलती है, जिसे खंपा लोग मंडी में लाते हैं। लोगों का विश्वास है कि वह बिजली से गिरती है। यह सफेद, स्निग्ध और कठिन होती है और औषधि के काम आती है। इसके बारे में अभी मैंने विशेष अध्ययन नहीं किया। इसमें विशेषकर 'सिलिका' है और बाकी 'एल्यूमिना' और 'कैलशियम आक्साइड' हैं। तिब्बत के कई स्थानों में गंगा की मिट्टी के या भूरे रंग के ढेले मिलते हैं, जिन्हें सेरुछा (पीला नमक) कहते हैं। इसको आग में जलाकर थोड़ा चाय में डालकर उबालते हैं। जली हुई 'सेरुछा' को 'फुली' कहते हैं, जो सफेद रंग की होती है। कहते हैं कि इसे डालने से चाय में रंग आ जाता है और उसमें डाला हुआ मक्खन अच्छी तरह से मिल जाता है। परीक्षा करने पर यह 'सोडा बाईकार्ब' निकला, लेकिन यह विशुद्ध रूप में नहीं है; कुछ मिट्टी इसमें मिली हुई है।

मानसरोवर के आग्नेय कोण में बर्तन बनाने के योग्य चिकनी मिट्टी मिलती है। सरोवर के पूर्वी किनारे पर पतली-पतली तहों में चेमानेङा नामक पंचरंगी रेत मिलती है। तिब्बतियों का विश्वास है कि इसके खाने से ज्वर छूट जाता है। रासायनिक परिशोधन कराने से इसमें लोहा, इस्पात, 'एमेरी' आदि धातुओं का पता लगा है। इनके अतिरिक्त कई प्रकार के पत्थर और खनिज हैं, जो भूगर्भशास्त्रवेत्ताओं के निरीक्षण की सामग्री हैं। कैलास-शिखर के उत्तरी जड़ में कैलास-विभूति के नाम से एक प्रकार का श्वेत पदार्थ है। इसकी रासायनिक परीक्षा करने से ज्ञात हुआ है कि इसमें प्रधानतः 'केलसियम सल्फेट', पर्याप्त रूप में, 'केलसियम कार्बोनेट' और स्वल्प प्रमाण में 'एल्युमिनम' विद्यमान है।

4. उष्ण जल के स्रोत

च्यू गोम्पा के पास मानसरोवर से दो फर्लांग की दूरी पर गंगा छू के दोनों किनारों पर उष्ण जल के दो सोते हैं। बाँएँ किनारे के झरनों के चारों ओर स्नान के लिए दीवाल से घिरा हुआ कुंड बना हुआ है, जिसके जल का तापक्रम 13.7.1941 को 135^0 था। दाहिने किनारे के सोतों के जल का तापक्रम 115^0 था। गंगा छू के बीच में एक बड़ा चट्टान है, जिसमें से उबलता हुआ पानी उछलकर बाहर आता है। इसका तापक्रम 170^0 है। गर्म सोतों के कुंड के पास ही एक छोटा-सा डोङ्खङ (धर्मशाला) है। गठिया रोग से पीड़ित लोग इस कुंड में स्नान के लिए यहाँ आते हैं। गंगा छू से पौन मील भीतर मानसरोवर के तल में बड़े-बड़े गर्म कुंड हैं। इसके लगभग चार मील पूर्व में टग नदी के दाहिने किनारे पर अंबुफुक्

और छूफुक् नामक स्थानों में और बाँएँ किनारे पर न्योबा छूजेन और टोमोमोपो नामक स्थानों में, कुनकुने से लेकर खौलते हुए पानी के गर्म सोते हैं, जिनमें से गर्म पानी की एक छोटी-सी नहर बहकर नदी में गिरती है। बाँएँ किनारे के गर्म सोतों से, कुछ में से छह–छह, आठ-आठ फीट की ऊँचाई के फव्वारे-जैसे खौलते हुए पानी निकलते हैं। छूफुक् के पास कुछ गुफाएँ हैं, जहाँ शीतकाल में बौद्धभिक्षु रहते हैं। इन गुफाओं के पास कई छोरतेन और मणिदीवाले हैं तथा एक पुराने गोम्पा के खंडहर की नींव है, जो पद्मसंभव की कही जाती है। इसे गोरखों ने तोड़कर नष्ट कर दिया था। नोनोकुर के कुछ गड़रिए वसंत के आरंभ और शरद ऋतु में दो-दो महीने तक यहाँ पर टिकते हैं।

मानसरोवर के वायव्य कोण में 44 मील की दूरी पर तीर्थपुरी नामक एक स्थान है। वहाँ से बारह मील नीचे सतलज के किनारे पर ख्युङ्लुङ नामक गाँव है। इन दोनों स्थानों में भी गर्म जल के सोते हैं। तीर्थपुरी के पास गर्म सोते कभी-कभी स्थान बदलकर सूख भी जाते हैं। यहाँ के सोतों के जल का ताप-प्रमाण 1941 में 120^0 से 150^0 तक था। मेरा अनुमान है कि इन सब गर्म सोतों में 'आयोडीन' और 'रेडियो-एक्टिविटी' अवश्य होगी। विशेषकर तीर्थपुरी के और सामान्य रूप से अन्य गर्म सोतों के पास चूने के सदृश एक श्वेत और बहुत हलका पदार्थ होता है। रासायनिक परिशोधन से ज्ञात हुआ कि इसमें प्रधानतया 'केल्सियम कार्बोनेट' और अति स्वल्प परिमाण में 'स्ट्रोंशियम कार्बोनेट' और 'केल्सियम सल्फेट' विद्यमान हैं।[1] यह एक मनोरंजक बात है कि धागे में पिरोये हुए दाने की भाँति टग छू के किनारे टोमोमोपो, न्यूबो छूजेन, छूफुक् और अंबूफुक् में, मानसरोवर के गर्भ में, गंगा छू में, तीर्थपुरी और ख्युङ्लुङ में गर्म जल के सोते पाये जाते हैं।

5. प्रस्तरावशेष और शालग्राम

भूगर्भशास्त्र और पुराणों से यह ज्ञात होता है कि कई लाख वर्ष पहले समस्त हिमालय एक महान समुद्र के रूप में था। जब धीरे-धीरे समुद्र सूख गया और हिमालय पहाड़ उठने लगा, तब कई प्रकार के सामुद्रिक जंतुओं के ऊपर मिट्टी पड़ते रहने से, बड़े भारी दबाव और लाखों वर्षों के प्रभाव से, वे पत्थर बन गए; तथापि उनका स्वरूप जैसे का तैसा बना रहता है। कभी बाहर का स्वरूप और कभी भीतर का स्वरूप रहता है। इन्हें प्रस्तरावशेष या जीवाश्म कहते हैं। अंग्रेजी में इन्हें 'फॉसिल्स' कहते हैं। इन्हीं को भारतीय लोग शालग्राम मानकर पूजते हैं। ये शालग्राम उग्रनृसिंह, नृसिंह, गोपाल, लक्ष्मीनारायण, दामोदर, हिरण्यगर्भ आदि कई प्रकार के होते हैं और विष्णु के अवतार माने जाते हैं। कहा जाता है कि गंडकी नदी के उद्गम-स्थान दामोदरकुंड और कहीं-कहीं गंडकी नदी में भी ये पाये जाते हैं।

कुछ लोगों का कहना है कि शालग्राम के भीतर सोना होता है। यह सरासर मिथ्या

1. मानसखंड से जिन खनिजादि वस्तुओं को मैं लाया था, उनकी रासायनिक परीक्षा काशी विश्वविद्यालय के भूगर्भशास्त्र–विभाग के अध्यक्ष श्री डॉ0 राजनाथ जी और रसायनशास्त्र–विभाग के श्री सुसर्ल राजू एम0 एस-सी0 ने बड़ी सावधानी से की है। इस उपकृति के लिए ग्रंथकार उनका आभारी है।

और काल्पनिक है, परंतु इस कल्पना का एक आधार भी है। वह यह कि कहीं-कहीं से शालग्राम 'फॉसिल्स' 'स्वर्णमाक्षिक' के होते हैं। अर्थात् यदि उक्त रीति से कीड़ों आदि पर पड़ी हुई मिट्टी, लोहा और गंधक से युक्त हो तो ये कीड़े केवल पत्थर होने के स्थान पर अंशतः या पूर्ण रूप में स्वर्णमाक्षिक के होते हैं। स्वर्णमाक्षिक लोहे और गंधक का एक यौगिक पदार्थ है। इसे अंग्रेजी में 'फेरिक सल्फाइड' या 'आयर्न पाइराइट' कहते हैं, जिसका वर्ण सोने की भाँति हल्का पीला होता है और लोहे का यौगिक होने के कारण पर्याप्त भारी होता है। इसे अंग्रेजी की साधारण भाषा में 'फूल्स गोल्ड' (मूर्खों का सोना) भी कहते हैं। इससे मालूम होता है कि यहाँ की भाँति यूरोप में भी एक समय इसको अज्ञानी लोग सोना समझते थे। कभी-कभी कुछ शालग्रामों के भीतर स्वर्णमाक्षिक के टुकड़े हुआ करते हैं। इनके संबंध में विशेषकर साधुओं और दूसरे लोगों ने भी अज्ञानता के कारण सोने के भ्रम में पड़कर शालग्राम में सोना होने का भ्रम फैला रखा है।

मैंने सन् 1942 में कैलास की दक्षिणी तलहटी के छो कपाली सरोवर से सामुद्रिक जीवों के प्रस्तरावशेष लाकर भारत के जंतुशास्त्र विभाग के अध्यक्ष डॉक्टर बेनीप्रसाद जी तथा भूगर्भशास्त्र-विभाग के बाबू पी0 एन0 मुकर्जी को दिए थे। यह फार्म जब प्रेस में था, उसी समय उक्त सज्जनों के पत्र उन प्रस्तरावशेषों की गवेषणा के विषय में प्राप्त हुए, जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—"ये रेत और चूने के कठोर पत्थरों में स्थित सामुद्रिक प्रस्तरावशेष हैं। इनमें 'ऐस्ट्रेट', 'ओस्ट्रिया' आदि की विद्यमानता के कारण इनके 'माध्यमिक युग' (मेसोजोइक युग) के होने का पता लगता है।" इससे यह स्पष्ट है कि ये प्रस्तरावशेष कम से कम 19 करोड़ वर्ष के हैं। इन प्रस्तरावशेषों के संबंध में परिश्रम-पूर्वक परिशीलन करके विवरण भेजने के लिए मैं उक्त सज्जनों का आभारी हूँ।

इसी प्रकार के अनेक शालग्राम मुझे कुटी के ग्राम में मिले थे, जो काशी और कलकत्ते के विश्वविद्यालयों को दे दिए गए हैं और वहाँ वे समुचित रूप से सुरक्षित हैं। ये दामोदरकुंड में ही नहीं, प्रत्युत वृहत् हिमालय में सर्वत्र पाए जाते हैं। मेरी जानकारी में दामोदरकुंड के अतिरिक्त टिंकर, लीपूघाटा के पास, कुटी के गाँव में, मशङ्धुरा के पास, दारमा घाटा के नीचे, कुङरीबिङरी के नीचे छिरचिन के पास, नीती घाटा के नीचे, पुलिङ मंडी के पास और अन्य कई प्रदेशों में ये पाए जाते हैं।

ठीक इन्हीं शालग्रामों की भाँति सहस्त्रों वर्ष पहले के जंतु, अस्थि, पक्षी, वृक्ष, पत्ते और कहीं-कहीं जंतुओं के मार्ग-चिह्न भी पत्थरों के रूप में पाये जाते हैं। इन प्रस्तरावशेषों के आधार पर भूगर्भशास्त्रवेत्ता पुराकाल के जीवजंतु, वृक्षादि का पता लगाते हैं। वनस्पतियों के प्रस्तरावशेषों की गवेषणा करने वालों में डॉ0 बीरबल साहनी जगत-प्रसिद्ध वैज्ञानिक हैं।

संस्कृत में शाल का अर्थ एक प्रकार का कीड़ा है और ग्राव या ग्राम पत्थर को कहते हैं। अतः शालग्राम या शालग्राव का अर्थ शिलामय कीड़ा है। इससे ज्ञात होता है कि हमारे पूर्वज यह जानते थे कि शालग्राम प्रस्तरावशेष हैं।

अध्याय 3
निवासी

1. निवासी

श्री कैलास-मानसखंड के निवासी सब के सब तिब्बत के मूल निवासी ही हैं, अन्य जाति कोई नहीं है। यहाँ की जनसंख्या सात-आठ हजार के बीच की होगी, जिनमें से अधिकांश पुरङ घाटी में ही रहते हैं। यहाँ के लोग पशुओं को साथ लेकर व्यापार के लिए दूर-दूर तक जाते हैं। साधारणतया ये लोग बलवान, परिश्रमी, बहुत पुराने विचार वाले, शांत और धर्मपरायण तथा अल्पसंतोषी हैं। अतिथि-सत्कार में तो अद्‌वितीय हैं; पर दैनिक कार्य, रहन-सहन और पोशाक में बहुत ही गंदे रहते हैं। लामा और अफसर लोग बहुत संस्कृति-प्रिय, साफ-सुथरे और शिष्ट होते हैं।

तिब्बत में वर्णव्यवस्था नहीं है। प्रायः प्रत्येक व्यक्ति में सब वर्णों के लक्षण और गुण पाए जाते हैं। वे धर्म-जिज्ञासा या धर्म-चर्चा करते समय पूरे तत्ववेत्ता प्रतीत होते हैं; पूजा करते समय देखें तो कट्‌टर ब्राह्मण-जैसे दीख पड़ेंगे; बंदूक लेकर शिकार खेलने निकले, तो पूरे क्षत्रिय मालूम पड़ेंगे; मंडियों में व्यापार करते समय पक्के बनिये प्रतीत होंगे; भाड़े पर ले जाते समय घोड़ों की पूरी सेवा करते हैं; भेड़ों को काटते समय देखें तो निरे कसाई मालूम पड़ेंगे। इनका आतिथ्य, आदर और दया देखिए तो आश्चर्य होता है। जूते सीना, लकड़ी का काम करना, हल जोतना, खेती करना, रसोई बनाना आदि सभी कामों के ये जानकार होते हैं।

2. घर

पुरङ में करनाली नदी की दून में, जो प्रायः 16 मील लंबा है, अन्य प्रदेश से गर्म होने के कारण लोग घर बनाकर रहते हैं। बहुधा ये घर बड़ी-बड़ी कच्ची ईंटों और भारत की सीमा से लाई हुई थोड़ी-सी लकड़ियों से बने, दो-दो मंजिल के समतल छतवाले होते हैं। छत के ऊपर हल्की लकड़ी और पेमा या डमा के पौधों के ऊपर मिट्‌टी को डालकर पोत देते हैं। लकड़ी की कमी के कारण विशेषकर मानसखंड और वैसे सारे तिब्बत में मकान बहुत कम हैं। इसके अतिरिक्त तीन चौथाई भाग के लोग, भेड़-बकरियों के पालने की आजीविका होने के कारण एक दून से दूसरे दून में घूमते रहते हें। इसलिए बहुत लोग याक के बने काले तंबुओं में रहते हैं। कहीं-कहीं एक या दो घर का ही गाँव माना जाता है। उनके गोम्पाओं के मकान भी कच्ची ईंटों के बने होते हैं, पर बड़े होते हैं।

पुरङ के कुछ लोग पहाड़ की गुफाओं के मुख में दरवाजा लगाकर रिक्त स्थानों में दीवाल खड़ी करके मकान बना लेते हैं। इस प्रकार की गुफाओं में बने मकान दो-दो, तीन-

तीन मंजिल के भी होते हैं। तकलाकोट मंडी से आधी मील की दूरी पर करनाली के तट पर, दाहिनी ओर के पहाड़ की गुफाओं में गुकुङ नामक गाँव बसा हुआ है, जिसमें तीन मंजिल का एक गोम्पा है। इस प्रकार की गुफाओं में बने घर गरू, दोह, रिंगुंग, दुङ्मर, करदुङ, किरोङ, कङजे, पीली इत्यादि स्थानों में हैं। सन् 1841 में जोरावर सिंह ने जब मानसरोवर प्रांत पर चढ़ाई की थी, तो सरोवर के दक्षिण के लोगों ने कठोर शीत में नमरेलडी नदी की दून के ऊपरी भागों की गुफाओं में आश्रय लिया था।

भूत-प्रेत और चुड़ैलों को दूर करने और उनसे सुरक्षित रहने के लिए घरों, मठों और तंबुओं के ऊपर रंग-बिरंग के झंडे और तोरण लगा देते हैं। यहाँ के लोग नित्य सबेरे आँगन में या घर के बाहर एक छोटे-से चबूतरे के ऊपर आग रखकर सुगंधित वनस्पति या घृत-मिश्रित सत्तू की धूप देते हैं।

3. खानपान

यहाँ के लोगों का प्रधान भोजन कच्चा, सूखा, सभी प्रकार का मांस, सत्तू (चंपा), पर्याप्त दूध और दही है। ये लोग जौ के सत्तू में चाय डालकर, उसका पिष्ट बनाकर बड़े आनंद से खाते हैं। सबेरे-शाम जौ के सत्तू को मांस के साथ उबालकर पतली लेई (थुक्या) की भाँति बनाकर उसमें थोड़ा-सा नमक डालकर पीते हैं, इसमें छुरा[1] भी डालते हैं। ये लोग भोजन प्रायः तीन बार करते हैं। भारत और नेपाल की सीमा पर होने के कारण पुरङ के लोग दिन में एक बार रोटी या भात खाते हैं। चीन देश से आई हुई बिना पकी चाय का ये बहुत व्यवहार करते हैं। चाय होंकोंग से कलकत्ते तक जहाज पर आकर वहाँ से ल्हासा या अन्य मंडियों में जाती है। यह चाय छोटे-छोटे ईंट और रामफल या हृदय के समान गोल (ऊपर मोटा और नीचे छोटा) आकार में दबकर बनी हुई आती है। सस्ती होने पर भी भारत की चाय को तिब्बत के लोग पसंद नहीं करते।

चाय को पहले पानी में डालकर अच्छी तरह से बहुत समय तक उबालकर उसमें नमक और थोड़ा सोडा डाल देते हैं। कहते हैं कि फुलदो नामक एक प्रकार का सोडा चाय में डालकर मथने से मक्खन अच्छी तरह मिल जाता है और चाय का रंग आ जाता है। फिर उसे छानकर लंबे-लंबे, 'डोङमों' (लकड़ी के बने हुए चार-चार छह-छह अंगुल के व्यास वाले चोंगों) में मक्खन डालकर अच्छी तरह से मथकर मिट्‌टी या धातु की केटलियों में डालकर पीने के लिए देते हैं। इस प्रकार की केटलियों[2] को गर्म रखने के लिए अँगीठी के ऊपर रखा जाता है। घरों में चाय सर्वदा प्रस्तुत रहती है। जब कोई मित्र या अतिथि आते हैं, तो उनके जाने के समय तक उन्हें चाय पिलाते रहते हैं।

---

1. पनीर, जिसे अंग्रेजी में 'चीज़' कहते हैं।
2. ठुगोल्हो में मिट्‌टी की चाय की केटली या 'तिबिरी' और दूसरे प्रकार के बर्तन बनते हैं। कहते हैं कि नमकीन चाय मिट्‌टी की तिबिरियों में विशेष स्वादिष्ट होती है। यहाँ की केटली प्रसिद्ध है और लोग उसे दूर-दूर तक ले जाते हैं।

चाय पीते समय कटोरे में थोड़ा रख छोड़ना चाहिए, नहीं तो असभ्य समझा जाएगा या चाय पीना समाप्त किया गया समझा जाएगा। कटोरे में आधी चाय छोड़ दें, तो यह समझा जाएगा कि चाय अच्छी नहीं है। सबेरे से लेकर रात में सोने के समय तक अपनी-अपनी स्थिति के अनुसार ये लोग प्रतिदिन 5 से लेकर 15 प्याले तक चाय पी लेते हैं। पूजा-पाठ के कार्यक्रम में भी बीच-बीच में चाय पी जाती है। चाय पीना समाप्त करने के समय अंतिम प्याले के साथ सत्तू मिलाकर खा लेते हैं। और उसके बाद कटोरे को अच्छी तरह से चाटकर, चोंगों में डाल देते हैं। इन कटोरों को वर्ष में एक बार चेनरेसी (जो निरामिष देवता है) के व्रत के दिन धोते हैं। तिब्बतियों के भोजन का व्यय लगभग आधा चाय में ही लगता है। चाय के लकड़ी के कटोरे नेपाल से आते हैं।

जौ को उबालकर उसे सड़ाकर छङ नामक एक हलके प्रकार की शराब बनाकर स्त्री, पुरुष, बच्चे और भिक्षु लोग बड़े प्रेम से सेवन करते हैं। चाय या छङ को लकड़ी के एक छोटे कटोरे में पीते हैं, जिसे प्रत्येक व्यक्ति अपने पास चोंगों के भीतर रखता है। वास्तव में चाय के यह प्याले नेपाल की सीमा के लिमी नामक प्रदेश से आते हैं, जो एक प्रकार के वृक्ष की गाँठ से बनते हैं। घटिया–बढ़िया मेल के अनुसार एक-एक कटोरे का मूल्य दो आना से लेकर दस रुपए तक होता है। ये मेंहदी के तेल से एक विशेष प्रक्रिया से रँगे जाते हैं। नित्य पचासों बार गर्म चाय या अन्य खाद्य पदार्थ डालने पर भी इनकी पालिश जल्द नहीं उतरती।

कभी-कभी लकड़ी की इन कटोरियों के भीतर चाँदी मढ़ा देते हैं। इस प्रकार के चाँदी-मढ़े कटोरे निर्धन से निर्धन के घर में भी एक-दो होते ही हैं। संपन्नों के पास तो अधिक होते हैं। इसके अतिरिक्त चीनी प्याले, अधिक मूल्य वाले पत्थरों के तथा अपने विभव के अनुसार चाँदी के कटोरों का व्यवहार भी तिब्बत के लोग करते हैं। चीनी और चाँदी के कटोरों को चायदान के ऊपर ढक्कन देकर रखते हैं।

भोजन की सभी सामग्री, सत्तू रखने के लकड़ी के बने सत्तूदान और चाय के प्यालों को बैठक के सामने एक मुड़ने वाली छोटी या नक्काशी की हुई चौकी पर रखते हैं। मुड़ने वाली इस प्रकार की मेज को 'चौकसे'[1] कहते हैं। तिब्बती लोग स्वभावतः कला के उपासक होते हैं। इसलिए दरिद्र से दरिद्र के घर में भी कुछ रंगीन चित्रपट, चाँदी के कटोरे और बूटेदार 'चौकसे' रखे रहते हैं। अफसर और संपन्न लोग चीनियों की भाँति भात और मांस को 'खोलचे' (लकड़ी या दाँत की बनी हुई दस या बारह अंगुल की शलाकाओं) के द्वारा बड़ी पटुता से खाते हैं। तिब्बती लोग मछली और पक्षियों को न मारते हैं, न उनका मांस खाते हैं; परंतु अंडे खाने में वे कोई संकोच नहीं करते। रहन-सहन में गंदे रहने पर भी तिब्बतियों में यह एक अच्छी परिपाटी है कि वे भोजन क़ी सामग्रियों को हाथ से नहीं छूते; वरन् करछुल या चम्मचों का प्रयोग करते हैं।

---

1. ये मेजें भी लिमी से आती हैं।

पूर्वी तिब्बत शिगर्ची और ल्हासा के प्रांतों में मटर के आटे को शोधकर एक विशेष प्रकार की सेमईं बनाते हैं, जो लपेटी हुई रस्सी के आकार में बँधी हुई होती है। यह बहुत कड़ी और श्वेत रंग की होती है और अधिक उबालने पर भी नहीं गलती। तिब्बती भाषा में इसे 'फिङ' कहते हैं। धनी लोग इसे मांस में डालकर साग बनाते हैं।

छोटे-छोटे बच्चों को पहले महीने से ही माता के दूध के अतिरिक्त भोजन देने लगते हैं। सत्तू या दूध, घी और चीनी के साथ अधगाढ़ा हलुवा बनाकर माता पहले उसे अपने मुँह में चबाकर फिर उसे चम्मच से निकालकर बच्चे को खिलाती है। तिब्बती लोग मांस के लिए भेड़-बकरियों को विचित्र ढंग से मारते हैं। उनके धर्मग्रंथों में लिखा है कि किसी जीव-जंतु का रक्तपात न करें। इसलिए वे पशुओं की नाक और मुँह को रस्सी से बन्द कर देते हैं, जिससे उनका दम घुट जाता है और वे मर जाते हैं, तब बोटियों में काट लेते हैं। ये लोग विशेषतया भेड़ों का मांस ही खाते हैं। यदि कोई इनसे कहता है कि बौद्धों के लिए तो जीव-हिंसा पाप है, तो ये चट उसका उत्तर दे देते हैं कि अच्छी योनि में जन्म लेने के लिए ही हम इन्हें मारकर मांस का भक्षण करते हैं।

ये जीवित चँवर गाय को मांस के लिए नहीं मारते; हाँ, मरे हुए का मांस और जंगली चँवरियों का शिकार करके खा लेते हैं। प्रायः साधारण तिब्बती अपने वस्त्र को साल भर में कठिनता से एक बार धोते हैं, इसलिए सबों के कपड़ों में जूँ पड़ जाती हैं। अतः प्रतिदिन जूँ को कपड़ों से निकालते समय ये लोग कभी–कभी उसे मुँह में डाल देते हैं, जिसके स्वाद को खट्टा बतलाते हैं। यह चलन विशेषकर पूर्वी तिब्बत में है।

काँटेदार डमा की झाड़ी हरी भी जलती है, पर यह बहुत धुएँवाली होती है। डमा की झाड़ियाँ, याक के जंगली कंडे, भेड़ और बकरियों की लेड़ियाँ जलाने के काम में आती हैं। शीतकाल में बर्फ गलाने और चाय और दूध गर्म करने के लिए सबेरे से लेकर शाम तक भेड़-बकरियों की लेड़ियों से चूल्हा जलाया जाता है। आग बनाने के लिए चकमक-पत्थर को काम में लाते हैं। वह सदा सब के पास रहता है। यहाँ आग सुलगाने के लिए भाथी का प्रयोग करते हैं। यात्रा के समय एक धौंकनी को साथ में रखते हैं, जिससे सुलगकर आग की लपट लकड़ी की आग की लपट के समान निकलती है।

तिब्बतियों के नित्य जीवन में मक्खन विशेष महत्व की वस्तु है। खाने-पीने, देव-मूतियाँ बनाने के कामों के अतिरिक्त इसे मंदिरों में दिया जलाने के लिए और हवन करने के काम में लाते हैं। पनीर की टिकियों के ऊपर, रोटी के ऊपर, शराब के बर्तनों और कटोरियों पर थोड़ा-सा मक्खन रखा जाता है। यह शुभ सूचक या शुभ शकुन माना जाता है। इसलिए किसी कार्य पर, या दूर यात्रा पर जाने से पहले स्त्रियाँ ऊपर मक्खन लगे हुए छङ की सुराही लेकर द्वार पर खड़ी हो जाती हैं। घोड़े पर बैठने से पहले यात्रा पर जाने वालों को मक्खन लगाए हुए कटोरों में छङ पीने को दिया जाता है। पूर्णकुंभ, जौ, कोरलो, छिन–छिन की ध्वनि, दूध, दही, छङ या बच्चे को लिए स्त्री, अच्छे वस्त्र पहने हुए पुरुष या स्त्री आदि

शुभ शकुन माने जाते हैं। बिखरे हुए बाल वाली औरत या खाली बाल्टी आदि को अपशकुन मानते हैं।

4. वेश-भूषा

सारा मानसखंड समुद्र की सतह से 12000 फीट से अधिक ऊँचाई पर स्थित होने के कारण वहाँ के लोग दोहरी छाती के छुपा (ऊनी चोंगों) को पहनते हैं। इसके ऊपर एक बित्ता चौड़ा कमरबंद बाँधते हैं। म्यान में रखा हुआ 10-12 अंगुल लंबा चाकू, सूईदान, चकमक और बटुआ, धूम्रपान करने वाला हो तो अंग्रेजी ढंग के 'स्मोक-पाइप' और तंबाकू की थैली इत्यादि वस्तुएँ सदा कमरबंद से लटकती रहती हैं। म्यान में रखी हुई दो-ढाई फीट लंबी तलवार सर्वदा कमरबंद में घुसी रहती है। प्रयाण करते समय पीठ पर एक चमड़े की पेटी से बंदूक लगी रहती है और एक बड़ा ताबीज भी बँधा रहता है। घुटनों तक आने वाले ल्हम नामक ऊनी या चमड़े के जूते पहनते हैं। इन ल्हमों को पहनकर मठों के देवालयों में भी जा सकते हैं। शीतकाल में मरे हुए भेड़ के बच्चों के या बड़े भेड़ के चमड़े से बने हुए भक्कू या पोस्तीन (चमड़े का चोंगा) पहनते हैं। काम-काज करते समय या गर्मी के दिनों में एक या दोनों हाथों को बाहर निकाल लेते हैं। चमड़े के बने हुए, घुटनों के नीचे तक आने वाले पायजामें पहनते हैं। धनी लोग इन चोंगों और पायजामों के ऊपर बढ़िया कपड़ा या रेशम भी लगा लेते हैं। प्रायः स्त्रियाँ भी इसी पहनावे को पहनती हैं। भद्र और संपन्न घरों की महिलाएँ बिना बाँह के चोंगों को लंबे बाँह वाले जाकट के ऊपर पहनती हैं। स्त्रियाँ धारीदार, पड़ी रेखा वाले, ऊनी वस्त्रों को आगे की ओर कटि से लेकर टखनों तक पहनती हैं और बालों को बाहर करके पीठ पर बकरी के चमड़े को पहनती हैं।

स्त्रियाँ अपने केशों को कई लटों में गूँथकर फिर उन्हें नीचे की ओर एक में मिलाकर बाँध लेती हैं और उनमें एक पट्टी बाँधकर उसे चाँदी के सिक्के और पिरोजों से सजाती हैं। वह एड़ी तक लटकती रहती है। गले में पिरोजे, मूँगे आदि की कई प्रकार की मालाएँ पहनती हैं। हाथ में मोटे-मोटे शंखों को लगाती हैं तथा दोनों कानों में सोने के साथ पिरोजा, मूँगा और नकली मोतियों को लगाकर झुमके बना लेती हैं। धनी लोग पिरोजा या मूँगा-जटित अँगूठी की भाँति बालियों को बाँएँ कान में धारण करते हैं। अफसर लोग बाँएँ कान में पिरोजा या मूँगा-मोती की नुकीली पेंसिल-जैसी बाली को कानों में धारण करते हैं। हाथों के अँगूठों में एक अंगुल मोटे और एक अंगुल चौड़े हरित या श्वेत पत्थर की अँगूठियाँ पहनते हैं। ल्हासा की भद्र महिलाएँ मूँगे-मोतियों की झालर लगी हुई श्रृंग, धनुष या त्रिकोण की आकृति का शिरोभूषण पहनती हैं। तिब्बतियों के गले में पहनने के आभूषण विशेषकर पिरोजे, मोती और मूँगे से युक्त होते हैं। गले में चाँदी के बने ताबीज (गौ) लटकते रहते हैं। बाहर जाने के समय ऐसे ही बड़े-बड़े ताबीजों को पीठ पर बाँध लेते हैं, जिनके मुख पर शीशे के भीतर किसी देवता का चित्र और भीतर में सभी प्रकार के यंत्र-मंत्र और प्रसाद रखे होते हैं। पुरुष लोग कलकत्ते से आए हुए अंग्रेजी फेल्ट हैट पहनते हैं। कुछ लोग चीन की बनी हुई रोएँदार

टोपियाँ पहनते हैं, जो आवश्यकतानुसार बगलों में मोड़ी या खोली जा सकती हैं। पुरङ की स्त्रियाँ एक प्रकार का कनटोप पहनती हैं। धनी गृहस्थ, अफसर और लामा लोग मूल्यवान सूती, रेशम और ऊनी कपड़ों को बड़ी शान से पहनते हैं। तिब्बती लोग रात को सोते समय पहने हुए सब वस्त्रों को उतारकर ओढ़ने के काम में लाते हैं। भिक्षु और भिक्षुणियाँ शिरोमुंडन कराके बैंगनी रंग के दुपट्टे के समान एक प्रकार का चोंगा पहनती हैं। गृहस्थ स्त्री-पुरुष मध्यकालीन यूरोप की भाँति बालों को रखकर जूड़ा बाँधते हैं।

मानसखंड के निवासी तथा वहाँ यात्रा पर जाने वाले अन्य तिब्बती मानसरोवर में अच्छी तरह नहाते हैं। यद्यपि अन्य प्रदेश के तिब्बती बहुत कम स्नान करते हैं, तथापि अफसर, उच्चकोटि के भिक्षु और संपन्न लोग स्नान करने के लिए और नित्य हाथ धोने के लिए साबुन और स्थानीय सोडा को काम में लाते हैं और कपड़ों को अच्छी तरह से धोते-धुलाते हैं। वैसे तो सभी तिब्बती बाल बाँधने के लिए 15 या 20 दिन में एक बार सोडा लगाकर सिर धो लेते हैं।

तिब्बतियों को मूँछें नहीं होतीं, इसलिए प्रायः स्त्री और पुरुषों को पहचानने में कठिनाई होती है। संभव है, इसी कारण इस भूमि का नाम किंपुरुष-खंड पड़ा होगा। जिनकी मूँछें बढ़ी होती हैं वे बड़े प्रेम से, शौक के साथ रखते हैं। भिक्षु लोग भी केवल सिर मुड़ाते हैं। यदि मूँछ हो तो उसे नहीं काटते। तिब्बती स्त्री-पुरुष दोनों संगीत के प्रेमी होते हैं।

5. अभिवादन

तिब्बत में थोड़ा झुककर, जीभ बाहर निकालते हुए एवं एक हाथ से सिर को खुजलाते हुए या माथे को मलते हुए 'खमजम भो', 'खमजम' या 'जू' कहकर अभिवादन करते हैं। अफसरों को अभिवादन करते समय वैसे ही जीभ निकालकर, टोपी को उतारकर हाथ से पकड़कर उसे दो-तीन बार ऊपर नीचे करते हैं। अभिवादन के समय कभी-कभी अपने कान खींचते या मलते हैं। देवता या लामाओं को अभिवादन करते समय दोनों हाथों को अच्छी तरह से जोड़कर या साष्टांग दंडवत् होकर प्रणाम करते हैं। वैसे ही दिव्य स्थानों में भी साष्टांग दंडवत् प्रदक्षिणा करते हैं।

बड़े-बड़े लामाओं के आशीर्वाद देने की रीति, आशीर्वाद पाने वाले की प्रतिष्ठा, अवस्था और सामाजिक स्थिति के अनुसार होती है। आशीर्वाद पाने वाला व्यक्ति भी यदि कोई बड़ा लामा हो, तो आशीर्वाद देने वाला अपने सिर से उसके सिर का स्पर्श करा देता है। यदि आशीर्वाद पाने वाला विशेष प्रेमी या अनुग्रह का पात्र हो, तो उसके माथे पर दोनों हाथों को रखकर बड़े स्नेह से आशीर्वाद प्रदान करते हैं। अन्य लोगों को एक हाथ से, दो उँगलियों से या एक उँगली से आशीर्वाद देते हैं। जनसाधारण को आशीर्वाद देते समय रंग-बिरंगे कपडों से बँधे हुए एक लकड़ी के अग्रभाग को उसके मस्तक से स्पर्श करा देते हैं। इन सभी प्रकार के आशीर्वादों में इस सिद्धांत की मुख्यता है कि साधारण आशीर्वाद की

परिपाटी के निर्वाह के अतिरिक्त आशीर्वाद देने वाले तथा आशीर्वाद पाने वाले के बीच स्पर्शगत-संबंध स्थापित हो जाय, ताकि आशीर्वादक की शक्ति का संचार दूसरे में हो जाय। कभी-कभी 'लहा-ग्यालो ल्हासोल' (देवता एक सौ वर्ष देवे) कहकर भी आशीर्वाद करते हैं।

झुककर दोनों हाथों के अँगूठों को दिखाना किसी वस्तु या बात के लिए मिन्नत या प्रार्थना समझी जाती है। भोजन के समय एक या दो अँगूठों को दिखाना अनुमति, तृप्ति, या धन्यवाद देने का सूचक है। बड़े लामा या अफसरों से बातचीत करते समय या दो उच्चश्रेणी के व्यक्ति आपस में बातचीत करते समय 'ल्हा कनारे' (हुजूर), 'ल्हातूछे' (धन्यवाद), या केवल 'तूछेछे' या 'ल्हालस' कहते हैं। उच्च श्रेणी के तिब्बती दूसरों से बहुत सम्मान से बातचीत करते हैं।

6. विवाह

बहुपति की प्रथा तिब्बत में अधिक रूप में प्रचलित है। संभव है कि यह प्रथा जीविका-निर्वाह की कठिनता और आर्थिक समस्या की दृष्टि में रखकर जनसंख्या कम करने के लिए प्रचलित की गई हो। यदि कुटुंब में बड़ा भाई विवाह करता है, तो उसकी स्त्री सभी भाइयों की स्त्री हो जाती है, और वे सभी शांतिपूर्वक दांपत्य-जीवन बिताते हैं। स्त्री के एक होने पर भी सारी संपत्ति का अधिकारी बड़ा भाई ही होता है और छोटे भाई उसके सेवक के रूप में रहते हैं। इसीलिए आज भी तिब्बत में उतने ही घर, कुटुंब और जनसंख्या है, जितनी की शताब्दियों पहले थी। यदि कोई भाई स्वतंत्ररूप से धनोपार्जन करता हो, तो वह अलग विवाह भी करता है। कहीं-कहीं पुरुष दो-दो विवाह भी करते हैं। स्त्री-पुरुष सामाजिक स्वतंत्रता का उपभोग समान रूप से करते हैं। स्त्रियों का घर में पूरा अधिकार होता है। यहाँ पर प्रौढ़ स्त्री-पुरुष की पारस्परिक अनुमति से विवाह होता है। वर एक प्रकार की लकड़ी की बनी सुराही में छङ (शराब) को भरकर 'खतक'[1] के साथ वधू के दरवाजे पर रखता है। घर के लोगों द्वारा छङ की सुराही के उठाए जाने के समय तक वर का कर्तव्य होता है कि वधू या उसके घर के आने-जाने वाले लोगों का (चाहे वे कितनी बार आएँ-जायँ) वहाँ की रीति के अनुसार अभिवंदन करता ही रहे। वधू के संबंधी जब छङ के पात्र को उठाकर घर में ले जाते हैं, तो यह विवाह की स्वीकृति मानी जाती है और फिर विवाह की तैयारी होने लगती है। तब 'छिपा' (ज्योतिषी) बुलाया जाता है। वह पंचांग देखकर यह बतलाता है कि लड़का और लड़की के नक्षत्र आदि परस्पर संबंध के लिए अनुकूल हैं या नहीं। अनुकूल निकले तो ठीक ही है; यदि साधारण रूप से प्रतिकूल हों, तो पूजा-पाठ कराकर ग्रहों को शांत किया

---

1. एक वित्ता (12 अंगुल) चौड़ा और एक गज लंबा हल्का श्वेत कपड़ा, जो माले के स्थान में व्यवहृत होता है, यह देवताओं को चढ़ाया जाता है तथा अफसर, लामा या किसी बड़े आदमी के सम्मानार्थ उसके सामने रखा जाता है, या उनको चिट्ठी भेजना हो तो इसमें लपेटकर भेजते हैं।

जाता है। यदि बिल्कुल ही प्रतिकूल हों, तो विवाह नहीं होता। यह सारा निर्णय करने में एक–दो सप्ताह लग जाते हैं। विवाह का शुभ दिन और मुहूर्त भी निश्चय किया जाता है। वर-वधू के विभव के अनुसार निमंत्रणादि उत्सव धूम-धाम से मनाए जाते हैं। चार-पाँच दिनों के बाद वर वधू को अपने घर लिवा ले जाता है। यदि तीन दिन तक वधू के दरवाजे से छङ का बर्तन वधू के संबंधियों द्वारा गृहीत न हो, तो इसे विवाह की अस्वीकृति समझकर वर अपनी सुराही को दरवाजे से उठाकर निराश हो अपने घर लौट जाता है।

7. अंत्येष्टि

मानसखंड में धनी भिक्षुओं के शरीर को जलाया जाता है। गरीब भिक्षु और गृहस्थों के शव को किसी निकट की नदी में फेंक देते हैं या टुकड़े-टुकड़े करके किसी पहाड़ पर गृद्धों के खाने के लिए रख देते हैं। तकलाकोट में सिंबिलिङ गोम्पा से चार मील की दूरी पर एक ऐसा स्थान है। यहाँ से कैलास के दर्शन होते हैं। कैलास और मानसरोवर के पास भी ऐसे स्थान हैं। तिब्बत के अन्य प्रांतों के लकड़ी प्राप्त होने वाले स्थानों में शवों की दाह-क्रिया करते हैं और दूसरे स्थानों में उपर्युक्त रीति से ही अंत्येष्टि कर देते हैं। यहाँ पर भी जातकर्म, विवाह और अंत्येष्टि क्रिया की प्रथा हिंदुओं के आचारों की भाँति कई दिनों तक चलती रहती है। इन संस्कारों को लोग वहाँ पर अपनी संपत्ति के अनुसार करते हैं। अंत्येष्टि के बाद शव के भस्म को मिट्टी में मिलाकर लिंग की भाँति बनाकर उसके ऊपर एक मकान बनवा देते हैं या एक बंद-घर बनाकर उसमें छिद्र रख छोड़ते हैं, जिसके भीतर उक्त राख के लिंग को डाल देते हैं। इसी प्रकार की बनी बंद-कोठरी को 'छोरतेन' कहते हैं, जो भारत के स्तूप या चैत्य के अनुकरण की होती हैं। जो धनी हैं, वे मृतकों के लिए छोरतेन बना लेते हैं। साधारण जन अपने मृतकों के शवों के अवशेष के लिंगों को किसी अन्य छोरतेनों में उनके छिद्रों द्वारा भीतर डाल देते हैं। कभी-कभी मरे हुए व्यक्ति के शव पर या उसकी हड्डियों के ऊपर समाधि या छोरतेन बना देते हैं।

विख्यात लामाओं के शवों को नमक से भरकर घी में पका लेते हैं, जिनको 'मरदोङ' कहते हैं। ये शव चाँदी के बनाए हुए छोरतेन में रखे जाते हैं। इस प्रकार के छोरतेनों के ऊपर पिरोजा, प्रवाल और अन्यान्य रत्न जड़े जाते है। कुछ दलाई लामाओं और टाशी लामाओं के इस प्रकार के छोरतेन हैं। मानसखंड में भी कुछ लामाओं के ऐसे छोरतेन बने हैं।

मानसखंड में शवों के सिर तोड़ दिए जाते हैं, ताकि आत्मा शरीर से बाहर निकल जाय[1]। प्रायः भिक्षु लोग यह कार्य करते हैं, जिसके लिए कुछ पुरस्कार मिलता है। यह धन मठ की आय में जाता है।

----

1. इसी प्रकार ईसाई और मुसलमान धर्मावलंबी अपने मृतकों के शवों को इस विश्वास से जमीन में गाड़ते हैं (जलाते नहीं) कि प्रलय (कयामत) के दिन मृतात्मा उन शरीरों के साथ बाहर निकल आएगी।

अध्याय 4
धर्म

1. तिब्बत में बौद्ध धर्म का आगमन

सम्राट स्रोङ्चन गोम्पो ने सन् 630-698 तक तिब्बत में राज्य किया था। कहा जाता है कि इनके मूल पुरुष ईस्वी के पूर्व पाँचवीं या छठी शताब्दी के लगभग तत्कालीन कोशलराज प्रसेनजित के सुपुत्र थे। स्रोङ्चन गोम्पो अपने पिता के मरने के बाद तेरह वर्ष की अवस्था में ही सिंहासन पर बैठे थे। भारतवर्ष के हर्षवर्धन के समान गद्दी पर बैठते ही देशों के दिग्विजय करने की उनकी लालसा प्रबल हो उठी। एक बड़ी सेना को एकत्रित कर पश्चिम में गिलगित, उत्तर में चीनी तुर्किस्तान और चीन के बहुत से भागों और दक्षिण में नेपाल तक विजय-दुदुंभी बजाकर उन देशों को उन्होंने तिब्बत के अधीन कर लिया। और उइ छू के किनारे ल्हासा (देवभूमि) नगर को अपनी राजधानी बनाया।

फलतः सन् 640 में नेपाल-नरेश अंशुवर्मा ने अपनी पुत्री भृकुटी को सम्राट स्रोङ्चन के साथ विवाह के लिए ल्हासा भेज दिया। दूसरे वर्ष चीनी राजा ने भी अपनी प्रिय कन्या केङ्जिो को ल्हासा भेज दिया। चीन-राज की कन्या किसी समय भारत से प्राप्त बुद्ध भगवान की एक प्राचीन मूर्ति अपने साथ लेकर गई थी, जिसके लिए उसने ल्हासा की उत्तर दिशा में रमोछे नामक मंदिर का निर्माण करवाया। नेपाल की राजकुमारी अक्षोभ्य और मैत्रेय की चंदन की प्रतिमाएँ तथा तारादेवी की मूर्ति को अपने साथ ले गई थी, परंतु पास में पर्याप्त धन न होने के कारण सम्राट ने स्वयं अपने व्यय से ल्हासा नगर के बीच उन मूर्तियों के लिए ठुनङ नामक देवालय बनवा दिया था। वह अब तक जोखङ नाम से प्रसिद्ध है। बौद्ध मतावलंबिनी इन दोनों रानियों से प्रभाति होकर सम्राट भी तिब्बत में बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए कटिबद्ध हो गया।[1] उनकी ये दोनों रानियाँ नेपाली और चीनी राजकुमारी डोलमा (तारादेवी) के श्वेत (डोलकर) और हरित (डोलजंग) अवतार मानी जाती हैं। स्वयं स्रोङ्चेन, अवलोकितेश्वर का और उनका मंत्री थोनमी, विद्याधिदेवता मंजुश्री का अवतार माना जाता है।

---

1. ईसा से पहले ही वौद्ध धर्म दक्षिण में लंका, सुमात्रा आदि द्वीपों तक, उत्तर में वाइकल सर, पश्चिम में काकेशिया से लेकर जापान तक फैल गया था। एक पाश्चात्य विद्वान का मत है कि ई0 पू0 137 में कैलास–श्रेणी के ढालुओं में एक वौद्ध मठ बना, परंतु कुछ वर्ष वाद ही वह नष्ट हो गया। पुनः सन् 361 में चीनी वौद्ध भिक्षु तिव्वत पहुँचे। परंतु तिव्वती परंपरा के अनुसार स्रोङ्चेन के काल में ही तिव्वत में बौद्ध धर्म का आगमन हुआ। चीनी भिक्षुओं द्वारा स्कैंडिनेविया और पाँचवीं सदी में मेक्सिको तक बौद्ध धर्म पहुँच गया। मेक्सिको में 13वीं सदी तक बौद्ध धर्म रहा।

2. भाषा तथा लिपि

तिब्बत की भाषा तिब्बती है और प्रति पचास मील की दूरी पर बदलती रहती है। ल्हासा की भाषा ही आदर्श या साहित्यिक मानी जाती है। अधिकांश शब्दों के दो रूप होते हैं— साधारण और आदरसूचक। आदरसूचक शब्द अफसर, लामा और संभ्रांत लोगों के साथ भाषण करने के लिए प्रयुक्त होते हैं। कई शब्दों के अत्यादर सूचक रूप होते हैं, जो दलाई लामा और उच्चकोटि के अफसरों के साथ बात-चीत करते समय व्यवहार में लाए जाते हैं।

सम्राट स्रोङ्चेन के पहले तिब्बती भाषा की कोई लिपि नहीं थी। पाली और संस्कृत के बौद्ध धर्म-संबंधी ग्रंथों को तिब्बती भाषा में अनुवाद करने का काम अपने मंत्री थोनमी को सम्राट ने सौंप दिया। थोनमी ने चक्रवर्ती के आदेशानुसार चार वर्ष के अध्ययन के बाद तिब्बती भाषा लिखने के लिए उस समय की काश्मीर की शारदा लिपि के आधार पर एक नई लिपि का निर्माण किया। इस भाषा में अ, इ, उ, ए, ओ स्वर हैं। व्यंजनों की संख्या केवल तीस है। वर्गों के चतुर्थ अक्षर तथा मूर्धन्य ष छोड़ दिए गए हैं। विशेष उच्चारण के लिए च, छ, ज, झ, स, ऽ इन छह अक्षरों का निर्माण किया है। तिब्बती भाषा में लिखे हुए सभी अक्षर उच्चरित नहीं होते।[1] क्र, त्र, प्र = ट; ख्र, फ्र = ठ; ग्र, ट्र, ब = ड के समान उच्चरित होते हैं। संस्कृत के शब्दों को लिखने के लिए भी पूरे प्रबंध किए गए हैं। सुलेख और शीघ्रलेख (त्वरा-लेखन) के लिए 'उचेन' (डाँडी वाली) और 'उमेद' (बेडाँडी वाली) लिपियाँ हैं। उचेन अक्षर पुस्तक छपने के काम के लिए और उमेद अक्षर पत्रादि लिखने के लिए काम में लाए जाते हैं। इस नई लिपि में सचिव थोनमी ने ही पहले-पहल तिब्बती भाषा के व्याकरण का निर्माण किया। और करंडव्यूह सूत्र, रत्नव्यूह सूत्र और कर्मशतक का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया।

3. विविध संप्रदाय

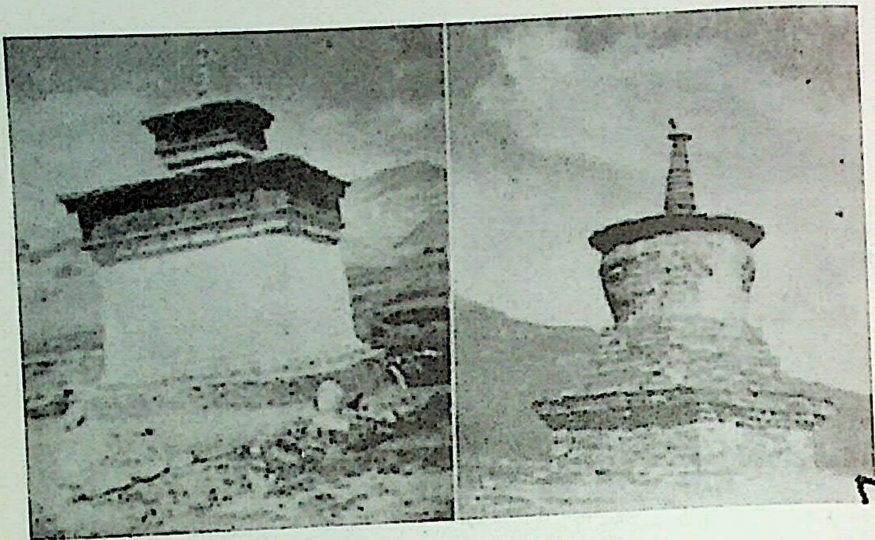
सम्राट स्रोङ्चेन के काल से बौद्ध धर्म विकसित होकर राजाश्रित होता आया। सम्राट ठिस्रोङ्देचेन के निमंत्रण पर आचार्य शांतरक्षित (सन् 740-840) बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ दो बार तिब्बत गए और उन्होंने बारह वर्ष लगाकर समये मठ (तिब्बत के प्रथम मठ) की स्थापना की और पूरे सौ वर्ष की आयु में सन् 840 में उन्होंने देहत्याग किया। उनका कपाल अब भी एक शीशे की आलमारी के भीतर समये मठ में सुरक्षित है। शांतरक्षित की अनुमति

---

1. तिब्बती शब्दों का शुद्ध उच्चारण देने का मैंने भरसक यत्न किया है। शब्द जैसे उच्चारण किया जाता है, वैसा ही दिया है, न कि तिब्बती भाषा में जैसा लिखा जाता है। तिब्बती भाषा का विशेष जानकार न होने के कारण, संभव है, कुछ अशुद्धियाँ रह भी गई हों। तिब्बती लोग साधारण बोली में 'क' को 'ग' (जैसे कङरी को गङरी), 'च' और 'य' को 'ज' (जैसे च्यू को ज्यू और योगी को जोगी), 'त' और 'थ' को 'द' (जैसे तरछेन को दरछेन), 'प' और 'व' को 'ब' (जैसे परखा को बरखा और पुरुव को पुरुब) और 'र' को 'ड' या 'द' (जैसे न्यनरी को न्यनदी और पोनरी को पोनडी) उच्चारण करते हैं।



33. तिब्बती पहनावे में ग्रंथकार



34. छोरतेन-तिब्बती स्तूप

[देखिए पृ० 118



35. करदुङ गोम्पा

[देखिए पृ० 125

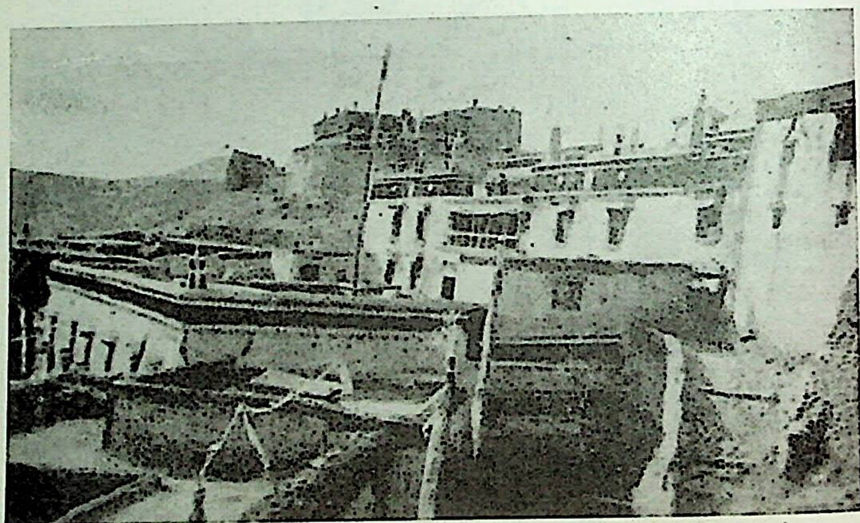
36. कंजूर के राज-संस्करण का एक पृष्ठ [देखिए पृ० 129

37. मणि-मंत्र–ॐ म णि प द्मे हुँ ह्री [देखिए पृ० 136



38. गरतोक के मेले में तिब्बती भद्र-महिलाएँ

[देखिए पृ० 136



39. सिंबिलिङ गोम्पा, तकलाकोट

[देखिए पृष्ठ 139



40. सिंबिलिङ गोम्पा के कुछ भिक्षु

[देखिए पृष्ठ 139



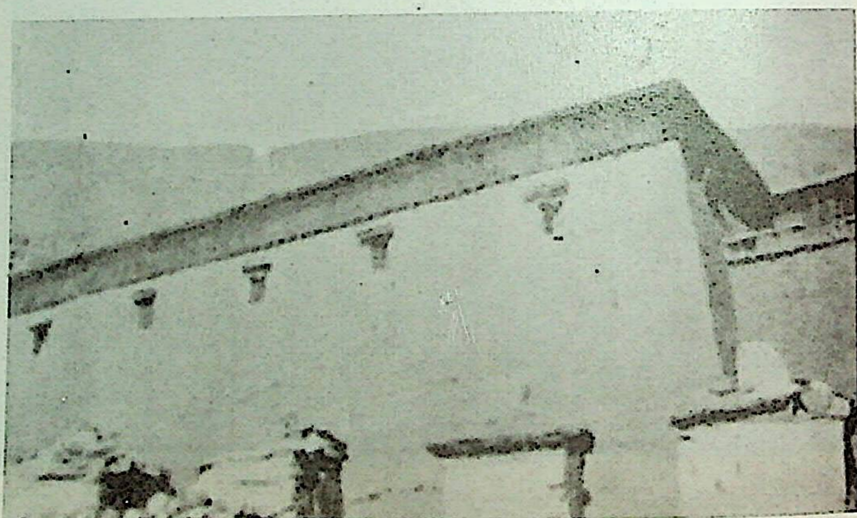
41. सिंबिलिङ गोम्पा में बुद्ध भगवान की मूर्ति

[देखिए पृ० 139



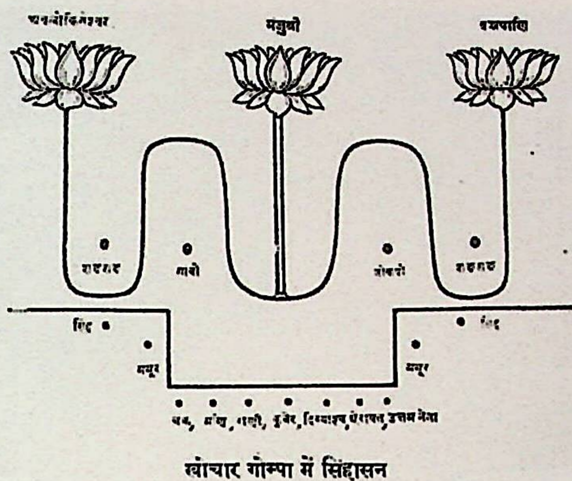
42. तांत्रिक क्रिया के अवसर पर बनी हुई सत्तू और मक्खन की रंग-बिरंगी मूर्तियाँ, सिंबिलिङ गोम्पा

[देखिए पृ० 139



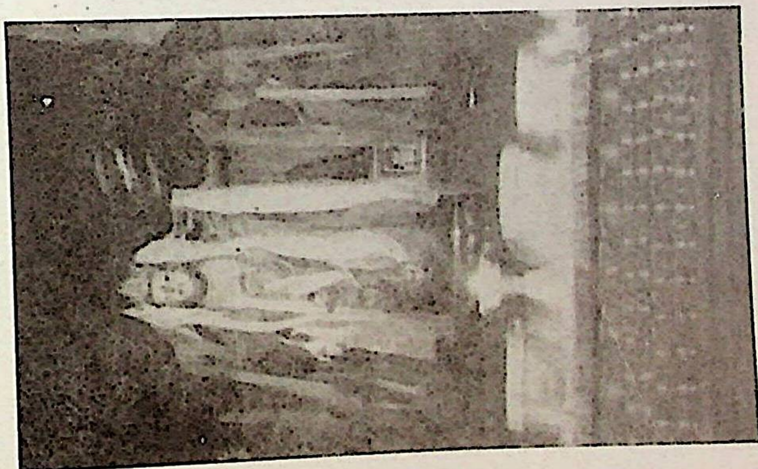
43. खोचार गोम्पा

[देखिए पृ० 140



44. खोचार गोम्पा में सिंहासन

[देखिए पृ० 141



45. मंजुश्री की मूर्ति, खोचारनाथ [देखिए पृ0 141



46. दारमा का कस्तूरी का नाभा

[देखिए पृ० 147

के अनुसार तिब्बत के भूत और प्रेतों को भगाने के लिए भारत से पद्मसंभव नामक एक महान तांत्रिक को ठिस्त्रोङ्देचेन ने बुलवाया था। तिब्बत जाने पर इन्हें वहाँ के आदिम बोन धर्मावलंबियों का बहुत सामना करना पड़ा। उनका सामना करने के लिए उन्होंने कतिपय सिद्धियों का प्रदर्शन किया तथा उनके कुछ क्रिया-कलापों और प्रथाओं को अपने धर्म में अपना लिया। इनके संप्रदाय के अनुयायियों को तिब्बती भाषा में ङिङ्मापा कहते हैं। ये लोग लाल टोपी धारण करते हैं तथा प्रधानतया तांत्रिक हैं। इनका कहना है कि इस संप्रदाय में अब भी बहुत-से चमत्कार दिखाने वाले सिद्ध और मांत्रिक हैं। इनके संबंध में पाश्चात्य देश के लोगों ने कई मनोरंजक और चित्र-विचित्र कथाएँ लिख मारी हैं। पद्मसंभव ने बौद्ध-धर्म के कई ग्रंथों को तिब्बती भाषा में अनुवादित किया तथा ल्हासा में समयेलिङ मठ को बनवाने में राजा को बहुत सहायता प्रदान की। इसी स्थान में ल्हासा की सरकार का राजकोष है। यद्यपि तिब्बत में ये बहुत समय तक नहीं ठहरे, तथापि वहाँ इनका प्रभाव सबसे अधिक है। तिब्बती भाषा में ये पेमा जूने, पेमा गुरू, गुरु रिंपोछे, लोबान रिंपोछे, गुरु पद्मसंभव आदि नामों से प्रसिद्ध हैं। इनके नाम की व्युत्पत्ति से लोग इन्हें पद्म से उत्पन्न हुआ और अमर मानते हैं। ये शांतरक्षित के बहनोई थे। तिब्बत में बिरला ही कोई घर होगा, जिसमें पद्मसंभव का कोई चित्र या मूर्ति न हो।

सन् 1041 से लेकर 1054 तक दीपंकर श्रीज्ञान ने तिब्बत में धर्मप्रचार किया था। ये तीनों (शांतरक्षित, पद्मसंभव और दीपंकर श्रीज्ञान) बौद्ध धर्म के प्रचारकों में प्रधान माने जाते हैं। इनके अतिरिक्त भारत के सैकड़ों पंडितों ने तिब्बत में धर्मप्रचार किया तथा पालि और संस्कृत ग्रंथों का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया। लगभग 300 वर्ष पहले तक भारत के पंडित यहाँ के पंडितों से मिलकर संस्कृत और पालि ग्रंथों का अनुवाद करते आए हैं। भारत से बौद्ध धर्म के जाने के पहले भूत-प्रेत की उपासना वाला 'पोन' या 'बोन' धर्म वहाँ पर प्रचलित था। आजकल तिब्बत में वैसे तो बौद्ध धर्म है, परंतु यह बौद्ध-काल के पहले का पोन या बोन और शाक्त या तंत्रमार्ग का सम्मिलित रूप है। तिब्बत में धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक सभी क्षेत्रों में लामाओं का ही हाथ है, जैसे रोमन कैथोलिक धर्म में पोपों का। इसी कारण पाश्चात्य लोग यहाँ के धर्म को भ्रमवश 'लामाधर्म' कहते हैं।

बौद्ध धर्म में हीनयान और महायान नाम के दो संप्रदाय हैं। हीनयान संप्रदाय में बौद्धस्तूपों का पूजन, तीर्थों का सेवन और भिक्षुओं को अन्नदान करने की मुख्यता है। निर्वाण प्राप्ति की इच्छा रखने वालों को भिक्षु बनकर अपने प्रधान धर्म-ग्रंथ त्रिपिटक (विनय, सूत्र और अभिधर्म) का अध्ययन कर पारंगत होकर अर्हत को प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए। इसीलिए इस मार्ग को अर्हतयान भी कहते हैं। सम्राट अशोक इसी मार्ग के अनुयायी थे। यह संप्रदाय लंका (सिंहलद्वीप), बर्मा तथा श्याम में प्रचलित है।

जनसाधारण में बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए महायान मार्ग का प्रचार प्रारंभ हुआ। इस मार्ग में संसार, गृह और लौकिक भोगों को त्याग करने की आवश्यकता नहीं है। बौद्ध धर्म के अन्य नियमों का आचरण करते हुए समस्त जीवों पर सदय होकर लोगों की भलाई

करनी चाहिए। इन सिद्धान्तों का अवलंबन करते हुए निर्वाण प्राप्ति की योग्यता को प्राप्त करने पर भी बुद्धत्व का तिरस्कार करके लोक-कल्याण की भावना से कार्य करने वाले बोधिसत्व हैं। इस मार्ग में बोधिसत्वों की सहायता के बिना निर्वाण प्राप्त नहीं किया जा सकता। महायान मार्ग बोधिसत्वयान के नाम से भी प्रसिद्ध है। यह संप्रदाय आजकल तिब्बत, मंगोलिया, जापान, चीन आदि देशों में प्रचलित है।

तिब्बत के मंदिरों में निम्नलिखित आठ बोधिसत्वों की मूतियाँ या चित्र प्रायः पाये जाते हैं (1) मंजुश्री (जंबयङ), (2) वज्रपाणि (छानादोर्जे), (3) अवलोकितेश्वर (चेनरेसी), (4) क्षितिगर्भ (सायी निङ्पो), (5) सर्वनिवारण विष्कंभी (डिपपा नंपर सेल), (6) आकाशगर्भ (नमका निङ्पो), (7) मैत्रेय (चंपा), (8) समंतभद्र (कुंटुछङ्पो)। इनमें भी मैत्रेय (आने वाले बुद्ध) अवलोकितेश्वर (परम करुणामय विष्णु के समान), मंजुश्री (ज्ञानमूर्ति ब्रह्मा के समान), वज्रपाणि (शिव के समान) विशेष प्रसिद्ध हैं।

इस समय तिब्बत के प्रचलित धर्म के दस संप्रदाय हैं। (1) आठवीं शताब्दी का प्रारंभिक बौद्ध धर्म 'ङिङ्मापा'। यह संप्रदाय भूटान, ङरी और लदाख में प्रचलित है। यह चीनी भिक्षुओं से लाया हुआ बौद्ध संप्रदाय है। इसकी कई पुस्तकें कंजूर और तंजूर में नहीं हैं। (2) नवीं शताब्दी का 'उर्ग्येनपा'। यह संप्रदाय तिब्बत के उन प्रान्तों में है, जो नेपाल की सीमा के पास हैं। भारत में हिमालय के प्रांतों में इस संप्रदाय के लोग उर्ग्येन या गुरु पद्मसंभव के अनुयायी हैं। पूर्वी तिब्बत का समये इनका प्रधान मठ है। ये लोग पद्मसंभव की पूजा करते हैं। (3) ग्यारहवीं शताब्दी का 'कदमपा'। इस संप्रदाय के लोग डोतोन के अनुयायी हैं, जो दीपंकर श्रीज्ञान के प्रधान शिष्य थे। ये आध्यात्मिक साधन में उच्च भूमिकाओं के लिए विशेष यत्न नहीं करते। (4) 13वीं शताब्दी का 'साक्यापा'। इस संप्रदाय के और उपर्युक्त तीनों संप्रदायों के भिक्षु लाल टोपी धारण करते हैं। इसलिए इनको लाल टोपी वाला संप्रदाय भी कहते हैं।

(5) 14वीं शताब्दी का 'गेलुकपा' या 'गंदेनपा'। गंदेन इनका प्रधान विहार है। तिब्बत में इस संप्रदाय के अनुयायी सबसे अधिक हैं। (6) 'करग्युडपा'। इस संप्रदाय के अनुयायी केवल 'दो' (सूत्रग्रंथ) को ही मानते हैं। विशेष सिद्धियों के लिए यत्न नहीं करते। (7) 'करमापा'। इस संप्रदाय के लोग कर्म के प्रभाव को विशेष महत्व देते हैं। (8) 'डेकुङ्पा'। इस संप्रदाय का प्रधान मठ डेकुङ है। 6, 7 और 8 संप्रदाय 'गेलुकपा' से ही निकले हैं और उसी के अंतर्गत हैं। इन सब संप्रदायों के भिक्षु पीली टोपी पहनते हैं। (9) 'डुकपा'। इस संप्रदाय के लोग दोर्जे (वज्र) की पूजा करते हैं, जिसके विषय में कहा जाता है कि यह स्वर्ग से सेरा गोम्पा के पास धरती पर गिरा था। सेरा इनका प्रधान मठ है। ये विशेषकर तंत्रमार्गावलंबी होते हैं। (10) 'बोनपा'। यह संप्रदाय तिब्बत में बौद्ध धर्म के आगमन से पहले का है। परंतु इस संप्रदाय के अनुयायियों ने बौद्ध धर्म के कई नियमों को अपना लिया है। ये बौद्धमठ और देवताओं को तो मानते हैं, परंतु तीर्थों की उलटी प्रदक्षिणा करते हैं। लाल टोपी संप्रदाय के भिक्षु लोग खुल्लमखुल्ला विवाह कर सकते हैं या औरतों को रख

सकते हैं। सन् 1357 में अंदो प्रांत के छोङख नामक ग्राम में एक बालक का जन्म हुआ, जो बाद में छोङखपा नाम से प्रसिद्ध हुआ; इनकी मृत्यु 1419 में हुई। ये एक बहुत बड़े विद्वान थे। बौद्ध धर्म के मूल ग्रंथों का भलीभाँति अध्ययन करने के बाद इन्होंने देखा कि तिब्बत का तत्कालीन धर्म अपने वास्तविक मार्ग से स्खलित हो गया है तथा उसमें बहुत-से दुराचार आ गए हैं। इसलिए धर्म की उस दुरवस्था को सुधारने के लिए वे कटिबद्ध हो गए। उन्होंने यह भी देखा कि भारत के बौद्ध भिक्षुओं के वस्त्रों का रंग पीला है। परंतु उस समय के भिक्षुओं में लाल रंग के वस्त्रों का इतना प्रचार था कि समस्त वस्त्रों के रंग को बदलने में असमर्थ होने के कारण, सुधरे हुए संप्रदाय को निर्देशित करने के लिए उन्हें भिक्षुओं से पीली टोपी धारण करवाकर ही संतोष करना पड़ा। इसलिए इस संप्रदाय को पीली टोपी वाले कहते हैं। इन्हें गेलुक्पा (सुधारक) भी कहते हैं। छोङखपा ने भारत के भिक्षुओं के आदर्श के अनुसार उस काल के बौद्ध भिक्षुओं के धार्मिक और चारित्रिक सुधार के लिए भरसक प्रयत्न किया था।

तिब्बत में पीली टोपी वाले संप्रदाय का और लदाख में लाल टोपी वाले संप्रदाय का विशेष प्रचार है। संप्रति दोनों संप्रदाय वाले छङ पीते हैं और औरतें रखते हैं, यद्यपि पीली टोपी वाले प्रकट रूप से ऐसा नहीं कर सकते। प्रसिद्ध चार विहारों में से गंदेन महाविहार की स्थापना छोङखपा ने स्वयं की थी और अन्य तीन महाविहारों को उनके शिष्यों ने स्थापित किया था। मानसखंड में दोनों संप्रदाय—लाल टोपी और पीली टोपी—वालों के मठ हैं, पर पीली टोपी वालों के मठ अधिक संख्या में हैं। तिब्बत में शून्यवाद और चीन तथा जापान में विज्ञानवाद प्रचलित है।

सन् 1328 में पहले-पहल फ्रांसीसी मांक अडोरिको डि पोरडेनो ईसाई धर्म-प्रचार के लिए ल्हासा गए। इसके बाद सन 1661-62 में जेसुइट पादरी जोहन ग्रूइबर गए। इसके बाद सन् 1707 में रोमन कैथलिक संप्रदाय के कैपूचिन पादरियों ने और सन् 1717 और 1738 में कुछ और पादरियों ने ल्हासा में ईसाई धर्म का प्रचार किया। इनसे पहले 1626 में पुर्तगाल के एक जेसुइट पादरी ने तिब्बत के अन्य स्थानों में ईसाई धर्म का प्रचार किया था, परंतु अब वहाँ उस धर्म का लेश भी नहीं रहा, यद्यपि लदाख में तिब्बती भाषा में इंजील का अनुवाद हो रहा है। कालिंपोङ में कुछ ईसाई पादरी तिब्बतियों को ईसाई बनाने का यत्न कर रहे हैं, तथा कभी-कभी धारचूले के ईसाई पादरी तकलाकोट मंडी में प्रचार के लिए जाकर कुछ किताबें बाँट आते हैं।

4. भिक्षु

प्रत्येक परिवार से छोटी अवस्था में एक या दो बच्चे को 'डाबा' (भिक्षु) या 'छोमो' या 'आनी' (भिक्षुणी) बनाकर घर में रखते हैं या मठों में भेज देते हैं। भिक्षु और भिक्षुणियों के सिर के बाल मुड़ाए जाते हैं। भिक्षुओं की पोशाक गृहस्थों से पृथक् होती है। ये लोग भारतीय संन्यासियों की भाँति एक मोटी-सी ऊनी धोती पहनकर ऊपर एक कमरबंद से

बाँध लेते हैं। बदन पर बिना हाथ वाली जाकेट पहनते हैं। ऊपर दस से बीस फीट तक लंबी और एक गज चौड़ी चादर यज्ञोपवीत की भाँति बाँएँ कंधे के ऊपर डालकर, दाँईं बंगल के नीचे से लेकर शेष भाग ओढ़ते हैं। तिब्बत की पूरी जनसंख्या में से तिहाई या चौथाई भाग भिक्षु ही हैं। बचपन में, जब कि उन्हें कठोर भावी-जीवन के कड़े नियमों का कुछ भी ज्ञान नहीं होता, भिक्षु या भिक्षुणी बना देने के कारण अपने नैतिक जीवन के ह्रास के उत्तरदायी वे नहीं कहे जा सकते। भिक्षु और भिक्षुणी स्वेच्छाचार से गृहस्थों की भाँति जीवन बिताते हैं। परंतु मठ के आवरण में किसी स्त्री-पुरुष का संयोग नहीं हो सकता, चाहे बाहर वे जैसे ही रहें। फिर भी वे विशेष बुरी दृष्टि से नहीं देखे जाते हैं। पर प्रकट रूप से विवाह नहीं करते। यदि मठ में रहने वाला कोई ऐसा करे, तो मठ से बहिष्कृत कर दिया जाता है और कुछ रुपए के रूप में दंड भी उसे दिया जाता है, पर वह विशेष पतित नहीं समझा जाता। जैसा कि पहले कह चुके हैं, लाल टोपी वाले भिक्षु (साक्या) खुल्लमखुल्ला औरतों को रख सकते या विवाह कर सकते हैं, पर पीली टोपी वाले ऐसा नहीं कर सकते। कहीं-कहीं भिक्षु और भिक्षुणियाँ गोद में बच्चे के साथ देखी जाती हैं। यहाँ के भिक्षुगण गुरु, पुरोहित, प्रोफेसर, विश्वविद्यालय के अध्यक्ष, शव को काटने वाले, छोटे-बड़े अफसर, सिपाही, व्यापारी, चरवाहे, नौकर, रसोइए, घोड़े और याकों को चलाने वाले, कुली, मोची, लोहार, किसान— तात्पर्य यह कि दलाई लामा से लेकर छोटे-से-छोटे सेवक तक के सभी काम करते हैं। ये लोग खुले तौर पर मांसभक्षण और मदिरापान करते हैं। थोड़ा भी पढ़ा-लिखा भिक्षु रमल फेंककर ग्रामीणों और गड़रियों को प्रश्नफल बता देता है, जिससे उसको कुछ पुरस्कार मिल जाता है। पहले चाहे कुछ भी रहा हो, पर आजकल सभी श्रेणियों के 99 प्रतिशत भिक्षु सदा व्यापार में लगे रहते हैं।

लामा (गुरु या आचार्य) आचार्य कोटि के और डाबा साधारण कोटि के भिक्षु हैं। कर्मकांड, धार्मिक एवं दार्शनिक ग्रंथों को कई वर्षों तक गंभीरतापूर्वक अध्ययन करने के बाद लामा की पदवी दी जाती है। लामा और डाबा अपनी विद्या-बुद्धि के अनुसार कई श्रेणियों में विभक्त रहते हैं। लामाओं की उच्चता का अनुमान इससे स्पष्ट हो सकता है कि सिंबिलिङ गोम्पा के 250 भिक्षुओं में से केवल 6 लामा हैं और शेष सभी डाबा हैं।

कोई-कोई बड़े लामा अपनी मृत्यु के पहले किसी निर्दिष्ट स्थान में अपने जन्म लेने की बात बता जाते हैं और लोग उस निर्दिष्ट स्थान पर जाकर उस बच्चे को लाकर गद्दी पर बिठा देते हैं, जिसे 'टुलकू[1] लामा' (अवतारी लामा) कहा जाता है। जब किसी मठ का लामा मर जाता है, तो उसके कुछ वर्ष के उपरांत कहीं किसी गाँव के (चाहे वह गाँव निकट हो या दूर) किसी बालक को मृत लामा की किसी वस्तु के पहचानने पर उस गद्दी पर आसीन करा देते हैं और इसे भी अवतारी लामा कहते हैं। दलाई लामा और टाशी लामा भी इसी प्रकार अवलोकितेश्वर और अमिताभ बुद्ध के अवतार माने जाते हैं।

---

1. विद्वानों का मत है कि 'टुलकू' की प्रथा सन् 1622 में पाँचवें दलाई लामा के समय से प्रारंभ हुई है।

5. गोम्पा

साधारणतया भिक्षु लोग मठों में रहते हैं। मठ या विहार को तिब्बती भाषा में गोम्पा[1] कहते हैं। गोम्पा का शब्दार्थ है एकांत स्थान। ये गोम्पा प्रायः पहाड़ों की चोटियों पर अवस्थित रहते हैं। परंतु मानसखंड में कितने ही गोम्पा समतल भूमि में भी पाये जाते हैं। कितने ही भिक्षु और भिक्षुणियाँ ऐसे भी होते हैं, जो अपने घर में या पृथक् घर बनाकर रहते हैं, या पर्यटन करते रहते हैं। गोम्पा में देवमंदिर होते हैं, जिनमें बुद्ध भगवान और अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियाँ रहती हैं तथा भिक्षुओं के रहने के लिए कई छोटी-बड़ी कोठरियाँ होती हैं। लामा और उच्च श्रेणी के भिक्षुओं के लिए पृथक् कोठरी होती है, तथा दूसरों के लिए कई लोगों के निर्वाह के योग्य अन्य कोठरियाँ होती हैं। भिक्षुओं के भोजन का प्रबंध कुछ तो मठ की ओर से और कुछ उन्हें अपने घर या निजी प्रबंध से करना पड़ता है।

तिब्बत का प्रथम मठ समये गोम्पा नालंदा विश्वविद्यालय के आचार्य जगद्विख्यात शांतरक्षित के निरीक्षण में बनवाया गया। यह ल्हासा से आग्नेय कोण में दो-तीन दिन के मार्ग की दूरी पर छङ पो[2] (ब्रह्मपुत्र) नदी के किनारे पर अवस्थित है और पटने के समीपवर्ती उड्यंतपुरी विहार के अनुकरण पर बनाया गया था। कुछ लोग इसे नालंदा विश्वविद्यालय के नमूने पर बनाया गया बतलाते हैं।

साधारणतया मठों में भिक्षुओं को प्रारंभिक शिक्षा दी जाती है। उच्च शिक्षा के लिए ल्हासा के मठस्थित विश्वविद्यालयों में जाना पड़ता है। वास्तव में तिब्बत के चार बड़े-बड़े विश्वविद्यालय ल्हासा के पास के मठ या विहार ही हैं। वे ये हैं—(1) डे पुङ (चावल का ढेर =धान्य कटक) मठ। यह ल्हासा के पश्चिम, दो मील पर है। इस महाविहार को सन् 1416 में सुप्रसिद्ध सुधारक छोङखपा के शिष्य जंबयङ ने स्थापित किया था। इसमें 7700 भिक्षु हैं। यह मठ मंगोलिया का विशेष पक्षपाती है और कृष्णा नदी के किनारे पर स्थित अमरावती स्तूप के पास धान्य कटक विश्वविद्यालय के अनुकरण पर बनाया गया है। संसार भर में यह सबसे बड़ा मठ है। (2) सेरा मठ ल्हासा नगर के बाहर उत्तर दिशा में दो-तीन मील की दूरी पर स्थित है। इस महाविहार को सन् 1419 में छोङखपा के दूसरे शिष्य शाक्य येशे ने स्थापित किया था। इसमें 5500 भिक्षु हैं। संसार के बड़े मठों में इसका दूसरा स्थान है। यह चीन का विरोधी मठ है। (3) गंदेन मठ, ल्हासा से ईशान कोण में पैंतीस मील की दूरी पर स्थित है। इस महाविहार को सन् 1405 में छोङखपा ने स्वयं स्थापित किया था। इसमें 3300 भिक्षु हैं। ये तीनों विहार तिब्बत राज्य के तीन स्तंभ माने जाते हैं।

---

1. इसे गोन्पा या गोम्वा भी कहते हैं।
2. इस शब्द को अंग्रेजी में Tsangpo लिखने के कारण कुछ लोग हिंदी में भी त्सङ्पो या सम्पो लिखने लगे हैं। पर इसका शुद्ध उच्चारण छङ पो ही है, जो छ और स के बीच के उच्चारण के निकट का है। इस पुस्तक में इसके दोनों रूप, छङ्पो और संपो, प्रयोग में लाए गए हैं।

(4) टाशी ल्हुंपो शिगर्ची (ल्हासा के बाद दूसरा बड़ा नगर है, यहाँ पर टाशी लामा रहते हैं) में है। इस महाविहार को सन् 1447 में छोङखपा के तीसरे शिष्य तथा प्रथम दलाई लामा गेंदुन ग्यंछो ने बनवाया था। इसमें 3300 भिक्षु रहते हैं। भिक्षुओं की ये संख्याएँ परंपरागत हैं; पर बहुधा इससे अधिक संख्या में भिक्षुक लोग रहते हैं। इन चार महाविहारों के अतिरिक्त पूर्वी तिब्बत में देरगे नामक विश्वविद्यालय (सन् 1548 में स्थापित) तथा चीन की सीमा के समीप कोकोनॉर झील के पूर्व में अंदो प्रांत में कुमबुम नामक विहार (सन् 1578 में स्थापित), और ल्हासा से ईशान कोण में लगभग 100 मील पर डेकुङ नामक विहार है। इनमें भी एक-एक में तीन-तीन सहस्र से अधिक भिक्षु हैं।

प्रायः इन सब विश्वविद्यालयों में धर्म, कर्मकांड, व्याकरण, साहित्य, वैद्यक आदि विषयों के ग्रंथों की और धात्वादि मूर्तियों का निर्माण, चित्रलेखन तथा मुद्रणकला की शिक्षा दी जाती है। एक-एक विषय का एक कालेज होता है। इन विहारों में खनपो ('डीन' या अधिष्ठाता), ल्हरपा (डॉक्टर), उमजे, गेशे (डॉक्टर ऑफ़ डिविनिटी), गरगेन (प्रोफेसर या लेकचरर), गेलोङ, गिछूल और कई श्रेणियों के विद्वान अध्यापन का कार्य करते हैं तथा इन उपाधियों के विद्यार्थियों को प्रस्तुत करते हैं। इन सब मठों का व्यय बड़ी-बड़ी जागीरों, लोगों के द्वारा प्रदत्त दान, भेंट और मठ के व्यवहार-कुशल कई भिक्षुओं द्वारा किए गए व्यापार की आय से चलता है। अनेक विद्यार्थियों को सहायता दी जाती है। इन मठों के भिक्षुओं में से केवल आधे वास्तविक विद्यार्थी होते हैं, शेष सेवक, रसोइया, संचालक, प्रबंधक और व्यापार तथा खेती करने और कराने वाले होते हैं। रामपुर, बशहर स्टेट, लदाख, रूस के दक्षिण भाग, साइबेरिया, चीन इत्यादि दूर-दूर देशों से भिक्षुगण विद्योपार्जन के लिए यहाँ आते हैं। कतिपय गोम्पा पाठशालाओं और विद्या-केंद्रों के उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। भिक्षुणियों के पृथक् मठ होते हैं, जिनमें कहीं-कहीं साहित्य और पूजा-पाठ के ग्रंथों की ही पढ़ाई होती है। उन्हें भिक्षुओं के विद्यालयों में पढ़ने की आज्ञा नहीं है। गृहस्थों को इन विहारों में पढ़ाने का कोई प्रबंध नहीं है, इसलिए संपन्न गृहस्थ और अफसर अपने बच्चों को पढ़ाई के लिए अपनी ओर से प्रबंध रखते हैं। तिब्बती लोग इतना कम गणित जानते हैं, जो नहीं के बराबर कहा जा सकता है। वे केवल गिनती-मात्र जानते हैं। इसलिए बड़े-से-बड़े अफसर अधिक गिनती या हिसाब के लिए, माला, पत्थर, छोहारे या खुमानी की गुठलियों और लकड़ी के टुकड़ों का व्यवहार करते हैं। ल्हासा के पास अफसरों की शिक्षा के लिए 'चीखन' नामक एक विद्यालय है, जिसमें गणित और बहीखाते रखने की विधि सिखलाई जाती है। ल्हासा नगर के पश्चिम में एक छोटे–से पर्वत की चोटी पर 'छियाकपोरी' नामक एक आयुर्वेदिक विद्यालय है, जहाँ विशेषकर भारत की आयुर्वेदिक और चीनी संप्रदाय की औषधियों की शिक्षा दी जाती है।

प्रत्येक मठ दो-तीन मंजिल का होता है। मठ के बाहर और आँगन में ध्वजा होती है, जिसपर मणि-मंत्र, देवताओं के चित्र और धर्मवाक्य छपे हुए रंग-बिरंगे झंडे लगे रहते हैं। साधारणतया प्रत्येक मठ में एक बड़ा कमरा होता है, जिसमें बुद्ध, बोधिसत्व, देवत्व

को प्राप्त हुए लामा, देवी, देवता, महाकाल, हरी-तारा, श्वेत-तारा, (अवलोकितेश्वर की शक्तियाँ) महाकाली, ल्हमो इत्यादि की मूर्तियाँ रहती हैं। इसे 'दुवङ' कहते हैं। प्रायः देवताओं के तीन रूप होते हैं—शांत, रंजक और उग्र। मूर्तियों के सामने मक्खन की बत्ती, छोटे-छोटे कटोरे और पूजा के अन्य साधन रखे रहते हैं। सभी गोम्पाओं में बारहों महीने जलने वाला अखंड-दीप जलता रहता है, जिसमें मन भर घी रखा रहता है। खंभों और दीवालों पर लटकते हुए थंके या चित्रपट टँगे रहते हैं। दीवालों पर सुंदर 'पेंटिंग' भी बहुत हैं। पूर्णिमा, अमावस्या, नव वर्ष के दिन पर्व और त्योहारों के समय तथा अन्य विशेष अवसरों पर यहाँ पूजा-पाठ होता है। दुवङ को ल्हखङ (देवगृह) भी कहते हैं। बड़े-बड़े मठों में ये देवालय चार-पाँच या उससे भी अधिक की संख्या में होते हैं। पश्चिमी तिब्बत के सुप्रसिद्ध थुलिङ मठ में 108 देव-मंदिर हैं। वैसे ही ल्हासा के पास के बड़े-बड़े मठों में भी बहुत-से देव-मंदिर हैं। पुस्तकों के लिए बड़े-बड़े मठों में पृथक् कमरे होते हैं, पर साधारण मठों में दुबङ में ही पुस्तकें रखी जाती हैं। विशेष पूजा के अवसर पर भिक्षु लोग पंक्ति बाँधकर मोटी गद्दियों पर बिछाए हुए आसनों पर बैठते हैं। नित्य पूजा के लिए प्रधान देवता की एक छोटी-सी कोठरी रहती है, जिसे 'चकङ' कहते हैं। नित्य शाम-सवेरे पुजारी वहाँ धूप, दीप, नैवेद्य के साथ पूजा–पाठ करते हैं। किसी रोगी के रोग निवारण के लिए, किसी कार्यसिद्धि के लिए, या किसी कार्यसिद्धि के उपलक्ष में आनंद मनाने के लिए अपनी शक्ति के अनुसार लोग पूजा-पाठ कराते हैं। यदि मानसखंड का कोई यात्री मठों में पूजा-विधान देखना चाहे, तो कुछ रुपया देकर पूजा-पाठ कराकर देख सकता है। पाकशाला, भंडार और दूसरे प्रयोजनों के लिए पृथक् कोठरियाँ होती हैं। बड़े मठों में धार्मिक नाटकों के प्रदर्शन के लिए एक बड़ा हॉल या कमरा होता है।

मठों में छोटे-बड़े डमरू, शंख, ताल, सहनाई, तुरही, मनुष्य की हड्डियों के बने धुतहू, करनाल, ढोल और कई प्रकार के वाद्य, वज्र (दोर्जे), घंटी, घंटा (टिलबू), मनुष्य के कपाल, पानी और जौ से भरे हुए छोटे-बड़े कटोरे, मक्खन के दीपक, छङ, सत्तू, सूखा मांस, मक्खन, रोटी और बहुत प्रकार के पदार्थों को पूजा के समय व्यवहार में लाते हैं। देवमूर्तियों के पास एक टोंटीदार तंग गर्दन का एक जलपात्र रखा जाता है। इसके ढक्कन में मयूर-पंख रहते हैं। जलपात्र को केसर के सुगंधित जल से भर देते हैं, जो दर्शकों को चरणामृत के रूप में दिया जाता है। मूर्तियों के ऊपर माला चढ़ाने के स्थान में 'खतक' चढ़ाते हैं। कभी-कभी किसी देवता के पूजनार्थ बड़े-बड़े यंत्रों को बनाकर सत्तू और कई रंगों के रँगे हुए मक्खन की मूर्तियों को तैयार कर एक से लेकर तीस दिनों तक विस्तारपूर्वक तांत्रिक पद्धति से पूजा करते रहते हैं। पूजा की समाप्ति के दिन घृत, कई प्रकार के धान्य और समिधाओं से स्वाहा उच्चारण के साथ हवन होता है, जिसे तिब्बती भाषा में 'जिनसेक' या 'चिनसेग' कहते हैं।

तिब्बतियों का विश्वास है कि हवन करने से सुख, आरोग्य, धन और शक्ति मिलती है, पाप से मुक्त होते हैं और अकाल-मृत्यु से बचते हैं। हवन चार प्रकार के होते हैं। (1)

जिबेई जिनसेक—यह शांति के लिए, अकाल, युद्ध और पाप को दूर करने के लिए किया जाता है। इसका कुंड समचतुर्भुज की आकृति का होता है। कुंड का नीचे का भाग लाल और ऊपर का श्वेत होता है। भीतर पृथ्वी-बीज (सा जुङ) 'लं' लिखा जाता है। प्रायः हवन किसी के मरने के बाद उसके पाप निवारण के लिए किया जाता है। (2) वङी जिनसेक—यह युद्ध में विजय के लिए किया जाता है। इसका कुंड गोलाकार होता है, जो पद्म का सांकेतिक है। रंग नीला होता है और भीतर जलबीज (छू जुङ) 'वं' लिखा जाता है। (3) ट्रकपो जिनसेक—यह अकाल मृत्यु से बचने के लिए और अकाल मृत्यु को लाने वाले दुष्ट देवताओं को दंड देने के लिए किया जाता है। कुंड त्रिकोणाकृति और काले रंग का होता है और भीतर अग्नि बीज (मे जुङ) 'रं' लिखा जाता है। (4) ग्यस्पाई जिनसेक—यह संपत्ति के लिए और शस्य समृद्धि के लिए किया जाता है। कुंड अर्धचंद्राकृति और पीले रंग का होता है। भीतर वायुबीज (लुङ जुङ) 'यं' लिखा जाता है।

कपड़े के ऊपर सफेदी लगाकर उसके ऊपर स्थानीय देशी रंगों से बुद्ध भगवान, देवी-देवता, लामाओं के और मंत्र या दृश्यों के कई प्रकार के चित्र बनाए जाते हैं। थंके के पीछे 'ॐ अः हुं' ये तीन बीजाक्षर एक के नीचे एक लिखे जाते हैं। इनके चारों ओर रंगीन रेशम या सुनहले कपड़ों से किनारी लगाकर पीछे से एक सादा कपड़ा लगा देते हैं। ऊपर और नीचे चपटे और गोलदार डंडे को लगाकर सामने से पतले रेशम या किसी अच्छे कपड़े का आच्छादन (जिससे चित्रपट पर धूल आदि न लगने पाए) लगाकर मानचित्र की भाँति लटकाने के योग्य बना देते हैं। इस प्रकार के चित्रपट को 'थंका' कहते हैं। अंग्रेजी में 'बैनर पेंटिंग' (झंडा चित्रपट) कहते हैं। इन थंकाओं को देव-मंदिरों, पुस्तकालयों तथा अन्यान्य कमरे की दीवालों और स्तंभों पर लगाकर सुसज्जित करते हैं। देव-मंदिरों और दूसरे कमरों की दीवालों और दूसरी छतों पर कई कलापूर्ण चित्र चित्रित रहते हैं। देवताओं की मूर्ति भिक्षु ही बना सकते हैं। बड़ी-बड़ी मूर्तियों को बनाते समय बीच-बीच में पूजा-पाठ किए जाते हैं। धातुओं के साँचे बनाकर मिट्टी या लुग्दी (पेपर पल्प) से छोटी-छोटी मूर्तियाँ बनाते हैं। बड़ी-बड़ी मूर्तियों पर सोने के पत्र चढ़ाते हैं और अन्य रंग भी लगाते हैं। धातुओं से बड़ी सुंदर-सुंदर मूर्तियाँ बनाते हैं। तिब्बतियों की कलाप्रियता के कारण गरीब-से-गरीब के घर में भी एक-दो थंके उनके देवस्थानों में रखे रहते हैं। संपन्न गृहस्थ के घरों में देव-मंदिर होते हैं, जिनमें थंके और दीवालों पर अन्य प्रकार के चित्र होते हैं तथा रंगीन और नकशेदार चौकियाँ रहती हैं। तिब्बतियों ने धर्म, संस्कृति, विद्या, चित्रलेखन और शिल्प आदि को भारत से ही सीखा था, पर अब वे लोग इस क्षेत्र में इतने बढ़ गए हैं कि वहाँ के जनसाधारण में प्रचलित कलाप्रियता को भारतवासी उनसे सीख सकते हैं।

तिब्बत में प्रत्येक तंबू या डेरे में इष्टदेवता (यिदिम) का एक नियमित स्थान एक वेदी के ऊपर बना रहता है, जिसपर अन्य देवता और घी का प्रदीप, पानी और जौ से भरे हुए कटोरे रखे जाते हैं। प्रतिदिन संध्या के समय बत्ती जलाई जाती है। संभ्रांत व्यक्तियों के घरों में घी की एक बत्ती रात-दिन जलती रहती है और घरों में देवस्थान के लिए एक पृथक्

कोठरी होती है। भ्रमण करते समय भी अपने तंबुओं में देवताओं को एक नियमित स्थान पर रखते हैं।

6. पुस्तकालय

प्रत्येक मठ में एक पुस्तकालय अवश्य रहता है। पुस्तकालय के प्रधान ग्रंथ कंजूर और तंजूर हैं। कंजूर (कं-ग्युर=बुद्ध के श्रीमुख वचन का अनुवाद) 108 खंडों और तंजूर (तं-ग्युर=शास्त्रों के अनुवाद) 235 खंडों में है। कंजूर पालि त्रिपिटक का अनुवाद है। यद्यपि यह 108 वेष्टनों में है, पर अलग-अलग गिने जायँ, तो सात सौ से भी अधिक होंगे। तंजूर की पोथियों में विविध दर्शन-ग्रंथ, काव्य, व्याकरण, ज्योतिष, (फलित और गणित), देवता-साधन, तंत्र, मंत्र, कंजूर की कुछ पोथियों की व्याख्या और कतिपय संस्कृत ग्रंथों के चीनी अनुवाद का भाषांतर है। भारत में मुसलमानों की चढ़ाई के समय अमानुषिकतापूर्वक अग्नि में जलाकर नाश कर दिए गए कई अमूल्य संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद अभी तंजूर में विद्यमान हैं। प्रसिद्ध खगोल-शास्त्रज्ञ आर्यदेव, दिङ् नाग, धर्मरक्षित, चंद्रकीर्ति, शांतरक्षित, कमलशील के नष्ट ग्रंथ; विख्यात आचार्य चंद्रगोमी की वादन्याय टीका, चंद्रव्याकरण, सूत्र, धातु ऊणादि-पाठ, बृत्ति, टीका, पंचकादि; लोकानंद नाटक, अश्वघोष, मतिचित्र, हरिभद्र, आर्यशूर आदि कवियों की रचनाएँ; कालिदास का मेघदूत; दंडी, हर्षवर्धन, क्षेमेंद्र आदि की कितनी ही रचनाएँ तंजूर के खंडों में हैं। नागार्जुन विरचित अष्टांगहृदय, शालिहोत्र आदि अनेक टीका-उपटीकाओं के सहित वैद्यक ग्रंथ; कुछ हिन्दी पुस्तकों के अनुवाद; महाराज कनिष्क को मतिचित्र का पत्र, महाराज चंद्र को योगीश्वर जगद्रत्न का पत्र, पालवंशी राजा नयपाल को दीपंकर श्रीज्ञान का पत्र—ये सब तंजूर में विद्यमान हैं। यदि कंजूर और तंजूर के सभी खंडों के अनुवाद फिर से तिब्बती भाषा से अनुष्टुपश्लोकों में किए जायँ, तो बीस लाख श्लोक हो सकते हैं। इनमें से बहुत से ग्रंथों के थुलिङ में (जो बदरीनाथ से सौ मील उत्तर और मानसरोवर से वायव्य कोण पर लगभग सवा सौ मील की दूरी पर है) सक्या और समये नामक मठों में (जो मध्य तिब्बत में हैं) अनुवाद किए गए हैं।

नागार्जुन, आर्यदेव, असंग, बसुबंधु, शांतरक्षित, चंद्रकीर्ति, धर्मकीर्ति, चंद्रगोमी, कमलशील, शील, दीपंकर श्रीज्ञान आदि भारतीय पंडितों के जीवन-चरित्र भी तिब्बती भाषा में लिखे गए हैं। इनके अतिरिक्त धर्म-इतिहास (छो जुङ), जीवन-चरित्र (नम थर) और अन्यान्य कई ग्रंथ स्वतंत्र रूप से तिब्बती भाषा में लिखे गए हैं।[1]

एक लामा ने बताया कि कंजूर सात शीर्षकों में विभक्त है—(1) दुलवा, (इसमें भिक्षुओं के 225 नियम बताए गए हैं, जिनमें से ब्रह्मचर्य और गरीबी पर सुधारक छोङखपा ने विशेष जोर दिया है।) (2) शेरचिन, (3) पलचेन, (4) कोनछेग, (5) दो (सूत्र), (6) म्यंगड़ा,

---

1. इन दोनों पैराओं में दी हुई ज्ञातव्य बातों के लिए ग्रंथकार अपने मित्र महापंडित राहुल सांकृत्यायन त्रिपिटकाचार्य का कृतज्ञ है।

और (7) ग्युट (तंत्र)। उसी प्रकार तंजूर भी दो शीर्षकों में विभक्त है—(1) ग्युट (तंत्र) और (2) दो (सूत्र)।

चौदहवीं शताब्दी के आरंभ में बुतोन् या रिन छेन डुब (सन् 1284-1376) नामक एक तिब्बती पंडित और इतिहासवेत्ता ने (1288-1364) बुद्ध भगवान के श्रीमुख वचनों के अनुवादों को कंजूर में और सारे शास्त्रों को तंजूर में संकलित किया। ये सत्रहवीं शताब्दी के पाँचवें दलाई लामा के समय (सन् 1616-1681) में अखरोट के पेड़ के तख्तों पर एक-एक पृष्ठ खोदकर छापे गए हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि कंजूर और तंजूर पहले-पहल सातवें दलाई लामा के समय में, सन् 1728-46 के मध्य में छापे गए थे। इसके कागज लगभग छह–छह अंगुल चौड़े और दो-दो फीट लंबे पत्रों के हैं, जो हमारे यहाँ की प्राचीन पुस्तकों की भाँति ब्रह्मपत्रों में हैं। इन खुले पत्रों के ऊपर और नीचे दोनों ओर नक्काशीदार तख्ते लगाकर उन्हें सुंदर रेशमी कपड़ों में बाँध देते हैं, जिन्हें हम वेष्टन कहते हैं। इनके तीन प्रकार के संस्करण होते हैं—उत्तम, मध्यम और साधारण। उत्तम या राज-संस्करण का कागज मोटा होता है। उनके ऊपर एक प्रकार का काला मसाला लगाकर सुनहले अक्षरों में ग्रंथ छापा जाता है। इन वेष्टनों को आलमारी में रखते हैं। किसी वाक्य या पुस्तक का लाल, रूपहले या सोने के रंग में लिखने से महत्व बढ़ जाता है। इसलिए कंजूर-तंजूर का राज-संस्करग सुनहले रंग में और लामा या उच्च पदाधिकारियों का ठप्पा लाल रंग की स्याही में होता है। इन दोनों पोथियों को रूसी बौद्ध तीस-तीस सहस्र रुपए देकर मोल लेते थे। बड़े-बड़े मठों में कंजूर के ही खंड रहते हैं और छोटे-छोटे मठों में तो इनमें से एक भी नहीं रहते, यद्यपि कुछ पुस्तकें अवश्य रहती हैं। लकड़ी के तख्तों पर खुदे हुए होने पर भी ये अक्षर आधुनिक छापे खाने के अक्षरों के समान सुंदर होते हैं। भिक्षु लोग पढ़ने के समय लेखनकला में अपना बहुत समय लगाते हैं, इसलिए छापे के समान सुंदर और सुडौल अक्षर लिखने वाले तिब्बती बहुत मिल जाते हैं। यहाँ वालों ने मुद्रण-पद्धति को चीनियों से सीखा है।

7. पंचांग

सन् 1027 में काश्मीर के पं० सोमनाथ ने तिब्बत जाकर भारतीय कालचक्र-ज्योतिष का अनुवाद किया और षष्ठि-संवत्सर के बृहस्पति चक्र के 'प्रभव' आदि का प्रचलन किया। इसे तिब्बती भाषा में 'रब्युङ' कहते हैं। यह षष्ठि-संवत्सर-चक्र चीनियों की भाँति पाँच 'खम्' या उपचक्रों में विभक्त किया गया है। (1) अग्नि (मे), (2) पृथ्वी (सा), (3) लोह (चा अथवा चक), (4) जल (छू) और (5) वृक्ष (शिंग)। इनके रंग क्रमशः लाल (मरपो), पीला (सिरपो), सफेद (करपो), नीला (ङोपो) और हरा (जंकू) बतलाते हैं। एक-एक उपचक्र के बारह वर्ष होते हैं। (1) मूषक (चीवा या सीवा), (2) बृष (लङ), (3) व्याघ्र (टग), (4) शश (यो), (5) नाग (डुक), (6) सर्प (डुल), (7) अश्व (ता), (8) मेष (लुक), (9)

वानर (टे या टयू), (10) पक्षी (च्यू), (11) श्वान (खी), और (12) शूकर (फक)[1]। परंतु गणना सीधी नहीं है। यह इस प्रकार की है। इन बारह वर्ष के आदि वाले दो वर्ष प्रथम खम् के नाम से पुकारे जाते हैं—एक पुरुष (फो) और दूसरा स्त्री (मो)। इसी प्रकार आगे के दो वर्ष द्वितीय खम् के नाम से पुकारे जाते हैं। तिब्बतियों के पंचांग का पहला रब्युङ सन् 1027 से प्रारंभ होता है। आगे दी हुई तालिका से इसका स्पष्टीकरण हो जाएगा। उसमें अधिक मास के वर्ष और नाम भी दिए गए हैं।

चीनियों ने ई0पू0 सन् 106 से ही साठ वर्ष के चक्र को व्यवहार में लाना आरंभ किया था। इस चक्र को उन्होंने बारह वर्ष के पाँच उपचक्रों में विभक्त किया था। तिब्बतियों ने उस प्रथा को कुछ परिवर्तनों के साथ ग्रहण किया। इसी कारण चीनी और तिब्बती वर्ष परस्पर नहीं मिलते।

उपचक्र के बारह वर्षों में एक-एक वर्ष तिब्बत के विभिन्न स्थानों में मेला लगता है। अश्व के वर्ष में, जो तिब्बती भाषा में 'तालो' कहलाता है, कैलास में मेला लगता है। इस मेले में दूर-दूर देशों के बौद्ध यात्री अधिक संख्या में प्रायः वर्ष भर जाते रहते हैं। मेले का प्रधान दिवस वैशाख पूर्णिमा है, उसी दिन बुद्ध भगवान का जन्म, ज्ञानोदय तथा महानिर्वाण हुआ था। कैलास के पश्चिम में सेरशुङ नामक स्थान में 'तरबोछे' नामक एक विराट ध्वजा है। जैसा कि 'परिक्रमा' नामक शीर्षक में कह चुका हूँ, वहाँ पर यात्रीगण वैशाख की शुक्ल चतुर्दशी तथा पूर्णिमा के दिन बड़े समारोह से झंडे का उत्सव मनाते हैं। वैसे तो पर्व की यात्रा वर्ष भर चालू रहती है। गत वर्ष, अर्थात् 16 फरवरी, 1942 से 4 फरवरी 1943 तक, 'तालो' था, जो 16वाँ रब्युङ का 16वाँ वर्ष था। उस वर्ष के भारतीय संवत्सर का नाम चित्रभानु था। और वर्तमान वर्ष का नाम सुभानु है।

तिब्बत का षष्टि-संवत्सर-चक्र[2] (रब्युङ)

स्त्री शश (यो)	अग्नि (प्रभव)	पृथिवी (प्रमाथी)	लोह (खरे)	जल (शोभकृत)	वृक्ष (राक्षस)
	1	13	सुमावा* 25	37	दुनबा* 49

1. अनेक पुरुष और स्त्रियों की कमरबंद में दो अंगुल व्यास का एक पीतल का चक्र लटका रहता है, जिसे 'ल्हो कोर चूडी' (बारह वर्ष का चक्र) कहते हैं। इसपर बारह वर्ष के जंतु वलयाकार चित्रित रहते हैं। मध्य में 'परगा ग्ये' (आठ दिशाएँ) और 'मेवागू' (नौ अंक) हैं। यह चक्र वर्ष की गणना के काम में आता है। कभी-कभी इस चक्र की दूसरी ओर वज्रपाणि, अवलोकितेश्वर और मंजुश्री की मूर्तियाँ होती हैं, जिन्हें छला नमसुन कहते हैं।
2. संवत्सर के नाम के लिए (स्त्री) शश, (पुरुष) नाग, (स्त्री) सर्प आदि बारह नामों को उनके सामने के कोष्टकों के साथ जोड़ दिया जाता है; जैसे—अग्नि (स्त्री) शश, पृथिवी (पुरुष) नाग, जल (पुरुष) अश्व, आदि। (स्त्री) और (पुरुष) को कभी कभी छोड़ भी देते हैं।

* अधिक मास वाले संवत्सर और मास।

(पुरुष) नाग (डुक)	पृथिवी (विभव) 2	लोह (विक्रम) ङावा* 14	जल (नंदन) 26	वृक्ष (क्रोधी) गेवा* 38	अग्नि (नल) 50
(स्त्री) सर्प (डुल)	पृथिवी (शुक्ल) (गूवा)* 3	लोह (वृष) 15	जल (विजय) थंगबो* 27	वृक्ष (विश्वावसु) 39	अग्नि (पिंगल) 51
(पुरुष) अश्व (ता)	लोह (प्रमोद) 4	जल (चित्रभानु) 16	वृक्ष (जय) 28	अग्नि (पराभव) 40	पृथिवी (कालयुक्त) शीवा* 52
स्त्री मेष (लुक)	लोह (प्रजापति) 5	जल (सुभानु) थंगबो* 17	वृक्ष (मन्मथ) 29	अग्नि (प्लवंग) दुगवा* 41	पृथिवी (सिद्धार्थ) 53
(पुरुष) वानर (टयू)	जल (अंगिरा) सुमवा* 6	वृक्ष (तारण) 18	अग्नि (दुमुख) गेवा* 30	पृथिवी (कीलक) 42	लोह रौद्र) 54
(स्त्री) पक्षी (च्या)	जल (श्रीमुख) 7	वृक्ष (पार्थिव) च्यूवा* 19	अग्नि (हेविलंब) 31	पृथिवी (सौम्य) 43	लोह (दुर्मति) च्यूङीवा* 55
(पुरुष) श्वान (खी)	वृक्ष (भाव) 8	अग्नि (व्यय) 20	पृथिवी (विलंब) 32	लोह (साधारण) ङीवा* 44	जल (दुंदुभि) 56
(स्त्री) शूकर (फक)	वृक्ष (युवा) चूङीवा* 9	अग्नि (सर्वजित्) 21	पृथिवी (विकारी) शीवा* 33	लोह (विरोधकृत) 45	जल (रुधिरोद्गारि) टुगवा* 57
(पुरुष) मूषक (चीवा)	अग्नि (धाता) 10	पृथिवी (सर्वधारी) च्यूवा* 22	लोह शर्वरी 34	जल (परीधावी) 46	वृक्ष रक्ताक्षि) 58
(स्त्री) वृषभ (लङ)	अग्नि (ईश्वर) गेवा* 11	पृथिवी (विरोधी) 23	लोह (प्लव) 35	जल (प्रमादी) सुमवा* 47	वृक्ष (क्रोधन) 59
पुरुष व्याघ्र (टग)	पृथिवी (बहुधान्य) 12	लोह (विकृत) 24	जल (शुभकृत्) 36	वृक्ष (आनंद) च्यूचिकवा* 48	अग्नि (क्षय) च्यूवा* 60

भारत के हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और नासिक तीर्थों में 12 वर्ष में एक-एक बार लगने वाले मेले का तिब्बत के 12 वर्ष के उपचक्र के 'अश्व के वर्ष' में लगने वाले मेले से सिवा 'वादरायण' संबंध के अन्य कोई संबंध नहीं है। परंतु भारतीय जनता अज्ञानवश कैलास के 'तालो' को कैलास कुंभ समझती है, इसका कारण केवल यही है कि भारत का कुंभ और कैलास का 'तालो', ये दोनों मेले 12 वर्षों में आते हैं; इस अवसर पर भारत से हिंदू यात्री अन्य वर्षों की अपेक्षा अधिक संख्या में जाते हैं। तिब्बती पुराणों के अनुसार इस वर्ष कैलास या मानसरोवर की एक परिक्रमा का फल अन्य वर्षों में की हुई 13 परिक्रमा के समान पुण्यप्रद है।

मानसरोवर के दक्षिणी किनारे पर महाभारत काल के समान मार्गशीर्ष प्रतिपदा को नया वर्ष मनाया जाता है (जो सन् 1936 में 14वीं दिसम्बर को पड़ा था)। यह भारतीय ज्योतिषियों के ध्यान देने का विषय है। वहाँ के लोग यह मानते हैं कि उस दिन से उत्तरायण प्रारंभ होता है। मानसरोवर के पश्चिम के 'होर' प्रांत-वासियों का और अन्य कृषकों का नया वर्ष पौष शुक्ल प्रतिपदा को आरंभ होता है। तिब्बत में सरकारी और जनता के नव वर्ष और पंचांग का आरंभ माघ शुक्ल प्रतिपदा से होता है। इसे पोंबो ल्होसर (सरकारी नव वर्ष) कहते हैं।

मासगणना प्रतिपदा से प्रारंभ होकर अमावस्या को समाप्त होती है। प्रायः मासगणना पहला मास (थंगबो), दूसरा मास (ङीवा), तीसरा मास (सुमवा), इस प्रकार से होती है। मास के दिनों की गणना क्रमशः प्रतिपदा से अमावस्या तक एक, दो, तीन, करके होती है। दो तिथियों के एक ही दिन पड़ने पर तथा एक तिथि के दो दिन बढ़ने पर महीने के दिन तीस से घट या बढ़ भी जाते हैं। वहाँ भी अधिकमास होते हैं। परंतु तिब्बती पंचांग में प्रति तीसरे वर्ष अधिकमास का नियम नहीं है। इसलिए यह आवश्यक नहीं कि भारत में जो अधिक मास होते हैं, वही वहाँ भी हों। इसलिए वहाँ और यहाँ के महीने कभी-कभी मिलते हैं। एक प्रथा यह भी है कि बारहों मास बारह वर्षों के नामों से पुकारे जाते हैं। पहले मास से प्रारंभ होकर तीन-तीन मास की चार ऋतुएँ (दुई) होती हैं। (1) काला कुत्ता, (2) महोरग (मनुष्य के शरीर और नाग का पूँछ वाला), (3) घोड़े पर सवार एक पुरुष, (4) गरुड़, ये चार ऋतुओं के दुष्ट अधिदेवता हैं। आवश्यकता पड़ने पर इनको प्रसन्न करने के लिए पूजा-पाठ करना पड़ता है। सप्ताह में सात दिन होते हैं। ये एक-एक ग्रह के नाम से संबंध रखते हैं। एक-एक वार के नाम का सिर के एक-एक अंग से निर्देश किया जाता है और एक-एक चिह्न से सूचना दी जाती है। आगे दी हुई तालिका से यह विषय स्पष्ट हो जायगा। दिन 24 घंटे में और घंटा 60 मिनट में विभक्त किया जाता है।

तिब्बती मास और ऋतुओं (दुई) के नाम

सं0	मास का नाम		ऋतु का नाम	
	तिब्बती	भारतीय	तिब्बती	भारतीय व अंग्रेजी
1	थंगवी	माघ	चीगा	हेमंत (स्प्रिंग)
2	डीवा	फाल्गुण		
3	सुमवा	चैत्र		
4	शीवा	वैशाख	यारका	ग्रीष्म (सम्मर)
5	ङावा	ज्येष्ठ		
6	टुगवा	आषाढ़		
7	दुनबा	श्रावण	तांगा	शरद (आटम)
8	ग्येवा	भाद्रपद		
9	गूवा	आश्विन		
10	च्यूवा	कार्तिक	गूँगा	(शिशिर (विंटर)
10	च्यूचिकवा	मार्गशीर्ष		
12	ज्यूडीबा	पौष		

तिब्बती वारों के नाम

सं0	तिब्बती	भारतीय	अंग–निर्देश	चिह्न–निर्देश
1	न्यीमा	रवि	मूर्ध	सूर्य
2	दावा	सोम	मस्तक	क्षीणचंद्र
3	मिङमर	मंगल	नेत्र	नेत्र
4	ल्हक्पा	बुध	कर्ण	हाथ
5	फुरबू	वृहस्पति	नासिका	तीन नाखून
6	पसङ	शुक्र	मुख	गेटिस
7	पेन्पा	शनि	चिबुक	गट्ठा

प्रतिवर्ष तिब्बती भाषा में एक पंचांग ल्हासा से और एक रामपुरबशहर स्टेट से छपता है। पहला पंचांग ल्हासा के पंडितों का बनाया होता है तथा अखरोट के तख्तों पर खुदवाकर छपता है। दूसरा पंचांग रामपुरबशहर के एक भारतीय बौद्ध-मतावलंबी द्वारा निर्मित होकर दिल्ली में लिथोग्राफी की पद्धति से छापा जाता है। पंचांग को तिब्बती भाषा में 'लोथो' या 'लोदुर' कहते हैं।

तिब्बती पंचांगों में भारतीय पंचांगों की भाँति दिन, तिथि, वार, नक्षत्र, मास, पर्व और ग्रहण[1] आदि कई बातें दी जाती हैं। इसमें ग्रहचक्र, राशिचक्र, आयुचक्र, ग्रहों के भाव, विवाह–संबंधी निर्णय करने वाली तालिका, दिन–फलचक्र, यात्राचक्र, शुभाशुभ मुहूर्तों को बताने वाले चक्र, शुभाशुभ शकुन, मृतकों की गति बताने वाले चक्र आदि कई प्रकार के चक्र तथा तालिकाएँ रहती हैं। फलित और गणित ज्योतिष की कई पुस्तकें हैं। ज्योतिष पढ़ने के लिए ल्हासा में गरमाख्या (?) नामक एक पृथक् मठ है। वहाँ के ज्योतिषी बड़े प्रसिद्ध माने जाते हैं, क्योंकि छोईछोङ नामक पौराणिक देवराज इस मठ के एक लामा में अवतार धारण करता है।

8. पर्व एवं त्योहार

नव वर्ष के आरंभ के दिन सभी घरों और विशेषकर गोम्पाओं में दस-पंद्रह दिनों तक पूजा-पाठ, निमंत्रण, नृत्य और खेल-कूद आदि होते रहते हैं, जिनमें भिक्षु लोग—लामा और डाबा—गृहस्थ, स्त्री और पुरुष सभी उत्साहपूर्वक भाग लेते हैं। उस समय सभी लोग अच्छे-अच्छे वस्त्रों को धारण करते हैं तथा ऐसे अवसरों पर अत्यधिक मात्रा में छंग पीते हैं। वर्ष भर की पूजा के लिए सत्तू, घी, और गुड़ को मिलाकर बनाई हुई मूर्ति (लोदुर, जो एक आलमारी में बंद रखी जाती है) और कई 'छोपा' (बलि की मूर्ति, जो रंग-बिरंगे मक्खन के बेल-बूटों से सुसज्जित सत्तू की मूर्ति के रूप में होती है), बनाए जाते हैं। प्रतिमास शुक्ल तृतीया (गुरुपद्मसंभव—पेमाजूने—का जन्मदिन), शुक्ल पक्ष की अष्टमी (भगवती का प्रिय दिन), पूर्णिमा (बुद्ध भगवान के जन्म, बोध और निर्वाण का दिन) और अमावस्या (पर्व का दिन) को मठों में विशेष पूजा होती है।

दसवें मास (कार्तिक की) पूर्णिमा को रात भर जागरण और देवी के 21 नामों का अखंड संकीर्तन-जप होता है, जो सचमुच बहुत ही महत्वपूर्ण एवं प्रभावशाली है। इसी मास की 25वीं तिथि को विख्यात सुधारक चोङखपा और पहले दलाई लामा ङम्छो लुबजङ का मृत्यु-दिवस है। उनके उपलक्ष में इस दिन विशेष पूजाएँ होती हैं। रात को मठ के भीतर बरांडों और छतों पर सहस्त्रों घृत-दीपक जलाए जाते हैं। उस समय का दृश्य बिल्कुल दीवाली-जैसा दिखाई पड़ता है। वास्तव में इससे दो–चार दिन पहले और पीछे गोम्पाओं में पूजा-पाठ और भोज आदि अधिकतर होते हैं।

पहले मास की पूर्णिमा को अवलोकितेश्वर का व्रत होता है। वैसे तो कार्यक्रम दशमी से ही प्रारंभ हो जाता है। त्रयोदशी के दिन पशुओं के कल्याण के लिए पूजा-पाठ होते हैं। चतुर्दशी के दिन हलका उपवास होता है, हाँ चाय के लिए उस दिन भी मनाही नहीं है। शाम को निरामिष 'थुक्पा' पी लेते हैं। पूर्णिमा के दिन उपवास और मौन दोनों का पालन किया जाता है; किन्तु पूजा को उच्च स्वर से करने की मनाही नहीं है। अवलोकितेश्वर के निरामिष देवता होने के कारण इस अवसर पर सारे पात्र, चाय के कटोरे आदि रगड़-रगड़कर

---

1. सूर्यग्रहण को निङजन और चंद्रग्रहण को दमजन कहते हैं।

धोए जाते हैं। शाम को मंत्र-संकीर्तन होता है। पूर्णिमा के दूसरे दिन प्रातःकाल सूर्योदय होने तक पूजा-पाठ समाप्त करके भोजन किया जाता है। इसके उपरांत सायंकाल तक मंत्र-संकीर्तन होता रहता है। विशेषकर चतुर्दशी के दिन और सामान्य रूप से इन तीनों दिन यथाशक्ति अवलोकितेश्वर के प्रति साष्टांग दंडवत् नमस्कार करते हैं। सातवें महीने की पूर्णिमा को नई खेती काटने के उपलक्ष में पूजा होती है। और खेतों में जुलूस निकलते हैं। विविध स्थानों में अन्यान्य त्योहारों (दुछेन) और पर्वों को मनाते हैं। विशेषकर सारा समारोह मठों में ही होता है।

पश्चिमी तिब्बत की राजधानी गरतोक में आठवें महीने की पूर्णिमा के दिन एक मेला लगता है, जिसे 'छोङ्दू' कहते हैं। उस मेले में चारों गवर्नर या उनके प्रतिनिधि अवश्य सम्मिलत होते हैं। उस अवसर पर खुले मैदान में घुड़दौड़ की प्रतिद्वंद्विता होती है, जिसमें पारितोषिक भी वितरण किया जाता है। प्रायः रुदोक प्रांत के घोड़े सर्वप्रथम होते हैं। इसके अतिरिक्त बंदूक की चाँदमारी और धनुर्विद्या के कई प्रकार के कौशल दिखाए जाते हैं। तिब्बतियों के यहाँ भी पर्व-त्योहार तथा अन्य अवसरों पर दूसरे पहाड़ी प्रांतों के समान नाच-गान होता है। हाथ में हाथ मिलाकर स्त्री और पुरुष अलग-अलग कतारों में नाचते हैं।

९. ॐ मणिपद्मे हुं

बोधिसत्व सर्वकरुणामय अवलोकितेश्वर[1] (चेनरेसी) या पद्मपाणि, अनंत प्रतिभावान अमिताभ बुद्ध के पुत्र हैं। अपने पिता के आशीर्वाद के बल से अवलोकितेश्वर ने ॐ मणिपद्मे हुं नामक षडाक्षरी मंत्र की सृष्टि की। इसीलिए इस मंत्र के अधिष्ठातृ देवता अवलोकितेश्वर हैं। आजकल इस मंत्र के अंत में प्रायः 'ह्री' भी जोड़ा जाता है। इसे संक्षेप में मणि-मंत्र कहते हैं। ग्युट (तंत्रशास्त्र) में जुङ (बीजाक्षर या धारिणी) और चकजा (मुद्रा) को बहुत महत्व दिया जाता है। तिब्बतियों का विश्वास है कि बीजाक्षरों को कुछ तांत्रिक प्रक्रियाओं के साथ उच्चारण करने से और संयम के साथ रहकर, ध्यानाभ्यास करने से अष्टसिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। और इष्टदेवता (यिदम) का साक्षात्कार तथा अंत में निर्वाण (न्याङ्डा) की प्राप्ति होती है। इस अनिर्वचनीय निर्वाण की प्राप्ति बिना भिक्षु हुए नहीं हो सकती। जो मनुष्य केवल विशिष्ट पुण्य कर्म करते हैं, वे सुखवती (देवछेन) नामक स्वर्ग को प्राप्त होते हैं। वह स्वर्ग ही एक महान सरोवर है, जिसमें अपूर्व सुंगधि वाले कमल खिले रहते हैं, जिन पर पुण्यात्मा आनंदोपभोग करते हैं।

---

1. अवलोकितेश्वर के 3, 8, 11 और 1000 मुख वाले चित्र और मूर्तियाँ भी पाई जाती हैं। सहस्र हाथ वाले अवलोकितेश्वर की मूर्ति में उतने ही हाथ और पैर भी होते हैं। साधारणतया ग्यारह मुँह के अवलोकितेश्वर (जिग्तेन गोबो या चुचिक छोङ) देखने में आते हैं। ऐसी एक मूर्ति ठुगोल्हो गोम्पा में है। ये शिर एक के ऊपर एक करके चार श्रेणियों में हैं। सबसे नीचे के तीन मुख श्वेत हैं। उनके ऊपर के तीन पीले, उनके ऊपर के तीन लाल और सब से ऊपर के दो नीले और लाल रंग के हैं।

तिब्बती शास्त्रों के अनुसार संसार के समस्त जीव सृष्टि में 6 वर्गों में विभाजित किए गए हैं। (1) सबसे उच्चश्रेणी के जीव देवता (ल्हा) हैं। ये छह देवलोकों में रहते हैं, जिनमें से चार अंतरिक्ष में हैं और दो भूमि पर हैं। (2) मनुष्य (मी)। (3) असुर (ल्हा-मा-यिन= जो देवता नहीं हैं)। ये बहुत बलवान दुष्ट जीव हैं। (4) पशु (डुडो या टुढो)। (5) नरक में रहने वाले कुछ लोग इन्हें प्रेत भी कहते हैं। (यिडगे या यिगडे)। ये बड़े अभागे जीव हैं। इनके मुँह सूई के छेद-जैसे होते हैं और पेट 12 मील ऊँचे हैं। इनकी भूख और प्यास कभी शांत नहीं होती। (6) रौरव नरक में रहने वाले (डाल) पूर्व जन्म में किए हुए पापों के लिए इनको निर्दयतापूर्वक अकथनीय दंड दिये जाते हैं।

अपने-अपने कर्मों (लस्) के अनुसार यमराज या धर्मराज (शिङ्डे या चोइग्येल्पो) जीवों को दंड देने के लिए उन-उन लोकों में डाल देते हैं। इन विविध लोकों में जन्म से छुटकारा पाने का एक मात्र उपाय यह है कि बुरी कामनाओं का विरोध करके मंत्र और तंत्र का अभ्यास करे। षडक्षरी मणि-मंत्र का जप करने से उपर्युक्त छह लोकों में आवागमन का अंत होकर निर्वाण-प्राप्ति होती है। तंत्रशास्त्र की रीति से मणि-मंत्र के अक्षरों के पृथक्-पृथक् वर्ण का निरूपण किया गया है; वे ये हैं—श्वेत, नील, पीत, हरित, रक्त और कृष्ण ह्री का वर्ण भी श्वेत कहा जाता है। इस मंत्र के छह अक्षर छह लोकों के सूचक हैं। इस मंत्र के विशुद्ध रूप को बिगाड़कर साधारण जनता अपभ्रंश रूप में 'ॐ मणि पेमे हूँ' उच्चारण करते हैं। इसके अतिरिक्त कम प्रसिद्ध मंत्र और भी हैं जैसे 'ॐ वज्रगुरु पद्मसिद्धि हुं', 'ॐ वज्रपाणिहुं' इत्यादि।

मणि-मंत्र के बीजाक्षरों का विवरण

सं0	1	2	3	4	5	6	7
बीजाक्षर	ॐ	म	णि	प	द्मे	हुं	ह्री
वर्ण	श्वेत	नील	पीत	हरित	रक्त	कृष्ण	श्वेत
लोक	देवता (ल्हा)	मनुष्य (मी)	असुर ल्हामायिन	पशु (डुडो)	नरक (यिडगे)	रौरव (डाल)	निर्वाण (न्यङडा)

प्रत्येक मंत्र की भाँति मणि-मंत्र का भी 'ॐ' शिर है, यह संबोधन का वाचक है। 'मणिपद्मे' या पद्म-मणि (पद्म-श्रेष्ठ) अवलोकितेश्वर का नाम है। हुं तांत्रिक बीज है, जो जय का सूचक है। अब ॐ मणिपद्मे हुं का सीधा अर्थ यह है कि "हे पद्मरत्न अवलोकितेश्वर! जय हो।' कितने ही तिब्बती लामाओं से मैंने पूछा, उन्होंने भी इसका यही अर्थ बतलाया। परंतु कई उत्साही भारतीयों ने इस मंत्र को खींच-खाँचकर इसके कुछ अन्य अर्थ बतलाए, जो इस प्रकार हैं—'नाभिस्थान में मणिपूर नामक जो पद्म है, उसमें विराजमान ओंकार रूप भगवान हैं, वह मैं हूँ'; 'षटचक्रों में श्रेष्ठ जो सहस्रार कमल है, उसमें विराजमान ओंकार रूप जो सदाशिव है, वह मैं ही हूँ'; 'यह मंत्र अजया गायत्री सोऽहम् का रूपांतर है'; इत्यादि-

इत्यादि।

यह मणि-मंत्र तिब्बत भर में बहुत सुविज्ञात और परम पवित्र मंत्र है। स्त्री-पुरुष, बूढ़े-बच्चे और भिक्षु-गृहस्थ, सब के सब इस मंत्र को सदा जपते रहते हैं। भारत में एक श्रोत्रिय ब्राह्मण गायत्री मंत्र का जितना जप करता है, उससे कई गुना अधिक साधारण तिब्बती इस मंत्र का जप करता है।

तिब्बत में स्त्री-पुरुष सभी के हाथ में रुद्राक्ष, लकड़ी, पत्थर, हड्डी या किसी अन्य प्रकार के 108 दाने की माला रहती है। प्रायः सभी लोग चलते-फिरते, बैठते मणि-मंत्र का जप करते रहते हैं। बीच-बीच में चाँदी या किसी और धातु के बने हुए दस-दस दाने की दो या तीन लड़ियाँ (उपमाला) लटकती रहती है, जिससे पहले से हजार की, दूसरे से दस हजार की और तीसरे से एक लाख की गिनती होती है। अधिक श्रद्धालु लोग एक हाथ से माला फेरते हैं और दूसरे से 'कोरलो' को घुमाते हैं। मणि-मंत्र को कागज पर दस सहस्र या एक लाख बार लिखकर दो-तीन अंगुल ऊँचे और उतने ही व्यास वाले चाँदी या किसी और धातु के चोंगे में रखकर उसके मध्य में एक कील रखकर नीचे से पकड़ने के लिए हत्था रख देते हैं। चोंगे पर एक छोटी-सी जंजीर लगी रहती है, जिसके अंतिम छोर पर एक घुंडी रहती है, जिसे 'कोरलो' या मणि कहते हैं। इसे सर्वदा दाहिनी ओर से घुमाते हैं। तिब्बतियों की धारणा है कि इस मणि को एक बार घुमाने से उसमें जितनी बार मंत्र लिखे गए हैं, उतनी बार मंत्र के जप करने का फल होता है। इस प्रकार के छोटे-बड़े कई चोंगे (बिना जंजीर के) मठों के द्वारों पर और भीतर लगाए जाते हैं। यात्रीगण मठों में जाते समय इन मणियों को सव्यप्रदक्षिणा करते हुए घुमाते हैं। कितने ही मठों में दो-दो गज के व्यास और तीन-तीन गज की ऊँचाई के चोंगे होते हैं। जिनमें करोड़ों बार मणि-मंत्र लिखे हुए कागज डाले हुए होते हैं। इस प्रकार बड़े मणि-चोंगों को 'कोरचेन' कहते हैं। मणि-चोंगों को पनचक्की के समान पानी में चलाए जाते हुए मैंने लदाख में देखा। सुनते हैं कि पूर्वी तिब्बत में भी इस प्रकार की पनचक्की के मणि-चोंगे बहुत हैं।

यह मंत्र पत्थरों, दीवालों, पहाड़ों, गुफाओं और गोम्पाओं के ऊपर चित्रित किया जाता है। इसे कपड़े पर छापकर झंडे या तोरणों में लगाते हैं। चपटे और गोल पत्थरों पर इस मंत्र को उभारकर या खोदकर दीवालों पर रखते हैं। इस प्रकार के छोटे-बड़े मणि-दीवाल गाँव में प्रवेश करने के पड़ावों, तीर्थस्थानों, मठों के जाने के मार्गों, पहाड़ के घाटों तथा किसी तीर्थ के प्रथम दर्शन के स्थानों में बना देते हैं। इन दीवालों की प्रदक्षिणा करने वाले पुण्यभागी समझे जाते हैं तथा इन पर मणि-पत्थरों के रखने वाले भी पुण्यशील माने जाते हैं। इस प्रकार की एक-एक मील लंबी, दो-दो गज ऊँची और चौड़ी दीवालों को मैंने लदाख की राजधानी लेह के पास देखा है।

10. सिंबिलिङ गोम्पा

तकलाकोट की मंडी के पास के पहाड़ की रीढ़ पर जोङ (गवर्नर) का दुर्ग है। मानसखंड

के मठों में तकलाकोट का सिंबिलिङ गोम्पा सबसे बड़ा है। यह शकपालिङ, शिमिलिङ और शिबिलिङ नामों से भी पुकारा जाता है। वह मठ गवर्नर के दुर्ग से बिल्कुल सटा हुआ है। इसके ऊपर से चारों दिशाओं के हरे-भरे खेत, बीच की छोटी-छोटी नहरें, अपनी सहायक नदियों के साथ करनाली, उत्तर में मांधाता और दक्षिण में भारत की सीमा पर स्थित हिमाच्छादित पर्वत-मालाओं के दृश्य बहुत ही सुहावने और मनोमोहक दिखाई देते हैं। पुरङ में सिद्दिखर आदि, मानसरोवर के ऊपर ठुगोल्हो आदि और कुछ अन्य स्थानों को मिलाकर इस गोम्पा की कुल सात-आठ शाखाएँ हैं। शाखाओं को मिलाकर इस मठ के अन्तर्गत 250 भिक्षु हैं, जिनमें से छह लामा और अवशिष्ट डाबा हैं। यह ल्हासा के डेपुङ विहार के अंतर्गत है। सिंबिलिङ का प्रधान लामा डेपुङ से तीन वर्ष के लिए नियुक्त होकर आता है। यहाँ पर छोटे-छोटे भिक्षुओं की पाठशाला है।

सिंबिलिङ मठ के दुवङ (देवागार) के भीतर की कोठरी से ऊँची वेदी के ऊपर ज्ञानमुद्रा में पद्मासनस्थित शाक्य थुब्बा (शाक्यमुनि) की मूर्ति है, जिसकी ऊँचाई छह फीट है। इस–पर सोने का पानी चढ़ाया हुआ है। प्रधान मूर्ति के सामने कई अन्य मूर्तियाँ, मक्खन की बत्ती और पानी से भरी हुई कई कटोरियाँ रखी हुई हैं। मूर्ति के ऊपर खतक लगे हुए हैं। एक पार्श्व में कुछ पुस्तकें हैं। दुवङ के बाहर के भाग में भिक्षुओं के बैठने के लिए गद्दियों की कतारें हैं। वर्ष भर में यहाँ पर कम-से-कम एक बार वृहत् पूजा, भोज, खेल-कूद, आध्यात्मिक या धार्मिक नाटकों का प्रदर्शन होता है। सिंबिलिङ मठ के धार्मिक नाटकों को 'तोर्ग्यक' कहते हैं; खोचार के धर्म-नाटकों को 'नमदोङ' और सिद्दिखर में इसे 'छेगे' कहते हैं। मठ की तीसरी मंजिल पर तंजूर, कंजूर तथा अन्य पुस्तकें भिन्न-भिन्न तीन कमरों में सजाकर रखी हुई हैं। इनके अतिरिक्त दूसरे देवघर हैं। गोम्पा में जब कोई प्रतिष्ठित लामा, अफसर या कोई अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति आते हैं, तो भिक्षुगण सब प्रकार के वाद्यों के साथ उनका स्वागत करते हैं। इसमें कई प्रकार के व्यापार, खेत, घोड़े, याक और भेड़-बकरी के रूप में बहुत-सी संपत्ति है। यह मठ इसके पहाड़ के ऊपर स्थित होने के कारण, आस-पास के गाँव वालों को बारी-बारी से बेगार में दूर से पानी पहुँचाना पड़ता है। बहुत अंशों में दूर के गाँव वालों पर इस मठ का शासन रहता है। पश्चिमी तिब्बत में इस मठ का स्थान थुलिङ मठ से दूसरा है। इसके पास ही लाल टोपी संप्रदाय वालों का साक्या गोम्पा है।

सिंबिलिङ मठ में जनरल जोरावर सिंह का शिर, दायाँ हाथ, एक बड़ी बंदूक, लोहे की कवच, टोपी आदि सुरक्षित रखे गए हैं। हवन और धर्म-नाटकों के अवसर पर बाहर निकालकर शिर और हाथ का प्रदर्शन किया जाता है। कुछ औरों का कहना है कि इसमें जोरावर सिंह का मांस और उनके सरदारों का शिर और हाथ मठ-प्रबंधक के पास रखे हुए हैं, जो तीन वर्ष में एक बार बाहर निकालकर दिखाए जाते हैं।

हिंदुओं की भाँति तिब्बती लोग भी बुद्ध भगवान और उनके पूर्व जन्मों के कई अवतार, बोधिसत्व, महाकाल, महाकाली, हयग्रीव (तमडिन) आदि देवताओं के अतिरिक्त कई देवी-देवताओं को और दुष्टात्माओं (असुर) को मानते हैं। दुष्टात्माओं से रक्षा करने वाले देवताओं

को 'ड्रगशेड' कहते हैं, जिनके हाथ में प्रायः पाँच आयुध पाए जाते हैं, (1) वज्र (दोर्जे), (2) कील (फुरबू), (3) त्रिशूल (खटम्), (4) पाश (थगपा) और (5) मनुष्य-कपाल (कपाला)। इनके अतिरिक्त पाँच पौराणिक राजाओं (कू-ङा-ग्येलपो) को मानते हैं—(1) बीहार ग्येलपो (मठों का रक्षक), (2) छोईचोङ ग्येलपो, (3) डोल्हा ग्येलपो, (4) लुवङ ग्येलपो और (5) टोकछोई ग्येलपो। देवासुर-संग्राम और समुद्र-मंथन और उससे हलाहल और अमृत को प्राप्त करना—आदि गाथाएँ इनके धर्म-ग्रंथों में भी वर्णित हैं। बड़े मठों में वर्ष भर में एक बार, नव वर्ष के दिन या अन्य अवसरों पर आध्यात्मिक या धार्मिक नाटकों का प्रदर्शन होता है, जिनमें प्रायः भिक्षु ही पात्र होते हैं।

इन नाटकों में देवता और राक्षसों के मुखड़ों को मुख पर लगाते हैं और लंबे-लंबे चोंगे पहनते हैं। राक्षसों के पात्र देवताओं से अधिक वस्त्र पहनते हैं, जिससे नाटक में देवताओं और मनुष्यों की मारपीट से बच सकें। नाटक के प्रारंभ में मंच पर देवता लोग बीच में बैठते हैं। उनकी दाहिनी ओर मनुष्य और बाँईं ओर राक्षस बैठते हैं। राक्षस मनुष्यों को अनेक प्रलोभन देकर किसी प्रकार बुरे कामों में उलझाने का बहुत प्रयत्न करते हैं। जब मनुष्य विवश होकर पतित होने लगते हैं, तो बचने के लिए देवताओं से प्रार्थना करते हैं। तब देवता तीरों से और मनुष्य लाठियों से राक्षसों को बुरी तरह से मार-मारकर भगाते हैं। देवासुर-संग्राम में इस प्रकार देवताओं की विजय हो जाने पर अंत में पुनः सब (देवता, मनुष्य और राक्षस) लोग स्टेज पर एकत्रित होकर देवताओं का यशोगान करते हैं। इस प्रकार के सुंदर आध्यात्मिक नाटकों की पाश्चात्य लोगों ने केवल अज्ञानता के कारण 'भूतनृत्य' (डेविल डांस) नाम रखा है और तिब्बतियों को निरा मूर्ख कहने लगे। इन नाटकों का वास्तविक तात्पर्य बिना समझे ऊपर-ही-ऊपर देखकर यथा-तथा टीका-टिप्पणी करना अज्ञता नहीं तो और क्या है?

जब कोई मंदिर, मठ, छोरतेन या किसी धार्मिक संस्था का भवन–निर्माण करना होता है, तो आधार-शिला डालने से पहले भू-शुद्धि और पूजा की जाती है। नींव में धूप, मक्खन, पैसा आदि वस्तुएँ छोड़ी जाती हैं। भवन पूरा होने पर पूजा-पाठ के साथ गृह-प्रवेश का उत्सव होता है। इस अवसर पर बिहार ग्येलपो की पूजा की जाती है।

11. खोचार गोम्पा

तकलाकोट से आग्नेय कोण में बारह मील नीचे करनाली नदी के बाँएँ तट पर कोचार या खोचारनाथ नामक गाँव में एक बड़ा मठ है, जो खोचार नाम से प्रसिद्ध है। ग्रंथों में इसका नाम खोरचक है। खोचारनाथ के सामने के पर्वतों से रोमा नामक एक वेगपूर्वक बहने वाली नदी करनाली में आकर गिरती है। उसके धक्के के कारण प्रतिवर्ष करनाली नदी गोम्पा की ओर आकर किनारे को काट रही है, जिससे सदा यह भय बना रहता है कि मठ बह न जाय। इसलिए गोम्पा के पास ही नदी के दो सौ गज ऊपर और नीचे पत्थरों से बाँध बनाए गए हैं। इस मठ में दो विशाल भवन हैं। एक भवन में दुवङ और चकङ हैं। इसके सामने एक बड़ी भारी ध्वजा है। समीप ही फाटक के सामने एक कुँआ है, जिसमें मठ के

देवताओं को चढ़ाया गया जल डाला जाता है। इस भवन के पहले द्वार के भीतर दो बड़े और कई छोटे-छोटे मणि-चोंगे हैं। आँगन के एक ओर की दीवाल पर देवी के इक्कीस अवतारों के चित्र बने हैं और दूसरी ओर खोचार का स्थल-पुराण लिखा हुआ है। दूसरे और तीसरे द्वार के मध्य पर सात-आठ फीट ऊँची भयंकर दाँतों वाली दो बड़ी मूर्तियाँ हैं। बाँई ओर की लाल मूर्ति तमडिन की है, जो अवलोकितेश्वर का उग्र रूप है। दाहिनी ओर की नीली मूर्ति छकदोर की है, जो अमिताभ बुद्ध का उग्र रूप है। दुवङ् में पहुँचते ही दाहिनी और बाँईं ओर दो-दो मूर्तियाँ छह-छह फीट की ऊँचाई की हैं। ये मूर्तियाँ चार दिग्पालों की हैं, जिनके नाम—शरछोक गेलबो (याकुरसुम-श्वेत), ल्होछोक गेलबो (फाकेफू-हरा), नुपछोक गेलबो (सेमीजङ-लाल) और चङछोक गेलबो (नमथोसे-पीला) है, जो क्रमशः पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, और उत्तर की दिशाओं के दिग्पाल हैं। दुवङ् में अष्टधातु (जिकिम्) विनिर्मित चार-पाँच फीट ऊँचे सुरम्य सिंहासन के पद्मों पर खड़ी हुई तीन मूर्तियाँ हैं। मध्य की मूर्ति मंजुश्री (जंबयङ) की हैं, जिसकी ऊँचाई आठ फीट और रंग पीला है। इस मूर्ति के दाहिने पार्श्व में अवलोकितेश्वर (चेनरेसी), जो उजले रंग के हैं और बाँएँ पार्श्व में वज्रपाणि (छानादोर्जे), जो नीले रंग के हैं, स्थित हैं। ये दोनों मूर्तियाँ सात-सात फीट की हैं। तीनों मूतियाँ चाँदी की बनी हैं। सिंहासन तथा मूर्तियों की शिल्प-कला दक्षिण भारत की है। ये बहुत ही सुंदर और सुडौल हैं और बहुत वर्ष पहले लंका से यहाँ लाई गई हैं। एक बार 1899 में और एक और दूसरे समय पर गोम्पा में आग लग जाने के कारण ये मूर्तियाँ कुछ अंशों में जल गई थीं, जो पीछे ल्हासा के शिल्पकारों से ठीक करवाई गईं। जिनके वंशज अब भी खोचार में विद्यमान हैं।

तिब्बतियों का कहना है कि जिस पत्थर की चट्टान पर ये अभी स्थित हैं, उसी से ये मूर्तियाँ दैवी महिमा से स्वयं उत्पन्न हुई हैं। ये स्वयंभू हैं, किसी मनुष्य ने इन्हें बनाया नहीं है। वे यह भी कहते हैं कि ये अब तक सात बार बोल चुकी हैं और इनके अब छह बार और बोलने के बाद संसार में प्रलय हो जायगा। इस प्रकार की आश्चर्यजनक बातों के कारण मूर्तियों के दर्शन के लिए ल्हासा से भी यात्रीगण यहाँ आते रहते हैं। ल्हासा के एक मठ में स्थित स्वर्ण की बुद्धमूर्ति और चाँदी की बनी हुई खोचार की तीनों मूर्तियाँ (खोचारसुम) वास्तव में एक ही स्वरूप, सत्त्व और माहात्म्य की हैं। चाहे जैसा भी पापी हो, यदि श्रद्धापूर्वक इनकी प्रदक्षिणा करता है, तो अगले जन्म में अवश्य मनुष्य योनि में उत्पन्न होता है।

सिंहासनस्थ कमल के तीनों नालों के मध्य में शङशङ नामक दो देवताओं की मूर्तियाँ हैं, जिनके शरीर स्त्री के और पैर गृद्ध के हैं। पार्श्व के दोनों नालों की मोड़ों में नाग-कन्याओं (लू) की दो मूतियाँ हैं, जिनके सिर पर सात सिर वाले फण के सर्प हैं। बाँईं ओर के देवता का नाम गाबो और दाहिनी ओर वाले का जोकपो है। बाँईं और दाहिनी ओर एक-एक सिंह और मयूर हैं, मध्य में सप्त रत्न (रिनछेन नादुन) की मूर्तियाँ हैं, जिनके नाम ये हैं—(1) चक्र (कोरलो), (2) मणि (नोरबू), (3) राणी (छुनमो), (4) कुबेर (लोंपो), (5) दिव्याश्व (ताछोक), (6) ऐरावत (लङपो), और (7) उत्तम नेता (मगपोन)। मंजुश्री और वज्रपाणि के मध्य में चाँदी की बनी हुई शेषशायी विष्णु की मूर्ति है। जिसे तिब्बती लोबेन-चोकरसुम

कहते हैं। यह मूर्ति मैसूर के महाराजा से ठाकुर प्रेमसिंह चौंदासी के भाई को मिली थी। उनकी मृत्यु होने पर ठाकुर प्रेमसिंह जी ने अपने भाई की स्मृति में इस मूर्ति को वहाँ चढ़ा दिया। प्रधान मूर्तियों की दाहिनी और बाँईं ओर आलमारियों में पाँच-पाँच फीट की छह और पाँच मूर्तियाँ रखी हुई हैं। कहते हैं कि ये भी अवलोकितेश्वर, मंजुश्री और वज्रपाणि की मूतियाँ हैं। ये 'नीमी सेजे नग्ये' (?) नाम से प्रसिद्ध हैं।

यात्रीगण दर्शन के लिए यहाँ बारहों महीने आते रहते हैं। भारत के भोटिए और हिंदू यात्री इन तीनों मूर्तियों को राम, लक्ष्मण और सीता की मानते हैं और बड़ी-बड़ी भेंट और पूजा चढ़ाया करते हैं। अखंड दीपक और भोग के लिए बहुत से द्रव्य, गाय, भेड़ और बकरियों को चढ़ाते हैं। पर बहुत ही मनोरंजक तथा हास्यास्पद बात यह है कि ये तीनों बौद्ध धर्म के बोधिसत्व की मूर्तियाँ हैं और तीनों पुरुष की प्रतिमाएँ हैं। मूर्तियों के सामने सीढ़ीदार चौकी है, जिसकी सबसे ऊपर की सीढ़ी पर सोने और चाँदी के अखंड दीप वर्ष भर निरंतर जलते रहते हैं। नीचे की सीढ़ियों में भली भाँति सजी-सजाई कटोरियों की कतारें सुशोभित हैं। कमरे के दोनों तरफ, दीवालों के पास छत तक लगी हुई आलमारियों में तंजूर की पुस्तकों के कतिपय वेष्टन सुसज्जित हैं। मूर्तियों के दाहिने पार्श्व के कोने में, ऊपर की मंजिल के एक छोटे से कमरे में नित्य पूजा का देवमंदिर (चकङ) है, जिसमें सुमादोर्जे युटुल नामक एक देवी घोड़े पर बैठी हुई स्थापित की गई है।

कैलास–पुराण में लिखा है कि सन् 1044 में जब आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान (अतिशा) बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ पुरङ गये थे, तो उन्होंने कैलास, अङ और खोचार तीनों स्थानों में एक ही दिन पूजा की थी, जिससे देवताओं ने उनपर प्रसन्न होकर सोना, चाँदी, पिरोजा और मूँगों को आकाश से बरसाकर आशीर्वाद दिया था। उन्होंने यहाँ चातुर्मास्य किया था। खोचारनाथ के मठ में एक टुलकु (अवतारी) लामा और पचास डाबा हैं।

गोङखङ या गोम्पा के दूसरे भवन में एक बहुत ऊँचा और विशाल हॉल है, जहाँ वर्ष भर में एक बार धार्मिक नाटकों का प्रदर्शन होता है, जिसे यहाँ 'नमदोङ' कहते हैं। भीतर प्रवेश करते ही दाहिनी ओर घास से भरे हुए जंगली याक और बाघ ऊपर छत से लटकाए हुए हैं। एक ओर एक बड़ा भारी मणि-चोंगा है। द्वार के सामने ही भीतर एक कमरे में मैत्रेय (चंबा[1] आने वाले बुद्ध) की बैठी हुई मूर्ति है, जिसकी ऊँचाई बीस-बाईस फीट है। इस मूर्ति की बाँईं बगल में एक छोटे–से कमरे में पलदेन कुरकी गेलबो (महाकाल) की, जिसके हाथ में मनुष्य-कपाल है और महाकाली (पलदेन ल्हमो) की, जिनके मुँह और हाथ में अंतड़ियाँ रखी हुई हैं, मूतियाँ हैं, जो भयंकर हैं। दोनों मूर्तियाँ काले वर्ण की हैं और उनके मुख ढके हुए हैं। इस कमरे से सटे हुए कमरे में विविध आसन और मुद्राओं में बैठे हुए सप्त बुद्धों की (सांगे-पावो-रप्दुन-ऋषि बुद्ध-बीर-सात) सात मूर्तियाँ हैं। वे ये हैं—

---

1. इसका चंपा उच्चारण भी करते हैं। ल्हासा में 80 फीट ऊँचाई की चंपा की मूर्तियाँ पाई जाती हैं।

(1) नमनङ्, (2) शाक्य थुब्बा, (3) चंबा, (4) मेक्यूपा, (5) रिङ्जुङ, (6) ओपामे और (7) थुँडुप। हिंदू यात्री इन्हें अगस्त्य आदि सप्तर्षि मानते हैं, परंतु ये मूर्तियाँ भिन्न-भिन्न मुद्राओं में बैठे हुए कश्यप बुद्ध, मैत्रेय बुद्ध और गौतम बुद्ध आदि सप्त बुद्धों की हैं। चंबा की बाँईं ओर की एक कोठरी में 'युम छेमो छुजु[1] साँगे' (माता-बड़ा-दिशा-दश-ऋषि) नाम की ग्यारह मूर्तियाँ ये हैं। (1) पूर्व (शर), (2) आग्नेय (शर-ल्हो), (3) दक्षिण (ल्हो), (4) नैर्ऋत (ल्हो-नुप), (5) पश्चिम (नुप), (6) वायव्य (नुप-चङ), (7) उत्तर (चङ), (8) ईशान (चङ-शर), (9) ऊर्ध्व या आकाश (तंक), (10) पाताल (योक)। जो इन दिशाओं के अधिदेवता हैं। इन्हें हिंदू यात्री एकदाश रुद्र मानते हैं। परंतु इनमें से बीच की मूर्ति देवी की है, अन्य पुरुष-मूतियाँ दिग्पालों की हैं। इस भवन के ऊपर के परकोटे में कंजूर और तंजूर की पोथियाँ भिन्न-भिन्न कोठरियों में सजाकर रखी हुई हैं। एक और कोठरी में जेचुनडोमा की मूर्ति है। कोठरी की दीवालों पर देवी के इक्कसी अवतारों के चित्र चित्रित हैं। खोचार गोम्पा से खोचार का स्थलपुराण (खोचार करछक) छपता है। 185 वर्ष पहले पूर्वीय तिब्बत के डोर गोम्पा के लामा खेंबो सोनम गेलजिन ने इसकी रचना की थी।

गोम्पा के संमीप ही कई धर्मशालाएँ और घर हैं। गाँव वहाँ से कुछ ऊपर है। गाँव के अंत में एक पर्वत के मूल प्रदेश में गोम्पा के लामा के एकांतवास की कुटी है। खोचारनाथ तकलाकोट से कुछ गर्म स्थान है। यह भूटान राज्य के अधिकार में है। गाँव से थोड़ी दूर पर करनाली नदी में पुल है, जिसके उस पार से नेपाल राज्य आरंभ हो जाता है। नेपाल से तकलाकोट की मंडी में जाने वाले व्यापारी खोचार होकर ही जाते हैं। खोचारनाथ से एक मील नीचे शर नामक एक गाँव है। पुरङ-दून में वही अंतिम गाँव है।

---

1. छोक च्यू।

अध्याय 5

कृषि और आर्थिक स्थिति

1. खेती

करदुङ गाँव से लेकर खोचार तक करनाली की दून को पुरङ या पुरङ–तकलाकोट दून कहते हैं। यह लगभग 12000 फीट की ऊँचाई पर स्थित है। तकलाकोट को मिलाकर इस दून में 50 गाँव हैं।[1] कैलास-मानसखंड में इस स्थान को छोड़कर खेती-बारी और कहीं नहीं होती। यहाँ जौ, मटर और सरसों की खेती होती है। कहीं-कहीं थोड़ी राई भी उत्पन्न होती है। पहाड़ी नदियों से छोटी-छोटी नहरों द्वारा जल लाकर खेतों की सिंचाई करते हैं। यहाँ वाले इन नहरों से लाए हुए जल को एकत्र कर छोटे-छोटे रूखे-सूखे पहाड़ों की मेखलाओं से आई हुई नहरों की दोनों तरफ उगी हुई हरी-हरी घासों और कहीं-कहीं पेड़ों को देखकर यात्रियों के मन आनंद में मग्न हो जाते हैं।

याक बोझ ढोने के काम में ही आते हैं। हल में नहीं जोते जाते। इसीलिए खेतों को झब्बू या घोड़ों से जोतते हैं। जौ और मटर की फसल को काटकर खलिहान में रखते हैं, फिर एक खंभा गाड़कर याकों को एक रस्से में बाँधकर अंतिम छोर पर घोड़े रखते हैं और घुमाकर दँवरी चलाते हैं। कहा जाता है कि ईस्वी की पहली शताब्दी के प्रारंभ में राजा पुदे गुर्ग्यल के काल में तिब्बत में खेती-बारी की प्रथा पहले-पहल चालू की गई थी। सम्राट स्रोङ्चेन ने 630-698 में मिट्टी के बर्तन, पनचक्की और करघों का प्रचलन किया। पुरङ के गाँवों में जहाँ-जहाँ पहाड़ी नदियों से लाई हुई नहरें हैं, वहाँ जौ और मटर पीसने के लिए पनचक्कियाँ बनी हुई हैं।

2. जंगली पशु

जंगली याक (डोङ), बरफानी चीता (यी),[2] जंगली घोड़ा (क्यङ या कियङ[2]) बादामी रंग या लाल रंग का भालू, जंगली बकरी (ङा या ना), जंगली भेड़ या बरड (गोआ या गुवा), एक प्रकार का बारहसिंघा (न्यन), हिरण (चो), घुरड़, भेड़िया (चंगू), एक प्रकार की लोमड़ी (हाजे), बंदर के आकार का बड़ा चूहा (प्यू या प्याँ), बिना पूँछ वाला चूहा (सीवी या छिपी), खरगोश (रिगोङ)—ये मानसखंड के जंगली पशु हैं।

ब्रह्मपुत्र के उद्गम पर कैलास के वायव्य कोण के डुङ-लुङ घाटी के ऊपरी भागों में समुद्रतल से 16000 फीट से अधिक ऊँचाई पर झुंड-के-झुंड जंगली याक पाए जाते

---

1. गाँवों के नाम परिशिष्ट 1 में देखिए।
2. कुछ लोग 'यी' को बड़ी जंगली बिल्ली और 'क्यङ' को जंगली गधा मानते हैं।

हैं। ये बहुत भयानक होते हैं। तिब्बती लोग मांस के लिए इनका शिकार करते हैं। किंतु इनका शिकार करना विपत्तियों को आमंत्रण करना है। जहाँ-जहाँ घासों के बड़े-बड़े मैदान हैं, वहाँ पर जंगली घोड़े झुंड-के-झुंड पाए जाते हैं। ये किसी प्रकार से भी पालतू नहीं बनाए जा सकते। इन्हें मांस के लिए नहीं मारते। सैनिक-शिक्षा प्राप्त घोड़ों की भाँति ये जंगली घोड़े प्रायः एक-एक, दो-दो पंक्तियों में वन में विचरते हुए पाए जाते हैं। घोड़ा सबसे आगे रहकर दल का नायकत्व करता है। कभी-कभी झुंड में बछेड़ी चौकड़ी भरती हुई इधर-उधर चली जाती है, तो नर-घोड़े पुनः पंक्तियों में ले वन में विचरते हुए पाए जाते हैं। नर–घोड़ा सबसे आगे रहकर दल का नायकत्व करता है। कभी–कभी झुंड में से घोड़ी या बछेड़ी चौकड़ी भरती हुई इधर–उधर चली जाती है, तो नर–घोड़े उन्हें हाँककर पुनः पंक्ति में ले आते हैं। नर-घोड़े प्रायः व्यस्त रहते हैं।

मानसखंड में बर्फानी चीते और लाल भालू बहुत कम हैं। परंतु अन्य भागों में अधिक संख्या में पाए जाते हैं। कई स्थानों में जंगली भेड़, बकरी, हिरन, बारहसिंघा, घुरड़ और बरड़ झुंड-के-झुंड पाए जाते हैं। तिब्बती लोग चर्म और मांस के लिए इनका शिकार करते हैं, जो मंडियों में बिकने के लिए आते हैं। भेड़िए तो हर जगह होते हैं, ये भेड़-बकरियों को बहुत हानि पहुँचाते हैं। लोमड़ी का चमड़ा टोपी बनाने के काम में लाया जाता है। बर्फानी चीते के चमड़े को पाश्चात्य नारियाँ गले में पहनती हैं, इसलिए इसका मूल्य 10 से लेकर 50 रुपए तक होता है। बड़े और छोटे चूहे शीतकाल में बरफ के नीचे अपने बिलों में चार-पाँच महीनों तक लंबिका निद्रा में पड़े रहते हैं। बड़े चूहों का मेद और चमड़ा गठिया के रोग में औषधि के काम में आता है। छोटे चूहे शीतकाल के लिए ठुमा की जड़ को अपने बिलों में बड़े परिश्रम से संग्रह करते हैं, जिसको गरीब तिब्बती खाने के लिए उठा ले जाते हैं। जहाँ झाड़ियाँ रहती हैं, वहाँ खरगोश पाए जाते हैं। मानसरोवर, राक्षसताल और कुछ नदियों में मछलियाँ होती हैं।

मानसखंड में हंस, दो-तीन प्रकार की बतखें, सारस, चील्ह, गृद्ध, कौआ, कबूतर, गौरैया और दो-एक अन्य पक्षियों के अतिरिक्त दूसरी जातियों के पक्षी विशेष नहीं पाये जाते। केवल कैलास के दक्षिणी तट में 17000 फीट की ऊँचाई पर तथा अन्य स्थलों में तीतर पाए जाते हैं। वर्षा ऋतु में सरोवर के किनारों पर काले मच्छरों के झुंड उड़ते रहते हैं। ये मच्छर न काटते हैं और न मलेरिया ही फैलाते हैं। इनके मारने पर पेट से रक्त न निकलकर एक हरा-सा पदार्थ निकलता है। कहते हैं कि तिब्बत में एक लाल रंग का कौआ होता है, जिसे हाथ में रखने से मनुष्य अदृश्य हो जाता है।

3. कस्तूरी-मृग

कस्तूरी-मृग तिब्बती भाषा में ला और हिमालय प्रांतों में कस्तूरा, रौंस, बीना आदि नामों से प्रसिद्ध है। इसे फारसी में मुश्क और अरबी में मिश्क कहते हैं। यह विशेषकर हिमालय, तिब्बत, आमूर, मध्य एशिया, साइबेरिया और कोरिया के प्रांतों में 8000 फीट से 12000 फीट की ऊँचाई पर पाया जाता है। यह लगभग 2 फीट ऊँचा और 3 फीट

लंबा, हिरन जाति का सबसे छोटा पशु है। परंतु इसके सींगें नहीं होतीं। इसकी पूँछ दो अंगुल से अधिक नहीं होती। कान चार अंगुल के होते हैं। पहाड़ों में भी यह बहुत वेग से दौड़ता है। नर के ऊपरी जबड़े में दो-तीन अंगुल लंबे दो दाँत होते हैं। इसकी श्रवण-शक्ति बड़ी तीव्र होती है। रंग भूरा और पेट तथा नीचे के भाग सफेद होते हैं। किसी-किसी का रंग बादामी-पीला होता है। बच्चों के हिरन–जैसे धब्बे होते हैं। बाल हलके, गूदेदार और गद्दी–जैसे (पिथ) होते हैं। बालों की जड़ आधी से अधिक सफेद होती है। यह बुरूस (रोडोडेंड्रन), जूनिपर आदि झाड़ियों में तथा चट्टानों की आड़ में रहता है और अपने वासस्थान को शीतकाल में भी नहीं बदलता है। यह फूल, पत्ते और घास खाता है। चलते समय छलाँगें मारकर चलता है। कभी-कभी उसकी छलाँग 50-60 फीट लंबी होती है। खरगोश की भाँति कभी झुंडों में यह नहीं रहता, यहाँ तक कि संभोग की ऋतु में कुछ दिनों को छोड़कर जोड़े भी साथ नहीं रहते।

संस्कृत ग्रंथों में कस्तूरी[1] मृगनाभि, मृगमद, मुष्कजा आदि नामों से प्रसिद्ध है। कस्तूरी–मृग की जिस ग्रंथि में कस्तूरी रहती है, उसे 'कस्तूरी का नाभा' या केवल 'नाभा' कहते हैं। संस्कृत में मद का अर्थ है वीर्य और मुष्क का अर्थ है अंडकोश, इसलिए साधारणतया लोगों का यह विश्वास है कि कस्तूरी नाभि से निकलती है। कुछ औरों का मत है कि कस्तूरी मृग के अंडकोश से निकलती है और वह मृग का वीर्य है। मैं कस्तूरी की उत्पत्ति के बारे में गत दस वर्षों से परिशीलन कर रहा हूँ, जिसकी समाप्ति दो वर्षों में होने वाली है। कस्तूरी–मृग में लिंग के पास एक विशेष ग्रंथि में कस्तूरी होती है, जो केवल नरों में पाई जाती है। इस ग्रंथि में एक छोटा–सा छेद होता है, जो लिंग के पास ही खुलता है, इसी कारण से नर के मूत्र में कस्तूरी की गंध पाई जाती है। जहाँ कस्तूरी की ग्रंथि होती है, वहाँ पेट पर सूजा हुआ-सा होता है। कस्तूरी की ग्रंथि का अंडकोश से कोई संबंध नहीं है। मृग के मांस में कस्तूरी की सुगंधि नहीं होती।

जहाँ तक मेरी गवेषणा है, कस्तूरी मृग की नाभि से नहीं निकलती, प्रत्युत यह उसी की समीपवर्ती ग्रंथि का एक प्रकार का स्राव है। नर और मादा—दोनों में नाभि होती है। पहले तो नाभि से कोई स्राव होता ही नहीं, यदि हो भी जाय, तो कस्तूरी नर की ही नाभि से क्यों निकलती है? इसलिए मानना पड़ेगा कि कस्तूरी नाभि का स्राव नहीं, प्रत्युत उससे भिन्न उसकी समीपवर्ती ग्रंथि का स्राव है। यही कारण है कि शिकारी लोग तथोक्त ग्रंथि और नाभि को सन्निकट देखकर उनके अंतर को अलग नहीं कर सकते और साधारणतया ग्रंथि को भी नाभि ही समझ लेते हैं। उनके इस भ्रम से साधारण लोगों में भी कस्तूरी का मृग की नाभि से निकलने वाली बात फैल गई है। कस्तूरी को तिब्बत में 'ल्हरचे' कहते हैं।

शिकारियों का कहना है कि अन्य जंतुओं के विपरीत, नर कस्तूरी-मृग कभी काम-दशा में मृगी के पीछे नहीं चलता, प्रत्युत मादा ही संभोग की ऋतु में नर मृग के पीछे लचती

---

1. 'कसति गन्धोऽस्याः' जिसकी गंध फैलती है। कस्तूरी–हिरण को संस्कृत में पुष्कलक और योजनगंधी भी कहते हैं, क्योंकि उसकी सुगंध बहुत दूर तक फैलती है।

है। और इस प्रकार कामोद्दीप्ति शांत होने पर एक-दूसरे का साथ छोड़ देते हैं। दिसंबर के मध्य से लेकर फरवरी के मध्य तक इनके संभोग की ऋतु है। गर्भवती होने के 5$\frac{1}{2}$ महीने पश्चात जून मास में मृगी बच्चा देती है; कभी-कभी दो बच्चे भी होते हैं। बच्चे प्रायः पहाड़ की दरारों या झाड़ियों के नीचे खड्डों में रखे जाते हैं। दो बच्चे हों तो मृगी उन्हें एक स्थान पर न रखकर अलग-अलग स्थानों में रखती है। जब बच्चा दो महीने का हो जाता है, तो मृगी उसे हटा देती है। एक वर्ष की मृगी गर्भ धारण करने के योग्य हो जाती है। इतने दिनों से कस्तूरी के लिए प्रतिवर्ष सैकड़ों मृगों का वध होने पर भी कस्तूरी-मृग के नाश न होने का कारण यह है कि कस्तूरी के लिए नर मृग मारा जाता है और मादा एक वर्ष पूरा होते ही गर्भधारण के योग्य हो जाती है। हिमालय और तिब्बत के कई भागों में इसे बंदूक से मारते हैं या खड्ड या जालों में फँसाते हैं। प्रायः शरद ऋतु में जब पेड़ और झाड़ियों के पत्ते झड़ जाते हैं, तब शिकारी इनका शिकार करने जाते हैं। हॉग्सन, ऐडम्स आदि कई पाश्चात्य जंतु-शास्त्रज्ञ लिखते हैं कि भोग की ऋतु में ही—अर्थात् जनवरी के महीने में—मृग में कस्तूरी रहती है, अन्य ऋतुओं में नहीं। प्रायः भोट आदि हिमालय के पहाड़ों में शिकारी लोग अक्टूबर और नवंबर में मृग का शिकार करने जाते हैं। जहाँ तक मैंने देखा, बारहों महीनों में शिकार किए हुए कस्तूरी-मृगों में कस्तूरी पाई गई।

एक वर्ष के बच्चे में कस्तूरी नहीं पाई जाती। दूसरे वर्ष दूध के समान रहती है। तीसरे वर्ष से अधिक आयु वालों में अच्छी कस्तूरी रहती है। शिकारियों का कहना है कि हिरण को मारते ही नाभा को न निकालें, तो कस्तूरी खराब हो जाती है। हिरण को मारने के बाद कस्तूरी-ग्रंथि को (जिसका निचला भाग पेट के चमड़े से जुड़ा रहता है) आस-पास के चमड़े के साथ काटकर उसी में ग्रंथि को बाँधकर सी लेते हैं। इसी को 'कस्तूरी का नाभा' या केवल 'नाभा' कहते हैं। प्रायः नाभा के ऊपर के लिंग को काट देते हैं और दारमा-जैसे कुछ प्रांतों वाले रहने देते हैं।

प्रायः एक-एक नाभे में आधे तोले से ढाई तोले तक कस्तूरी रहती है। 'इनडिजेनस ड्रग्स ऑफ़ इंडिया' नामक पुस्तक में कर्नल चोपड़ा लिखते हैं—"एक पूर्ण आयु के हिरण से दो औंस या पाँच तोला कस्तूरी निकलती है।" गत दस वर्षों में मैंने लगभग 400 नाभाओं को देखा, परंतु एक में भी इतनी कस्तूरी नहीं मिली। जहाँ तक मैंने पाया, एक नाभा में 3$\frac{3}{4}$ तोला से अधिक कस्तूरी नहीं मिली। बड़ी आयु के हिरण के नाभा में कस्तूरी दानेदार या गुठलीदार होती है। हिरण जितना ही बड़ा हो, कस्तूरी की गुठलियाँ भी उसी अनुपात से बड़ी होती हैं। ये गुठलियाँ रीठे के बीज के समान होती हैं। गुठलीदार कस्तूरी सबसे श्रेष्ठ मानी जातीं है। इस प्रकार के बड़े गुठलीदार नाभे बहुत कम मिलते हैं।

कस्तूरी का रंग गाढ़ा बैंगनी या बादामी होता है और स्पर्श में यह स्निग्ध होती है। लगाने से कागज पर इसका पीला रंग चढ़ जाता है। एक रत्ती कस्तूरी सहस्रों घनगज के वायुमंडल को सुगंधित कर देती है, तथापि वह तौल में बहुत नहीं घटती। कस्तूरी की सुगंधि में एक विशिष्ट प्रकार की स्थायी और अनुपम सुगंधि रहती है। अन्य सुगंधित द्रव्यों में इसकी

सुगंधि बहुत अंतरगामिनी और टिकाऊ होने के कारण 'सेंट' और इत्रों में इसका बहुत प्रयोग होता है। विशेषकर अन्य सुगंधित द्रव्यों की सुगंधि को पक्का करने के लिए इसे काम में लाते हैं।

कस्तूरी के एक तोले का मूल्य शिकारी के यहाँ 15 रुपए से लेकर देशी व्यापारी के यहाँ 80 रुपए तक होता है। ताजी कस्तूरी 6 महीने बाद वजन में आधा तक घट जाती है। प्रायः ऐसा देखा गया है कि बेचने वाले शिकारी या व्यापारी, बेचने के लिए लाने से पहले नाभे को कुछ दिनों तक गीली मिट्टी में दबा देते हैं, क्योंकि ऐसा करने से नाभा ताजा दिखाई पड़ता है और कस्तूरी की तौल बढ़ जाती है। मैंने कस्तूरी की तौल बढ़ाने के लिए नाभाओं को सचमुच पानी में भिगोते हुए कलकत्ते में देखा है। असली कस्तूरी के नाभे या खुली हुई कस्तूरी मानसखंड के तकलाकोट मंडी में और अल्मोड़े जिले के जौलजीबी और बागेश्वर के मेलों में मिल सकती है। अमृतसर और कलकत्ता में भी कस्तूरी नाभाओं की बिक्री के केंद्र हैं। नेपाल, ग्यांची, शिगर्ची और ल्हासा प्रांत के नाभे कलकत्ता की दूकानों में और गढ़वाल, कांगड़ा और शिमले के पहाड़ों के नाभे अमृतसर की दूकानों में जाते हैं।

तिब्बत की कस्तूरी सबसे श्रेष्ठ और नेपाल की सबसे निकृष्ट मानी जाती है, किंतु भोटिया शिकारियों में इसके बारे में कई मत हैं। जैसे अधिक ऊँचाई पर हिमालय में उत्पन्न होने वाली औषधियाँ अधिक गुणकारी होती हैं, वैसे ही ऊँचाई के कारण तिब्बत की कस्तूरी को उत्तम मानने में कुछ तथ्य हो सकता है। भावप्रकाश नामक आयुर्वेदिक ग्रंथ में कस्तूरी तीन प्रकार की वर्णित है—कामरूप, नेपाल और काश्मीर, जो क्रमशः काली, नीली और पीली होती हैं। कामरूप की कस्तूरी उत्तम और काश्मीर की निकृष्ट मानी गई है। कई प्रांतों की कस्तूरी का निरीक्षण और प्रयोग करने के पश्चात मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि हिमालय के सभी प्रांतों की और तिब्बत की कस्तूरी एक ही प्रकार और एक ही मेल की हैं। कस्तूरी की श्रेष्ठता या निकृष्टता मृग के बड़े या छोटे होने पर, अथवा उसमें कम या अधिक मिलावट होने पर निर्भर है, किसी देश–विशेष पर नहीं। कस्तूरियों में गुठलीदार सबसे उत्तम होती है, उससे कम गुणकारी दानेदार और उससे कम चूरेदार होती है।

आयुर्वेदिक औषधियों में कस्तूरी का बहुत प्रयोग होता है। यह बहुत मूल्यवान और कठिनता से प्राप्त होने वाली औषधि है। जो कोई वस्तु इसके संसर्ग में आती है, उसे यह एकदम अपनी तीव्र सुगंधि से सुगंधित कर देती है। इन्हीं सब कारणों से प्रायः वास्तविक कस्तूरी में सूखे मांस के टुकड़े और खून मिला लेते हैं। और कभी-कभी नाभा को बिना खोले ही रक्त से भर देते हैं। कुछ काबुली, गढ़वाली और खंपा लोग खाली नाभाओं को कस्तूरी के व्यापारियों से मोल लेकर उनको खून, मांस के टुकड़े, या किसी रद्दी वस्तु से भर देते हैं और मांस या गोंद से बड़ी चतुरता से बंद कर देते हैं। खाली नाभा की झिल्ली की सुगंधि के कारण उसमें भरी हुई नकली वस्तु से भी कस्तूरी की गंध आ जाती है। ये लोग कभी-कभी थोड़ी-सी कस्तूरी को किसी अन्य पदार्थ में मिलाकर उसको कस्तूरी-मृग के चमड़े में बाँधकर पूरे नकली नाभा को ही तैयार कर लेते हैं। उक्त रीति से बनाए हुए

नकली नाभा को शहरों में लाकर कम-से-कम 1 रुपए से लेकर अधिक से अधिक दाम पर बेंचकर लोगों को ठग लेते हैं। इसलिए कस्तूरी को अविश्वसनीय स्थानों में मोल लेने पर लोग धोखा खा जाते हैं। एक साधारण व्यक्ति के लिए कस्तूरी को विश्वसनीय व्यक्ति या स्थानों से या कस्तूरी की परीक्षा में निपुण व्यक्ति द्वारा मोल लेने के अतिरिक्त असली और नकली को पहचानने की दूसरी कोई युक्ति नहीं।

कुछ लोगों का कहना है कि नाभी से निकाली हुई ताजी कस्तूरी को सूँघने से नाक से खून बहने लगता है, परंतु इस बात पर मैं विश्वास नहीं कर सकता; क्योंकि मैंने कई नाभाओं को काटकर सूँघा, पर नाक से रक्त कभी नहीं निकला। हाँ, यह हो सकता है कि किसी व्यक्ति की नासिका की रक्तवाहिनी धमनियों के अग्रभाग की दुर्बलता के कारण रक्त के चढ़ाव से खून निकल आया हो। कई धोखेबाज कस्तूरी विक्रेताओं को असली या नकली कस्तूरी में लाल रंग मिलाते हुए मैंने देखा है। इस प्रकार की कस्तूरी का नास लेने से रक्त-जैसा लाल पानी निकलता है, जिसको देखकर अनभिज्ञ और साधारण ग्राहक उसे बहुत उत्तम समझते हैं।

कर्नल चोपड़ा लिखते हैं—"कस्तूरी-मृग जब मारा जाता है, तो कस्तूरी से निकली हुई गंध से शिकारियों की आँख, कान और ज्ञानवाहिनी शिराओं (नेर्व्स) पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।"[1] मैंने कई शिकारियों से इस विषय पर बातें कीं और स्वयं भी देखा, परंतु कस्तूरी की गंध का बुरा प्रभाव आँख, नाक और शिराओं पर कहीं नहीं पाया। जब एक रत्ती कस्तूरी खिलाने पर भी कर्नल साहब ने शरीर पर कुछ प्रभाव नहीं देखा, मारते समय आई हुई सुगंधि से आँख, नाक और शिराओं का प्रभावित होना कैसे लिखा, यह आश्चर्य की बात है।

कस्तूरी जल में उबालने से 50 प्रतिशत, अलकोहल में 10 प्रतिशत और 'ईथर' में बहुत ही कम घुलती है। सन् 1842 में मारग्रफ ने पहले-पहल कृत्रिम कस्तूरी बनाने का यत्न किया, परंतु सन् 1889 में जर्मन डॉक्टर अलबर्ट बावर ने कृत्रिम कस्तूरी बनाकर पेटेंट कराया। कृत्रिम कस्तूरी में कस्तूरी की सुगंधि तो होती है, किंतु उसमें औषधि-गुण नहीं होता।

कस्तूरी ऊष्ण-वीर्य की औषधि है—अर्थात् शरीर में गर्मी पहुँचाती है। शारीरिक ढीलेपन की अवस्था में प्रयोग करने से वह हृदय को बल प्रदानकर उत्साह को बढ़ाती है। शारीरिक दुर्बलता में, साधारण नपुंसकता में, हलके ज्वर में, पुरानी खाँसी में, फेफड़ों की शिकायत, मूर्छा और मिरगी आदि रोगों के लिए यह बहुत गुणकारी औषधि है। नवप्रसूता स्त्रियों को भी यह दी जाती है। यह एक उत्तम वाजीकरण और वीर्य-स्तंभक औषधि है। इस उद्देश्य से सेवन करने वालों को कई अन्य बाजारू औषधियों की अपेक्षा यह श्रेष्ठ है और अधिक गुण प्रदान करती है। यह मकरध्वज आदि औषधियों के साथ सेवन की जाती

1. कर्नल चोपड़ा, 'इनडीजेनस ड्रग्स ऑफ़ इंडिया'।

है, ताकि उन औषधियों का गुण अधिक हो जाय। रसेंद्रसार-संग्रह और भावप्रकाश आदि आयुर्वेदिक ग्रंथों में 'स्वल्प कस्तूरी भैरवरस', वृहत् कस्तूरी भैरवरस', 'मृगनाभ्यादिरवलेह' आदि योग दिए गए हैं। इस प्रकार आयुर्वेद में इसका बहुत प्रयोग है।

कस्तूरी का गुण शरीर में शीघ्र पहुचाने के लिए $\frac{1}{4}$ ग्रेन और $\frac{1}{2}$ ग्रेन 'मस्क इन ईथर' के इनजेक्शन तैयार हो रहे हैं। इसका टिंचर भी बन रहा है। बहुतों का मत है कि कस्तूरी की सुगंधि उसके सेवन की भाँति कामोद्दीपक है, परंतु यह कहाँ तक सत्य है मैं नहीं बता सकता। क्योंकि सुगंधित द्रव्य या धूप धर्मसंस्थाओं और विलासगृहों में दोनों स्थानों में प्रयोग किए जाते हैं। वैज्ञानिक लोग इस पर प्रकाश डाल सकते हैं।

कहा जाता है कि पाश्चात्य देशों में कस्तूरी का प्रचार पहले-पहल अरब वालों ने किया था। सन् 1189 में अरब के बादशाह सलादीन ने ग्रीस के बादशाह को कस्तूरी भेंट की थी। कस्तूरी को फारसी में मुश्क और अरबी में मिश्क कहते हैं। अंग्रेजी का 'मस्क' (कस्तूरी) शब्द उन्हीं शब्दों से बना है। संस्कृत में इसे मुष्कजा कहते हैं, क्योंकि कस्तूरी को मुष्क (अंडकोश) से निकली हुई मानते हैं। इससे स्पष्ट है कि फारसी और अरब लोगों ने मुश्क और मिश्क शब्दों को संस्कृत से ही लिया है। फारस और अरब में कस्तूरी पहले-पहल भारत और चीन से ही गई। अब भी तिब्बत से कस्तूरी बहुत परिमाण में चीन जाती है और तिब्बत से निर्यात होने वाली वस्तुओं में यह प्रमुख वस्तु है। पाश्चात्य देशों में जाने वाली कस्तूरी में से लगभग 80 प्रतिशत कस्तूरी तिब्बत की है।

भोटिया औरतें कस्तूरी के दाँत की जड़ पर चाँदी की टोपी लगवाकर गुच्छों में आभूषण की तरह पहनती हैं। कस्तूरी के चमड़े से बाल शीघ्र गिर जाते हैं, इसलिए भोटिए चमड़े से बालों को खुरचकर गद्दियों में भर देते हैं। और इन गद्दियों को हलके होने के कारण प्रयाण करते समय घोड़ों पर डाल देते हैं और ठिकाने पर पहुँचकर उससे आसन का काम लेते हैं। कस्तूरी की घास और कस्तूरी की भिंडी आदि वस्तुओं में वास्तव में कस्तूरी या कस्तूरी की सुगंधि नहीं रहती, अतएव वे नाम व्यर्थ और भ्रमोत्पादक हैं।

मानसखंड में कस्तूरी-मृग[1] बहुत कम हैं, परंतु तिब्बत के अन्य प्रांतों में तथा भोट प्रांत में ये बहुत होते हैं।

4. पालतू पशु

यहाँ के प्रधान पालतू पशु याक (बैल), डेमो, (चँवरी गाय), झब्बू, खच्चर, गदहा, भेड़ और बकरी हैं। भोटियों में एक कहावत है कि 'भेड़, बकरी और याक तिब्बतियों की संपत्ति और खेती है।' लकड़ी के अभाव के कारण पशुओं के लिए घर न होने से कड़ाके

1. कस्तूरी–मृग तथा कस्तूरी के संबंध में ग्रंथकार कई वर्षों से अन्वेषण कर रहा है और कार्य पूरा हो जाने पर एक विशेष लेख प्रकाशित करने का उसका विचार है।

की सर्दी में भी पशुओं को बाहर ही रहना पड़ता है। भेड़ें और बकरियाँ शीतकाल में बच्चे देती हैं। उस समय कड़ी सर्दी पड़ने के कारण एक रात में तीस-तीस बच्चे तक मर जाते हैं। इसलिए बहुधा बच्चों को तंबू के भीतर कंबल ओढ़ाकर रखते हैं। सात-आठ वर्ष में एक बार, बर्फ गिरने से मैदानों की घास और डमा की झाड़ियों के कई दिनों तक बर्फ के नीचे दबे रहने के कारण सहस्त्रों पशु चारे के अभाव में जहाँ-के-तहाँ मर जाते हैं। कुछ लोग घरों में बिल्लियाँ पालते हैं। कुछ वर्षों से तकलाकोट के जोङपोन अंडे के लिए कुक्कुट पालने लगे हैं। कई गाँवों में बतखें भी पाली जाती हैं।

5. याक

याक तिब्बती बैल और डेमो तिब्बती गाय है। शीतदेश में रहने के कारण उनके बाल दो-ढाई फीट लंबे और झबरीले होते हैं। वे आकृति में पूर्णतः यहाँ की भैंस-जैसे होते हैं। इनमें से कुछ सफेद, काले और कुछ मिश्रित रंग के होते हैं। हिंदी में याक के लिए चँवर बैल और डेमो के लिए चँवरी गाय या सुरागाय शब्द का प्रयोग किया जाता है। पर साधारणतया चँवर तथा चँवरी दोनों 'याक' के नाम से ही प्रसिद्ध हैं। चँवर को लादने के काम में लाते हैं, चँवरी को नहीं। चँवरी अधिक-से-अधिक दो सेर तक दूध देती है। याक की पूँछ झबरीली होती है। उसे चँवर कहते हैं। इसके सिरे पर चाँदी का हत्था लगाकर भारत के मंदिरों में पूजा के समय काम में लाते हैं। याक दो-तीन मन का भार अच्छी तरह से ढोकर ले जाता है। सोलह-सोलह और सत्रह-सत्रह हजार फीट की ऊँचाई पर जहाँ मनुष्य खाली रहकर भी पग-पग पर हाँफने लगते हैं, यह बड़ी सुगमता से पत्थरों के बीच होकर चला जाता है। इसके पैर का निक्षेप बहुत दृढ़ और पक्का होता है। कुछ याक बिना सींग के भी होते हैं।

याक दस हजार फीट से नीचे के प्रदेशों की गर्मी और मोटी हवा को सहन नहीं कर सकते। ढीठे होने के कारण ये जोतने के काम में नहीं आते। भारत के बैल यहाँ के ऊँचे प्रदेशों की ठंढी और पतली वायु को सहन नहीं कर सकते। तिब्बती बैल (याक) और भारत की गाय के संयोग से उत्पन्न हुए मिश्रित जाति के पशु को झब्बू कहते हैं, जो तिब्बत-जैसे ऊँचे देश की ठंढी जलवायु और भारत-जैसे निम्नभूमि की मोटी वायु और गर्मी को सहन कर लेते हैं। इसे हल चलाने और बोझा ढोने के काम में लाते हैं। इसलिए तिब्बत जाने वाले भोटिए व्यापारी और पुरङ के हूणिए भी पर्याप्त संख्या में झब्बू रखते हैं। बचपन में ही इनकी नाक छेदकर उसमें लकड़ी का कड़ा पहना देते हैं, ताकि आवश्यकता पड़ने पर उसमें रस्सी लगाई जा सके। इस प्रकार के याक या झब्बू को 'नाबा' या 'नाभा' कहते हैं। जो सवारी के काम में लाए जाते हैं।

याक के ऊन से एक-एक फुट चौड़ी पट्टियों को बनाकर रहने के लिए तंबू बनाए जाते हैं। ये तंबू बहुत टिकाऊ होते हैं और दिन भर भीतर जलती हुई आग के धुएँ का प्रभाव इन पर शीघ्र नहीं पड़ता। इसके अतिरिक्त इनके ऊन से रस्सी भी बनाई जाती है, जो याक या बोझों के बाँधने के काम में आती है।

6. भेड़-बकरियाँ

ऊन उत्पन्न करने वाले देशों में से तिब्बत भी एक प्रधान देश है। मानसखंड और तिब्बत के अन्य भागों से प्रतिवर्ष सहस्त्रों मन ऊन भारतवर्ष आता है। बंबई और उत्तरी भारत की सभी ऊनी मिलों को विशेषकर तिब्बती ऊन ही भेजा जाता है। कभी-कभी यहाँ का ऊन इंग्लैंड, अमेरिका, जापान आदि देशों में भी भेजा जाता है। यहाँ के ऊन की उत्पत्ति यदि आधुनिक वैज्ञानिक और पारिश्रमिक पद्धतियों से बढ़ाई जाय, तो तिब्बत भी स्विटजरलैंड के समान संसार के सबसे बड़े और उत्तम ऊन उत्पन्न करने वाले देशों में अग्रणी होगा। यहाँ के लाखों भेड़-बकरे ऊन देने के अतिरिक्त तिब्बत से भारत आने वाले हजारों मन सोहागा और नमक तथा भारत से तिब्बत जाने वाले अनाज, चाय, गुड़ इत्यादि वस्तुओं को रात-दिन हिमालय में ढोते रहते हैं। बकरी का ऊन भेड़ के ऊन से कड़ा होता है। इसलिए उसके ऊन से फाँचे [1] बनाते हैं। भेड़, बकरी तथा उनके बच्चों के चमड़े से शीतकाल में पहनने के लिए भक्कू या पोस्तीन बनाए जाते हैं। भारत आते समय दुर्गम हिमालय की पर्वतमालाओं के हिमाच्छादित घाटों को लाँघकर, भरे हुए फाँचों से लदी हुई रात-दिन टेढ़े-मेढ़े, ऊँचे-नीचे तथा संकीर्ण पहाड़ी मार्गों में सहनशीलता के साथ धीरे-धीरे जाने वाली भेड़-बकरियों की कतारें ठीक मालगाड़ी की भाँति प्रतीत होती हैं। कहीं घास के अंकुरों को खाकर, कहीं मुँह भर चरती हुई, भोटिए व्यापारियों की सीटियों से इधर-उधर दौड़ती हुई, गले में बँधी हुई छोटी-बड़ी घंटियों के शब्दों से जंगलों को प्रतिध्वनित करती हुई तथा अपनी खुरों से उड़ती हुई धूलि के छोटे-छोटे मेघों का निर्माण करती हुई, ये अपने आगमन को दूर से ही सूचित करती हैं। इन भेड़-बकरियों की कतारों का देखना आँखों को बहुत प्रिय और सुंदर लगता है। भोटियों में यह कहावत है कि "भेड़-बकरी पहाड़ की मालगाड़ी और पहाड़ी घोड़े और खच्चर डाकगाड़ी हैं।" कभी-कभी मंडियों में जाने वाले डोक्षाओं (तिब्बती गड़ेरियों) के आठ-आठ, दस-दस हजार सोहागा के फाँचों से लदे भेड़-बकरियों के झुंड मानसरोवर की तलहटियों में मीलों तक फैले हुए चलते-चलते चरते समय ऐसे प्रतीत होते हैं, जैसे भेड़-बकरियों के पहाड़–के–पहाड़ चल रहे हों। यहाँ की भेड़-बकरियाँ बहुत डरपोक और चंचल होती हैं। इसलिए इन्हें लादने में बहुत समय लग जाता है। अतः तिब्बती लोग कुछ दिन ठहरने के किसी ठिकाने पर पहुँचने तक बकरियों के फाँचों को रात में नहीं खोलते।

तिब्बती लोग—क्या मर्द और क्या बूढ़े-बच्चे—सभी अवकाश के समय ऊन कातते रहते हैं। स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष अधिक ऊन कात लेते हैं। ये लोग चलते समय और अँधेरे

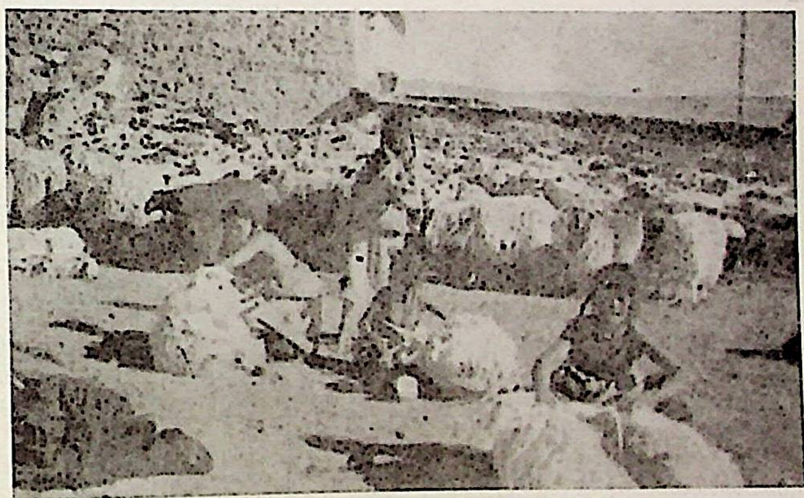
---

1. एक फुट चौड़ी ऊन की पट्टी से एक ही में जुड़ी हुई दो थैलियाँ बनाई जाती हैं, जो भेड़ों और बकरियों की पीठों पर लादी जाती हैं। इस प्रकार की थैलियों की जोड़ी को पहाड़ी प्रांतों में 'फाँचा' कहते हैं। पहाड़ की रगड़ से बचाने के लिए इन थैलियों के नीचे चमड़ा लगा देते हैं। ये याक के बाल से भी बनाए जाते हैं और दस-पंद्रह वर्ष तक काम में आते हैं। इस प्रकार की बड़ी-बड़ी थैलियाँ भी बनाई जाती हैं, जो याक की पीठ पर रखी जाती हैं। इन फाँचों में अनाज, नमक, सोहागा, गुड़ तथा सभी प्रकार की वस्तुएँ भर दी जाती हैं।



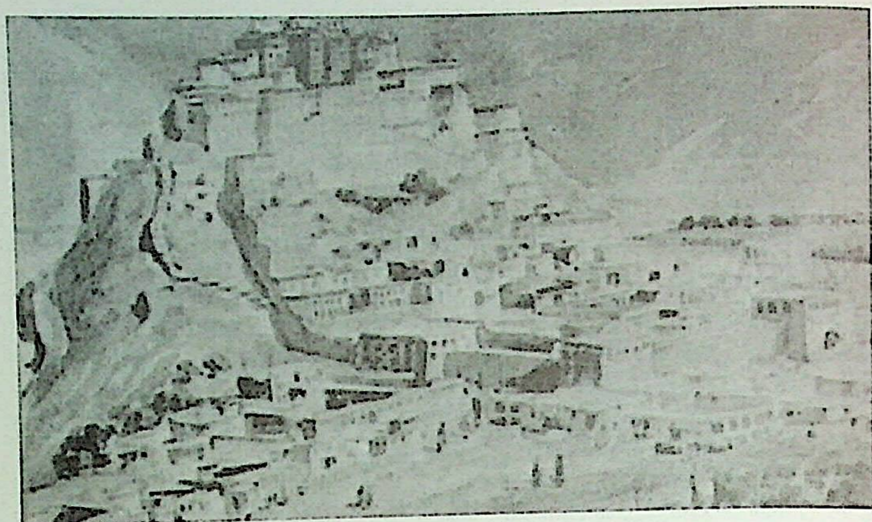
47. याक–तिब्बती बैल

[देखिए पृ० 151



48. ऊन की कटाई

[देखिए पृ० 152



49. पोताला राजप्रासाद, ल्हासा

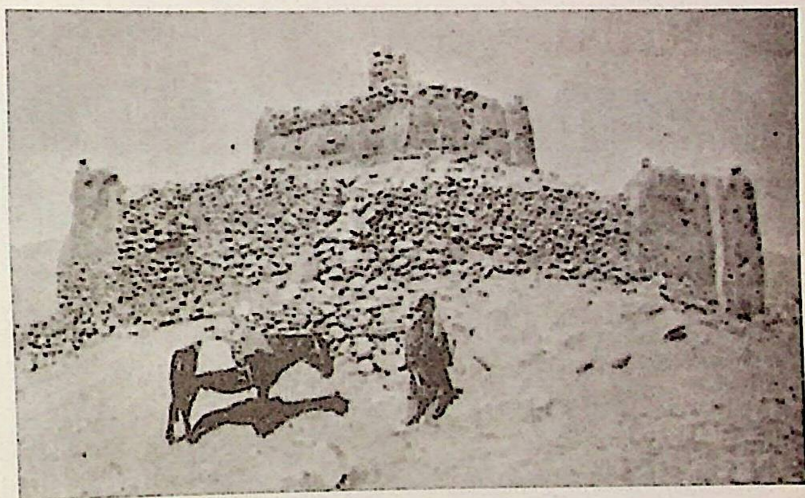
[देखिए पृ० 159



50. पुरङ-कालाकोट का जोङपोन (गवर्नर) [देखिए पृ० 160

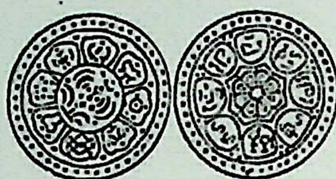


51. जोङ्पोन की धर्म-पत्नी [देखिए पृ० 160



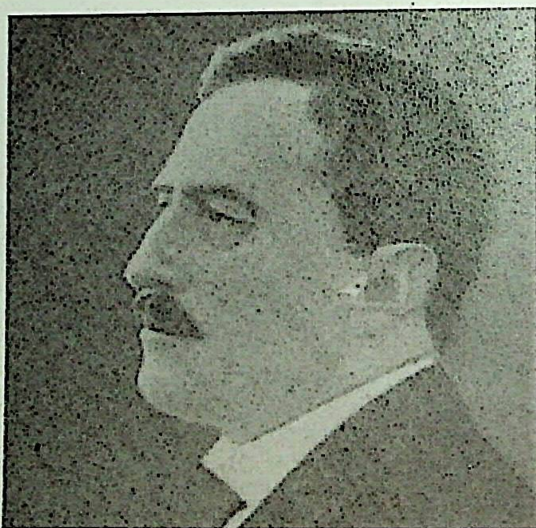
52. तोयो में जनरल जोरावर सिंह की समाधि

[देखिए पृ० 167



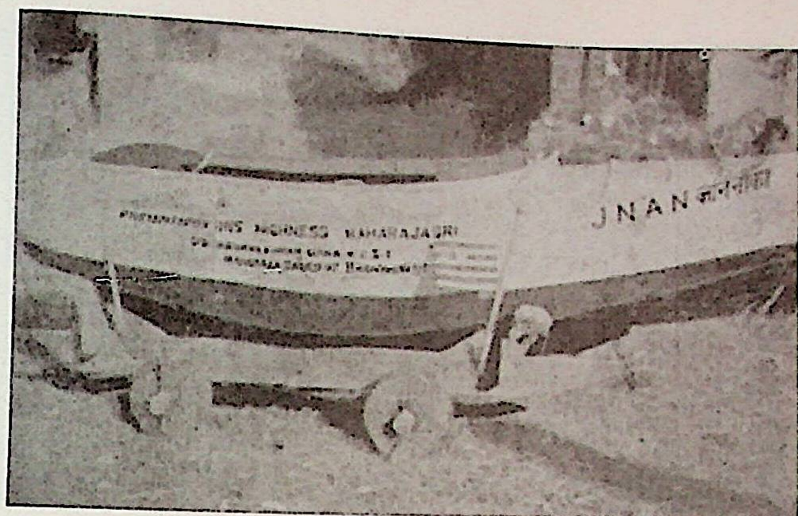
53. टंका-दोनों ओर से

[देखिए पृ० 171



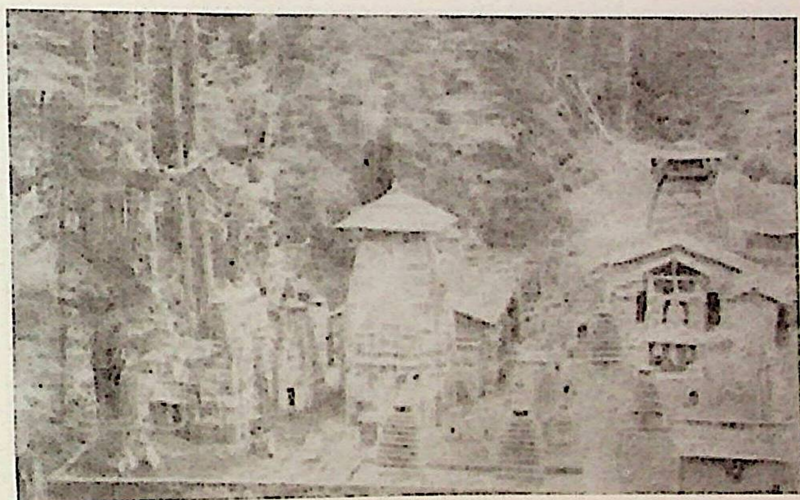
54. स्वेडन देश के विख्यात अन्वेषक तथा भूगोलशास्त्रज्ञ डॉ० स्वेन हेडिन

[देखिए पृ० 180



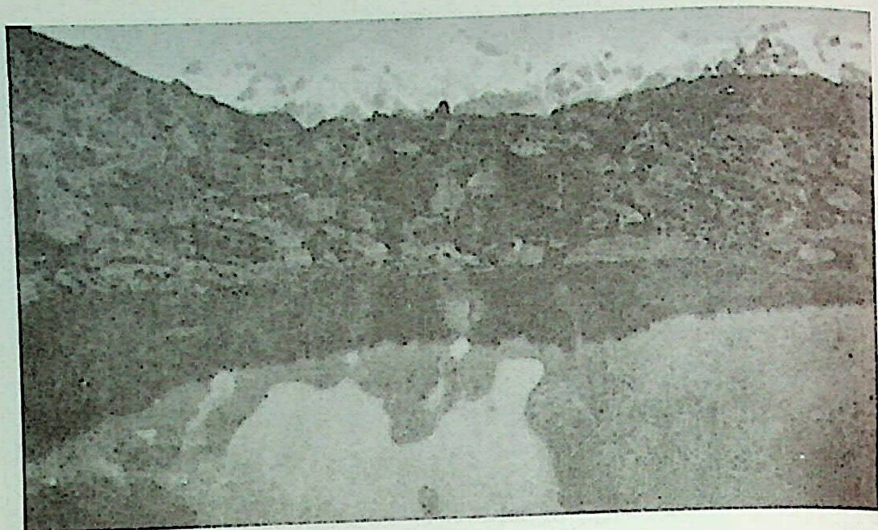
55. ज्ञान-नौका–'सेलिंग-डिंघी कम-मोटर बोट'

[देखिए पृ० 185



56. जागेश्वर

[देखिए पृ० 217



57. छिप्लाकोट–ककरोलाकीद का तालाब, पीछे पंचचूल्ही के हिमाच्छादित शिखर

[देखिए पृ० 219



58. भोटिया बच्चे, चौदाँस

[देखिए पृ० 221



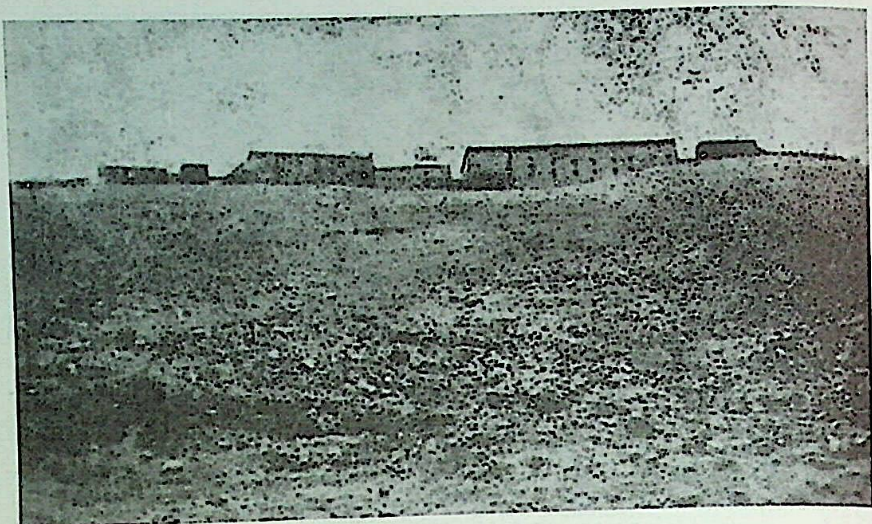
59. भोटिया स्त्रियाँ, चौदाँस

[देखिए पृ० 221



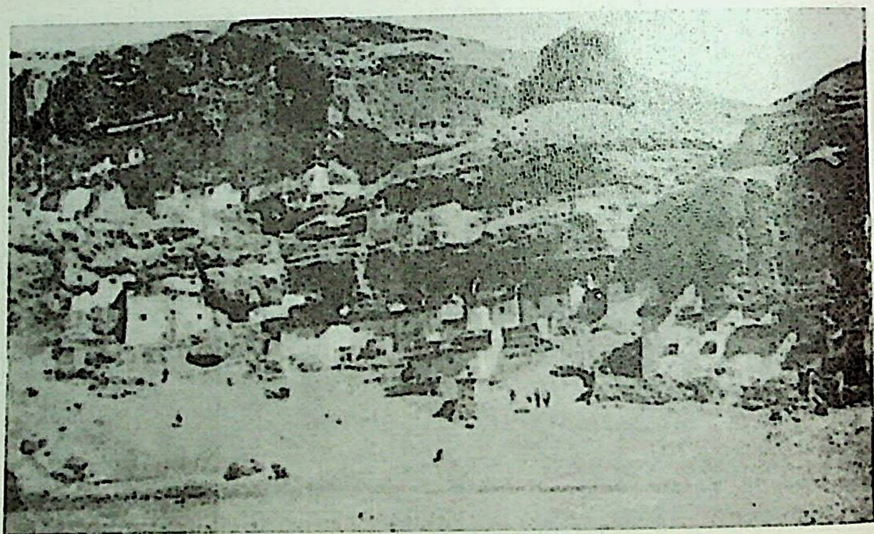
60. भोटिया व्यापारियों की भेड़-बकरियाँ लीपूलेख घाटा पार कर रही हैं

[देखिए पृ० 227



61. तकलाकोट–गोम्पा और जोङ, पीछे का दृश्य

[देखिए पृ० 227



62. गुकुङ–गुफाओं में स्थित एक गाँव

[देखिए पृ० 227

में भी कातते रहते हैं। बुनाई का काम पूर्णरूप से स्त्रियों का है। करघों में बुनी हुई पट्टियाँ बहुत कम चौड़ी होती हैं। उनमें मोटे-पतले कंबल, चुटके, थुलमे, थैलियाँ और तंबू बनाने योग्य पट्टियाँ बुनी जाती हैं। पुरङ के गाँवों में थैली के समान मोजे और दस्ताने बनते हैं, जो बहुधा चार-चार, छह-छह आने में मिल जाते हैं। यदि यहाँ के लोगों को कोई सिखाने वाला हो, तो ये अच्छी बनियाइन बना सकते हैं। पूर्वी तिब्बत तथा ल्हासे की तरफ से पड़ी धारीदार, सफेद या रंगीन, बढ़िया और मुलायम पट्टियाँ बनकर मानसखंड की मंडियों में बिकने के लिए आती हैं, जो मूल्यवान और मजबूत होती हैं। खद्दर-प्रचारक यदि यहाँ आ जायँ, तो इन लोगों से सीखने के लिए उन्हें बहुत-सी नई बातें और साधन प्राप्त हो सकते हैं।

7. कुत्ता

तिब्बत के पालतू जानवरों में कुत्ते का भी प्रमुख स्थान है। वहाँ के कुत्ते प्रायः काले रंग के होते हैं तथा बड़े ही भयंकर और खूँखार होते हैं। ये देखने में भयानक काल के समान प्रतीत होते हैं। प्रत्येक मकान या तंबू में रखवाली के लिए कम-से-कम एक कुत्ता अवश्य रहता है। भेड़-बकरियों के साथ कुत्ते के रहने से भेड़िया उस पर आक्रमण करने का साहस नहीं कर पाता। कुत्तों के बँधे रहने पर भी किसी अपरिचित मनुष्य या चोर को साहस नहीं होता कि वे तंबू के पास जायँ। प्रायः तिब्बती कुत्ते रस्सी या जंजीर से बँधे रहते हैं। इन्हें बहुत कम भोजन दिया जाता है। एक-एक कुत्ता दस रखवालों के बराबर काम करता है। मंडियों में हूणिए और भोटिए लोग अपने-अपने तंबुओं के पास एक कुत्ते को अवश्य बाँधकर रखते हैं। क्योंकि ये आदमी को देखते ही भयंकर और हृदय-विदारक स्वर में 'हौं-हौं' करके भूँकने लगते हैं।

जब कभी ये कुत्ते किसी अपरिचित व्यक्ति पर आक्रमण करते हैं, तो मालिक के बुलाने और डाँटने पर भी नहीं छोड़ते। यहाँ तक कि मालिक को उन्हें छुड़ाने के लिए पीटना पड़ता है। इसलिए तिब्बत में यात्रा करने वालों को इन कुत्तों से सावधान रहना चाहिए। कुत्तों के देखते ही हाथ में पत्थर लेकर तैयार रहना चाहिए, जिससे अवसर आ पड़ने पर जवाब देकर उनसे अपनी रक्षा कर सके। इनसे बचने के लिए ही तिब्बती भिखमंगे एक छोटी-सी लाठी में रस्सी बाँधते हैं और उसके छोर पर लोहे की घुंडी बाँधकर हाथ में रखे रहते हैं। जब कुत्ते उन पर आक्रमण करते हैं, तो ये घुंडीवाली लाठी को घुमाने लगते हैं, जिससे वह कई पत्थरों के समान बनकर कुत्ते को पास नहीं फटकने देती। यों तो कुत्ते की स्वामिभक्ति सर्वत्र प्रसिद्ध ही है, पर तिब्बती अपने स्वामी के प्रति बहुत ही भक्तिपरायण होते हैं। मंडियों में तिब्बती कुत्ते बारह आने से लेकर 10 रुपए तक बिकते हैं। तिब्बत में बिल्ली और उससे भी छोटे आकार के कुत्ते होते हैं। ये देखने में बहुत ही सुंदर होते हैं और 'चीनिया' के नाम से प्रसिद्ध हैं। विशेषकर संपन्न और अफसर लोग इनको शौक़ के लिए पालते हैं। चीनियों का दाम 10 रुपए से 50 रुपए तक होता है, कभी-कभी ल्हासा के व्यापारी (बोदपा) मानसखंड की मंडियों में बेंचने के लिए कुत्तों को लाते हैं।

8. गव्य

तिब्बत गव्यप्रधान देश है। बौद्ध धर्मावलंबी होने पर भी यहाँ के लोगों का आधा भोजन मांस ही है। सिंधु नदी के उद्गम के पास के गव्यपदार्थ (दूध, दही, मक्खन आदि) तिब्बत भर में प्रसिद्ध हैं। मानसखंड के लोग दूध, दही, मट्ठा, मक्खन, मलाई, दूध और मट्ठे का फटा हुआ पनीर इत्यादि सभी गव्य-पदार्थों (डेयरी प्रोडक्ट्स) का प्रयोग अधिक करते हैं। पशुपालन-प्रधान व्यवसाय एवं गव्यपदार्थ–समृद्धि संपन्न देश होने के कारण यहाँ यदि आधुनिक ढंग से स्विटजरलैंड और हालैंड-जैसे डेयरी फॉर्म या गोशालाएँ स्थान-स्थान पर खोली जायँ, तो विशेष लाभकारी होगा। बरसात के चार महीने में, जबकि गव्यपदार्थ प्रचुर परिमाण में होता है, भोजन से बचे हुए दूध या मट्ठे को फाड़कर ऊनी थैलियों में छानकर उस पनीर को सुखाकर रख लेते हैं। इस प्रकार के पनीर को तिब्बती भाषा में 'छुरा' कहते हैं। छाने हुए पानी को पशुओं को पिलाते हैं। दूध का छुरा विशेषतया सिंधु के उद्गम के स्थानों में बनता है। अन्य स्थलों में यह मट्ठे का ही बनाया जाता है। इस छुरा को थुक्पा में डालते हैं तथा चूर्ण करके सत्तू के साथ खाते हैं। चूर्ण किए हुए छुरे में मक्खन और गुड़ को मिलाकर एक-एक अंगुल मोटी चौकोर रोटी के समान टिकिया बना लेते हैं, जिसे 'थू' कहते हैं। वहाँ यह उत्तम मिठाई मानी जाती है। इसे प्रायः चमड़े में बाँधकर रखते हैं। शीतकाल में दूध में जामन डालकर मोटे कंबलों से लपेट देते हैं, जिससे दोपहर में बारह बजे के जमाए हुए दूध से शाम को पाँच बजे तक अच्छा दही बन जाता है। सबेरे उठकर स्त्रियाँ दही को बरतन से मोटे-मोटे चोंगियों में डालकर ऊपर-नीचे चाय के समान मथती हैं। मक्खन को बहुधा चमड़े में बाँधकर रखते हैं। इसलिए पुराना मक्खन बहुत दुर्गंधपूर्ण होता है। यह रुपए में एक सेर से लेकर डेढ़ सेर तक मिलता है। छुरा दो या चार आने सेर मिल जाता है। दूध समयानुसार दो से आठ आने सेर तक बिकता है।

भेड़-बकरियों को विचित्र प्रकार से दुहते हैं। गले में रस्सी बाँधकर ये आमने-सामने जोड़े में खड़ी कर दी जाती हैं। एक-एक झुंड में पचास-पचास की कतार बँधी रहती है। पीछे से थनों से एक-एक बकरी को दुहते हुए एक-एक बार में दूध की केवल दो धाराएँ निकालते हैं। इस प्रकार घूम-घूमकर दुहने से पूरे दुहान में कई चक्कर लगाने पड़ते हैं, क्योंकि एक–दो धाराएँ दुहने के बाद ये दूध को ऊपर खींच लेती हैं। दुहने के पश्चात बँधी हुई रस्सी को खींच लेने से सब भेड़-बकरियाँ एक-एक करके सटासट खुल जाती हैं और उछल-उछलकर छलाँग मारते हुए भाग जाती हैं।

9. व्यापार और मंडियाँ

तिब्बतियों का प्रधान व्यवसाय पशुपालन तथा ऊन की कताई-बुनाई है। साधारणतया सभी तिब्बती-गृहस्थ तथा भिक्षु, स्त्री तथा पुरुष मंडियों में, घरों में और यात्रा करते समय, बराबर सब प्रकार का छोटा-मोटा व्यापार करते रहते हैं।

अल्मोड़ा, गढ़वाल और टिहरी राज्य, इन तीनों की उत्तरी सीमा के प्रांत भोट नाम से प्रसिद्ध हैं। उस प्रांत के निवासी भोटिया कहलाते हैं। पश्चिमी तिब्बत में भोटियों की कई मंडियाँ हैं, जिनमें से अधिकतर मानसखंड में ही हैं। ये मंडियाँ एक सप्ताह से लेकर पाँच महीने तक लगती हैं। जोहार के भोटियों की ज्ञानिमा[1] मंडी, दारमा के भोटियों की छकरा[2] मंडी, चौदाँस और ब्याँस के भोटियों की तकलाकोट मंडी, नीती के भोटियों की नाब्रा मंडी, नेपालियों की गुकुङ मंडी—ये बड़ी-बड़ी मंडियाँ हैं। कैलास के पास की तरछेन मंडी, मानसरोवर के किनारे की ठोकर मंडी (ठुगोल्हो) और गरतोक मंडी—ये दूसरी श्रेणी की मंडियाँ हैं। इनमें से तरछेन और ठोकर मंडियों में बहुत ऊन काटा जाता है। थुलिङ, लामा-छोरतेन, पुरूरव, जकपोलुङ आदि छोटी-छोटी मंडियाँ हैं। गरतोक के उत्तर रुदोक नामक मंडी में विशेषकर लदाखी और काश्मीरी आते हैं। यह भी एक बड़ी मंडी है। पश्चिमी तिब्बत की मंडियों में सबसे बड़ी ज्ञानिमा मंडी है, जहाँ जुलाई और अगस्त में डेढ़ या दो महीनों के भीतर पचीस लाख रुपए का व्यापार होता है। इन सभी मंडियों में तिब्बत का ऊन, ऊन के मोटे-मोटे कंबल, भेड़, बकरी, घोड़े, खच्चर, याक, झब्बू, चमड़ा, नमक, सोहागा इत्यादि वस्तुएँ बिकने के लिए आती हैं। भारत के भोटिए व्यापारी सभी प्रकार के कपड़े, पीतल, ताँबे और सिलवर के बर्तन, गुड़, जौ, गेहूँ, चावल, चीनी, मेवा, मसाला, हांगकांग से आई हुई चीनी चाय इत्यादि वस्तुएँ बेचते हैं। मंडियों में हरे शाक के अतिरिक्त भारत के किसी भी बड़े बाजार में मिलने वाली सभी वस्तुएँ मिल जाती हैं।

इन मंडियों में भारतीय व्यापारियों से तिब्बत सरकार की ओर से कर बहुत कम या केवल नाममात्र का लगता है। ज्ञानिमा मंडी में, जहाँ जोहारी व्यापारियों के चार-पाँच सौ तंबू लगते हैं और लगभग 20 लाख रुपए का व्यापार चलता है, कर केवल 90 भेली गुड़ है, जिसकी तौल लगभग 5 मन होगी और हल्द्वानी में जिसका दाम केवल 30 रुपए होता है। इसी प्रकार अन्य मंडियों में भी नाममात्र का कर है, जो अनाज के रूप में दिया जाता है। ब्याँस के व्यापारियों पर अनाज के अतिरिक्त कोयला, घटिया कपड़ा, फाफर या कूटू की रोटी, छङ आदि तुच्छ वस्तुएँ भी कर में देनी पड़ती हैं। इन वस्तुओं को वसूल करने के लिए तकलाकोट जोङ के नौकर आते हैं। एक आश्चर्य की बात तो यह है कि ब्याँस के भोटियों से मालगुजारी तिब्बत सरकार भी वसूल करती है, यद्यपि वह नाममात्र की है। तिब्बतियों का कहना है कि ब्याँस का इलाका तिब्बत के अंतर्गत है।

10. मानसखंड की संग्रहणीय वस्तुएँ

मानसखंड की यात्रा या भ्रमण करने वालों के लिए अपनी-अपनी रुचि के अनुसार निम्न वस्तुएँ मंडियों से संग्रह करने योग्य हैं। (1) 'यीं' की खाल—यह एक प्रकार के जंगली बर्फानी चीते का सर्वांग चर्म है, जिसका मूल्य दस रुपए से पचास रुपए तक होता है। पाश्चात्य

---

1. इसे खरको भी कहते हैं।
2. इसे ज्ञानिमा-छकरा भी कहते हैं।

महिलाएँ इसको शीतकाल में गर्दन पर डालती हैं। (2) 'हाजे'—यह जंगली गीदड़ का संपूर्ण चर्म है, जिसका मूल्य एक रुपए होता है। यह टोपी या गर्दन पर डालने के काम में आता है। (3) 'चरु'—एक वर्ष से छोटी आयु वाली भेड़ और बकरी के बच्चे की खाल है। एक का मूल्य चार आना से बारह आना तक होता है, जो कोट और जाकेट बनाने के काम में आता है। यह बहुत गरम और मुलायम होता है। (4) 'बुङ्चर'—एक-दो वर्ष की आयु की भेड़ या बकरी की खाल है, जिसका मूल्य चार आने से बारह आने तक होता है। यह आसन बनाने के काम में आता है। (5) बड़ी बकरी की खाल, (6) भेड़ की खाल—ये दोनों आसन बनाने के काम में आती हैं। (7) 'गुवा' की खाल—इसका दाम आठ आना से एक रुपए तक होता है। (8) 'चुटका' या 'चुटुक'—यह एक मोटा और भारी कंबल है, जो एक ओर सादा और दूसरी ओर रोएँदार होता है। इसका दाम चार रुपए से बीस रुपए तक है। (9) 'थुलमा'—यह बहुत लंबा-चौड़ा कंबल है और प्रायः श्वेत रंग का होता है। जोहार के भोटिया इसको तैयार करते हैं। ये विशेषकर जौलजीबी मेला में बिकने के लिए आते हैं। इसका मूल्य आठ से पच्चीस रुपए तक होता है। (10) पंखी या ऊनी चादर—इनका दाम 3 रुपए से 15 रुपए तक होता है। (11) कालीन या गलीचा—इसका मूल्य पाँच से तीस रुपए तक होता है। (12) याक या बकरी के ऊन से बनाई हुई पतली रस्सी—इसका दाम छह आना से एक रुपए तक होता है। याक के ऊन की रस्सी पक्की होती है, जो बिस्तर या बोझ बाँधने के काम में आती है। (13) चँवर पूँछ—इसका दाम एक रुपए से पाँच रुपए तक होता है।

(14) जहरमोहरा, (15) हिमपुली, (16) थनेरी पत्थर, (17) बिजली की हड्डी, (18) निर्बिषी—ये पाँच वस्तुएँ किसी खंपा या अपने गाइड के द्वारा प्राप्त की जा सकती हैं। (19) 'ठुमा'—यह एक वीर्यवर्धक औषधि है, जो परखा के मैदान में या ठुगोल्हो में कभी-कभी किसी तिब्बती के पास मिल जाती है। (20) 'जिंबू'—इसको मार्ग में अपने आप इकट्ठा कर सकते हैं। यदि बहुत परिमाण में चाहें, तो किसी खंपे के पास से मोल ले सकते हैं। रुपए में दो-एक सेर मिल जाता है। (21) चाय के प्याले को रखने के लिए चीनी ढंग के कटोरदान और ढक्कन—इसका दाम, यदि पीतल का हो तो तीन से दस रुपए तक और चाँदी का हो तो 15 से 50 रुपए तक होता है। (22) चाय का चीनी प्याला—इसका दाम आठ आने से बारह आना तक होता है। (23) पत्थर का चीनी प्याला—इसका दाम पाँच से दस रुपए तक होता है। ये तीनों मंडियों में मिल जाते हैं। (24) तिब्बती चाय। (25) 'फुरु' या 'फुरुवा'—चाय पीने वाला तिब्बती कटोरा, इसका मूल्य दो आने से दस रुपए तक होता है। इस कटोरे के भीतर तिब्बती ढंग से चाँदी लगवा सकते हैं। (26) तिब्बती ढंग का चम्मच—तकलाकोट में यह दो रुपए में बन जाता है। कैलास जाते समय यदि कहकर जाएँ, तो वापस लौटते समय तक कोई भोटिया व्यापारी इन दोनों चीजों को बनाकर तैयार रखेगा। (27) 'चौकसे'—यह बूटेदार और रंगीन, मुड़ने वाली मेज है, जिस पर तिब्बती लोग कटोरा रखकर चाय पीते हैं। इसका मूल्य एक से पच्चीस रुपए तक होता है।

(28) 'कोरलो'—यह एक छोटा-सा चोंगा है, जिसमें हत्था लगा रहता है। इसमें मणि-मंत्र के कई कागज के टुकड़े रखे रहते हैं। मंत्र-जाप के लिए उसको घुमाया जाता है।

पुराना कोरलो कभी-कभी किसी भोटिए व्यापारी से भी मिल जाता है। (29) 'गौ', तिब्बती ताबीज—आजकल जापान के बने हुए 'गौ' और 'कोरलो' मंडियों में बिक रहे हैं। (3) मणि-पत्थर—अपनी इच्छानुसार पत्थरों को चुनकर उस पर मणि-मंत्र खुदवाकर ले सकते हैं। तकलाकोट में दो-तीन आने में पूरे मंत्र को खोदकर दे देते हैं। (31) 'पोबर'—ताँबे या पीतल की एक प्रकार की करछी है, जिसमें धूप जलाई जाती है। (32) 'पोलङ' या धूप-पात्र—ये दोनों तकलाकोट में बन सकते हैं। इनके लिए ताँबे की चद्दर साथ ले जानी पड़ेगी। (33) 'लम'—तिब्बती जूता। इसका दाम दो रुपए से दस रुपए तक होता है। (34) 'थंका' या तिब्बती चित्रपट—यह किसी लामा-चित्रकार से या किसी गाँव में कभी-कभी मिल जाता है। (35) 'फिंग'—तिब्बती सेंवई। किसी तिब्बती व्यापारी के पास मिल जाती है, जिसके एक-एक बंडल का दाम एक या दो आना होता है। (36) कस्तूरी—यह मंडी में 15 से 20 रुपए तोले के भाव पर मिल जाती है। चाहें तो पूरी कस्तूरी का नाभा भी मिल सकता है। (37) कस्तूरी के दाँत—यह किसी भोटिए व्यापारी के पास मिलते हैं, जिसका दाम एक आना से ऊपर होता है। (38) 'कङरी-करछक' और 'कङरी-सोलदेप' या तिब्बती कैलास-पुराण—कैलास के डिरफुक् गोम्पा या गेंगटा गोम्पा से इनके अलग-अलग संस्करण मिल जाते हैं। (39) 'खोचर-करछक'—यह खोचारनाथ का स्थल-पुराण है, जो खोचार गोम्पा से मिल जाता है। इन पुस्तकों का दाम निश्चित नहीं है। करछक का दाम एक रुपए से ऊपर और सोलदेप का दाम छह आना से ऊपर, जितना माँगें दे देना पड़ता है। (40) कुत्ता। (41) शिलाजीत का पत्थर।

11. डाकू तथा बटमार

तिब्बत में कहीं-कहीं बटमार घुमक्कड़ चरवाहे अपने कुटुंब और भेड़-बकरियों के साथ घूमते-घूमते यात्रा के दिनों में (मई-अक्टूबर के महीनों में) कैलास और मानसरोवर की ओर आ जाते हैं। ये मंडियों में जाकर व्यापार भी करते हैं और साथ-साथ तीर्थयात्रा भी करते रहते हैं। यहाँ पर बंदूक और हथियार रखने की कोई मनाही न होने कारण सबके पास हथियार होते हैं। इनके पास भी पुराने ढंग की पलीते वाली या आग लगाकर फायर करने वाली बंदूक, आजकल की जर्मनी और रूस की बंदूकें, पिस्तौल और रिवाल्वर भी होते हैं। जहाँ कहीं निरस्त्र यात्री या व्यापारी इन्हें मार्ग में मिल जाते हैं, उन्हें ये लूटकर पहाड़ों में भाग जाते हैं। ये लोग माल दे देने पर प्राणहरण नहीं करते। यदि कोई इनका सामना करे, तो जान से मार भी डालते हैं। जिन यात्रियों या व्यापारियों के पास हथियार होते हैं, उनके पास ये नहीं जाते और उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। इन डाकुओं को पकड़ने के लिए तिब्बती सरकार की ओर से कोई विशेष प्रबंध नहीं है। तथापि हमारे देश से वहाँ डकैती बहुत कम है। मानसखंड में आने वाले इस प्रकार के डाकुओं और लूटेरों को 'ञाकोरा' कहते हैं। स्थानीय लोग भी इनसे डरते हैं। यहाँ के संबंध में जो यह अफवाह फैलाई गई है कि यहाँ पर मनुष्य-भक्षी और रक्त पीने वाले लोग रहते हैं, वह सर्वथा निराधार और मिथ्या है।

———————

अध्याय 6

शासन

1. दलाई लामा

सारे तिब्बत देश पर दलाई लामा का शासन है। ये ही तिब्बत के राजा हैं। धर्म-संबंधी सारे कार्यों में टाशी लामा सर्वोच्च माने जाते हैं। ये सांग्ये ओपामे (अमिताभ बुद्ध, जो अवलोकितेश्वर के दैवी या धर्म-पिता हैं) के अवतार माने जाते हैं। इनका प्रधान स्थान टाशी ल्हुम्पो मठ में है, जो शिगर्ची नगर के अंतर्गत है। इनको पंछेन रिम्पोछे या पंछेन लामा भी कहते हैं। लोबसङ ग्यम्छो नामक एक प्रसिद्ध लामा डेपुङ विश्वविद्यालय के अध्यक्ष (खनपो या 'डीन') थे। तत्कालीन मंगोलिया के राजा गुश्री खान ने 1641में तिब्बत का राज्य जीतकर उपर्युक्त लामा को प्रदान कर दिया था। इस पाँचवें दलाई लामा के राजगद्दी पर बैठने पर डेपुङ मठ की —जिसके वे अधिष्ठाता रहे—प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए प्रतिवर्ष प्रारंभ में चौबीस दिनों तक ल्हासा में डेपुङ के भिक्षुओं के हाथों में संपूर्ण शासन भार दे देने का नियम बना दिया। यह प्रथा अब तक प्रचलित है। उस समय दुकानों पर नया टैक्स लगाया जाता है। कहा जाता है कि सर्वप्रथम दलाई लामा का जन्म 1391 में हुआ। और कुछ लोगों का कहना है कि दलाई लामा की प्रथा सन् 1284 से प्रारंभ हुई।

पाँचवें दलाई लामा (सन् 1617 से 1682 तक) ने सर्वप्रथम अपने आपको अवलोकितेश्वर का अवतार घोषित किया। साथ-साथ यह भी घोषित कर दिया कि उस समय का टाशी लामा अमिताभ बुद्ध का अवतार और उनका (दलाई लामा का) गुरु है। तभी से अवतारी लामाओं की प्रथा प्रारंभ हुई। इस प्रथा के प्रचलित होने के पूर्व दलाई लामा को योग्यता के अनुसार नियुक्त किया जाता था।

ऐसा विश्वास है कि एक दलाई लामा के मृत्यु होते ही उसकी आत्मा फिर गर्भस्थ हो जाती है। दलाई लामा के मरने के बाद नए दलाई लामा के पता लगने के समय तक और उसके गद्दी पर बैठने होने तक राज्य-प्रतिनिधि (रीजेंट) नियुक्त किया जाता है, जो मंत्रिमंडल की सहायता से राज्यकार्य का भार वहन करता है। मृत्यु के दो-तीन वर्ष के उपरांत राज-ज्योतिषी यह बतलाता है कि दलाई लामा ने अमुक दिशा में जन्म लिया है। उसी भविष्यवाणी के अनुसार मंत्रिमंडल से कोई एक राज-ज्योतिषी और कुछ अफसरों की एक मंडली उस दिशा में बड़े धूमधाम के साथ दलाई लामा के अन्वेषण में चल देती है। लामा की मृत्यु के बाद जितने बच्चे जन्म लेते हैं, सबों की परीक्षा होती है। दलाई लामा के माता-पिता और भाई-बंधुओं को भी राज्य में बड़े-बड़े पद मिलते हैं, इसलिए अनेक लोग अपने-अपने बच्चों को उक्त पद के लिए उपस्थित कर देते हैं। उन सबों को देखकर विशेष परीक्षा के लिए उन बच्चों को एकत्रित करते हैं, जिनमें दलाई लामा के शास्त्रोक्त लक्षण अधिक

पाए जाते हैं। तब मरे हुए दलाई लामा की कई वस्तुओं के पहचानने के लिए कहते हैं। इनमें से जो दलाई लामा की वस्तु को पहचान लेता है, उसे ही उक्त पद के लिए चुन लिया जाता है। कभी यदि आए हुए बच्चों में से सबके सब दलाई लामा की वस्तुओं को पहचानने में असफल रहे, या एक से अधिक बच्चे वस्तुओं को पहचानने में समर्थ हुए, तो ऐसी स्थिति में उनके नाम कागजों के टुकड़े पर लिखकर एक सोने के कटोरे में डाल देते हैं और किसी अनजान लड़के से एक टुकड़ा निकालने के लिए कहते हैं। उस निकाले हुए टुकड़े पर जिसका नाम निकलता है, वही दलाई लामा के पद के लिए चुन लिया जाता है।

यदि वह लड़का उस समय तक भिक्षु न बना हो, तो उसे भिक्षु की दीक्षा दी जाती है और राजकीय ठाटबाट के साथ उसे राजधानी, ल्हासा नगर में ले आते हैं। नगर के पोताला नामक राजप्रासाद[1] में जाने के पहले मंत्रिमंडल और अफसर, बड़े मठों के लामा, जागीरदार, सैनिक—सभी बड़े जलूस में जाकर पहले नम्रतापूर्वक उसका स्वागत करते हैं। तत्पश्चात दो-तीन महीने तक खूब पूजा-पाठ तथा यंत्र-तंत्र की आराधना करके अंत में उस बच्चे को राज्याभिषिक्त कर देते हैं। राज्याभिषेक के समय चीन का राज्यप्रतिनिधि भेंट लेकर सामने आता है। सन् 1904 की संधि के अनुसार इस राज्याभिषेक के अवसर पर अंग्रेजी सरकार ने भी अपना प्रतिनिधि भेजना आरंभ कर दिया है। राजगद्दी पर बैठाने के बाद शिशु दलाई लामा के विद्याभ्यास के लिए बड़े-बड़े विद्वान लामा और भिक्षु लोग नियुक्त किए जाते हैं। आध्यात्मिक, राजकीय और लौकिक सभी प्रकार की शिक्षा देकर उन्हें पूर्ण बना देते हैं। तब वे सभी राजकार्यों को स्वयं देखने लगते हैं। राजदरबार में मंत्रिवर्ग के साथ चीन का एक प्रतिनिधि भी रहता है। अंतर्राष्ट्रीय मामलों में इनकी सम्मति लेनी पड़ती है। परंतु सन् 1912 से तिब्बत का संबंध चीन से नाममात्र का रह गया है।

तेरहवें दलाई लामा की मृत्यु 1933 के दिसंबर में हुई और वर्तमान चौदहवें दलाई लामा सन् 1939 के सितंबर में पाए गए हैं। ये सन् 1940 की 22वीं फरवरी को सिंहासनासीन हुए। ये तिब्बत के उत्तर में चीन की सीमा के पास रहने वाले एक किसान के लड़के हैं।

तीसरे दलाई लामा धर्म-प्रचार के लिए मंगोलिया गए थे। चौथे स्वयं मंगोलिया में उत्पन्न हुए थे। दलाई लामा के नाम के अंत में 'ग्यम्छो' प्रयोग किया जाता है। यह तिब्बती शब्द है, जिसका अर्थ है समुद्र। मंगोलियन भाषा में समुद्र को 'तले' कहते हैं। मंगोल लोग लामा शब्द के आदि में 'तले' जोड़कर, 'तले लामा' कहकर पुकारते थे। तिब्बत में आकर 'तले' शब्द अपभ्रंश होकर 'तलाई' हो गया और वही बदलते-बदलते दलाई लामा के रूप में परिणत हो गया। ठीक दलाई लामा की नियुक्ति की भाँति टाशी लामा या पंछेन लामा की नियुक्ति होती है। गत पंछेन लामा की मृत्यु सन् 1937 में हुई थी। 28 अप्रैल, 1943

---

1. पोताला राजप्रासाद सन् 1645 में पाँचवें दलाई लामा द्वारा निर्मित कराया गया था। इसके भीतर सभी दलाई लामाओं के छोरतेन हैं। उनमें से पाँचवें दलाई लामा तथा एक अन्य दलाई लामा के छोरतेन सोने के बने हैं।

को चुङकिंग से यह समाचार मिला है कि कुछ ही दिन हुए चीन के सिंकियङ प्रांत में पंछेन लामा पाये गये हैं और अब वे शीघ्र ही टाशी ल्हुम्पो लाकर अभिषिक्त किए जायँगे।

तिब्बत की राजधानी ल्हासा नगर समुद्रतल से 11000 फीट की ऊँचाई पर है। मानसरोवर प्रांत से यह अपेक्षाकृत कम ठंढा स्थान है। पहले-पहल सम्राट स्रोङ्चेन गोम्पो ने सन् 630 में इसे बसाया था। यहाँ की जनसंख्या लगभग 40000 होगी, जिसमें से लगभग आधे भिक्षु हैं।

2. शासन-विधान

पश्चिमी तिब्बत (जिसमें मानसखंड स्थित है) दो गरपोनों या उर्कों द्वारा शासित हैं— एक उर्को कोङ (सीनियर वायसराय) और दूसरा उर्को योक (जूनियर वायसराय)। तिब्बत में उच्च पदाधिकारी बहुधा दो-दो होते हैं। पश्चिमी तिब्बत की राजधानी गरतोक या गरयारसा तकलाकोट से 125 मील और कैलास (तरछेन) से 85 मील की दूरी पर है। गर्मी के दिनों में दोनों वायसराय छह महीने यहाँ तथा शीतकाल में छह महीने गरगुनसा में रहते हैं, जो गरतोक से लगभग 39 मील दूर है। पश्चिमी तिब्बत रुदोक, पुरङ-तकलाकोट, दापा और छबरङ नामक चार प्रांतों में विभक्त है। एक-एक प्रांत एक-एक जोङ्पोन[1] (दुर्गाधीश) या जोङ के अधीन है। छकरा मंडी के अतिरिक्त सारा मानसखंड पुरङ-जोङ द्वारा शासित है। ज्ञानिमा मंडी दापा जोङ के और छकरा मंडी परखा तसम के अंतर्गत है।

इनके अतिरिक्त मंडियों में कर एकत्रित करने वाले छासू (टैक्स कलेक्टर), युङ छोङ (तिब्बत सरकार का व्यापारी) और तसम, तरजम या तजम (ट्रांसपोर्ट एजेंट या एजेंसी) होते हैं। ल्हासा और गरतोक के बीच में राजपथ पर पच्चीस तसम हैं, जो ल्हासा और गरतोक के बीच के विविध केंद्रों में सरकारी डाक को भेजने का प्रबंध और ल्हासा से गरतोक तक आने-जाने वाले सरकारी अफसरों की सवारी और बोझों के लिए याक और घोड़ों का प्रबंध करते हैं। इस काम के लिए आस-पास के गाँव वालों और गड़रियों को अपने कुछ याक और आदमियों को सदा तैयार रखना पड़ता है। ये लोग बारीं-बारी से काम करते हैं, जिसके लिए उनको भाड़ा आदि कुछ भी नहीं मिलता, वरन् तसम में बेगार देर से पहुँचे तो कड़ा दंड दिया जाता है—अर्थदंड, कोड़ा या दोनों। कैलासखंड के अंतर्गत नोक्यू, मिस्सर, परखा, थोकचेन, ल्होलुङ और टमसङ नामक छह तसम हैं। यह तसम शब्द ऑफिस और अफसर दोनों के लिए प्रयुक्त होता है। तसमों का काम निरीक्षण करने के लिए उनके ऊपर सिपचू नामक एक अफसर रहता है।

युङ्छोङ या सरकारी व्यापारी के संबंध में विवरण देना भी आवश्यक है। यह अफसर दलाई लामा की ओर से व्यापार करने के लिए विशेषकर 'जा' के 'दुम' (चीनी चाय के ईंटों के पैकेज) मंडियों में लाते हैं। यह चाय गरपोन, जोङ्पोन आदि अफसरों को बाजार

---

1. सारे तिब्बत में लगभग 55 जोङ होते हैं।

भाव से दुगुने या तिगुने दामों पर बेची जाती है, जिसका मूल्य दूसरे वर्ष वसूल किया जाता है और फिर चाय वैसे ही दी जाती है। इस प्रथा को 'पुगेर' कहते हैं। इसके अतिरिक्त युङ्छोङ का अपना निजी व्यापार भी बहुत होता है। जगह-जगह पर इनके प्रतिनिधि होते हैं, जिनके द्वारा दलाई लामा का निजी व्यापार चलता रहता है। ये प्रतिनिधि भी 'युङ्छोङ' कहे जाते हैं। इस प्रकार सर्वसाधारण जनता पर अफसरों का दबाव बहुत होता है; या यों कहिए कि यह प्रथा और बेगारी—ये दोनों तिब्बती प्रजा पर सरकार की ओर से कर हैं।

उपर्युक्त सभी अफसर ल्हासा और आसपास के जागीरदारों और वंशजों[1] में से ही तीन वर्ष के लिए नियुक्त किए जाते हैं। कभी-कभी उसी अफसर को दुबारा भी नियुक्त करते हैं। गाँवों का प्रबंध गोपा या गोबा (सिर वाला = प्रधान) और मकपोन (पटवारी) के द्वारा होता है। गोपा और मकपोन उसी गाँव के निवासी होते हैं और ये वंशपरंपरा से ही नियुक्त किए जाते हैं। तिब्बत में किसी अफसर को ल्हासा की केंद्रीय सरकार की ओर से वेतन नहीं दिया जाता। इसके विपरीत इन सभी अफसरों को प्रतिवर्ष कुछ निश्चित रकम सरकार को देनी पड़ती है। अफसर लोग इस रकम को कर, दीवानी और फौजदारी के मुकद्दमों की फीस और जुरमाने से एकत्रित कर लेते हैं। इसके अतिरिक्त निजी व्यापार द्वारा भी वे बहुत-सा धन उपार्जित करते हैं। वास्तव में व्यापार की आय ही अधिकतर है, क्योंकि उनके ऑफिस का काम नहीं के बराबर होता है और वे जहाँ भी जाते हैं, वहाँ सैकड़ों जानवर तसमों द्वारा बेगारी में मिल जाते हैं, जो व्यापार–कार्य में अधिक सहायक होते हैं। तिब्बतियों को सरकारी टैक्स बिल्कुल नाममात्र का देना पड़ता है। सात-आठ बकरियों के ऊन पर केवल एक टंका, इसी प्रकार आठ बकरियों द्वारा लाए गए नमक या सोहागे पर भी एक टंका देना पड़ता है। भूमि-कर तो एक दम नहीं लिया जाता। पर इससे यह न समझना चाहिए कि सरकार बड़ी उदार है। सभी करों के बदले में एक बेगार ही पर्याप्त हो जाती है।

तिब्बत में साधारण अपराधी के दोनों हाथ ऊनी रस्सी से कसकर तब तक बाँधे रहते हैं, जब तक कि रक्त नहीं बहने लगता। उसके बाद कपड़ों को उतारकर नग्नावस्था में पट लिटाकर नितंब और पीठ पर अपराध के अनुसार चालीस से लेकर तीन सौ तक कोड़े मारते जाते हैं। डकैती-जैसे भारी अपराध के लिए कोड़ों के अतिरिक्त एक या दोनों पहुँचे काटकर खौलते हुए तेल में डुबो दिए जाते हैं, जिससे घाव में पीब न आ जाय। भयंकर, दारुण और राजद्रोह के अपराधों के लिए लाल-लाल दहकते हुए लोहे कनपटियों में घुसा देते हैं एवं आँखों को निकालकर अपराधी के प्राण ले लेते हैं, या ऊँचे पहाड़ों की चोटियों से ढकेलकर मार डालते हैं। बहुधा मुकद्दमों में दोनों पक्षों को अधिक जुर्माना कर देते हैं। इन जुर्मानों से अफसरों की प्रधान आय होती है। मुकद्दमा फैसला होने के बाद दोनों पक्षों के लोगों को कोर्ट-फीस के रूप में आठ-आठ टंका (एक-एक रुपए) देना पड़ता है।

---

1. (1) सङ्डू, (2) फोटाङ, (3) दुरिङ, (4) सेता, (5) बंडीशिया, (6) राकाशिया, (7) ल्हालू, (8) युटाक और (9) फोती खाङ्सा—ये नौ प्रधान उच्च वंशों के नाम हैं।

सरकारी पदों पर आधे से अधिक भिक्षु नियुक्त होते हैं। स्त्रियों को भी किसी पद की अनधिकारिणी नहीं समझते। किसी अफसर की अनुपस्थिति में उसकी स्त्री, भाई या उसके द्‌वारा नियुक्त कोई भी व्यक्ति काम कर सकता है। पश्चिमी तिब्बत की राजधानी गरतोक में, जहाँ वायसराय रहते हैं, और गवर्नरों के केंद्रस्थानों में पुलिस या सैनिकदल का सर्वथा अभाव रहता है। हाँ, तिब्बत की राजधानी ल्हासा में आजकल नवीन पद्‌धतियों के अनुसार थोड़े-से पुलिस के सिपाही और सैनिकों को रखकर उचित शिक्षा दी जाती है। सभी तिब्बतियों के बंदूक और तलवारों के चलाने में जानकार होने के कारण और हथियार रखने में किसी प्रकार का प्रतिबंध न होने के कारण तिब्बती सरकार आवश्यकता पड़ने पर इन्हें सेना में भरती कर लेती है। भरती किए गए ग्रामीण अपने व्यय से काम करते हैं, अर्थात् उन्हें खाने-पीने के सामान, बारूद, बंदूक, तलवार और घोड़े सभी अपनी ओर से ले जाने पड़ते हैं। इनको किसी प्रकार की सैनिक शिक्षा नहीं दी जाती।

तिब्बती अफसर कर वसूल करते हुए रात-दिन निजी व्यापार और कमाई में लगे रहते हैं। अफसर, कुछ बड़े वंशों के व्यक्ति और मठ वालों के उपभोग के लिए अधिकांश साधारण प्रजा ने जन्म लिया है—ऐसा प्रतीत होता है। पहले जैसा भी रहा हो, किंतु आजकल ऐसा ही है। मानसिक अवनति के कारण इस परिस्थिति में भी तिब्बती प्रजा संतुष्ट है। उसका एक कारण यह भी हो सकता है कि आधुनिक जगत की विषम समस्याएँ वहाँ विद्‌यमान नहीं हैं।

शोचनीय बात यह है कि पश्चिमी तिब्बत में सरकार की ओर से प्रजा की या देश की भलाई के कोई भी विशेष कार्य नहीं होते। यहाँ एक गज भी कोई पक्की सड़क नहीं बनी हुई है और न किसी प्रकार की ऐसी भी सड़क है, जिस पर बैलगाड़ी का चलना संभव हो। जहाँ कहीं एकाध भेड़ों या बकरियों के झुंड चल पड़े, वहाँ सड़क-जैसी बन जाती है। प्रयत्न करने पर थोड़े श्रम से भी गाड़ी चलने योग्य अच्छी सड़क बनाई जा सकती है, परंतु ल्हासा और पूर्वी तिब्बत के अन्य नगरों में कुछ सड़कें बनी हुई हैं, जिन पर एकाध मोटर और साइकिल भी चलती है। अन्यत्र कहीं कोई भी तैयार की हुई पक्की सड़क नहीं है।

भारत की सीमा लीपूलेख घाटा से दस-ग्यारह मील की दूरी पर स्थित पुरङ-तकलाकोट के जोङपोन का केंद्रस्थान है। 'जोङ' शब्द का अर्थ दुर्ग है; परंतु यह दुर्गाधीश के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। जोङपोन या गवर्नर का कोट तकलाकोट मंडी के पास के पहाड़ के ऊपर सिंबिलिङ मठ से बिलकुल मिला हुआ है। किले में एक कारागृह भी है, जिसके पास बड़ी-बड़ी चाबुकें, चपटियाँ (थप्पड़ मारने वाले हत्थेदार गोल चमड़े), हथकड़ी और रस्सियाँ टँगी हुई हैं। दुर्ग वाले पहाड़ की तलहटी की पीलीथंगा नामक छोटी उपत्यका के ऊपर जून महीने से लेकर अक्टूबर तक मंडी लगती है। भोटिया व्यापारियों ने यहाँ कच्ची ईंटों से दीवालों के घेरे बना रखे हैं, जिनके ऊपर लंबे लट्‌ठे डालकर तंबू की भाँति दोनों तरफ कपड़ा डाल देते हैं। जब वे मंडी में रहते हैं, तो तंबूदार मकानों पर दरवाजे लगाकर लौटते समय उन्हें उखाड़ देते हैं और अपनी-अपनी गुफाओं में रख लेते हैं, जिनकी रखवाली तिब्बती करते

हैं। 1904 में अंग्रेज और तिब्बती सरकार के बीच में हुई संधि की एक प्रतिज्ञा के अनुसार कोई भी भारतीय तिब्बत में छतदार मकान नहीं बना सकता।

लेखक ने सन् 1941 में पश्चिमी तिब्बती के गर्पोनों से मिलकर मानसरोवर के तट पर एक यज्ञ-वेदी और धर्मशाला निर्माण करने की बात की है। फलतः उस वर्ष अगस्त के महीने में श्रीकृष्णजन्माष्टमी के अवसर पर पुनीत मानसरोवर के तट पर ठुगोल्हो गोम्पा के पास एक यज्ञ-वेदी निर्माण की। धर्मशाला के बारे में 1942 में तकलाकोट के गवर्नर के साथ परामर्श हुआ। यद्यपि आज्ञा तो अभी तक नहीं मिली, परंतु आशा की जाती है कि इस वर्ष अवश्य मिल जाएगी। तिब्बत सरकार की आज्ञा मिलने पर लेखक के एक मित्र ने चार कमरे की धर्मशाला का व्यय देने का वाग्दान किया है। तकलाकोट में यात्रियों के लिए पक्की धर्मशाला बनाने के लिए 'दारमा सेवा-संघ' की ओर से प्रयत्न हो रहा है।

तिब्बत में महात्मा गाँधी को 'गाँधी माराजा' कहकर पुकारते हैं तथा कुछ लोगों के घरों में गाँधी और पंचम जार्ज की भेंट के अवसर के रंगीन चित्र लटकते हुए देखे जाते हैं। मंडी में बिकने वाले एक प्रकार के मोटे कपड़े को 'गांदी कद्दर' कहकर पुकारते हैं। कुछ लामाओं की धारणा है कि महात्मा गाँधी गुरु-पद्मसंभव के अवतार हैं। अखिल भारतीय चर्खा संघ के कुछ प्रतिनिधि पश्चिमी तिब्बत की मंडियों में चार-पाँच वर्षों से ऊन खरीदने के लिए जाने लगे हैं।

3. अंग्रेजों का व्यापार-प्रतिनिधि

सन् 1903 में भारत के गवर्नर जनरल लॉर्ड कर्जन के आदेश से कर्नल यंगहस्बेंड ने तिब्बत पर चढ़ाई की। अंग्रेजी सेनाओं ने अपनी तोपों की गोलियों से तिब्बतियों को ध्वस्त कर ल्हासा में प्रवेश किया। दलाई लामा पोताला राजभवन से भाग गए, उनके प्रतिनिधियों से अगस्त सन् 1904 में संधि-पत्र पर हस्ताक्षर कराया गया। उसके अनंतर भी सन् 1906,07 और 12 में तिब्बत और अंग्रेज सरकार के बीच में संधियाँ हुईं।

उक्त संधियों की एक प्रतिज्ञा के अनुसार पूर्वी तिब्बत में ग्यांची[1] और यातुङ में और पश्चिमी तिब्बत में—गरतोक में—अंग्रेजों के तीन व्यापार-प्रतिनिधि नियुक्त हैं। कहा जाता है कि वे प्रतिनिधि उन-उन प्रांतों में लगने वाली मंडियों में जाकर भारतीय व्यापारियों की देख-भाल करने के लिए नियुक्त किए गए हैं। अंग्रेजी सरकार की ओर से ऐजेंटों के द्वारा तिब्बती अफसरों को कुछ सौ रुपए की वस्तुएँ उपहार रूप में दी जाती हैं। किसी संधि की लिखी धारा के अनुसार सरकारी ट्रेड एजेंट की कचहरी में भारतीय व्यापारी से तिब्बतियों पर किए हुए मुकद्दमों में सरकारी ट्रेड ऐजेंट और तिब्बती अफसर—दोनों की सम्मति से न्याय किया जाता है। पश्चिमी तिब्बत के व्यापार-प्रतिनिधि प्रतिवर्ष मई के महीने में शिमले

1. ग्यांची दोर्जेलिङ से 216 मील पर, यातुङ सिकिम की सीमा से आठ मील की दूरी पर, और गरतोक भारत की सीमा से लगभग 100 मील की दूरी पर है। ग्यांची ल्हासा से 144 मील है।

से गरतोक जाते थे, वहाँ से प्रमुख मंडियों का निरीक्षण कर पुनः गरतोक लौट आते थे और लीपूलेख की घाटी से अलमोड़ा होकर नवंबर के महीने में शिमला लौट जाते थे। ये शीतकाल में शिमले में ही रहते थे। परंतु सन् 1942 में गङ्टोक पोलिटिकल ऑफिसर के पश्चिमी तिब्बत के दौरे के बाद यहाँ के प्रतिनिधि का ऑफिस शिमला से गङ्टोक बदल दिया गया; इसलिए इस वर्ष एजेंट अलमोड़े होकर ही मंडियों में जाएगा और इसी मार्ग से लौटेगा।

पश्चिमी तिब्बत में 1904 से अब तक पाँच ट्रेड एजेंट नियुक्त हो चुके। सर्वप्रथम एजेंट रायबहादुर ठाकुर जयचंद, दूसरे रायसाहब लाला देवीदास, तीसरे श्री पालाराम, चौथे ठाकुर हयातसिंह रावत (सन् 1928) और पाँचवें रायबहादुर काशीराम (सन् 1929 से 1941 तक) हुए। कहते हैं कि इन पाँचों में से श्री पालाराम के समय में भारतीय व्यापारियों को बहुत सहायता मिली और सचमुच उनके समय में मंडियों की बहुत कुछ देखभाल भी हुई; इसलिए बेचारे पालाराम को व्यापारियों की ओर से प्रेम के साथ दी हुई 'श्री' उपाधि के अतिरिक्त सरकार की ओर से कोई पदवी नहीं मिली। सन् 1942 में जोहार भोट प्रांत के निवासी ठाकुर लक्ष्मणसिंह जी नए बृटिश ट्रेड एजेंट नियुक्त हुए। इनके समय में सारे भोट व्यापारी आशा कर रहे हैं कि उनकी रामकहानियों पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

गरतोक के व्यापार-प्रतिनिधि भारतीय हैं और ग्यांची और यातुङ के अंग्रेज हैं। ग्यांची व्यापार एजेंसी में ब्रिटिश सरकार के 500 सिपाहियों का एक सुशिक्षित दल है। तिब्बती अफसरों का कहना है कि ग्यांची में साधारण बंदूकों के अतिरिक्त कुछ मशीनगनें भी हैं। ग्यांची और यातुङ के एजेंट स्थायी हैं और बारहों महीने वहीं रहते हैं। पहले गरतोक के एजेंट केवल आठ महीने के लिए नियुक्त होते थे और उनको उतने ही समय के लिए वेतन भी मिलता था; पर सुनते हैं कि अब वह भी बारह महीने के लिए नियुक्त हो गए हैं। तकलाकोट में बारहों महीना " के रहने के लिए मकानात बनाने और रक्षा के लिए 50-100 सिपाहियों के रहने की व्य । हो रही है, ताकि तिब्बती मंडियों में भारतीय व्यापारियों के अधिकार सुरक्षित रहें।

4. चिकित्सालय

तिब्बती वैद्यक ंथों के अनुसार सभी बीमारियों के तीन प्रधान और चार गौण कारण माने गए हैं। काम, क्रोध और मोह या अज्ञान—ये प्रधान कारण हैं, जो क्रमशः वात, पित्त और श्लेष से उत्पन्न होते हैं। ऋतु, जो गर्म और शीत को उत्पन्न करती है, दुष्टग्रह, दूषित आहार और विहार—ये गौण कारण माने गए हैं। रोगों के लिए अच्छा निदान दिया गया है और एक सहस्र से अधिक औषधियों के योग दिए गए हैं। इनके अतिरिक्त भयंकर बीमारियों में औषधि-देवता (मेन ल्हा) का पूजा-पाठ भी किया जाता है।

प्रायः पश्चिमी तिब्बत में कुछ भिक्षुओं को छोड़कर, जो थोड़ी-सी नाममात्र की दवा वितरित करते हैं, कहीं भी कोई अस्पताल या चिकित्सा का प्रबंध नहीं है। बहुधा सभी प्रकार के रोगों के निवारणार्थ यंत्र-मंत्र, झाड़-फूँक और पूजा-पाठ का ही प्रयोग करते हैं। किसी

भी रोग के रोगी को सत्तू, मांस और मद्य पिला देते हैं। पूर्वी तिब्बत में भारतीय आयुर्वेद या चीनी वैद्यक के अनुसार औषधि देने वाले कुछ वैद्य हैं, जो प्रायः भिक्षु ही हैं। ल्हासा में सरकार की ओर से एक आयुर्वेदीय औषधालय है। एकाध अपनी ओर से अंग्रेजी दवाओं का अभ्यास करने वाले वैद्य भी हैं। ब्रिटिश सरकारी एजेंटों के साथ एक अस्पताल, डॉक्टर और कंपाउंडर भी रहते हैं। यात्री, व्यापारी और तिब्बतियों को बिना शुल्क दवा वितरित की जाती है। ग्यांची और यातुङ में अंग्रेजी सरकार के बारहों महीने जारी रहने वाले अंग्रेजी अस्पताल हैं, जो एजेंटों के लिए रखे गए हैं। इन अस्पतालों के डॉक्टर भी अंग्रेज ही हैं। पश्चिमी तिब्बत के एजेंट का अस्पताल उनके साथ चलता रहता है।

5. डाकघर

पश्चिमी तिब्बत में भ्रमण करते समय एजेंट के साथ एक चलता हुआ पोस्ट ऑफिस (डाकघर) रहता है, जिसके द्वारा सप्ताह में एक बार डाक आया-जाया करती है। तकलाकोट से 30 मील की दूरी पर गर्ब्यांग और ज्ञानिमा मंडी से 65 मील की दूरी पर मिलम मानसखंड के सबसे निकट के डाकघर हैं। और ग्यांची और यातुङ में एजेंट बारहों महीने रहते हैं। ग्यांची में ब्रिटिश सरकार का एक स्थायी डाक और तारघर है, जहाँ भारतीय डाकरेट पर चिट्ठी और पार्सल भेजे जाते हैं। ग्यांची से ल्हासा तक तिब्बती सरकार की तार-लाइन है, जो 1922 में बनी थी। ल्हासा से कलकत्ते तक टेलीफोन और टेलीग्राफ बराबर चलते हैं। यहाँ पर डाक और तारघर हैं। गत आठ-नौ वर्षों से ल्हासा से अन्य सरकारी केंद्रों को पत्र और पार्सल भेजने के लिए टिकट प्रयोग में लाए जा रहे हैं। डाक या यातायात तसमों द्वारा चलता है।

ल्हासा के डाकघर, तारघर, बिजलीघर, बारूद के कारखाने, टकसाल आदि संस्थाओं का प्रबंध विलायत से शिक्षा पाकर आए हुए एक तिब्बती सज्जन कर रहे हैं। उन्हीं का एक भाई सन् 1942 में तकलाकोट का गवर्नर नियुक्त होकर आया है।

6. जोरावर सिंह

सन् 1935 में जंबू के राजा गुलाब सिंह के जनरल जोरावर सिंह ने पश्चिमी तिब्बत पर चढ़ाई कर लदाख को जंबू में मिला लिया और ल्हासा में दलाई लामा के पास यह संदेश भेजा कि रुदोक, गरतोक, पुरङ और कैलास-मानसरोवर का सारा प्रांत उनको दे दिए जायँ। इस संदेश का उत्तर आने से पहले ही वे सन् 1941 के जून मास में लेह (लदाख की राजधानी) से कैलास की ओर बढ़े। मार्ग में सब गाँव और गोम्पाओं को लूट लिया और दुर्गों को तोड़ डाला। पहले तीर्थपुरी के पास कुछ दिन के लिए डेरा डाला। वहाँ से आगे बढ़कर कैलास और मानसरोवर के बीच बरखा के विशाल मैदान में अपने सुशिक्षित पंद्रह सौ सिपाहियों के साथ दस सहस्त्र तिब्बती सेनाओं का सामना किया। बड़ी वीरता के साथ युद्ध करके तिब्बती सेना को तितर-बितर कर नष्ट कर दिया और वहाँ से सीधे तकलाकोट

गए और कोट के भीतर डेरा लगाकर पूर्ण रूप से किलेबंदी कर ली। जोरावर सिंह की बनाई हुई किलेबंदी का खंडहर तकलाकोट में अब भी विद्‌यमान है।

जोरावर सिंह के यहाँ आने से गढ़वाल और अलमोड़े के भोटियों के व्यापार में बहुत अड़चन पड़ गई, क्योंकि उन्होंने यह यत्न किया कि पश्चिमी तिब्बत का सारा ऊन का व्यापार काश्मीर की ओर खींच लिया जाय। उस समय नेपाल सरकार ने भी सुअवसर पाकर जंबू नरेश तथा लाहौर के सिख दरबार से मिलकर अपनी सरहद के तिब्बती प्रांतों को लेना चाहा। ऐसी परिस्थिति में अंग्रेज सरकार बहुत चिंतित हुई, क्योंकि हिमालय के पीछे इस प्रकार के मेल से भारत की सीमा पर उपद्रव का कारण खड़ा हो गया था। दूसरा कारण यह भी था कि अंग्रेज सरकार उस समय चीन के साथ युद्‌ध में लगी हुई थी, अतः लाहौर और जंबू के राजाओं पर दबाव डालने के लिए जे0डी0 कन्निंगहम को लाहौर भेजा—यह बात कहने के लिए कि दिसंबर मास तक गरतोक का प्रांत ल्हासा सरकार को वापस लौटा दिया जाय और जोरावर सिंह को जंबू तुरंत बुला लिया जाय। पर संयोग से दिसंबर मास में ही जोरावर सिंह मार डाले गए। युद्‌ध का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

जोरावर सिंह के तकलाकोट पहुँचने तक शीतकाल तीव्रता से प्रारंभ हो चुका था। और वे शीतकाल की समाप्ति पर पूर्व की ओर बढ़कर सारे तिब्बत को जीत लेना चाहते थे। अतः पहले अपनी स्त्री को गरतोक पहुँचा देने की इच्छा से अपने सेनापति बस्तीराम को सेना-सहित तकलाकोट में रखकर कुछ सिपाहियों के साथ वहाँ से चल पड़े। और गरतोक में स्त्री को पहुँचाकर लौटते समय तकलाकोट से तीन ही मील की दूरी पर तोयो गाँव के पास चीन और ल्हासा से आई हुई बड़ी सेना का उन्हें सामना करना पड़ा। तिसपर भी ये बड़ी शूरवीरता से लड़े। पर अपने मुट्‌ठी भर सिपाहियों की सहायता से इतनी बड़ी सेना का कितनी देर तक सामना कर सकते थे। उनकी अनुपम वीरता देखकर तिब्बतियों ने इन्हें तांत्रिक समझा। उनका विश्वास है कि तांत्रिक शीशे की गोली से नहीं, किंतु सोने की गोली से मरते हैं। अंत में तोयो मकपोन (पटवारी) के मकान की खिड़की से उन लोगों ने एक सोने की गोली से जोरावर सिंह को मार गिराया।[1] उनका सिर और दाहिना हाथ काट लिया गया, जो सिंबिलिङ गोम्पा में रखे गए और उनके मुंड के ऊपर एक छोरतेन निर्मित किया गया। एक अन्य गाथा के अनुसार जोरावर सिंह के शरीर के मांस का एक टुकड़ा और उनके सूबेदार का सिर और हाथ सिंबिलिङ गोम्पा में एक बंद पेटी में सुरक्षित रखा गया है। प्रति तीसरे वर्ष फाल्गुन के महीने में उनका एक बार प्रदर्शन किया जाता है। जोङ के भवन के पूर्व में स्थित एक मकान में जोरावर सिंह के नौ सिपाहियों का सिर और उँगलियाँ रखी गई हैं। भारत के उस वीरपुत्र के स्मारक-रूप में एक समाधि अब तक तोयो गाँव के बीच रास्ते में विद्‌यमान है। उसकी अवस्था अब बिगड़ती जा रही है। अपने वीर सेनापति की इस समाधि को सुरक्षित

1. जोरावर सिंह की मृत्यु का कारण पुरङ के कुछ बुड्ढे लोग ऐसा बताते हैं कि जोरावर सिंह के एक सेवक ने, जो उन पर रुष्ट था, तोयो के पास पहुँचने पर उन्हें निशस्त्र देखकर अचानक छुरी से मार डाला।

करने के लिए काश्मीर सरकार को चाहिए था कि कुछ प्रबंध करे। जोरावर सिंह की वीरता की प्रशंसा और चर्चा अब तक पुरङ में होती है। उनके सम्मानार्थ उस समाधि की कभी-कभी पूजा भी की जाती है। नेपाली और भोटिए भी इनकी बहुत प्रशंसा करते हैं। पुरङ में यह सिंगी गेलबो, सिंगी राजा, या सिंगबा के नाम से प्रसिद्ध हैं।

तोयो में जोरावर सिंह को मारकर तिब्बती सेनाएँ आगे तकलाकोट की ओर बढ़ीं। यह सुनते ही बस्तीराम और उनके साथ के सिख सिपाही भारत की ओर उसी कड़ी ठंढक में ही चल पड़े। अत्यधिक शीत पड़ने के कारण इन लोगों को बंदूकों के कुंदे जलाकर हाथ गर्म करने पड़े। लीपू लेक को पार करते समय ठंढक के कारण कुछ तो बर्फ में ही मर गए और बचे हुए कुछ सिपाही अपनी ह्रदयविदारक दुःखवार्त को सुनाने के लिए भारत पहुँच आए। उस समय उन्होंने अपने पास बची हुई तलवारें, कवच आदि को मार्ग में भोजन के लिए बेच डाला था, जो अब तक कई ब्याँस और चौदाँस के लोगों के घरों में और अस्कोट के रजवाड़ों के यहाँ रखे गए हैं, उन लोगों के सिक्के भी कुछ लोगों के पास अभी तक सुरक्षित हैं।

तिब्बती सेना तकलाकोट पहुँचकर जोरावर सिंह की बची हुई सेना को बंदी बनाकर ल्हासा ले गई। उनमें से बहुत से मुसलमान थे। जिन मुसलमान सिपाहियों ने मठों के जलाने में तथा मूर्तियों को तोड़ने में भाग लिया था, उन्हें बुरी तरह से मार डाला गया और दूसरे लोगों को वहीं बसा लिया गया। कहा जाता है कि आजकल ल्हासा में जो मुसलमान बसे हुए हैं, वे उन्हीं के वंशज हैं। पराजित जोरावर सिंह और उनके सिपाहियों के कवच, तलवारें, ढाल, भाले, बंदूकें और फरशे अब तक सिंबिलिङ और कैलास के न्यनरी, गेङ्टा और दूसरे मठों में रखे हुए हैं।

तोयो और तकलाकोट के मध्य में छेमो छोरतेन नामक गाँव में दो बड़े-बड़े छोरतेन बने हैं, जो जोरावर सिंह के सूबेदारों के बताए जाते हैं। 'वेस्टेर्न टिबेट' नामक ग्रंथ में शेरिंग लिखते हैं—"जोरावर सिंह के शव पर झपटकर तिब्बतियों ने चील के पर के समान उनके बालों को उखाड़ लिया और अपने घर ले गए— यह विश्वास करके कि वे भविष्य में कल्याणकारक होंगे। उसके बाद जोरावर का मांस छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर पुरङ में प्रत्येक कुटुंब को एक-एक टुकड़ा बाँटा गया। ये टुकड़े घरों में छत से लगाकर टाँगे गए, ताकि घर में रहने वाले लोगों में वीरता का संचार हो। यह भी अफवाह थी कि उन मांस के टुकड़ों से कई दिनों तक मेद निकलता रहा। इससे अविश्वासी भी जोरावर की वीरता को मानते थे। बाद में जोरावर की हड्डियों के ऊपर तोयो गाँव में एक समाधि बनी।" शेरिंग की उपर्युक्त बातें कहाँ तक सत्य हैं, मैं नहीं बतला सकता; क्योंकि सारे मानसखंड में इन बातों की पुष्टि करने वाला कोई तिब्बती मुझे नहीं मिला।

आगे चलकर शेरिंग ने इससे भी बढ़कर एक विचित्र बात लिखी है—"एक मुट्ठी भर आदमी साथ लेकर जब जोरावर सिंह तकलाकोट लौट रहा था, तो उसने देखा कि

तकलाकोट और उनके बीच में तिब्बती सेनाएँ विद्यमान थीं। निदान तोयो के पास दोनों में युद्ध हुआ और घुटने में चोट आने पर घोड़े से गिरकर जोरावर सिंह मर गए। तिब्बती सेना को अधिक संख्या में देखकर जोरावर सिंह के सिपाहियों ने हथियार डाल दिए और दया-भिक्षा के लिए आत्मसमर्पण कर दिया। तिब्बतियों ने उन सबको भेड़ों की भाँति कत्ल कर डाला।.......... तिब्बतियों ने अनेक सहस्र सिख सिपाहियों के सिर बड़ी क्रूरता के साथ काट डाले और बस्तीराम कुछ सिपाहियों के साथ पाला भाग गया।'' इससे स्पष्ट है कि शेरिंग ने इस कथा के बारे में बढ़ाकर लिखा है, क्योंकि वे एक स्थान पर तो लिखते हैं कि उस समय ''जोरावर के पास मुट्ठी भर आदमी थे।..... जोरावर सिंह की कुल सेना पंद्रह सौ सिपाहियों की थी, जिनमें कुछ तो बस्तीराम के साथ भाग गए।'' और साथ ही यह भी लिखते हैं कि कई सहस्र सिखों को तिब्बतियों ने कत्ल कर डाला।

इस युद्ध के बाद सन् 1882 की वसंत ऋतु में विजयी तिब्बती सेनाओं ने सिंधु नदी के किनारे-किनारे जाकर अपने सूबों को वापस ले लिया और लदाख जाकर उसकी राजधानी लेह को घेर लिया, परंतु राजा गुलाब सिंह की सेना ने जाकर लेह और रुदोक के बीच में उसको घेर लिया। इसलिए दोनों पक्षों में संधि हो गई और यह निश्चित हुआ कि राजा गुलाब सिंह के लिए लदाख का प्रांत छोड़ दिया जाय और लदाख का पूर्वी प्रांत तिब्बत के ही अधीन रहे, और अल्मोड़ा और पश्चिमी तिब्बत के बीच का ऊनी व्यापार पूर्ववत चलता रहे। इसके बाद 16-3-1846 में राजा गुलाब सिंह और ब्रिटिश सरकार के बीच में संधि हुई, जिसके अनुसार 75 लाख नानकशाही रुपए राजा गुलाब सिंह ने अंग्रेज सरकार को देकर काश्मीर मोल ले लिया। तभी से गुलाब सिंह जंबू और काश्मीर के महाराजा हुए। उपर्युक्त संधि की ग्यारहवीं शर्त के अनुसार राजा गुलाब सिंह ने ब्रिटिश सरकार की अधीनता स्वीकार कर ली और प्रतिवर्ष उनको एक घोड़ा, उत्तम ऊन वाले छह बकरे तथा छह बकरियाँ और तीन जोड़े काश्मीरी शाल देने का वायदा किया।

भारतीय वीर जनरल जोरावर सिंह की मृत्यु–शताब्दी 30-10-1942 को तकलाकोट मंडी में श्री दारमा सेवा संघ की ओर से मनाई गई। उस अवसर पर लेखक ने पुरङ घाटी के तिब्बतियों से जोरावर सिंह के ढाल आदि कई वस्तुओं को लाकर सर्वसाधारण के बीच प्रदर्शन किया था।

7. कज्जाकी घुमक्कड़ों की लूटमार

जोरावर सिंह के युद्ध के ठीक सौ वर्ष बाद सन् 1941 में रूस के किरघिज-कज्जाकिस्तान के लगभग तीन हजार घुमक्कड़ों ने अप्रैल के महीने में चङथङ नामक तिब्बत के उत्तरी सूबे में प्रवेश किया। ये कज्जाकी लोग घुमक्कड़ थे, जो रूसी सरकार के बहुत प्रयत्न करने पर भी एक जगह नहीं बसाए जा सके। उनका कोई विशेष धर्म नहीं, यद्यपि वे अपने देश में मुसलमानों में गिने जाते हैं। ये लोग अपने बाल-बच्चे, तंबू तथा सारे सामान को ऊँटों पर लादकर तीन वर्ष तक चीन में घूमते-घूमते यहाँ पहुँचे और उन्होंने पश्चिमी तिब्बत पर चढ़ाई करके मार्ग के सभी गोम्पाओं को तथा मानसरोवर के आठ मठों को लूट

लिया। ये ब्रह्मपुत्र के किनारे टम्सङ नामक स्थान पर डेरा डालकर पंद्रह-पंद्रह, बीस-बीस घुड़सवारों के जत्थों में निकलकर आस-पास के स्थानों को लूटते थे। नेपाल में प्रवेश करने के लिए एक जत्था उसकी सीमा पर गया। वीर गुरखे सिपाहियों ने कुछ कज्जाकी लुटेरों को बंदूकों से उड़ा दिया, इस कारण पुनः नेपाल में प्रवेश करने का उनका साहस जाता रहा और वे मानसरोवर की ओर चले गए।

इन कज्जाकी लुटेरों ने मठों और मकानों को तोड़कर जला दिया। तिब्बतियों के धर्म-ग्रंथों को हवा में उड़ा दिया। इस प्रकार के फेंके हुए ग्रंथों से दो-चार को मैंने भी एकत्र किया। कई स्थानों में मठों के ऊपर लगे हुए झंडों को भी जलाकर भस्म कर दिया। लूटे गए कुछ व्यक्तियों से मैं मिला, उनमें से एक की रामकहानी सुनाता हूँ, जो इस प्रकार है—लदाख का एक प्रतिष्ठित लामा ल्हासा से अपने देश जा रहे थे, मयुम ला के पास इनको कज्जाकियों ने लूटकर बिलकुल नंगा छोड़ दिया। इनके साथ अठारह आदमी और एक सौ लद्दू जानवर थे, जिनमें सोने और चाँदी की बहुत-सी मूर्तियाँ तथा सिक्के लदे थे। राज्य-संस्करण के कंजूर और तंजूर के एक सौ आठ और तीन सौ अड़तीस पोथियों को निर्दयतापूर्वक इधर-उधर फेंक दिया। जब कज्जाकी लोग मानसरोवर के उत्तरी किनारे पर पहुँचे, तब उनके पास एक लाख भेड़-बकरी, चार हजार याक और दो हजार घोड़े, पचासों बंदूकें और कारतूस, मूर्तियाँ, आभूषण, रत्न और सिक्के के रूप में सहस्रों रुपयों का सोना-चाँदी था। इनके तंबू मानसरोवर के किनारे पंद्रह मील तक फैले हुए थे। इन लोगों के मानसरोवर के उत्तरी किनारे पर पहुँचने तक (जुलाई से सितंबर तक) मैं मानसरोवर के दक्षिणी किनारे पर ठुगोल्हो मठ में था।

तरछेन के भूटानी अफसर ने अपने मकान की किलेबंदी करके बंदूक और कारतूसों के साथ तैयारी की थी, जिसके कारण कैलास के गोम्पाओं को ये लोग नहीं लूट सके। कैलास और मानसरोवर के मध्य परखा के मैदान में ये लोग डेरा डालकर पुरङ-तकलाकोट दून में और वहाँ से लीपूलेख घाटा होकर अल्मोड़े जिले में प्रवेश करना चाहते थे। इस उद्देश्य से पहले-पहल सत्तर-अस्सी घुड़सवारों का एक जत्था तकलाकोट जाने के लिए तैयार होकर, राक्षसताल के छेपगे गोम्पा को लूटने के लिए गया। यद्यपि उस समय छेपगे गोम्पा में तीन ही व्यक्ति थे, तथापि भीतर से उन लोगों ने एक बंदूक से लुटेरों की नेत्री और एक प्रधान को मार डाला। इसलिए तकलाकोट और भारत जाने का इरादा छोड़कर वहाँ से भाग जाना ही कज्जाकियों को उचित समझ पड़ा। उस मरी हुई नेत्री का हृदय तथा सिर छेपगे गोम्पा में अब तक विजय-चिह्न के रूप में रखा हुआ है। शव का मुंड गोम्पा से थोड़ी दूर पर जमीन में गाड़ दिया गया। दो-तीन दिनों तक ये छकरा मंडी को लूटने के लिए गए, परंतु भोटिया व्यापारियों तथा तिब्बती लोगों ने मिलकर एक पर्वत की चोटी पर किलेबंदी कर ली, जहाँ सशस्त्र रात–दिन पहरा करते रहे, जिससे वहाँ पर इनकी दाल नहीं गल सकी। आगे चलकर तीर्थपुरी, गुरुगेम, ख्युङलुङ, मिस्सर, गरतोक और गरगुनसा आदि स्थानों में जोहारी व्यापारियों के लगभग एक लाख रुपए के कपड़े, घोड़े, बकरी, भेड़ आदि को लूट लिया। फिर पश्चिमी तिब्बत की गरतोक और गरगुनसा राजधानी को पूर्ण रूप से नष्ट

करके नवंबर मास में लदाख में प्रवेश किया। काश्मीर की सीमा पर काश्मीरी पलटन ने इन कज्जाकी लुटेरों का सामना करके सभी शस्त्र छीन लिए और आगे जाने का मार्ग दे दिया। लगभग सन् 1941 के अंत में भारत सरकार ने हजारा जिले में इनके बसने का तात्कालिक प्रबंध कर दिया और मई 1942 से फरवरी 1943 तक उनके लिए लगभग 238000 रुपए व्यय किया। अब निजाम और भोपाल की सरकारें स्थायी रूप से इनके बसाने का यत्न कर रही हैं।

8. नेपाल और तिब्बत

सातवीं शताब्दी में सम्राट स्रोङ्चेन गोम्पो के नेपाल पर विजय करने के समय से इन दोनों देशों का विशेष संबंध प्रारंभ हुआ। इसके पश्चात नेपाल से कई पंडित बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ तिब्बत गए थे। इसके अतिरिक्त बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए गए हुए प्रायः सभी भारतीय आचार्य और पंडित नेपाल होकर ही गए थे। और उसी प्रकार सारे तिब्बती पंडित नेपाल होकर ही भारत आए। आज भी नेपाल के अंदर तिब्बत की सीमा पर बहुत से बौद्ध धर्मावलंबी तिब्बती हैं। नेपाल की राजधानी काठमांडू में बौद्धों के तीन महान तीर्थ हैं—(1) काठमांडू के दो मील पश्चिम में स्वयंभू (पगवा शिंगुन), (2) ईशान कोण में तीन मील पर महाबोधि (चरुंग खाशुर), और (3) आग्नेय कोण में तीन मील पर नमोबुद्धाय (तामो लुजिन)। इनके दर्शन के लिए मानसखंड और तिब्बत के अन्य प्रांतों से बहुत-से तिब्बती यात्री जाते हैं।

सन् 1760 में जब नेपालियों ने तिब्बत पर चढ़ाई की, तब चीनी सेनाओं ने आकर नेपालियों का काठमांडू तक पीछा किया और हरा दिया। काश्मीर के जनरल जोरावर सिंह के पश्चिमी तिब्बत पर चढ़ाई करने के अनंतर सन् 1854 या 1856 में नेपाल और तिब्बत के बीच युद्ध छिड़ा। उस समय नेपालियों ने पुरङ-तकलाकोट पर चढ़ाई करके तिब्बतियों को हरा दिया, जिसके परिणामस्वरूप तिब्बत प्रतिवर्ष नेपाल को 10000 नेपाली मुहर (3750 रुपए) अब तक देता है। उसी चढ़ाई में सिद्दिखर के कोट को नेपालियों ने तोड़ डाला, जिसके ध्वंसावशेष अब तक विद्यमान हैं। इस युद्ध के परिणामस्वरूप ल्हासा में नेपाल का राजदूत नियुक्त हुआ। इसके अतिरक्त नेपालियों को तिब्बत में व्यापार-संबंधी विशेष सुविधाएँ भी मिलीं। ल्हासा, ग्यांची, शिगर्ची, और नन्यू में एक प्रकार के न्यायाधीश भी नियुक्त हुए, जो नेपाली प्रजा के मुकदमों का फैसला करते हैं।

पुनः सन् 1929 में इन दोनों देशों में अशांति मचने की परिस्थिति उत्पन्न हो गई थी, पर 1930 के प्रारंभ में यह परिस्थिति शांत हो गई। सन् 1941 में जब रूस के कज्जाकी घुमक्कड़ों ने पश्चिमी तिब्बत पर चढ़ाई की थी, तब नेपाल सरकार तिब्बत को सहायता देना चाहती थी और इसी आशय से तकलाकोट के जोङ को खबर भी भेजी गई थी, परंतु तिब्बत सरकार ने नेपाल की सहायता को स्वीकार नहीं किया, क्योंकि उनको आशंका थी कि पहले की भाँति दंड न देना पड़े। तकलाकोट में गुकुङ के पास और पुरूरव में नेपालियों की मंडी लगती है, जहाँ अनाज और लकड़ी के बर्तन आदि वस्तएँ अधिकता से बिकती हैं।

9. भूटान के उपनिवेश

आज से लगभग तीन सौ वर्ष पहले (ठीक तिथि का पता नहीं लग सका) ङावा नम्ग्यल नामक एक प्रसिद्ध डुकपा (भूटान निवासी) लामा को तिब्बत सरकार से तरछेन नामक गाँव मिला था। विख्यात व्यक्ति होने के कारण उन्होंने न्यनरी, जुंठुलफुक् आदि कई गोम्पाओं का निर्माण किया और कई स्थानों पर अधिकार भी जमा लिया। तभी से ये स्थान भूटान के भिक्षुओं द्वारा शासित होते आए हैं, अर्थात् भूटान के अंतर्गत होकर उसके शासन में आ गए। कैलास के न्यनरी और जुंठुलफुक् मठों में लामा ङावा नम्ग्यल की बड़ी-बड़ी मूर्तियाँ हैं।

पश्चिमी तिब्बत में तरछेन ग्राम और कैलास के न्यनरी और जुंठुलफुक् नामक गोम्पा, मानसरोवर का चेरकिप गोम्पा, पुरङ का दुङ्मर, रिगुंग, दोह और खोचार, गरतोक के पास के गेजोन गोम्पा, इछे गोम्पा, गुनफु, गेसुर, समर और कुछ अन्य स्थान भूटान राज्य के लामाओं के उपनिवेश हैं। तरछेन में भूटान के लामाओं का एक बड़ा भारी भवन है। इसी भवन को केंद्र बनाकर भूटान देश के एक भिक्षु-प्रतिनिधि उपर्युक्त सभी स्थानों का शासन करते हैं। इनके कोट के समान भवन को देखकर ही सन् 1941 में कज्जाकी डाकुओं ने कैलास के गोम्पाओं पर आक्रमण करने का साहस नहीं किया।

10. सिक्का

टंका या टंगा तिब्बत में प्रचलित चाँदी का सिक्का है। यह भारत की चाँदी की चवन्नी-जैसा मोटा और अठन्नी जितना बड़ा होता है। टंका को काटकर उसे दो बना देते हैं और उनके चंद्राकार किनारों को छोड़कर बीच का अंश निकाल लेते हैं। ये आधे टंके हैं, जो 'जव' के नाम से पुकारे जाते हैं। खगंग ($\frac{1}{6}$ टंका), करमाङ ($\frac{1}{3}$ टंका), छेग्ये ($\frac{1}{2}$ टंका), शोगंग ($\frac{2}{3}$ टंका) के ताँबे के सिक्के ल्हासा के प्रांत में प्रचलित हैं। नौ-दस वर्ष से कागज के नोट, चाँदी के रुपए (सङ्सुम) और अठन्नी (चुगुर या टमचू) भी बनने लगे हैं। यहाँ के रुपए और अठन्नियों की चाँदी भारतीय सिक्कों की चाँदी से अच्छी होती है किंतु अंग्रेजी रुपए का दाम अधिक है। भारत के रुपए तिब्बत में बेरोक-टोक व्यवहृत होते हैं, परंतु नोट नहीं। आजकल मानसखंड में भारतीय रुपए के आठ टंके मिलते हैं और पूर्वीय तिब्बत में दस से बारह तक मिलते हैं। भारत के रुपए को गोरमो या कंफनी कहते हैं। तिब्बती रुपए आजकल पाँच टंकों में भुनते हैं।[1]

इनके अतिरिक्त नेपाली रुपए और मुहरें तिब्बत की मंडियों और आस-पास के मैदानों में खुले तौर से चलती हैं। तिब्बती भाषा में नेपाली रुपए को 'ढक' और मुहर को 'गुटंग' कहते हैं। ये छह और तीन टंके के समान हैं। मंडियों में चाँदी के चीनी सिक्के भी चलते हैं, जो 1, $1\frac{2}{8}$, और $2\frac{3}{4}$ तोले के होते हैं। इनका भाव अनिश्चित है।

---

1. ये सब सन् 1942 के अंत तक के भाव हैं। इस वर्ष टंके का भाव बढ़ने की बात सुनने में आ रही है।

11. मानसखंड के प्रसिद्ध यात्री[1]

पुराणों में कहा गया है कि मानसखंड में प्राचीनकाल में परम शिव और ब्रह्मा ने तपश्चर्या की थी। मारीचि, वशिष्ठादि महर्षियों ने यहीं पर बारह वर्षों तक तप किया था। ऋषि दत्तात्रेय ने मानसरोवर में स्नान कर कैलास, शिव और पार्वती के दर्शन किए थे। कृतयुग में मांधाता आदि, त्रेता में रावण-भस्मासुर आदि ने यहीं पर सदाशिव की तपस्या की थी।

महाभारत में सभापर्व के 19वें और 28वें अध्याय में अर्जुन की दिग्विजय के संबंध में लिखा गया है कि मानसरोवर के पास पहुँचकर गंधर्वों के देश को जीतकर वे वहाँ के राजा से कई प्रकार के उच्चकोटि के घोड़े, दिव्य वस्त्र, दिव्य अस्त्र, चर्म, स्वण और रत्न आदि लाए। आगे चलकर 52वें अध्याय में यज्ञ के वर्णन में लिखा है कि मेरु और मंदर पर्वतों के मध्य के राजा लोग युधिष्ठिर को राजसूय यज्ञ में भेंट करने के लिए निम्न वस्तुएँ ले आए—चंद्रमा की कांति के समान प्रभावशाली मणि, काले और लाल रंग के चँवर, बहुत बलवर्धक औषधियाँ आदि। इससे प्रतीत होता है कि ये वस्तुएँ मानसखंड से ही आई हैं और अर्जुन अवश्य मानसखंड में गए होंगे। ऐसी गाथा है कि द्वापर और कलि के संधिकाल में व्यास और भीमसेन, और एक बार कृष्ण भगवान और अर्जुन कैलास के दर्शन के लिए गए थे। अति प्राचीन काल से अनेक ऋषि और महर्षिगण कैलास और मानसरोवर के दर्शनार्थ तथा वहाँ पर रहकर तपस्या के लिए जाते रहे हैं।

कुछ इतिहासकारों का मत है कि सम्राट अशोक द्वारा नियुक्त होकर कुमाऊँ के कत्यूरी राजा नंदीदेव ने ऊँटाधुरा के मार्ग से मानसखंड पर चढ़ाई की थी और वहाँ हूणियों (तिब्बतियों) को परास्त कर अपना आधिपत्य स्थापित किया। कैलास के दर्शन कर वे मानसरोवर में स्नानादि करके भारत लौट आए। पुनः दूसरे वर्ष मानसखंड में गए। पांडुकेश्वर[2] के मंदिर में विद्यमान ताम्रपत्रों से विदित होता है कि कत्यूरी राजा ललित सूरदेव और देशट देव ने ई० शताब्दी से पूर्व मानसखंड (हूण देश) पर चढ़ाई करके विजय प्राप्त की थी। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग (युआन-च्वाङ, सन् 635) अपनी भारत-यात्रा का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि कुमाऊँ के कत्यूरी राजवंश छठी शताब्दी में मानसखंड पर शासन करते थे। सातवीं शताब्दी में इछिङ और कतिपय चीनी यात्री (सन् 675—685) मानसखंड होकर भारत के नालंदा विश्वविद्यालय में बौद्ध धर्म का अध्ययन और बौद्ध तीर्थों के दर्शन के लिए गए थे।

कङरी-करछक में लिखा है कि गेवा गोजङबा ने कैलास और मानसरोवर की परिक्रमा के मार्ग का पता सर्वप्रथम लगाया, परंतु उनके समय का ठीक पता अब तक नहीं लगा। एक समय भारत से सात कन्याएँ मानसरोवर गईं और सरोवर के नैऋत कोण में मोमो दुनगू

---

1. यह शीर्षक मेरे मित्र, सरस्वती प्रकाशन मंदिर के अध्यक्ष श्री शालिग्राम जी वर्मा, एम०ए० के सुझाव पर लिखा गया है। इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।
2. यह गाँव जोशीमठ और बदरीनाथ के मध्य में है। ताम्रपत्र मंदिर में रखे हुए हैं, जो विक्रम संवत 25 के हैं।

(सात कन्याओं) के पास पत्थरों का सात ढेर लगाया। कहा जाता है कि ये पत्थर भी भारत से ले जाए गए हैं। वे हलके पिरोजी रंग के हैं। इनकी आकृतियाँ तिब्बती चाय की ईंट, थूँ और गुड़ की भेली-जैसी हैं।

कहा जाता है कि जगतगुरु आदि शंकराचार्य कैलास-यात्रा के लिए गए थे और वहीं पर उन्होंने शरीर त्याग किया। भारतीय पंडितों के अनुसार उनका समय ईसा से पहले का है और पाश्चात्य पंडितों के अनुसार वे आठवीं शताब्दी के माने जाते हैं।

तिब्बतियों का कहना है कि नवीं शताब्दी के प्रारंभ में नालंदा विश्वविद्यालय के आचार्य शांतरक्षित[1], जिन्होंने तिब्बत में सर्वप्रथम मठ का निर्माण कराया था, मानसखंड में यात्रा के लिए गए थे। नवीं शताब्दी में कुछ चीनी भूगोल-शास्त्री और अफसर लोग मानसखंड में आकर भूगोल से संबंध रखने वाली सामग्रियों को एकत्रित करके चीन वापस गए और वहाँ जाकर उन्होंने मानसखंड के मानचित्र बनाए। सन् 1027 में काश्मीर के पंडित सोमनाथ ने मानसखंड में जाकर 'कालचक्र ज्योतिष' को तिब्बती भाषा में अनुवाद करके प्रभवादि संवत्सर के बृहस्पति-चक्र का प्रचलन किया। इनके साथ लक्ष्मीकर और दान श्रीचंद्र राहुल भी थे।

ग्यारहवीं शताब्दी में तिब्बत का विख्यात तांत्रिक, सिद्ध और कवि जिचुन मिलारेपा[2] (जिसका जन्म 1038 में और मृत्यु 1112 में हुई) और उनके गुरु लामा मरपा ने कैलास के पास रहकर तपस्या की थी तथा बहुत दिनों तक मानसखंड में निवास कर विचरण किया था। मिलारेपा और उनकी सिद्धियों के बारे में कई कथाएँ प्रचलित हैं। उनकी जीवनी और

---

1. इनका जीवनकाल सन् 740 से 840 तक है। इनके और इछिङ के मानसखंड जाने का विश्वस्त ऐतिहासिक आधार नहीं मिला।
2. सिद्ध मिलारेपा की गुरुपरंपरा इस प्रकार है—

तिलोपा (तिलोवा)
|
नरोपा (नरोवा) (1040)
|
लामा मरपा (मरवा)
|
जिचुन मिलारेपा (1038-1112)
|
थकपो ल्हनजिर

तिलोपा वंगदेश के प्रसिद्ध तांत्रिक थे। नरोपा काश्मीरी पंडित थे। लामा मरपा तिब्वती और गृहस्थ-लामा थे। मिलारेपा और उनके शिष्य भी तिब्वती थे। उनकी शिष्यपरंपरा अव तक करग्युडपा संप्रदाय के नाम से प्रसिद्ध है।

कविताएँ तिब्बती भाषा में छपी हुई हैं और वे बहुत प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि उन्होंने कैलास के पास नग्न रहकर कई वर्षों तक केवल बिच्छू बूटी खाकर ही तपस्या की थी। बिच्छू बूटी के खाने से उनका शरीर भी इतना हरा हो गया था कि हरी झाड़ियों के बीच उन्हें पहचानना कठिन होता था।

एक बार मिलारेपा की बहन उनका दर्शन करने गई और उन्हें नंगा देखकर कहा—"तुम्हें लज्जा नहीं आती, तुम नंगे रहते हो।" यह कहकर उनके पहनने के लिए एक वस्त्र दे दिया। मिलारेपा ने उस वस्त्र को फाड़कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए और अँगुलियों को लपेटकर कहा कि "जो अंग जन्म के साथ उत्पन्न न होकर बाद में उपजता है, उसे ढकने के लिए कपड़े की आवश्यकता पड़ती है। मैं जैसा आया था अब भी वैसा ही हूँ। मुझे लज्जा किस बात की और कपड़ा किस काम का।" कैलास-पुराण में लिखा हुआ है कि जब पहले-पहल मिलारेपा मानसखंड आ रहे थे, तो कैलास और मानसरोवर के समस्त देवगण उनका स्वागत करने के लिए टंग नदी तक गए। वहाँ से आगे जाने पर मानसरोवर के पास पोन धर्मावलंबी विपक्षी नरोपुंजुङ से उनका सामना हुआ। नरोपुंजुङ ने अपनी सिद्धि का प्रदर्शन करने के लिए दोनों टाँगों को बढ़ा लिया और मानसरोवर के दोनों किनारों पर दोनों पैरों को रखकर खड़े हो गए। मिलारेपा ने इसका उत्तर देने के लिए समस्त मानसरोवर को अपनी अंजलि में उठा लिया, जिससे सरोवर का जल उनकी गर्दन तक आ गया। वहाँ से दोनों कैलास की परिक्रमा के लिए चले। न्यनरी गोम्पा के पास मिलारेपा ल्हा छू के दाहिने किनारे के पर्वत की एक गुफा में बैठे हुए थे। नरोपुंजुङ नदी के बाँईं ओर के पर्वत की गुफा में टिके हुए थे। मिलारेपा ने अपनी टाँगें फैलाकर नरोपुंजुङ की गुफा[1] में छाप लगाया, जो अब भी दिखाया जाता है। तब नरोपुंजुङ भी पैर फैलाकर मिलारेपा की गुफा में छाप लगाना ही चाहते थे कि उनके पैर बीच ही में नदी में गिर पड़े, जिससे आकाश हँस पड़ा।

इस प्रकार इन दोनों द्वारा प्रदर्शित अनेक सिद्धियों का विशद वर्णन किया गया है। विस्तार-भय से उन सबों का उल्लेख यहाँ पर नहीं किया जा रहा है। केवल एक घटना मात्र दी जा रही है। नरोपुंजुङ कैलास की उल्टी परिक्रमा करने वाले थे और मिलारेपा सव्य-प्रदक्षिणा करने वाले थे। कैलास पर आधिपत्य जमाने के लिए दोनों में कई प्रकार की सिद्धियों का प्रदर्शन हुआ। अंततः यह निश्चत हुआ कि पूर्णिमा के दिन कैलास–शिखर पर पहले पहुँचने वाले का ही कैलास पर अधिकार समझा जायगा। बस, कहने की ही देर थी। नरोपुंजुङ ने कैलास पर चढ़ना आरंभ कर दिया। और 'ङा'[2] पर चढ़कर सारी रात पर्वतारोहण करते रहे। पर मिलारेपा उतने समय तक गाढ़ी निद्रा में निमग्न थे।

दूसरे दिन प्रातःकाल के समय जब अंशुमाली अपनी कोमल किरणों का विस्तार कर

---

1. इन दोनों गुफाओं का अंतर सीधी रेखा में पाँच-छह सौ गज होगा।
2. 'ङा' एक प्रकार की लकड़ी है, जिससे मठों में ढोल बजायी जाती है, जिसका आकार प्रश्नसूचक चिह्न (?) जैसा होता है।

रहे थे मिलारेपा के शिष्य ने अपने गुरु को उद्बोधित करके कहा—'महाराज, नरोपुंजुङ तो आधे से अधिक शिखर पर चढ़ चुके और आप अभी तक सो रहे हैं।'' बात हो ही रही थी कि मिलारेपा सूर्य की एक रश्मि पर आरोहण करके क्षण भर में शिखर के अग्र भाग पर पहुँच गए और वहाँ आसन बिछाकर पूजापाठ करने लगे। नीचे से आते हुए पोन धर्मावलंबी पर उन्होंने ऐसी धौंस जमाई कि वह अपने डमरू के साथ पहाड़ से लुढ़कता हुआ नीचे गिर पड़ा। कहते हैं कि शिखर के दक्षिण भाग में जो ऊर्ध्वपुंड्र की सीढ़ी-जैसा हिमरहित काला पहाड़ दिखलाई पड़ता है, वह नरोपुंजुङ की लुढ़कती हुई डमरू की रगड़ से बना हुआ है। अंततः नरोपुंजुङ ने मिलारेपा से अपनी पराजय स्वीकार की। इस प्रकार कैलास पर मिलारेपा का अधिकार हो गया। फिर नरोपुंजुङ ने मिलारेपा से अपने लिए एक स्थान की याचना की। उन्हेंने एक मुट्ठी भर बर्फ लेकर फेंक दिया, जो पोनरी की चोटी पर जा गिरी और तभी से कुछ बर्फ पोनरी के शिखर पर सर्वदा विद्यमान रहती है। मरवा, मिलारेपा और थकपोल्हनजिर—इन तीनों ने मिलकर पुरङ के लुकपू नामक ग्राम में एक शीतकाल तक रहकर तपस्या की थी।

सन् 980 में विक्रमपुरी (भागलपुर के पास) के एक राजवंश में आचार्य श्री दीपंकर श्रीज्ञान का जन्म हुआ था। नालंदा विश्वविद्यालय में इन्होंने उच्च विद्या प्राप्त की। 31 वर्ष की आयु तक त्रिपिटक, हीनयान, महायान, वैशेषिक, योगाचार, तंत्र और मंत्र–शास्त्र में ये पारंगत हो गए। भिक्षुओं में उच्च उपाधि बोधिसत्व की भी प्राप्ति की। तदुपरांत स्वर्णद्वीप में जाकर बारह वर्ष महापंडित धर्मपाल के पास अध्ययन किया। वहाँ से लौटकर आने के बाद विक्रमशिला विहार में मुख्य अधिष्ठाता नियुक्त किए गए और वहाँ के आठ महापंडितों में प्रमुख हुए। पश्चिमी तिब्बत में गुगे के सम्राट चङच्छुपओ के निमंत्रण पर आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान ने आज से 900 वर्ष पहले (सन् 982-1054) सन् 1042 में बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ इकसठ वर्ष की आयु में पश्चिमी तिब्बत में जाकर थुलिङ मठ में नौ महीने तक निवास किया था। वहाँ के निवास के समय धर्मोपदेश के अतिरिक्त उन्होंने कई पुस्तकों का तिब्बती भाषा में स्वतंत्र रूप से प्रणयन और अनुवाद किया। यहीं पर उन्होंने अपनी 'बोधिपथ-प्रदीप' नामक प्रसिद्ध पुस्तक का प्रणयन किया था। कहा जाता है कि थुलिङ से बारह मील की दूरी पर स्थित छबरङ के गोम्पा को दीपंकर ने एक सप्ताह में बनवाया था।

सन् 1044 में ये थुलिङ से कैलास और मानसरोवर गए और कैलास की परिक्रमा की। मानसरोवर के पहले मठ गोछुल गोम्पा में सात दिन ठहरे, फिर पुरङ में खोचारनाथ का दर्शन करने गए। ये तिब्बत में पल्देन[1] अतिशा और मरमेजे नामों से प्रसिद्ध हैं।

खोचारनाथ के मार्ग में जाते हुए गेजिन[2] नामक ग्राम में आचार्य अतिशा भिक्षा के लिए गए, परंतु वहाँ भिक्षा नहीं मिली। एक मील आगे जाने पर उनका सेवक भूख-प्यास

1. तिब्बती भाषा में 'पल' शब्द देवता या सिद्ध महात्माओं के पूर्व जोड़ा जाता है, जैसे पलदेन अतिशा और पलदेन ल्हमो। गत वर्ष एक लामा ने मुझे बताया था कि 'पल' का अर्थ श्री है।
2. यह गाँव तकलाकोट से $3\frac{1}{4}$ मील की दूरी पर खोचारनाथ के मार्ग में है।

से अति पीड़ित होकर भोजन बनाने के लिए रुक गया। सेवक के लकड़ी ढूँढ़कर ले आने तक आचार्य ने मार्ग की बाँईं ओर पच्चीस गज की दूरी पर एक सोत खोद लिया था, जो अब तप डुपछू के नाम से विद्यमान है। यद्यपि उसमें जल बहुत कम रहता है, परंतु कहा जाता है कि वह कभी नहीं सूखता और न शीतकाल में जमता ही है। वहाँ पर यह बहुत पवित्र माना जाता है। इसका पता सन् 1941 में मुझे लगा, इसलिए भारत के उस महान आचार्य का स्मरण करते हुए सोत के जल से मैंने तीन बार आचमन किया। गेजिन गाँव के पास ही दीपंकर का एक पादचिह्न (शपजे) है, जो एक छोरतेन में रखा गया है। अतिशा का नाम लेते ही तिब्बतियों का हृदय श्रद्धा एवं भक्ति से भर जाता है। इससे पता लगता है कि 900 वर्ष बाद भी तिब्बतियों पर आचार्य का कितना प्रभाव है। गेजिन से आगे चलकर आचार्य ने खोचारनाथ में चार्तुमास्य व्यतीत किए। वहाँ से लौटते समय करनाली नदी के दाँएँ किनारे पर लोक नामक एक ग्राम में एक दिन ठहरे।

पुरङ में रहते समय डोमतोन नामक एक गृहस्थ इनका अनन्य शिष्य बन गया, जो इनके देहांत के समय तक साथ रहा। इनकी मृत्यु के बाद डोमतोन ने इनका विस्तृत जीवनचरित तिब्बती भाषा में लिखा है। अतिशा धर्मप्रचार के उद्देश्य से पुरङ से पूर्वी तिब्बत में गए, जहाँ पर तिहत्तर वर्ष की आयु (सन् 1054) में इनका देहावसान हुआ। इनका अस्थिसमूह और भिक्षा तथा जल का पात्र ञेथङ के तारा-मंदिर में सुरक्षित रूप से रखा गया है।

कैलास–पुरारण में लिखा है कि डेकुङ गोम्पा के निर्माता और पहले लामा, जिगदेन गोंबो अपने 1300 शिष्यों के साथ बुद्ध संवत 2057 (सन् 1513?) में कैलास गए थे। इन सब की भिक्षा का प्रबंध पुरङ के धनी व्यक्ति टाशी देचेन और राजा मयुल ल्हजन मुटुप ने किया था। लामा जिगदेन करदुङ और खोचारनाथ भी गए थे। उस समय पुरङ में बहुतेरे अच्छे-अच्छे विद्वान और साधक भिक्षु रहते थे।

सन् 1553 (1533?) में यारकंद के खान ने अपने जनरल मिरजा हैदर को ल्हासा के मंदिरों और मूर्तियों को तोड़कर विध्वंस करने के लिए तिब्बत भेजा। लौटते समय मिरजा मानसरोवर के उत्तरी किनारे से गया और वहाँ किनारे पर एक दिन डेरा डाला।

कहा जाता है कि 16वीं शताब्दी में अकबर बादशाह ने गंगा के उद्गम का पता लगाने के लिए कुछ दूतों को भेजा था, जिन्होंने मानसरोवर की परिक्रमा करके एक मानचित्र तैयार किया, जिसमें यह दिखाया गया है कि मानसरोवर से सतलज, ब्रह्मपुत्र और करनाली नदियाँ निकलती हैं।

सन् 1625-26 में पोर्तुगाल के पादरी अंड्रेड थुलिङ मठ के समीप छबरङ नामक स्थान में ईसाई धर्म के प्रचारार्थ गए थे। इन्होंने सन् 1626 के अप्रैल महीने में तिब्बत में सर्वप्रथम ईसाइयों के गिरजाघर की नींव डाली थी। सन् 1627 में चार अन्य पादरी भी गए थे।

चंदवंश के राजा बाजबहादुरचंद ने सन् 1638-1678 तक कुमाऊँ पर शासन किया। उनकी राजधानी अल्मोड़ा थी। कैलास और मानसरोवर के यात्रियों पर किए गए अत्याचारों की बातों को सुनकर बाजबहादुरचंद ने मानसखंड पर चढ़ाई करने का विचार किया और मिलम के मार्ग से तिब्बत में प्रवेश करके कैलास और मानसरोवर के दर्शन किए। यहाँ से लौटकर तकलाकोट पर आक्रमण करके किले पर छापा मारा। फिर मानसखंड से भारत में आने वाले सभी घाटों को अपने अधिकार में करके उन करों को बंद करवा दिया, जिन्हें भोटिए व्यापारी तिब्बतियों को दिया करते थे। अंत में जब तिब्बतियों ने यात्रियों और व्यापारियों को किसी प्रकार का कष्ट न देने का आश्वासन दिया, तब उन्होंने तिब्बतियों को पूर्ववत् सुविधा प्रदान कर दी। सन् 1673 में यात्रा से लौटते समय उन्होंने कैलास और मानसरोवर के यात्रियों के निमित्त कपड़े और भोजन वितरित करने के लिए एक सदावर्त खोला। इस सदावर्त के कोष के लिए एक ताम्रपत्र पर लिखकर पाँच गाँवों की मालगुजारी को राज्यकोष से अलग कर दिया।

कहा जाता है कि सत्रहवीं शताब्दी में एक टाशी लामा कैलास-यात्रा पर आए थे और कैलास तथा मानसरोवर की उन्होंने परिक्रमा की थी। लौटते समय उन्होंने मानसरोवर की चेमानेङ्ग नामक रेत ले जाकर उससे टाशील्हुम्पो गोम्पा के कलश को स्वर्णरंजित किया था। परंतु कुछ अन्य लोगों का कहना है कि कैलास-दर्शन करने वाले उन्नीसवीं शताब्दी के पाँचवें टाशी लामा थे।

रोमन कैथोलिक पादरी डेसीडरी ने सन् 1715 के अगस्त महीने में एक तातारी राजकुमारी की मंडली के साथ लेह (लदाख) से ल्हासा के लिए प्रस्थान किया था। सर्वप्रथम पाश्चात्य व्यक्ति यही हैं, जिन्होंने मानसरोवर का पहले-पहल दर्शन किया। ये लिखते हैं कि गंगा कैलास और मानसरोवर से निकलती है। गंगा और सतलज को एक मानकर उन्होंने अन्य लोगों को भी भ्रम में डाल दिया। चीन के सम्राट कङ्ही के 'सर्वे' विभाग के लामा लोग सन् 1711 और सन् 1717 के मध्य में मानसखंड में आकर 'सर्वे' कर गए। लगभग 1758 में पूर्वी तिब्बत का डोर (ड्ुर) गोम्पा के खेंबोसोनम गेलजिन नामक लामा कैलास-यात्रा पर आए थे; वहाँ से खोचार जाकर उन्होंने खोचारनाथ के स्थल-पुराण की रचना की।

पूर्णगिरि नामक एक ब्राह्मण लार्ड वारेन हेस्टिंग्स के आदेश से तिब्बत में दुभाषिया और गुप्तचर के स्थान पर नियुक्त किए गए थे। वे सन् 1770 में बोगल[1] और टर्नर के साथ तिब्बत जाकर मानसरोवर गए और वहाँ ठुगोल्हो मठ में ठहरे थे। इनका कहना है कि गंगा कैलास से निकलकर मानसरोवर में गिरती हुई बाहर निकलती है।

सन् 1760-80 के मध्य काल में पूर्णपुरि नामक काशी के एक ऊर्ध्वबाहु संन्यासी (जिनके दोनों हाथ ऊपर खड़े रहने से सूख गए थे) चीन और बुखारे का भ्रमण करके मानसरोवर पर (सन् 1792 में) आए थे और उन्होंने छह दिनों में मानसरोवर की परिक्रमा

1. तिब्बत में प्रवेश करने वाले प्रथम अंग्रेज व्यक्ति बोगल ही हैं।

की थी। उनका कहना है कि गंगा कैलास से, सतलज राक्षसताल से और ब्रह्मपुत्र मानसरोवर से निकलकर पूर्व की ओर जाती हैं।

सन् 1812 में वेटेरिनेरी डॉक्टर (पशु-चिकित्सक) विलियम अगस्ट, मूर क्रॉफ्ट और कप्तान हियरसे नीती की घाटी से मानसरोवर और गरतोक गए थे। इन लोगों ने च्यू गोम्पा के पास डेरा डाला था। उस समय गंगा छू में पानी नहीं था। यह बात उन्होंने स्वयं नहीं देखी, परंतु पंडित हरवल्लभ नामक एक व्यक्ति ने, जो मूर क्रॉफ्ट के साथ थे, पहले सन् 1796 में गंगा छू में इतना जल पाया कि उसे पार नहीं कर सके। अंत में बाध्य होकर उन्हें च्यू गोम्पा के निकटवर्ती पुल से पार होना पड़ा। कहा जाता है कि मूर क्रॉफ्ट सन् 1838 में मानसरोवर के पास मार डाले गए। ठाकुर देबू बूढ़ा ने जोहार में 24 वर्ष तक पटवारी का काम किया था। उसने मूर क्रॉफ्ट के साथ रहकर पश्चिमी तिब्बत की यात्रा में उनकी बहुत कुछ सहायता की थी।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, सन् 1841 में जंबू के राजा गुलाब सिंह के जनरल जोरावर सिंह ने गरतोक और तीर्थपुरी होते हुए बरखा आकर तिब्बतियों की सेना को हरा दिया था। उसके बाद मानसरोवर होते हुए तकलाकोट जीतकर कोट के किले पर अपनी विजयपताका फहराई थी। कहते हैं कि यदि कार्यक्रम पूरा हो पाता, तो सारे तिब्बत को जीत लेते और आज तिब्बत भारत के अधीन हुआ होता। परंतु दिसंबर के महीने में तिब्बती सेना ने उनको मार डाला। उनकी समाधि तोयो के पास बनी हुई है।

सन् 1846 के सितंबर और अक्टूबर के महीनों में कप्तान हेनरी स्ट्राची दारमा घाटा से दारमा याङती के किनारे होकर राक्षसताल और च्यू गोम्पा के समीप पहुँचे तथा लीपूलेख होकर लौट गए। इन्होंने गंगा छू में तीन फीट गहरा पानी बहते हुए देखा और सुझाया कि जल के परिमाण से सतलज का उद्गम दारमा याङती के सिरे पर क्यों न माना जाय? सन् 1848 में उनके भाई सर रिचार्ड स्ट्राची और जे0 ई0 विंटर बोटम मिलम और ज्ञानिमा मंडी होकर राक्षसताल के दक्षिण से च्यू गोम्पा गए थे तथा सिबचिलिम और मिलम होकर वापस आए थे। इन दोनों स्ट्राची बंधुओं ने मानसखंड के भूगोल पर पर्याप्त प्रकाश डाला है।

श्री 108 त्रिलिंग स्वामी बनारस के एक विख्यात सिद्ध महात्मा थे, जो आंध्र प्रांत में विजगापट्टम के होतिया गाँव के एक ब्राह्मणवंश से थे। यद्यपि इनका संन्यासी नाम गणेश स्वामी था, परंतु त्रिलिंग देश से आने के कारण त्रिलिंग स्वामी के नाम से प्रसिद्ध थे। इनका देहांत 19वीं शताब्दी के अंत में हुआ। कहा जाता है कि उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य काल में इन्होंने कैलास और मानसरोवर की कई यात्राएँ कीं और वहाँ तपस्या की। कुछ लोग मृत्यु के समय इनकी आयु को 150 वर्ष और कुछ लोग 280 वर्ष बतलाते हैं। उनकी जीवनी बंगभाषा में लिखी गई है। महावाक्य रत्नावली नामक एक पुस्तक भी इन्होंने लिखी है।

सन् 1854 में नेपालियों ने पुरङ पर चढ़ाई की थी और सिद्दीखर आदि दुर्गों को

तोड़ डाला था। सन् 1855 के जुलाई महीने में एडोल्फ और राबर्ट श्लागिनट्वैट नामक यूरोपियन यात्री मिलम होकर दापा तक गए थे। पर तिब्बत सरकार से मानसरोवर जाने की आज्ञा न मिलने के कारण भारत लौट आए और सितंबर के महीने में माना घाटी होकर थुलिङ और छबरङ गए। फिर भी ये भौगोलिक अन्वेण न कर सके। शेरिंग ने 'वेस्टर्न टिबेट' नामक पुस्तक में लिखा है कि सन् 1855 या 1860 में बरेली के कमिश्नर ड्रमंड ने मानसरोवर में नौका-विहार किया। परंतु कोई प्रामाणिक वार्ता नहीं मिली। 1864 में आनरेबुल राबर्ट ड्रमंड, हेनरी हॉगसन, लेफ्टनेंट कर्नल स्मिथ और वेबर गुरला मांधाता के दक्षिणी पाश्वों में और ब्रह्मपुत्र के उद्गम की ओर शिकार करने गए थे। वेबर ने गंगा का उद्गम-स्थान मांधाता के दक्षिण में रखा है।

सन् 1865 के जून महीने में कप्तान एच0यू0 स्मिथ और ए0एस0 हेरिसन लीपूलेख होकर तरछेन गए थे। वहाँ से मानसरोवर और राक्षसताल के उत्तरी किनारे पर घूमते हुए चेरकिप गोम्पा में एक दिन ठहरे और फिर वहाँ से गरतोक गए। उसी वर्ष अगस्त महीने में कप्तान एड्रियन बेनेट चोरहोती घाटा होकर दापा गए और वहाँ महीने भर ठहरे; परंतु मानसरोवर जाने की आज्ञा न मिलने के कारण नीती होकर लौट आए।

सन् 1865 में भारत के सर्वे ऑफिस से कप्तान टी0जी0 मांटगोमेरी के आदेश से जोहार के एक भोटिया ठाकुर नयन सिंह सी0आई0ई0 तिब्बत गए और सन् 1866 के जून में ल्हासा से लौटते समय मानसरोवर का भी निरीक्षण करने के लिए गए। उनके लेखों और पैमाइशों से मानसरोवर और राक्षसताल का मानचित्र प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि ये ब्रह्मपुत्र के उद्गम पर नहीं गए, तथापि उसके संबंध में तिब्बतियों से जो कुछ बातें सुनीं, वे ठीक ही थीं। वे लिखते हैं—"ब्रह्मपुत्र का उद्गम चेमायुङडुङ नदी के सिरे पर तमचोक खंबब् नाम की हिम नदियों में है।" सर्वे ऑफ़ इंडिया ऑफिस के कागजात में ये 'पंडित ए' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

सन् 1867 और 68 में मांटगोमेरी ने मानसखंड की पैमाइश के लिए अन्य विद्वानों को भेजा था, जिनमें से कुछ लोग सिंधु के उद्गम पर पहुँचते समय डाकुओं द्वारा मार डाले गए। प्रायः नयन सिंह के समय में ही सर्वे ऑफिस वालों ने देबू बूढ़ा के पुत्र मानसिंह जोहारी को कैलास के उत्तर की ओर भौगोलिक अन्वेषण के लिए भेजा था। पर मानसखंड से अति परिचित व्यक्ति होने के कारण तिब्बत सरकार ने इनको कैलास से आगे नहीं जाने दिया।

सन् 1879-1882 के मध्य में सर्वे ऑफ़ इंडिया ऑफिस से जोहार निवासी कृष्ण सिंह रावत भौगोलिक अन्वेषण के लिए नियुक्त होकर गए थे। विशेषकर इनका अन्वेषण पूर्वी तिब्बत और मंगोलिया में हुआ। घर लौटते समय ये मानसखंड में भी आए और थोड़ी-बहुत गवेषणा यहाँ भी की। इनके अन्वेषण और मानचित्र सर्वे ऑफिस से छपे हैं। तिब्बत के अन्वेषण में ये 'ए0के0 पंडित' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

सन् 1900—3 के मध्य में जापान देश के बौद्ध भिक्षु एकई कावगूची तिब्बत-यात्रा के उद्देश्य से गए थे। इन्होंने सन् 1900 में ब्रह्मपुत्र (चेमायुङ्डुङ) को पार करके मानसरोवर के पूर्व में, बीस मील की दूरी पर छुमिकथुङ् टोल नामक सोते के जल को गंगा के उद्गम का जल मानकर पेट भर पिया। वहाँ से मानसरोवर के दक्षिणी किनारे से होते हुए ठुगोल्हो में एक दिन ठहरकर ज्ञानिमा से कैलास-परिक्रमा करके ल्हासा पहुँचे। न जाने गंगा छू पर गए या नहीं, परंतु लिखते हैं कि "प्रति पंद्रह वर्ष पर राक्षसताल से मानसरोवर में पानी बहता है और मानसरोवर की परिधि 200 मील की है।"

सन् 1904 के नवंबर के अंत में मेजर राईडर और कप्तान रॉलिंग राक्षसताल के किनारों पर गए, परंतु उन्हें गंगा छू में जल नहीं मिला। मानसखंड के भूगोल के ऊपर उन्होंने बहुत प्रकाश डाला है। सन् 1905 में अल्मोड़े के डिपुटी कमिश्नर चार्लस् ए० शेरिंग और डॉक्टर टी०जी० लांगस्टाफ कैलास और मानसरोवर होकर गरतोक तक गए। लांगस्टाफ ने गुरला मांधाता की चोटी पर पहुँचने की चढ़ाई आरंभ की थी। यद्यपि वे शिखर पर नहीं पहुँच सके, किंतु उनका यत्न बहुत अंशों में सफल रहा। इन्होंने पश्चिमी तिब्बत नामक एक पुस्तक लिखी है।

सन् 1907-8 में स्वीडन देश के डॉक्टर स्वेन हेडिन नामक विख्यात भूगोलज्ञ एवं अन्वेषक ने लदाख से लेकर शिगर्ची तक पूरे दो वर्षों में यात्रा की और अब तक के अज्ञात प्रदेशों को सारे संसार को ज्ञात करा दिया। इन्होंने अपनी यात्रा और साहसिक कृत्यों की 'ट्रांस-हिमालया' नामक ग्रंथ सन् 1909-13 में लिखा है, जो तीन भागों में समाप्त हुआ है। इनके विशेष अन्वेषण का उल्लेख 'दक्षिणी तिब्बत' (साउदर्न टिबेट) नामक ग्रंथ (प्रकाशित 1917-22) में है, जो 12 भागों में समाप्त हुआ है। इनमें दो खंड तो मानचित्रों से भरी हैं। इनके अतिरिक्त इन्होंने भौगोलिक अन्वेषणों पर 9-10 पुस्तकें और लिखीं। सन् 1907 में वे मानसरोवर के किनारे पर पूरे दो महीने तक रहे। वहाँ रहकर आठों मठों को देखा और सरोवर में केनवेस वा टाट की नाव पर इधर-उधर घूमकर कई स्थानों की गहराई को नापा और मानसरोवर की गहराई के ब्यौरे का मानचित्र प्रस्तुत किया। इन्होंने राक्षसताल की गहराई को भी कुछ स्थानों में नापा, पर आँधी और झंझावात के कारण पूरा पता नहीं लगा सके। यही सर्वप्रथम पाश्चात्य व्यक्ति हैं, जिन्होंने पहले-पहल सीसे डालकर मानसरोवर को नापा है।

भूगोलशास्त्र के अन्वेषण के अतिरिक्त सचमुच इन्होंने ही इन सरोवरों की सुंदरता का पूरा आनंद उठाया है। इनके मानसरोवर के नौकाविहारों का वर्णन बहुत ही रोचक, चित्ताकर्षक और रोमांचित करने वाला है। इन्होंने कैलास, मानसरोवर और राक्षसताल की पूरी परिक्रमा की तथा मानसखंड के प्रायः सभी नदियों के जल के परिमाण का पता लगाया। अंत में ब्रह्मपुत्र, सिंधु और सतलज नदी के उद्गम-स्थानों का निर्णय किया और इस बात का दावा किया कि वे ही सर्वप्रथम पाश्चात्य और श्वेत व्यक्ति हैं, जिसने इन नदियों के उद्गम का पता लगाया है। सन् 1937 में इनके निर्णयों को मेरे अपूर्ण और त्रुटियुक्त सिद्ध

करने तक सर्वे वालों ने इन्हें निभ्रांत स्वीकार करके अपने मानचित्रों में ग्राह्य कर लिया था। जो भी हो, अन्य भूगोलज्ञों की अपेक्षा डॉ0 स्वेन हेडिन ने तिब्बत के बारे में बहुत व्यापक रूप से अन्वेषण किया और लिखा है, यह बात निर्विवाद रूप से माननी पड़ेगी।

महाराष्ट्र के श्री हंस स्वामी 1908 में कैलास गए थे। वे मानसरोवर के किनारे पर बारह दिन रहकर कैलास-परिक्रमा करके तीर्थपुरी भी गए थे। महाराष्ट्र भाषा में अपनी यात्रा के बारे में उन्होंने एक पुस्तक लिखी है, जिसको उनके शिष्य श्री पुरोहित स्वामी ने अंग्रेजी भाषा में 'दी होली माउंटेन' नामक पुस्तक के रूप में अनुवाद कराकर प्रकाशित कराया है। उसमें हंस स्वामी ने मानसरोवर में एक अदृष्ट वाणी सुनने, कैलास पर एक सिद्ध महात्मा के मिलने, गौरीकुंड पर दत्तात्रेय के पंचभौतिक स्थूल शरीर से मिलकर संन्यास-दीक्षा लेने आदि का मनोरंजक वर्णन किया है।

मयूरपंखी बाबा नामक एक साधु ने कैलास और मानसरोवर की यात्रा छह–सात बार की है। ये सिर पर मयूर मुकुट, कमर में जंजीर और लाल कौपीन पहनते थे और हाथ में मुरली लिए रहते थे। सन् 1912-13 के बीच एक वर्ष तक खोचारनाथ में इन्होंने निवास किया। 1913 में कैलास के चौथे मठ गेङ्टा गोम्पा के पास रहने की इच्छा से एक छोटी-सी कुटी बनाकर वहीं पूरा प्रबंध कर चुके थे। पर्याप्त रूप से अन्न और वस्त्र भी पास रख चुके थे, परंतु शीतकाल की ठंढ नहीं सह सके और परिणामतः सन् 1914 के फरवरी या मार्च[1] के महीने में दिवंगत हो गए।

सन् 1915 में श्री 108 स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक ने मिलम के मार्ग से कैलास की यात्रा की और लीपूलेख के मार्ग से लौटे। अपनी यात्रा के वर्णन में इन्होंने 'मेरी कैलासा-यात्रा' नामक एक पुस्तक लिखी है। संभवतः कैलास-यात्रा पर हिंदी में यही पहली पुस्तक है।

सन् 1924 में हमारे पूज्य गुरुदेव श्री 1108 डॉक्टर स्वामी ज्ञानानंद गिरि महाराज बदरीनाथ से माना घाटा होकर कैलास और मानसरोवर गए और नीती-होती घाटा होकर वापस लौटे। श्री स्वामी जी ने कौपीन मात्र धारण कर दिगंबर रूप में यात्रा की थी।

सन् 1922 और 1926 में बदरीनाथ और नीती घाटा होकर लाहौर के डॉक्टर कश्यप जी कैलास गए थे। इस यात्रा पर उन्होंने 'बेंगाल रॉयल एशियाटिक सोसायटी' के सन् 1929 के जर्नल में भूगोल–संबंधी एक लेख लिखा था, पर उसमें किसी नई खोज की बात नहीं थी।

सन् 1927 में श्री 108 स्वामी जयेंद्रपुरी जी मंडलेश्वर बीस-पच्चीस महात्माओं की मंडली के साथ बदरीनाथ से माना घाटा होकर कैलास और मानसरोवर की यात्रा पर गए

---

1. कैलास में फरवरी तथा मार्च के महीनों में अत्यधिक शीत पड़ती है। और अल्पतम तापक्रम हिमांक के नीचे 70^0 हो जाता है।

थे और लीपू घाटा होकर वापस आए। मानसखंड की यात्रा पर जाने वाले पहले मंडलेश्वर यही हैं। उक्त मंडली के पंडित धर्मदत्त शर्मा ने 'श्री कैलास मार्ग-प्रदीपिका' नामक एक पुस्तक लिखी है। मानसरोवर का वर्णन करते हुए ये लिखते हैं—''कहीं-कहीं नीलकमल का भी दृश्य देखने में आता है........... दूसरी अद्भुत बात यह है कि किसी-किसी दिन को छोड़कर यहाँ पर बिना बादल हिम वर्षा करता है।'' ये दोनों एकदम झूठी बातें हैं। सन् 1929 में या उसके आस-पास उत्तर काशी के प्रसिद्ध (केरल देशीय) महात्मा 108 स्वामी तपोवन जी और गंगोत्तरी के श्री 108 कृष्णाश्रम जी कैलास-यात्रा पर गए थे।

सन् 1929 में कैप्टेन विलसन और अलमोड़े के डिप्टी कमिश्नर रटलेज् लीपू घाटा होकर कैलास गए थे और परिक्रमा करके नीती घाटा होकर वापस आए। सन् 1930 में गङ्टोक के एसिस्टैंट पोलिटिकल एजेंट, वेकफील्ड, राजनीति–संबंधी कार्य से मानसखंड गए थे। सन् 1931 में लीपू घाटा के मार्ग से मैसूर के महाराजा श्रीकृष्णराज वडयर बहादुर ने बड़ी धूमधाम के साथ कैलास और मानसरोवर की यात्रा की थी। उसी वर्ष हृषीकेश के श्री 108 स्वामी शिवानंद जी महाराज, श्री 108 अद्वैतानंद जी महाराज और गुजरात के श्री 108 स्वामी स्वयंज्योति जी महाराज और सिंघाई की राणी साहिबा श्रीमती सूरतकुमारी देवी कैलास-यात्रा पर गए थे। श्री शिवानंद जी ने 'ए ट्रिप टू सेकेंड कैलास-मानसरोवर' नामक पुस्तक लिखी है।

सन् 1930 से पहले आनसिंह बाबा नामक अलमोड़े के एक साधू दो-तीन वर्ष कैलास-यात्रा पर गए थे। इन्होंने सन् 1930-31 में एक वर्ष खोचारनाथ में बास किया था। विशेषकर आलू और कूटू के आटे की रोटी ही पर निर्वाह करते थे। उसके अनंतर एक वर्ष कैलास में रहने की इच्छा से सन् 1931 के अंत में ग्यङ्टा गोम्पा में गए, परंतु शीताधिकता के कारण तरछेन उतरे। वहाँ भी भोजन की कमी और ठंढ के कारण नितांत उन्मत्त हो गए। सन् 1932 जुलाई के महीने में बंबई के किसी यात्री ने उनको तकलाकोट पहुँचाया। पर अंतिम दिनों में मांस-मदिरादि अखाद्य पदार्थ अमित परिमाण में खाकर अगस्त मास में काल-कवलित हो गए। इन्हीं के बारे में एक स्वामी ने यह गप लिख डाली—''यह साधू केवल जल और पत्ते पर जीते थे, तथापि बहुत मोटे-ताजे थे।'' इस प्रकार की गप और झूठी कथाएँ आगे चलकर सिद्धों की बातें बन जाती हैं।

सन् 1932 में एफ0 विलियमसन पोलिटिकल एजेंट और एफ0 लडलो लीपूलेख होकर कैलास गए, वहाँ से गरतोक होकर शिमला लौटे। ये लोग राजनैतिक कार्य से गए। सन् 1933 या 34 में श्री स्वामी कृष्णमाचार्य नामक एक दक्षिणी महात्मा कैलास-यात्रा पर गए, परंतु कैलास पहुँचने से दो दिन पहले ही डाकुओं ने उन्हें घेर लिया और पास का रुपया न देकर प्रतिरोध करने के कारण डाकुओं ने उनका वध कर डाला।

कलकत्ते के डॉक्टर श्यामा प्रसाद मुकर्जी के भाई श्री उमाप्रसाद मुखोपाध्याय, एडवोकेट सन् 1934 में कैलास–परिक्रमा पर गए थे। उन्होंने लगभग आध घंटे तक चलने

वाली एक यात्रा-संबंधी सिनेमा फिल्म तैयार की, जिसकी एक प्रति कलकत्ता विश्वविद्यालय में भी रखी गई है। उसे कोई भी देख सकता है।

सन् 1935 में इटली देश के एक संस्कृत विद्वान और बौद्धमतानुयायी डॉक्टर जुसेपे तूची ने ल्हासा की सरकार से प्रवेशाज्ञा-पत्र लेकर मानसरोवर और कैलास की परिक्रमा की थी। ये लीपूलेख होकर गए और थुलिङ होकर वापस आए। इन्होंने अपनी यात्रा का वर्णन इटैलियन भाषा में लिखा तथा एक अमुद्रित संस्कृत ग्रंथ का संपादन करके प्रकाशित कराया। इसके अतिरिक्त उन्होंने कई उपयोगी तिब्बती ग्रंथों का संग्रह किया था।

सन् 1936 में स्विटजरलैंड के आरनोल्ड हैम और ऑगस्ट गेनसर नामक दो भूगर्भ-शास्त्रज्ञों ने हिमालय में अन्वेषण करते-करते बिना प्रवेशाज्ञा-पत्र के छिपकर नेपाल में प्रवेश किया और टिङ्कर, लीपू घाटा पार करके पुरङ दून में सिद्दिखर मठ में पहुँचे। और वहाँ से लौटकर ब्याँस में अंतिम गाँव, कुटी में डेरा डाला। वहाँ से गेनसर ने बिना आज्ञापत्र के छिपकर राक्षसताल के पश्चिमी किनारे से होकर कैलास की परिक्रमा की और वापस लौट आए। इनके वहाँ जाने के दो उद्देश्य थे। प्रथम तो परम पवित्र कैलास का दर्शन और दूसरे मानसखंड के भूगर्भ-शास्त्र का अन्वेषण। उसी वर्ष ऊँटाधुरा होकर गेनसर ने सिबचिलिम होकर सतलज तक के भू-भागों का पर्यवेक्षण किया था। इन दोनों ने अपने अन्वेषणों का विवरण जर्मन भाषा में 'थ्रोन ऑफ़ दी गाड्इस' नामक पुस्तक लिखा है, जिसका अंग्रेजी में भी अनुवाद किया गया है। पुस्तक में सुंदर चित्र दिए गए हैं।

सन् 1936 के मई मास में आस्ट्रिया के हेरबर्ट तिछी नामक एक भूगर्भ-शास्त्रवेत्ता गुप्त रूप से साधु वेश में कैलास-परिक्रमा करके वापस लौट आए। इन्होंने गुरला मांधाता पर कुछ ऊँचाई तक आरोहण किया था। 'टू दी होलिएस्ट मौंटेन' नामक एक पुस्तक इनकी लिखी हुई है।

1936-37 में श्री ओंसत्यम् नामक पच्चीस वर्षीय युवक ब्रह्मचारी ने तीर्थपुरी में वर्ष भर निवास किया था। सन् 1937 के दिसंबर या 1938 की नजवरी मास में ये मानसरोवर की परिक्रमा पर गए। सरोवर के तट से होकर परिक्रमा करना चाहते थी। पर गुगटा[1] का जल पूर्णतया जमा न था। बर्फ के ऊपर कुछ दूर तक आगे जाने पर वह फट गई और वे जल में डूब गए।

सन् 1937 में श्री 108 नारायण स्वामी जी की भक्त कुछ गुजराती महिलाओं ने कैलास की परिक्रमा के अतिरिक्त मानसरोवर की भी परिक्रमा की थी। भोटियों को छोड़कर मानसरोवर की परिक्रमा करने वाली भारतीय महिलाओं का यही प्रथम जत्था था। सन् 1938 में श्रीमती आनंद बाई ने अपने पति के साथ कैलास-यात्रा की थी। सन् 1939 में गिरनारी

1. मानसरोवर से ईशान कोण पर एक जल-प्रवाह, जिसके द्वारा डिङछो का जल सरोवर में आता है।

ब्रह्मचारी रामानंद जटाशंकर वाले ने कैलास की यात्रा की थी। गुजराती भाषा में अपनी यात्रा पर उन्होंने एक पुस्तक भी लिखी है, जिसमें मेरे बड़े परिश्रम से तैयार किए हुए एक मानचित्र को चोरी से पूरी नकल करके अपने नाम से छपवा दिया था। बाबा रामनाथ नामक एक नैपाली साधु ने तीन बार मानसरोवर की यात्रा की थी। अंतिम बार 1938 में ये पुनः मानसरोवर गए और वहाँ से लौट रहे थे कि तकलाकोट आने पर अक्टूबर के महीने में शीत के कारण शरीर त्याग कर दिया।

सन् 1940 में श्रीमती उमा दर जी (श्री मुकुटबिहारी लाल जी दर, एस0डी0ओ0 की धर्मपत्नी) और श्रीमती रुक्मिणी जी (श्री घनश्याम दीक्षित जी, इंजीनियर की धर्मपत्नी) ने अपने पतियों के साथ नौ दिन में कैलास और मानसरोवर की पूरी परिक्रमा की थी। कैलास-मानसरोवर की परिक्रमा करने वाली महिलाओं का यह दूसरा जत्था था।

इसके अतिरिक्त सभी श्रेणियों के मनुष्य, गृहस्थ, साधु, संन्यासी और रामकृष्ण मिशन के कोई-न-कोई स्वामी श्री कैलास और पुनीत मानसरोवर के पावन दर्शन के लिए प्रतिवर्ष जाते हैं।

कैलास के पाँचवें मठ सिलुङ के पास एक लदाखी भिक्षु ने, जो 'लदाखी छवा' नाम से प्रसिद्ध थे, बारह वर्ष रहकर पूजा-पाठ किया। सिलुङ गोम्पा के पास उन्होंने एक आश्रम भी बनवाया है। सन् 1942 में उनका देहांत हो गया। सन् 1942 में ग्यांची के ब्रिटिश वाणिज्य प्रतिनिधि केप्टेन आर0के0एम0 सकेर स्पेशल ड्यूटी पर मंडियों की देख-रेख के लिए लदाख और गरतोक होकर कैलास गए थे और कैलास की परिक्रमा पूरी कर लीपूलेख घाटा होकर वापस लौट आए। उनके आने के परिणामस्वरूप पश्चिमी तिब्बत की ट्रेड एजेंसी का ऑफिस शिमला से गङ्टोक बदल दिया गया। इनकी इच्छा है कि एजेंसी का ऑफिस तकलाकोट में स्थायी रूप से बने और कुछ सिपाही यहाँ रखे जायँ। उनकी यह भी आयोजना है कि भारत की सीमा से गरतोक तक एक पक्की सड़क बन जाय। सन् 1931 और 1942 में धारचूला के इसाई पादरी स्टेनर इसाई धर्म–प्रचार करने के लिए मानसखंड गए और वहाँ कुछ पुस्तकों को बाँटकर चले आए। इन्होंने कैलास और मानसरोवर—दोनों की प्रदक्षिणा की थी।

सन् 1936 से प्रतिवर्ष श्री 108 नारायण स्वामी जी महाराज कैलास-यात्रा पर जाते हैं। प्रायः ये अपनी शिष्य-मंडली को (गृहस्थ और साधु) साथ लेकर बाजा-गाजा के साथ मार्ग में भगवन्नाम संकीर्तन करते हुए जाते हैं।

इस पुस्तक का लेखक श्री कैलास और पुनीत मानसरोवर पर पहले–पहल सन् 1928 में काश्मीर और लदाख होकर गया था और उसके पश्चात 1935-36, 37, 38, 39, 40, 41, 42 में भिन्न-भिन्न मार्गों से गया। ठुगोल्हो मठ में सन् 1936-37 तक पूरे वर्ष भर निवास किया तथा अन्य अवसरों पर दो से लेकर छह महीनों तक रहता आया है। सन् 1936-37 में मानसरोवर पर रहते समय उनके जमने और पिघलने के संबंध में संक्षिप्त

ब्यौरा लिखा; शीतकाल में राक्षसताल के टापुओं पर जाकर उनकी संख्या निर्धारित की और मानसखंड की चार महानदियों—ब्रह्मपुत्र, सिंधु, सतलज और करनाली के उद्गम-स्थानों का परंपरा, लंबाई, जल के परिमाण और हिमनदियों की परीक्षा के दृष्टिकोण से निर्णय किया, जिन्हें लंडन के रायल जॉग्रफिकल सोसाइटी और भारत के सर्वे ऑफिस ने स्वीकृत करके अपने (1941 के) मानचित्रों में छापा है। उक्त विषय पर कलकत्ता विश्वविद्यालय में दिए हुए दो व्याख्यान, वहीं से 'तिब्बत में अन्वेषण' या 'एक्सप्लोरेशन इन टिबेट' नामक पुस्तक के रूप में सन् 1939 में प्रकाशित हुए हैं।

लेखक प्रधानतः अपनी आध्यात्मिक साधना के लिए मानसखंड जाता है। अवकाश के समय यथाशक्ति विज्ञान की विविध शाखाओं में अन्वेषण करने की उसकी चेष्टा गौण है।

12. मानसरोवर पर 'ज्ञान-नौका'

सन् 1928 से ही ग्रंथकार का विचार रहा है कि एक पक्की नाव लेकर मानसरोवर में अच्छी तरह से नौका-विहार करे और उसके पश्चात उसे वहीं छोड़ दे, ताकि अन्य यात्री भी उस नौका का लाभ उठा सकें। कई वर्ष के प्रयत्न के बाद कलकत्ते से मोल लेकर एक 'सेलिंग डिंघी-कम-मोटर बोट' अल्मोड़ा ले गया, परंतु कुली न मिलने के कारण गतवर्ष मानसरोवर तक नहीं ले जा सका। अब वह अल्मोड़े से कुलियों द्वारा भेजी जा रही है।

यह नाव 18 गेज मोटा 'गेल्वनाइज्ड स्टील' (लोहा) की चादर से आधुनिक वैज्ञानिक माप के अनुसार बनाई गई है। इसकी तौल $5\frac{1}{2}$ मन, लंबाई 10 फीट, चौड़ाई $4\frac{1}{3}$ फीट, और ऊँचाई $2\frac{1}{3}$ फीट है। नाव के भीतर दोनों सिरों पर वायु के बंद कमरे और बीच में डेगर बोर्ड (लोहे की मोटी चादर) लगे हुए हैं, जिनके कारण नाव न पानी भरने से डूब सकेगी और न वायु के झकोरों से उलट ही सकती है। इसमें चार आदमी भली भाँति बैठ सकते हैं, परंतु आठ आदमी तक के लिए स्थान है। इसके पीछे पतवार और 'आउट बोर्ड मोटर' रखने के लिए एक मंच है। मोटर तीन-चार 'हार्स पॉवर' का होगा। हाथ से चलाने के लिए दो चप्पू हैं। वेग से चलाने के लिए एक पाल भी है, जिसके लगाने से मानसरोवर के आर-पार तीन घंटे में जा सकते हैं।

ग्रंथकार के गुरुदेव के नाम पर नाव का 'ज्ञान' या 'ज्ञान-नौका' नाम रखा गया है। इसके साथ 350 फीट की रस्सी, 7 पौंड का सीसा, और काग का बना हुआ प्राणरक्षक चक्र भी जा रहे हैं। लेखक इस नौका से सरोवर के गर्भ में स्थित गर्म सोतों का स्थान-निर्देश करना, मानस, राक्षस, डिड्छो आदि तालों में एक बार सीसा डालकर गहराई नापना, राक्षस ताल के टापुओं का निरीक्षण करना और मानसरोवर के मध्य में (जहाँ जाना तिब्बती लोग असंभव मानते हैं और जहाँ अब तक कोई नहीं जा सका है) जाना चाहता है।

मानसरोवर में चलाई जाने वाली पक्की तथा आधुनिक ढंग की यही सर्वप्रथम नाव

होगी, यद्यपि सन् 1907-8 में स्वेन हेडिन ने एक क्रिमिच की नाव चलाई थी। शीतकाल में यह नाव मानसरोवर के पास एक मठ में रखी जायगी, ताकि कई वर्षों तक यात्रीगण या अन्य लोग मानसरोवर में विहार करके उससे लाभ उठा सकें। लेखक की इच्छा है कि देख-रेख के लिए इस नौका को 'दारमा सेवा-संघ' को सौंप दे।

भावनगर (काठियावाड़) के यशस्वी महाराजा हिज हाईनेस महाराजश्री सर कृष्णकुमार सिंह जी, के0सी0एस0आई0 ने ग्रंथकार की 'कैलास पथप्रदर्शक' नामक पुस्तक पढ़कर उसे निमंत्रित किया और बड़ी प्रसन्नतापूर्वक इस ज्ञाननौका—सेलिंग डिंघी-कम-मोटर बोट—का न केवल मूल्य, अपितु नौका को मानसरोवर तक पहुँचाने का व्यय भी दे दिया, जिसके लिए ग्रंथकार भी श्री श्री श्री महाराजा साहब को सप्रेम हार्दिक धन्यवाद देता है। श्री महाराजा के इस उदार दान से सहस्रों यात्री मानसरोवर पर नौका-विहार का पूरा आनंद ही नहीं लेंगे, अपितु मानसरोवर के इतिहास में श्री महाराजा साहब का घनिष्ठ संबंध स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। उनकी उत्कट इच्छा है कि युद्ध परिस्थिति शांत होते ही श्रीमती महारानी साहबा के साथ एक बार कैलास जायँ और मानसरोवर और राक्षसताल में भली-भाँति नौका-विहार करें। इतना ही नहीं, वे यह भी चाहते हैं कि और नौकाओं को सरोवर ले जाकर कैलास-मानसरोवर यात्रा का एक संपूर्ण रंगीन सिनेमा फिल्म तैयार करवाएँ। परमात्मा से प्रार्थना है कि श्री महाराजा साहब को पूरी आयु, आरोग्य और संपत्ति दे, ताकि वे ऐसे कई अन्य उदार कार्य कर सकें।

'वेस्टर्न टिबेट' नामक पुस्तक में शेरिंग लिखते हैं—''बरेली जिले के डिपुटी कमिश्नर ड्रमंड ने मानसरोवर में सन् 1855 में नाव चलाई थी और नाव चलाने की आज्ञा देने के अपराध पर तिब्बत सरकार ने मानसरोवर के अफसरों को फाँसी की सजा दे दी थी। यह समाचार तिब्बतियों ने एक ताजी वार्ता कहकर बतलाया था।'' परंतु यह वार्ता निराधार है। सन् 1865 के जून में कप्तान एच0यू0 स्मिथ और ए0एस0 हेरिसन लीपूलेख होकर कैलास गए, वहाँ से मानसरोवर तथा राक्षसताल के उत्तरी तट पर घूमते हुए मानसरोवर के चेरकिप गोम्पा में एक दिन ठहरे। उसी वर्ष अगस्त मास में कप्तान एड्रियन बेनेट चोर-होती घाटा से दापा जाकर वहाँ एक मास रहे। सन् 1866 में हेनरी हॉगसन, कर्नल स्मिथ और वेबर गुरला मांधाता के दक्षिणी पार्श्व में ब्रह्मपुत्र के उद्गम की ओर आखेट के लिए गए। उसी वर्ष पंडित नयनसिंह ने ल्हासा से लौटते हुए मानसरोवर का भौगोलिक निरीक्षण किया। सन् 1867 में कप्तान मांटगोमरी ने मानसखंड के सर्वे के लिए कई पंडितों को भेजा। उपर्युक्त सभी भौगोलिक अन्वेषक सन् 1855 के पश्चात बारह वर्ष के ही अंदर गए थे; परंतु उनके लेखों में ड्रमंड साहब की नाव का उल्लेख का नाम-निशान तक नहीं है। और उस समय के तिब्बती अफसरों को फाँसी देने की चर्चा भी कहीं नहीं की गई है। आश्चर्य होता है कि जब बारह वर्ष के अंदर गए हुए भौगोलिक अन्वेषकों को इसकी कुछ भी सूचना न मिली, तो पूरे पचास वर्ष बाद 1905 में गए हुए शेरिंग को तथोक्त वार्ता की सूचना कैसे मिली? ड्रमंड अल्मोड़ा होकर ही मानसरोवर गए थे। परंतु न तो अल्मोड़े के कोई सज्जन, न भोट

के कोई वृद्ध व्यापारी ही उक्त वार्ता की पुष्टि करते हैं, और न यही पता है कि ड्रमंड वहाँ नाव किस काम के लिए ले गए थे। इससे स्पष्ट है कि डॉक्टर स्वेन हेडिन से पहले मानसरोवर में किसी ने भी नाव नहीं चलाई थी।

मानसरोवर के वायव्य कोण में परखा, उत्तर में ज्ञानिमा, छकरा आदि के मैदानों तथा कई अन्य स्थानों की समतल अधित्यकाओं पर बिना किसी विशेष प्रबंध के वायुयान उतर सकते हैं और मानसरोवर या राक्षसताल और तिब्बत के कई अन्य सरोवरों में समुद्री वायुयान अच्छी तरह से उतर सकते हैं।

हम चाहते हैं कि प्रशांति और एकांत किसी प्रकार सांसारिक उद्वेगों से भंग न हो, परंतु यह कोई आश्चर्य की बात न होगी कि कुछ वर्ष के पश्चात कोई भावुक बदरीनाथ की भाँति वहाँ भी 'कैलास मानस एयर सरविस कंपनी' खोलकर वायुयान ले जाय। सात-आठ वर्ष पहले किसी ने यह स्वप्न में भी न सोचा होगा कि बदरीनाथ में बिजली लग सकती है और वायुयान जा सकते हैं। ग्रंथकार आशा करता है कि भारत के नवयुवक हिमालय में भ्रमण करके आधिभौतिक और आध्यात्मिक उन्नति करेंगे।

कभी तिब्बत सरकार की आज्ञा से, या अन्य आधुनिक देश के हाथ में तिब्बत के पड़ जाने से कैलास-शिखर पर पूर्व की ओर से आरोहण करने का यत्न किया जा सकता है। अन्य तीनों ओर से शिखर पूरी खड़ी दीवाल की भाँति है और वहाँ से सदा हिमखंड गिरते रहते हैं।

तृतीय तरंग

श्री कैलास-मानसरोवर-पथप्रदर्शक



अध्याय 1
यात्रा की तैयारी

1. श्री कैलास और मानसरोवर जाने के विविध मार्ग

श्री कैलास और पुनीत मानसरोवर जाने के लिए कई मार्ग हैं। उनमें से मुख्य-मुख्य नीचे दिए जा रहे हैं।

(1) अल्मोड़े से अस्कोट, खेला, गर्ब्यांग, लीपूलेख घाटा (समुद्रतल से 16750 फीट ऊँचा), तकलाकोट और मानसरोवर होकर कैलास—239 मील।

(2) अल्मोड़े से अस्कोट, खेला, दारमा घाटा (18510 फीट) और ज्ञानिमा मंडी होकर कैलास—230 मील।

(3) अल्माड़े से बागेश्वर, ऊँटाधुरा घाटा (17590 फीट), जयंती घाटा (18500 फीट), कुङरी-बिङरी घाटा (18300 फीट) और ज्ञानिमा मंडी होकर कैलास—210 मील)।

(4) जोशीमठ (ज्योतिर्मठ) से गुनला-नीती घाटा (13600 फीट), नाब्रा मंडी, सिबचिलिम मंडी और ज्ञानिमा मंडी होकर कैलास—200 मील।

(5) जोशीमठ के डमजन-नीती घाटा (16200 फीट), तोनजन ला (16350 फीट), सिबचिलिम मंडी और ज्ञानिमा मंडी होकर कैलास—160 मील।

(6) जोशीमठ से होती-नीती घाटा (16390 फीट), सिबचिलिम मंडी और ज्ञानिमा मंडी होकर कैलास—158 मील।

(7) बदरीनाथ से माना घाटा (18400 फीट)[1], थुलिङ मठ, दापा, नाब्रा मंडी, सिबचिलिम मंडी और ज्ञानिमा मंडी होकर कैलास—238 मील।

(8) मुखुवा (गंगोत्तरी) से नीलंग जेलूखागा घाटा (17490 फीट), पुलिङ मंडी, थुलिङ मठ, दापा, सिबचिलिम मंडी और ज्ञानिमा मंडी होकर कैलास—243 मील।

(9) सिमला से रामपुर, शिपकी घाटा (15400 फीट), शिरिङ ला (16400 फीट), लोआचे ला (18510 फीट), गरतोक (15100 फीट), चरगोत ला (16200 फीट) और तीर्थपुरी होकर कैलास—445 मील।

(10) सिमला से रामपुर, शिपकी घाटा, शिरिङ ला, थुलिङ मठ, दापा और ज्ञानिमा मंडी होकर कैलास—473 मील।

(11) श्रीनगर (काश्मीर) से जोजीला (11578 फीट), नग्मिक (13000 फीट),

---

1. पिछली माप के अनुसार इसकी ऊँचाई 17890 फीट है।

फोतू ला (13446 फीट), लेह (लदाख), टगलङ ला (17500 फीट) देमछोक, गरगुनसा, गरतोक, चरगोत ला और तीर्थपुरी होकर कैलास—605 मील।

(12) काठमांडू (नेपाल-पशुपतिनाथ) से मुक्तिनाथ, खोचारनाथ और तकलाकोट होकर कैलास—525 मील।

(13) ल्हासा से टाशी ल्हुम्पो होकर कैलास—800 मील।

(14) कांगड़ा जिले में कुल्लू से होकर रामपुर बशहर स्टेट और थुलिङ होते हुए कैलास।

अल्मोड़े से लीपूलेख घाटा होकर जाने वाला जो पहला मार्ग है, वह भारत की समतल भूमि से जाने वालों के लिए सबसे सरल और निरापद है। इसलिए यह मार्ग विस्तृत विवरणों के साथ लिखा गया है। अन्य मार्गों से जाने वालों की सुविधा के लिए उन मार्गों का भी संक्षिप्त वर्णन किया गया है।

2. इस यात्रा को कौन कर सकते हैं?

हृदय या फेफड़ों के किसी प्रकार के रोग या दुर्बलता से पीड़ित व्यक्तियों को छोड़कर सभी श्री कैलास और मानसरोवर की यात्रा कर सकते हैं। हाँ, इतना तो अवश्य चाहिए कि यात्री अति शीत, मार्ग में भोजनादिकों की असुविधा और पर्वतों में चलने से होने वाले अन्य कष्टों को सहन करने के लिए समर्थ हों। देश की यात्राओं के समान यह यात्रा सुलभ और सुगम नहीं है। प्रतिवर्ष भारत से पचास से दो सौ तक यात्री—जिनमें वृद्ध, युवक, बच्चे, स्त्री-पुरुष सभी आयु वाले सम्मिलित रहते हैं—इन तीर्थों में जाते हैं। इनके अतिरिक्त सहस्त्रों भोटिए, स्त्रियों और बाल-बच्चों के साथ, मानसखंड में व्यापार के लिए जाते हैं।

3. प्रवेशाज्ञा-पत्र (पासपोर्ट)

कैलास और मानसरोवर या पश्चिमी तिब्बत के अन्य प्रदेशों में जाने के लिए भारतवासियों को—चाहे वे यात्री हों, व्यापारी हों या और कोई भी हों—अंग्रेजी या तिब्बती सरकार से किसी प्रकार का अनुज्ञापत्र (पासपोर्ट) लेने की कोई आवश्यकता नहीं है। परंतु तिब्बत की राजधानी ल्हासा या पूर्वी तिब्बत के किसी और स्थान में जाने के लिए भारत की केंद्रीय सरकार से प्रत्येक व्यक्ति को अनुज्ञापत्र लेना अनिवार्य है। भारतवासियों के अतिरिक्त किसी भी विदेशी को यदि भारत की सीमा से तिब्बत में प्रवेश करना हो, तो भारत की केंद्रीय सरकार से और तिब्बत सरकार से अनुज्ञापत्र लेना पड़ता है। पासपोर्ट को तिब्बती भाषा में 'लम-यिक' कहते हैं।

अल्मोड़ा जिले में धौली गंगा, मानस्यारी और फुरकिया, और गढ़वाल जिले में सुरई टोटा से कदारनाथ तक की लकीर को 'इनर लाइन' कहते हैं। इस 'इनर लाइन' को पारकर भारत-तिब्बत-सीमा तक जाने के लिए विदेशियों को जिलाधीश की आज्ञा लेनी पड़ती है।

4. यात्रा के लिए आवश्यक वस्तुएँ

(क) वस्त्र

(1) 2-3 ऊन के मोटे कंबल या 'रग'।
(2) 1-2 चुटका, यह मोटा तिब्बती कंबल है, जो गर्ब्यांग से किराए पर लेना पड़ता है, या तकलाकोट में खरीदा जा सकता है।
(3) अपनी आवश्यकता के अनुसार बिछौना।
(4) 1-2 ऊनी पैजामा या पतलून।
(5) 1-2 ऊनी कमीज।
(6) 4 सूती कुर्ता।
(7) 1 ऊनी स्वेटर।
(8) 1 बरसाती कोट।
(9) 1 बरसाती टोपी, हैट पहनने वाले हैट की बरसाती टोपी ले जाएँ।
(10) 1 ऊनी ओवरकोट।
(11) 1 ऊनी कनटोप।
(12) 2 जोड़े ऊनी मोजे।
(13) 1 ऊनी मफलर।
(14) 1 जोड़ा ऊनी दस्ताना।
(15) पैरों में बाँधने के लिए 1 जोड़ा ऊन पट्टी।
(16) 2 सूती पैजामे।
(17) 2 धोतियाँ।
(18) 2 तौलिए।
(19) 2-3 टुकड़े मोमजामा या बरसाती। बिस्तरे और सामान बाँधने के लिए बरसाती-बिस्तरबंद (होल्डाल) ले जायँ तो और भी अच्छा है।
(20) 2 जोड़ा बूट (1 लंबा और 1 सादा, इसमें 1 जोड़ा किंरमिच का हो तो अच्छा।)
(21) 1 छाता।
(22) 3 या चार गज का सफेद कपड़ा।

(ख) औषधि

(1) क्लोरोडाईन या कर्पूरादि अरिष्ट—दस्त बंद करने के लिए।
(2) बिसमत या डोवर्स पाउडर—मरोड़ के लिए।
(3) सोडा बायकार्ब, पाचनचूर्ण या लवणभास्कर—अजीर्ण के लिए।
(4) फ्रूट साल्ट—मृदुविरेचन या पाचन के लिए।
(5) कुनाईन की गोलियाँ—मलेरिया के लिए।

(6) स्टिकिंग प्लास्टर या मलहम।
(7) पोटाशियम परमेंगेनेट।
(8) टिंचर आइओडिन।
(9) बोरिक पाउडर।
(10) रूई।

— फोड़ा, फुंसी, चोट या घाव के लिए।

(11) बैंडेज (पट्‌टी)।
(12) ए0बी0सी0 लिनिमेंट—जोड़ों में दर्द के लिए।
(13) केफि-एस्पिरिन या ऐस्प्रो—सिरदर्द और भारीपन के लिए।
(14) इन्फ्लुएजा-मिक्शचर।
(15) दस्त की गोलियाँ।
(16) वेसलिन की शीशी—ठंढे स्थानों में ओठ, नाक और हाथों में लगाने के लिए।
(17) कस्तूरी—शीत-संबंधी रोगों के लिए।
(18) नीबू के रस में भावना किए हुए अदरक के टुकड़े—पित्त-विकार के लिए।
(19) क्लिनिकल थर्मामीटर—ज्वर देखने के लिए।
(20) अमृतधारा—सभी रोगों के लिए।
(21) वेपेक्स।
(22) स्मेलिंग साल्ट।

— सर्दी के लिए।

(23) कार्बोलिक एसिड या और कोई दाँत की औषधि।
(24) हॉटवाटर बैग—शरीर को गर्म रखने के लिए।
(25) टूथ ब्रश और दंत-मंजन।
(26) एनिमा की पिचकारी—पेट की सफाई के लिए।
(27) रबर का केथीटर—पेशाब खोलने के लिए।

(ग) विविध सामग्रियाँ

(1) टार्च-लाईट, बैटरी के साथ।
(2) 1 हरिकेन लालटेन।
(3) 1 कांगड़ी (काश्मीर की अँगीठी)—यह शीत प्रदेशों में हाथ और कपड़े सेंकने के लिए बहुत उपयोगी है।
(4) 1 स्टोव स्पिरिट आदि के साथ।
(5) मिट्‌टी के तेल का कनिस्टर—आगे की यात्रा के लिए, गर्ब्यांग या तकलाकोट में खरीदना होगा।[1]
(6) दियासलाई के डिब्बे।
(7) सफरी रसोई के बर्तन—करछी, थाली, कटोरा, तश्तरी, चम्मच आदि।
(8) प्रेशर कुकर, इकमिक या अन्नपूर्णा कुकर—विशेषकर भात खाने वाले के लिए

1. युद्ध के दिनों में मिट्‌टी के तेल के लिए अल्मोड़े से ही प्रबंध करना होगा।

बड़े काम का है, क्योंकि 10000 फीट से अधिक ऊँचाई पर साधारण बर्तनों में भात अच्छी तरह नहीं पकता

(9) 1 थरमस-प्लास्क, गर्म दूध या चाय के लिए।

(10) 2 बाल्टी या मिट्‌टी के तेल के छोटे-बड़े कनिस्टर—कनिस्टरों को पकड़ने के लिए तार लगे हों तो अच्छा हो। ये मार्ग में पानी भरने के लिए और पानी गर्म करने के काम में आते हैं।

(11) 1-2 लकड़ी के हल्के बक्स—बर्तन, केटली, प्याले आदि टूटने वाली वस्तुएँ रखने के लिए।

(12) कुंडीदार एक कनिस्टर, जिसमें गुड़पापड़ी, मिठाई आदि रखकर ताला लगा सकें। प्रायः यात्री शिकायत करते हैं कि सेवक या रसोइयों ने उनके खाने की वस्तुएँ चुरा लीं।

(13) 2 बोरे—पहाड़ की यात्रा में होल्डाल आदि फटने का तथा संदूकों के टूट जाने की सदा संभावना रहती है। ये उन्हें बाँधने के काम में आएँगे।

(14) 2 किट बैग (थैलियाँ) ताले के साथ।

(15) 4-5 छोटी-छोटी कपड़े की थैलियाँ—यात्रा की वापसी में धूप आदि वस्तुओं को रखने के लिए।

(16) 2 रस्सियाँ—बीस-बीस फीट की।

(17) चाकू।

(18) कैंची।

(19) 1 हथ-कुल्हाड़ी।

(20) 2 ताले।

(21) साबुन—कपड़े धोने और शरीर में लगाने के लिए।

(22) 1 लाठी बल्लम लगा हुआ—हल्द्वानी या अल्मोड़े से खरीद सकते हैं।

(23) 1 जोड़ा हरा चश्मा—बर्फ की चमक और ठंढी वायु से आँखों को बचाने के लिए।

(24) दूरबीन।

(25) 1 केमरा, फिल्मों के साथ।

(26) कोडक मेगनीशियम रिबन होल्डर या साधारण मेगनिशियम रिबन—अँधेरे स्थानों में फोटो लेने के लिए और खोचारनाथ की मूर्तियाँ तथा डिरफुक् तथा जुँठुलफुक् की गोम्पाओं में गुफाओं को अच्छी तरह देखने के लिए बहुत उपयोगी है।

(27) मेक्सिमम-मिनिमम थर्मामीटर—तापक्रम नापने के लिए।

(28) एनीरोआईड बेरोमीटर—ऊँचाई नापने के लिए।

(29) कुछ छोटी-मोटी वस्तुएँ—साबुन, शीशी, सिगरेट आदि जो घोड़े वालों या मठों में पुरस्कार देने के काम में आती हैं।

(30) सूखी तरकारियाँ।
(31) मसाले, अचार, चटनी, पापड़, इमली, अमचूर, आमरस, बंद डब्बे में रखे हुए फल (प्रीजर्व्ड फ्रूट्स)।
(32) सूखे फल—किसमिस, मुनक्का, छुहारा, खजूर, बादाम, पिश्ता इत्यादि।
(33) चाय, ओवलटिन, जमा हुआ दूध या दूध का चूर्ण, 'लेमन चूस', (लॉजेंजेज),बिस्कुट, चाकलेट, बंबइया-मिठाई, अल्मोड़े के बाल[1] आदि।
(34) स्टेशनरी—कागज, पेंसिल, कलम, दावात, कार्ड, लिफाफे, सुई, धागे, सूजा, सुतली आदि-आदि।
(35) 100 पौंड तौलने वाला स्प्रिंग बैलेंस (काँटा)—स्थान-स्थान पर बोझा, सामान आदि तौलने की आवश्यकता पड़ती है।
(36) श्रीमद्भगवद्गीता और भजन के लिए कोई अन्य पुस्तक।
(37) 3-4 हाईड्रोजेन पेरोक्साईड की खाली बोतलें[2] या किसी और प्रकार की मजबूत बोतलें कार्क के साथ—मानसरोवर, गौरीकुंड, कैलास और तीर्थपुरी के गर्म स्रोतों के जल लाने के लिए।
(38) कपूर, धूप, अगरबत्ती, कुंकुम, सुपारी, इलायची आदि पूजा के द्रव्य। यात्रा के लिए प्रायः सभी आवश्यक पदार्थ ऊपर लिख दिए गए हैं। अपनी-अपनी स्थिति, आवश्यकता और रुचि के अनुसार इनमें कुछ घटा-बढ़ा भी सकते हैं।

5. व्यय

हल्द्वानी (जहाँ पर गाड़ी से उतरना होता है) से कैलास और मानसरोवर होकर लौटने के लिए एक यात्री का मार्ग-व्यय अपनी स्थिति और आवश्यकताओं के अनुसार डेढ़ सौ रुपए से लेकर पाँच सौ रुपए तक है। यदि कोई साधु अपनी पीठ पर सामान लेकर पैदल चल सकें, तो पचास रुपए में भी यात्रा कर सकते हैं। यात्रा में सात-आठ आदमियों का जत्था बनाकर जाने से विशेष सुविधा रहती है। इस कठिन और दीर्घ-यात्रा में टोलियों में जाने से सुख-दुःख में पारस्परिक सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त पथ-प्रदर्शकों के, घोड़े वालों के, तंबुओं के तथा अन्यान्य खर्चे जत्थे में जाने से कम पड़ते हैं। इस यात्रा में अकेले जाना ठीक नहीं।

हल्द्वानी या काठगोदाम से अल्मोड़े तक मोटरबस का भाड़ा	3)
अल्मोड़े के पास एक मोटर-सवारी की चुंगी	।।)
अल्मोड़े से धारचूला तक (90 मील) एक लद्दू घोड़े का	

1. यह अल्मोड़े की विशेष मिठाई है, जो विलायत तक जाती है। यह खोआ से बनती है और छह महीने तक खराब नहीं होती।
2. एक-दो बोतल आवश्यकता से अधिक ही ले जाना चाहिए। क्योंकि, प्रायः यह देखा गया है कि असावधानी के कारण मार्ग में बोतलें टूट जाती हैं, इसलिए यात्रियों को चाहिए कि जल के बोतलों को कपड़ों में अच्छी तरह लपेट लें या उनके लिए एक संदूक बना लें।

(जो प्रायः दो मन बोझा ढोता है) भाड़ा	10) से 12)
अल्मोड़े से धारचूला तक एक सवारी के घोड़े का भाड़ा	12) से 15)
धारुचूला से गर्ब्यांग (55 मील) तक एक कुली का (जो एक मन तक बोझा ढोता है) प्रतिदिन एक रुपए के हिसाब से भाड़ा	5)
गर्ब्यांग से तकलाकोट तक (32 मील) झब्बू, याक, घोड़ा, या (खच्चर (सवारी, या बोझा ढोने के लिए) का भाड़ा)	2।।) से 3)
तकलाकोट से तीर्थपुरी, कैलास-परिक्रमा, मानसरोवर होकर तकलाकोट से खोचार और वहाँ से गर्ब्यांग तक	10) से 17)
इसमें मानसरोवर की भी परिक्रमा करना हो तो और देना होगा	1)
गर्ब्यांग से ही सीधे सारी यात्रा के लिए लिया जाय तो	16) से 20)
गाईड (पथ-प्रदर्शक) प्रतिदिन[1]	1)
गर्ब्यांग से भोटियों से लिए हुए घोड़े आदि[2] हर चार पशुओं की देख-रेख के लिए एक साईस या आदमी का प्रतिदिन[1]।	।।)
गर्ब्यांग से सारी यात्रा करके फिर गर्ब्यांग लौटने तक एक छोलदारी (छोटा तंबू) का भाड़ा	3) से 5)
सारी यात्रा के लिए एक 'चुटका' (मोटा तिब्बती कंबल) का किराया	2) से 4)
वस्त्रों के लिए आरंभिक व्यय	50) से 100)
भोजन का व्यय प्रतिदिन	।।) से 1)
अल्मोड़े से धारचूले तक डाँडी का भाड़ा, छह कुली, प्रतिदिन प्रतिकुली एक रुपए की दर से नौ या दस दिनों के लिए	54) से 60)
धारचूले से गर्ब्यांग तक डाँडी का भाड़ा छह कुली प्रतिदिन प्रतिकुली एक रुपए की दर से पाँच दिनों के लिए	30)
गर्ब्यांग से सारी कैलास यात्रा के लिए डाँडी का किराया, आठ कुली प्रतिदिन, प्रतिकुली डेढ़ या दो रुपए की दर से बीस दिनों के लिए	240) से 320)
खाली डाँडी का भाड़ा अलग देना पड़ता है	
रसोइए का वेतन, अल्मोड़े से, प्रतिदिन ।।) से 1) तक, $1\frac{1}{2}$ महीने के लिए, (उसके लिए एक पैजामा और जूता)	25) से 50)
धारचूला से गर्ब्यांग तक एक मेठ को 5 दिन के लिए	5)
गर्ब्यांग से कैलास होकर वहाँ लौटने तक नौकर का वेतन, प्रतिदिन ।।।), 25 दिन के लिए, बिना भोजन	20)

1. मार्ग में किसी एक स्थान पर दो-चार दिन से अधिक विराम करे, तो आधा वेतन दिया जाता है।
2. तकलाकोट से जब घोड़े लिए जाते हैं, तो साईसों को अलग भाड़ा नहीं दिया जाता।

घोड़े वाले सेवकों को पुरस्कार और अन्यान्य व्यय 25)

6. सवारी

अल्मोड़े के ऊपर पहाड़ों में कुली, घोड़ा, खच्चर, याक, झब्बू और डाँडी—केवल ये ही सवारियाँ मिलती हैं। अल्मोड़ा, अस्कोट, धारचूला, खेला, गर्ब्यांग और तकलाकोट में इनका प्रबंध कर सकते हैं। जहाँ तक हो सके अल्मोड़े से धारचूले तक कुलियों को नहीं नियुक्त करना चाहिए, घोड़ों से ही काम लेना चाहिए, क्योंकि कुली मार्ग में धीरे-धीरे चलते हैं, इसलिए उन्हें बहुत दिन भी लग जाते हैं और शीघ्र थक भी जाते हैं। साथ ही उन्हें भोजन और वापसी किराया भी देना पड़ता है। अल्मोड़े में सरकारी कुली एजेंसी है, जहाँ पर कुली और घोड़ों का प्रबंध हो सकता है; परंतु एजेंसी का रेट बाजार दर से कहीं अधिक है। हाँ, कुली एजेंसी से दो-तीन दिन में प्रबंध हो सकता है और बाजार के प्रबंध में एकाध दिन देर होने की संभावना रहती है। अल्मोड़ा पहुँचने से पहले ही प्रबंध करा लें, तो देर नहीं होगी। कुलियों को लेना हो तो डोटियालों (नेपाली) को नियुक्त करना चाहिए, क्योंकि वे बलिष्ठ और अधिक बोझा ढोने वाले होते हैं। अल्मोड़े से धारचूले तक कुलियों की दर प्रतिदिन बारह आने से एक रुपए तक होती है।

अल्मोड़े में मेसर्स लक्ष्मीलाल आनंद ब्रदर्स द्वारा प्रबंध करने से घोड़े सस्ते में मिल जाते हैं, क्योंकि वे इसे किसी व्यापार-दृष्टि से नहीं, अपितु धार्मिक तथा यात्रियों की सहायता करने के उद्देश्य से कम दर पर ही व्यवस्था कर देते हैं। स्त्रियों के लिए अल्मोड़े से डाँडी करना हो, तो छह कुलियों को नियुक्त करना होगा, जिनमें प्रत्येक कुली को प्रतिदिन एक रुपए की दर से मजदूरी देनी पड़ती है। ये लोग नौ या दस दिन में धारचूला पहुँचाते हैं। इस प्रकार अल्मोड़े से धारचूले तक डाँडी का भाड़ा 54) से 60) रुपए तक हो जाता है। पर, यदि घोड़े नियुक्त किए जायँ, तो अधिक से अधिक 15) रुपए में ही काम चल जाता है। इसलिए स्त्रियाँ भी अल्मोड़े से घोड़े पर ही जाती हैं, क्योंकि आगे उन्हें भी गर्ब्यांग से घोड़े या याक पर ही जाना पड़ता है। यदि वे बहुत धनी हों, तो दूसरी बात है।

धारचूले से गर्ब्यांग तक मार्ग दुर्गम है। वर्षा ऋतु में कई स्थानों में ऊपर के पहाड़ों के टूटने से बड़े-बड़े पत्थर मार्ग पर गिरते रहते हैं। कहीं-कहीं मार्ग भी टूटा हुआ और संकुचित रहता है। इसलिए सवारी और लद्दू घोड़ों का जाना भयावह है। अतः यात्रियों को पैदल या डाँडी में जाना पड़ता है। सोसा में किसी को चिट्ठी लिखकर उसके द्वारा जिपती तक घोड़े का प्रबंध कर सकते हैं, इसी प्रकार गर्ब्यांग में भी किसी व्यक्ति को लिखकर लामारी से गर्ब्यांग तक घोड़े का प्रबंध किया जा सकता है। परंतु इस प्रबंध पर पूर्ण भरोसा नहीं रख सकते। साथ ही भाड़ा भी बहुत देना पड़ता है। सामान या डाँडी के लिए तो कुलियों को रखना ही पड़ता है। एक कुली प्रतिदिन एक रुपए लेता है और धारचूला से गर्ब्यांग तक पाँच दिन में पहुँचाता है। यदि कभी धारचूले से गर्ब्यांग तक सीधे कुली न मिलें, तो खेला (जो धारचूले से दस मील आगे है) से आगे के लिए नए कुली मिल जाते हैं।

गब्यांग से आगे के मार्ग में सभी स्थानों पर घोड़े, याक या झब्बू अच्छी तरह से चले जाते हैं। इसलिए वहाँ से तकलाकोट तक ही घोड़े आदि का प्रबंध करना चाहिए।

जहाँ तक हो सके गब्यांग से आगे सवारी में घोड़ों को ही रखना चाहिए, क्योंकि याक या झब्बू बड़े ढीठ पशु होते हैं, वे घोड़ों के समान आज्ञाकारी नहीं होते। अपनी इच्छा से चलते हैं। कभी-कभी गिरा भी देते हैं। गब्यांग से तकलाकोट तक ही घोड़ों को रखना चाहिए, क्योंकि तकलाकोट से तिब्बती घोड़े या याक बहुत सस्ते मिल जाते हैं। गब्यांग से सारी यात्रा के लिए घोड़े ही रखा जाय, तो प्रतिघोड़े के लिए 18) से 20) रुपए तक देने पड़ते हैं। यदि तकलाकोट से लिए जायँ, तो प्रतिघोड़े के लिए लगभग 10) रुपयों में ही काम बन जाता है। मानसरोवर की परिक्रमा करना चाहें, तो उपर्युक्त संख्या से एक-दो रुपए अधिक देना पड़ेगा। यहाँ पर घोड़े या याक के किराए में अंतर नहीं है। गब्यांग से आगे अकेला घोड़ा या झब्बू कदाचित ही मिलेगा। इन्हें एक साथ तीन से अधिक नियुक्त करना पड़ता है। यहाँ पर यात्रियों की जानकारी के लिए साधारणतया किरायों की दर दी गई है। यात्रियों की संख्या अधिक होने पर या बीमारियों के कारण बहुत से पशुओं के मरने पर, या अकाल में जाने पर ऊपर दी हुई दर कुछ बढ़ भी जाती है। उसी प्रकार किसी अवसर पर कम भी हो सकती है।

गब्यांग से आगे प्रायः घोड़े या याकों पर काठ के जीन होते हैं। इसलिए मोटे-मोटे कंबल, चुटका, दन आदि घोड़े के काठ के ऊपर और नीचे डाल दिए जाते हैं, जिससे बोझे का भार कम हो जाता है और बैठने में भी सुविधा मिलती है। इसके अतिरिक्त सवारी के घोड़ों के ऊपर खाने-पीने और दूसरे सामानों को दो छोटी-छोटी गठरियों में बाँधकर काठ पर रखने में बोझे का तौल कम हो जाता है तथा मार्ग में अत्यावश्यक वस्तु निकालने में सुविधा भी हो जाती है। घोड़े या याकों के काठ के ऊपर या नीचे डाले जाने वाले कंबल आदि नहीं तौले जाते।

जहाँ तक हो सके, बिस्तर बहुत मोटा नहीं रखना चाहिए, क्योंकि मार्ग में तीन पुल (बाड़ेछीना) पहुँचने से पहले का, थल का, और गरजिया का पुल बहुत संकुचित हैं। घोड़ों के पुलों पर जाते समय पथरीली दीवालों की रगड़ खाने से संदूकें या बिस्तर या उनके भीतर रखी हुई वस्तुओं के टूटने का डर लगा रहता है। कैलास की परिक्रमा में गौरीकुंड से उतरने का मार्ग भी बहुत संकुचित है और दोनों ओर बड़े-बड़े बेढंगे पत्थर पड़े रहते हैं। याक और घोड़ों पर सामान लादने के पहले जो टूटने वाले सामान हों, उन्हें अच्छी तरह से बाँधकर या संदूकों में रखकर लादना चाहिए, क्योंकि याक ढीठ पशु होते हैं और कड़ी चढ़ाई और उतराई में बहुधा उन्हें गिराकर हानि पहुँचा देते हैं।

यदि कोई श्रीमंत गब्यांग से आगे भी अपनी स्त्री को डाँडी पर ले जाना चाहें, तो उन्हें आठ कुलियों को प्रतिदिन लगाना होगा और प्रतिकुली को प्रतिदिन डेढ़ रुपए देना होगा। वे छोटे-छोटे पड़ावों पर ठहरते हैं, जिससे ड्योढ़ा या दुगुना समय लग जाता है। तिसपर

भी संभव है किसी कुली के बीमार पड़ने पर किसी दूसरे को भी नियुक्त करना होगा, जो बड़ी कठिनता से मिलते हैं। इस प्रकार एक डाँडी में ढाई सौ रुपए से साढ़े तीन सौ तक रुपए लगेंगे। इसलिए प्रायः सभी स्त्री-पुरुष घोड़े और याक पर ही जाते हैं। घोड़े की सवारी से यहाँ डरने की कोई बात नहीं। अनजान से अनजान स्त्री भी एक दिन में घोड़े पर बैठना सीख जाती है। प्रायः कुली एक मन और घोड़े या याक दो मन का सामान ढोते हैं।

भोजन बनाने के लिए अल्मोड़े से ही एक रसोइया ले जाना चाहिए। यात्री थकावट के कारण मार्ग में भोजन बनाने का काम अपनेआप नहीं कर सकते। यात्रियों को चाहिए कि जहाँ तक हो सके क्षत्रिय रसोइए को ले जायँ, क्योंकि ब्राह्मण को ले जाने में चौके का झगड़ा बहुत रहता है। मार्ग में यह कष्ट का कारण बन जाता है। दूसरी बात यह है कि पानी भरने के लिए एक दूसरे ब्राह्मण या क्षत्रिय को रखना पड़ता है। क्षत्रिय को ले जाने से गर्ब्यांग तक पानी के लिए कोई कष्ट नहीं रहता, क्योंकि वह स्वयं लाता है। भाँडाबर्तन धोने का काम किसी घोड़े वाले या दूकानदार के नौकर से कुछ पैसे देकर करा सकते हैं। गर्ब्यांग से भोटिया नौकर पानी भरना, बर्तन साफ करना, कपड़ा धोना आदि सब काम बहुत फुर्ती से कर लेता है।

भोजन बनाने के काम के अतिरिक्त सब काम करने के लिए सेवक को गर्ब्यांग से नियुक्त करना उत्तम है, क्योंकि शीत प्रांत का होने से वह मानसखंड में अच्छी प्रकार सेवा कर सकता है। अल्मोड़े से लिए हुए नौकर ऊपर जाकर देश के लोगों की तरह ही ठंढ से सिकुड़ जाते हैं और बाबू बनकर काम नहीं करते, उनको वेतन के अतिरिक्त खाना भी देना पड़ता है, इसलिए व्यय भी दुगुना पड़ जाता है। गर्ब्यांग में ठा० अंतेराम नामक एक शिक्षित युवक है, जो इस काम के लिए बहुत उपयुक्त है। पकाने का काम भलीभाँति जानता है, अथक सेवक है और खूब भजन गाता है। छेरिङ नामक एक खंपा युवक है। ऐसे ही दो-चार और युवक हैं, जिनको सेवा में ले सकते हैं। गर्ब्यांग के ये सेवक बिस्तर लगाना, पानी लाना, बर्तना धोना, यात्री के उठने से पहले ही गर्म पानी तैयार कर रखना, लकड़ी लाना, तंबू लगाना, कहानियाँ सुनाना आदि सब काम करते हैं। जहाँ तक हो सके, यात्रियों को चाहिए कि वे अपने घर के सेवक या रसोइए को इस यात्रा पर न ले जाएँ, क्योंकि उनके लिए भी उतना ही प्रबंध करना पड़ता है, जितना अपने लिए; अंत में सेवा बहुत कम होती है और वह बीमार पड़े तो मार्ग में कष्ट के कारण हो जाते हैं। हाँ, अधिक धनवान जो अपने निजी सेवकों को सवारी के लिए घोड़ा आदि का प्रबंध करके ले जाना चाहें, तो ले जा सकते हैं। चार-पाँच यात्रियों के पीछे अल्मोड़े से एक रसोइया और गर्ब्यांग से चलकर वहीं लौटने तक, गर्ब्यांग के ही एक सेवक को नियुक्त करना चाहिए।

जत्थों में जाते समय धारचूले से गर्ब्यांग तक कुलियों के ऊपर एक मेठ रखना आवश्यक है। इसकी मजदूरी अन्य कुलियों की भाँति प्रतिदिन एक रुपए के हिसाब से होती है। बिस्तर बाँधना, बोझा तैयार कराकर कुलियों को समय पर चलाना, पड़ाव पर पानी लाना और बर्तन धोना इत्यादि सब प्रबंध करना इसका काम है। इसलिए इसको बोझा नहीं दिया जाता, परंतु

यह यात्री के साथ-साथ चलकर मार्ग का भोजन, थर्मस फ़्लास्क (चाय गर्म रखने के लिए), छाता, बरसाती आदि सामान और केवल दस-बारह सेर तक का बोझा उठाएगा, जिससे यात्री के साथ-साथ सुगमता से चल सके। अधिक बोझा देने पर यह कुलियों के साथ पीछे रह जाएगा और समुचित रूप में काम नहीं कर सकेगा।

यात्रा में एक-दो दिन तक थोड़ी थकावट ज्ञात होगी, पर कुछ दिनों बाद अभ्यास हो जाने पर बिना कष्ट के चल सकेंगे। तिब्बती भाषा में एक कहावत है कि 'खेनला माशुन ना ता मेन, थुरला माफम ना मी मेन' चढ़ाई पर न चढ़ा तो घोड़ा घोड़ा नहीं, उतार पर न उतरे तो आदमी आदमी नहीं। इसलिए यात्रियों को उचित है कि जहाँ कहीं कठिन उतार पड़े, तो घोड़े से उतर जायँ—ऐसा करने से दोनों के लिए आराम हो जाता है। चाहे जितनी भी ऊँचाई पर क्यों न हो, उतरते समय दम नहीं घुटता और न कष्ट ही होता है। इस प्रकार घोड़े से गिरने का डर भी नहीं होता। इसके अतिरिक्त बरखा के समान दलदल भूमि पर चलते समय यात्री को सावधान रहना चाहिए, क्योंकि घोड़े के कीचड़ में धँस जाने और यात्री के गिर जाने का भय बना रहता है। यथासंभव यात्रियों को चाहिए कि ऐसे स्थानों में चलते समय घोड़े से उतर जायँ।

बेरीनाग से अस्कोट तक मार्ग में स्थान-स्थान पर बाँज या बलूत (ओक) के बहुत–से वृक्ष हैं। मार्ग में गिरे हुए उनके पत्ते वर्षा ऋतु में सड़कर बहुत जोंक उत्पन्न कर देते हैं। उनसे बचने के लिए लंबे बूट और मोजे पहनकर जाना चाहिए। यदि असावधानी से कोई जोंक पैर पर लग गई हो, तो तंबाकू का पानी या चूर्ण ऊपर डालने से वह तुरंत छोड़ देगी।

7. साहाय्य और ख्यातनामा व्यक्ति

अल्मोड़े में श्यामनिवास वाले मेसर्स लक्ष्मीलाल आनंद ब्रदर्स बहुत धार्मिक और श्रद्धालु व्यक्ति हैं। इनके दो भाई कैलास-यात्रा कर चुके हैं। इसलिए वहाँ जाने वाले यात्रियों की सहायता करने से उन्हें बहुत प्रसन्नता होती है। ये घोड़े और कुलियों का प्रबंध बड़ी सुगमता से कर देते हैं, क्योंकि घोड़े वाले पहाड़ों में धारचूला तक सामान ले जाने के लिए इनके पास आया करते हैं। इसके अतिरिक्त आगे की यात्रा के लिए परामर्श एवं आवश्यक वस्तुओं के संग्रह करने में भी ये बड़े उत्साह से सहायता करते हैं। किसी प्रकार का विशेष परामर्श यहाँ के डिपटी कलेक्टर, डिस्ट्रिक बोर्ड के चेयरमैन या तहसीलदार के साथ कर सकते हैं।

गणाई में दुकानदार पं० जीवानंद जी और पं० नरोत्तम जी ठहरने का और घोड़ों का प्रबंध तुरंत करते हैं, क्योंकि उनके पास अपने निजी घोड़े हैं। कुछ दिन पहले ही पत्र लिखकर उनको सूचित कर देने से अल्मोड़े से धारचूला या धारचूले से अल्मोड़ा तक घोड़ों का प्रबंध वे कर देते हैं।

टनकपुर से आने वाला मार्ग अस्कोट में मिलता है। आवश्यकता पड़ने पर अस्कोट

के रजवाड़े के कोई सज्जन यहाँ से घोड़े या कुली का प्रबंध कर देते हैं। धारचूले में रायसाहब पं0 प्रेमवल्लभ जी भक्त आदमी हैं और कैलास-यात्रियों के सहायक तथा साधु-महात्माओं के सेवक हैं। यहीं के पं0 हरिदत्त जी और उमापति जी दुकानदार यात्रियों को टिकाने और आगे कुलियों, डाँडियों और लौटते समय घोड़े का प्रबंध करने में विशेष सहायता प्रदान करते हैं। धारचूला पहुँचते ही या पहुँचने के एक-दो दिन पहले ही खेला के (जो यहाँ से दस मील पर है) ठाकुर प्रतापसिंह जी मानसिंह जी दुकानदार को लिखने से धारचूले से सीधे गर्ब्यांग तक के लिए वे कुली या डाँडी का सुप्रबंध कर देते हैं। या धारचूले से खेले तक जाते ही कुली मिल गया हो तो खेले से आगे का प्रबंध प्रतापसिंह जी द्वारा हो सकता है, क्योंकि धारचूले से गर्ब्यांग तक जाने वाले कुली प्रायः खेला और उसके आसपास के गाँवों के ही होते हैं। खेले में आवश्यकता पड़ने पर डाकमुंशी भी कुलियों का प्रबंध कर सकते हैं।

ठाकुर मोहनसिंह जी गर्ब्याल को अल्मोड़े से चलते समय पत्र लिखने से वे सारी कैलास-यात्रा के लिए तकलाकोट से गर्ब्यांग लौटने तक हूणिया घोड़ों का सस्ते भाड़े पर सुप्रबंध कर सकते हैं। पहले ही गाइड कीचखंपा या ठाकुर रुकुमसिंह जी को चिट्ठी लिखने से यात्री के गर्ब्यांग पहुँचने तक तंबू, भोजन–समाग्री तथा तकलाकोट तक घोड़े, सेवक आदि का प्रबंध वे स्वयं कर देते हैं। इनकी अनुपस्थिति में आवश्यकता पड़ने पर गर्ब्यांग में पटवारी, डाकमुंशी या स्कूल के पंडित घोड़े, याक और भोजन–सामग्रियों का प्रबंध करने में सहायता पहुँचाते हैं। तकलाकोट में ठा0 मोहनसिंह कुंदनसिंह जी गर्ब्याल, ठा0 प्रेमसिंह जी चौदाँसी, ठा0 नंदराम जमनसिंह जी गर्ब्याल, ठा0 कल्याणसिंह कृष्णसिंह जी और अन्य भोटिया व्यापारी यात्रियों के लिए आवश्यक घोड़ों और याकों के तय करने, भोजन-सामग्रियों के खरीदने और गर्ब्यांग से उनकी चिट्ठी-पत्रियों को मँगवाने या भेजने में अमूल्य सहायता प्रदान करते हैं तथा यात्रियों को श्रद्धापूर्वक सहायता पहुँचाने में अपना विशेष भाग्य मानते हैं। परखा के मैदान गपूडासा में ठा0 मंगलसिंह जी पांगती, तरछेन में ठा0 शेरसिंह जी पांगती, ज्ञानिमा मंडी में ठा0 भगतसिंह पांगती, ठा0 रतनसिंह जी पांगती, ठा0 कुंदनसिंह जी जंगपांगी या अन्य जोहारी व्यापारी, ठोकर मंडी में ठा0 प्रेमसिंह जी, ठा0 रतनसिंह जी अर्या चौदाँसी और ठा0 जमनसिंह जी गर्ब्याल, नाब्रा मंडी में ठा0 हयातसिंह जी, ठा0 उदयसिंह जी या नीति के अन्य भोटिए सज्जन यात्रियों की आवश्यक सहायता करने में अपना अहोभाग्य मानते हैं। इस प्रकार उक्त सभी सज्जन यात्रियों की कृतज्ञता के पात्र हैं।

8. बटमार, बंदूक, पथप्रदर्शक और दुभाषिए

तकलाकोट से सोलह मील दूर आगे तक किसी प्रकार के डाकू या लुटेरों का भय नहीं रहता। गुरला घाटा के पास मानसरोवर और राक्षससरोवर के किनारों पर, परखा के मैदान में, कैलास की परिक्रमा में, कैलास और ज्ञानिमा के बीच में, ज्ञानिमा और तीर्थपुरी के बीच में, तीर्थपुरी और कैलास के मध्य में, तीर्थपुरी से गरतोक के मार्ग में, ज्ञानिमा और सिबचिलिम मंडी के बीच में, ब्रह्मपुत्र और सिंधुनदी के उद्गम तक जाने के मार्ग में विशेषकर

डाकुओं का भय बना हता है। मई और अक्टूबर के मध्य में 'ञाकोरा' (तीर्थयात्री) या खम्पा (खम् प्रांत के लोग) डाकुओं के झुंड अपने बाल-बच्चों के साथ मानसखंड की मंडियों में आने-जाने लगते हैं। इनके पास बड़ी-बड़ी तलवारें और बंदूकें रहती हैं। मार्ग में किसी निरस्त्र यात्री या व्यापारी के मिलने पर ये उनके घोड़ों सहित सभी सामानों को लूटकर पहाड़ों में शीघ्र ही अदृश्य हो जाते हैं। इसलिए यात्रियों को चाहिए कि जत्थों में चलें और अपने पास बंदूक रखें।[1] यदि यात्रियों में किसी के पास अपनी बंदूक न हो, तो यात्रा के प्रारंभ में ही तकलाकोट में घोड़े वालों से मँगवा लें। यदि घोड़े वालों के पास से भी न मिले, तो किसी भोटिया व्यापारी के द्वारा दो-चार रुपए किराये पर ले लें। प्रायः डाकुओं की संभावना वाले स्थानों में जब ठहरना हो, तो सूर्यास्त के बाद एकाध झूठा फायर कर देना चाहिए, जिससे यदि आस-पास में कोई डाकू छिपा हो, तो यह समझकर कि इनके हाथ बंदूकें हैं, पास नहीं आते। इस प्रकार बंदूक का प्रबंध कर लेने से डाकुओं से किसी प्रकार डरने की कोई बात नहीं रहती।

एक-एक जत्थे में एक गाइड या पथप्रदर्शक को नियुक्त करना पड़ता है। उन्हें प्रतिदिन एक रुपए देना पड़ता है। पथप्रदर्शक का कर्त्तव्य यह होता है कि पड़ाव पर पहुँचते ही घोड़े वालों से तंबू गड़वाएँ, यात्रियों के सामान को उसमें यथास्थान रखवाएँ, रात में वर्षा की आशंका हो तो डेरों के चारों तरफ खड्डा खुदवाएँ, मार्ग में जहाँ-कहीं दूध या मक्खन या किसी अन्य वस्तु की आवश्यकता पड़ने पर उन्हें किसी तिब्बती गड़रियों से मंगवाएँ और सबेरे आगे चलने के लिए सामान को बंधवाकर घोड़े पर लदवाकर उन्हें उचित समय पर रवाना करें। इन सभी प्रबंधों का उत्तरदायित्व उन्हीं पर है।

गाइड (पथप्रदर्शक) दुभाषिए का कार्य भी करता है। भोटिए और कुछ हूणिए हिंदी और तिब्बती दोनों भाषाओं के जानकार होते हैं। गर्ब्यांग में श्री कीचखंपा नामक एक पथप्रदर्शक हैं, जिन्होंने अब तक अनेक जत्थों के साथ जाकर कैलास की 45 परिक्रमाएँ की हैं। ये बड़े सुशील, शांत, सहनशील और सेवातत्पर हैं। किसी बड़े जत्थे में जाने वाले को चाहिए कि वे इन कुशल पथप्रदर्शक को पहले गर्ब्यांग में चिट्ठी लिखकर गाइड के लिए अपने साथ ले लें।

ठाकुर रुकुमसिंह जी गर्ब्याल एक सुशिक्षित व्यक्ति हैं और गाइड का काम करते हैं। ये भी कई बार यात्रियों के साथ कैलास और मानसरोवर आ चुके हैं। गाइड के कार्य के अतिरिक्त भोजन बनाने का काम भी अच्छी तरह जानते हैं और खूब भजन भी सुनाते हैं। इनके अतिरिक्त चौदाँस में सोसा गाँव के ठा0 मानसिंह जी अच्छे गाइड हैं, जो शांत और सुशील हैं। गर्ब्यांग में रिञ्जेन नामक एक और खंपा हैं, जो गाइड का काम करते हैं; परंतु वे कुछ गरम प्रकृति के व्यक्ति हैं। पहले ही अल्मोड़े से श्री कीचखंपा, ठाकुर रुकुमसिंह जी या ठा0 मानसिंह जी को चिट्ठी लिखकर गाइड के लिए नियुक्त करने से सब प्रकार का प्रबंध ये लोग यात्री की रुचि के अनुकूल करेंगे। गाइड, सेवक और रसोइया का बिस्तर

1. देखिए 'डाकू तथा बटमार', पृष्ठ 157।

और भोजन का सामान—लगभग 25 सेर तक का भार—यात्री को अपने घोड़े से ढुलाना पड़ेगा। साधारण वित्त के लोग गाइड के स्थान पर घोड़े वालों में से किसी एक को थोड़ा पुरस्कार देकर उनसे ही पथप्रदर्शक का कार्य लेते हैं। सभी घोड़े वाले भी मार्ग की जानकारी रखते हैं।

9. कैलास से बदरीनाथ

कैलास-मानस-यात्रा पूरी करने के पश्चात कोई यात्री यदि बहुत न थका हो और बदरीनाथ जाना चाहे, तो उसे पहले लौटकर तकलाकोट आना चाहिए। तकलाकोट से कैलास जाते समय बदरीनाथ जाने के निश्चय को पहले ही घोड़े वालों से कह देने से घोड़े के भाड़े में एक-दो रुपए की कमी हो जाती है। यहाँ से बदरीनाथ जाने के लिए नीती घाटा होकर जाना पड़ता है। नीती गाँव तक का मार्ग बहुत पथरीला होने के कारण उस यात्रा के लिए घोड़े भाड़े पर नहीं मिलते, केवल याक मिलेंगे। याकों में कुछ सवारी के काम में भी आते हैं, जो नाभा कहलाते हैं। अच्छा नाभा मिले तो उस पर बैठना घोड़े से अधिक सुखदाई है। हाँ, अपनी इच्छानुसार उसको इधर-उधर नहीं चला सकते, क्योंकि यह अपने मन से चलता है।

तकलाकोट से नीती तक एक याक का भाड़ा दस रुपए तक होता है, क्योंकि याक को लौटते समय खाली आना पड़ता है। तकलाकोट से नीती $147\frac{1}{2}$ मील है, वहाँ से जोशी मठ $43\frac{1}{2}$ मील है और जोशी मठ से बदरीनाथ 19 मील है, अर्थात् तकलाकोट से नीती होकर बदरीनाथ 210 मील है। तकलाकोट से नीती दस दिन का और वहाँ से बदरीनाथ 4 दिन का मार्ग है। तकलाकोट से नीती तक गाइड आने-जाने के लिए बीस-पच्चीस रुपए लेता है। भोजन दे तो वही रसोइए का भी काम कर लेता है। यदि यात्रियों की संख्या अधिक हो, तो रसोइया को अलग से नियुक्त करना पड़ता है। यात्री ऐसा भी कर सकते हैं कि कैलास की परिक्रमा पूरी करके वहाँ से सीधे ज्ञानिमा मंडी जायँ, वहाँ से बदरी-यात्रा पर न जा सकने वाले तकलाकोट होकर गर्ब्यांग लौटें और बदरीनाथ जाने के इच्छुक नीती तक का नया प्रबंध वहीं से करें। ऐसा करने में व्यय और समय का कोई निश्चय नहीं है, कभी कम और कभी अधिक हो सकता है।

10. ठहरने के स्थान और डेरे

अल्मोड़े से लेकर गर्ब्यांग तक रात में ठहरने के लिए छोटी-छोटी धर्मशालाएँ, दुकान और प्राइमरी स्कूलों के मकान हैं। विशेष स्थानों में जंगलात या डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के बँगले हैं। जंगलात के बँगलों में ठहरने के लिए पंद्रह या बीस दिन पहले अल्मोड़े के जंगलात ऑफिस को लिखकर आज्ञा लेनी होगी और उनमें निश्चित तिथि को ठहरना होगा, जो यात्रियों के लिए सुविधाजनक नहीं होता। डाकबँगले खाली हों तो निर्धारित शुल्क देकर जिस–किसी समय भी ठहर सकते हैं।

मालपा में गाँव नहीं है, केवल दारमा-सेवा-संघ की दो कमरे की एक धर्मशाला है। यात्रियों का जत्था बड़ा हो, तो इसमें स्थान की कमी होगी, इसलिए जिपती से पहले ही आदमी भेजकर धर्मशाला की सफाई करके तैयार करा लेना चाहिए। इस वर्ष दारमा-सेवा-संघ ने धर्मशाला को दोमंजिला बनाने का निश्चय किया है, यदि वह बन गई होगी, तो किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा। कालापानी और उसके आगे चार मील तक छोटी-छोटी गुफा के समान कई धर्मशालाएँ हैं। लीपूलेख की दूसरी ओर पाला नामक स्थान में इसी प्रकार की धर्मशालाएँ हैं, जिनमें छोटी-छोटी कोठरियाँ हैं। पाला पहुँचने के एक मील पहले ही एक छोटी-सी धर्मशाला है। इन धर्मशालाओं में किवाड़ और खिड़कियाँ नहीं हैं, जिससे देश के यात्रियों के ठहरने में अच्छी सुविधा नहीं मिलती। हाँ, अकेले-दुकेले यात्री या कोई साधु-संत ठहर सेकते हैं।

गर्ब्यांग से आगे के मार्ग में तंबुओं में ही रहना पड़ता है। कैलास और मानसरोवर की परिक्रमा में यात्री कम हों, तो वे चाहने पर मठों में ठहर सकते हैं। रहने या रसोई के लिए गर्ब्यांग से जितनी छोलदारी (छोटा तंबू) की आवश्यकता हो, भाड़े पर मिल जाती है। अल्मोड़े से कोई भी व्यक्ति (अति धनवानों को छोड़कर) तंबुओं को साथ नहीं ले जाते, क्योंकि वहाँ से गर्ब्यांग तक आने-जाने का भाड़ा लगभग तंबू के मूल्य के बराबर हो जाता है।

गर्ब्यांग में मिलने वाली एक-एक छोलदारी में अधिक से अधिक चार व्यक्ति रह सकते हैं। यहाँ की छोलदारियाँ देश के तंबू-जैसी, पूरी तरह से हवा-बंद ('एयर टाइट') नहीं होतीं। छोलदारी के बगलों से थोड़ी–बहुत वायु भीतर घुसकर आता है। एक या दो मोटे चुटके भाड़े पर लेने से अच्छे प्रकार काम चल जाता है। यदि कोई संपन्न व्यक्ति सुविधा चाहे, तो अल्मोड़ा या अपने स्थान से बड़ा तंबू या 'डबुल फ्लाई टेंट' ले जाय।

11. जलवायु

अल्मोड़ा, धौलछीना, बेरीनाग और खेला—ये ठंढे स्थान हैं। यहाँ रात में ओढ़ने के लिए कंबल की आवश्यकता होती है। सेराघाट, गणाई, थल, बलुवाकोट और धारचूला—गर्म स्थान हैं। इन स्थानों में गर्मी असह्य होती है। खेला से गर्ब्यांग तक स्थान ठंढे हैं। कालापानी के बाद प्रायः भयानक और तीव्र शीतल वायु चलने लगती है, जो तिब्बत की अपनी विशेषता है। इसके दुष्परिणाम से बचने के लिए खेला से आगे प्रातःकाल में निकलने के पहले नाक, मुँह, ओठ, हाथ और पैरों में वेसलिन लगा लेना चाहिए, नहीं तो वे सभी स्थान काले हो जाते हैं और फटकर रक्त भी उनसे निकलने लगता है। विशेषकर घाटा पार करते समय मुँह पर अच्छी तरह से वेसलिन न लगाया जाय, तो मुँह पूरा काला हो जाता है। मानसखंड में तकलाकोट और खोचारनाथ की जलवायु अन्य स्थानों से अपेक्षाकृत उष्ण है।

अल्मोड़े में जून के अंत से वर्षा आरंभ हो जाती है। कैलास की यात्रा आरंभ होने के समय वर्षा के बढ़ जाने के कारण चढ़ाई और उतराई में यात्रा दिल उबाने वाली और कष्टप्रद हो जाती है। मानसखंड में वर्षा ऋतु विलंब से आरंभ होती है और अल्प होती है।

किंतु जब कभी वर्षा होती है, तो मूसलाधार होती है। ज्ञानिमा मंडी में बहुत सर्दी पड़ती है, यहाँ तक कि मंडी के दिनों (जुलाई और अगस्त) में रात को डेरे से बाहर पड़ी हुई बाल्टी का जल पूरा बर्फ बन जाता है। यात्रा के दिनों में मानसखंड का माध्यमिक तापक्रम दिन के समय 50° से 60° तक रहता है। यदि दिन में बादल न हों, तो धूप प्रखर रहती है। मई के अंत से कुछ दिन पहले यदि लीपूलेख का घाटा पार करनी हो, तो भारत की सीमा पर दो-तीन फर्लांग की दूरी को बर्फ पर चलकर पार करना पड़ता है। जून के अंत में एक फर्लांग की दूरी का भी बर्फ नहीं होता। प्रायः लीपूलेख और डोलमा के घाटों के ऊपर प्रतिदिन किसी-न-किसी समय, कुछ-न-कुछ बर्फ़ या पानी पड़ता ही है। डोलमा ला के घाटा पर बर्फ गिरने का कोई निश्चित समय नहीं होता। परंतु सितंबर के महीने से बारह बजे के बाद लीपूलेख घाटा के ऊपर प्रतिदिन तीव्र वायु के साथ वर्षा होती रहती है या बर्फ गिरती रहती है, जिससे घाटा को बारह बजे से पहले ही पार करना उचित और निरापद है।

जैसा कि पहले कह चुके हैं, समुद्रतल से जितनी अधिक ऊँचाई पर जाते हैं, उतना ही वायु पतली होती जाती है। फलतः वायु में आक्सीजन (प्राणवायु) का अंश कम हो जाता है। इस प्रकार वायु पतली होने और प्राणवायु के कम होने से प्रायः समुद्रतल से 10000 फीट से अधिक ऊँचाई में पहाड़ों पर यात्रा करते समय मन पर एक विशेष प्रभाव पड़ने लगता है, जिससे सारी मानसिक क्रियाओं की गति अति द्रुत या अति मंद हो जाती है, अर्थात् मन की गति विकृत हो जाती है। परंतु समस्त कार्य मानसिक भावों के परिणामस्वरूप होते हैं, इसलिए विशेषकर क्रोध, ईर्ष्या और हर्ष आदि भावों की गति तीव्र हो जाती है। अतः अधिक ऊँचाई पर जाते समय स्वभाव चिड़चिड़ा और झगड़ालू हो जाता है।

प्रायः यात्रियों के जत्थों में यह देखा गया है कि छोटी-छोटी बातों पर आपस में झगड़ा हो जाता है और क्रोधावेशपूर्ण बातें होने लगती हैं। पुनः नीचे उतरने पर उन बातों को भूलकर सब मित्र बन जाते हैं। इसलिए यात्री दल और पर्वतों पर भ्रमण करने जाने वाले जत्थे इस प्राकृतिक विचित्रता को ध्यान में रखकर यदि कोई आपस में क्रोधित हो जाय, तो शेष लोगों को शांत रहना चाहिए न कि वे भी झगड़े में कूद पड़ें। थोड़ी देर में वे भी शांत हो जाएँगे। ऐसा करने से किसी दूसरे अवसर पर कोई अन्य व्यक्ति यदि क्रोधित हो जाय, तो यह स्वयं शांत रहेगा।

वैसे तो यह देखा जाता है कि पित्त प्रकृति वाले का पहाड़ पर चढ़ते समय पित्त बढ़ जाने से स्वभाव में अंतर आ जाता है। यही कारण अन्य व्यक्तियों के बारे में भी हो सकता है। अभिप्राय यह है कि अधिक ऊँचाई पर पतली वायु के कारण प्राणवायु की कमी से यकृत या जिगर (लीवर) कुपित होने से पित्त-रस साधारण समय से अधिक मात्रा में निकलता है, जिससे रक्त में विकार उत्पन्न होकर मन विकृत हो जाता है। संभवतः इसी कारण से पहाड़ों पर चढ़ते समय कुछ खट्टी या चरपरी वस्तुओं के लिए जी चाहता है, जो पित्त–प्रकोप के उपचारक हैं। पित्त-प्रकोप के लिए भावित अदरक का ले जाना बहुत लाभकारी है। पहाड़ में यात्रा करते समय कुछ लोगों की भोजन की मात्रा बढ़ जाती है और कुछ लोगों की कम होती भी देखी गई है।

यात्रा में प्रायः प्रातःकाल कुछ जलपान करने की आवश्यकता पड़ती है।

पर्वती-यात्रा पर जाने से मोटे व्यक्तियों का अनावश्यक मेदा गलकर शरीर सुडौल और स्वस्थ हो जाता है, छोटी-मोटी शारीरिक रुग्णता दूर हो जाती है, शरीर में नया और शुद्ध रक्त संचारित हो जाता है, नाड़ियाँ और नाल-विहीन ग्रंथियाँ (एंडोक्राइन ग्लेंड्स) सबल होती जाती हैं। हृदय पुष्ट और फेफड़े सुदृढ़ हो जाते हैं। मस्तिष्क में ताजापन आ जाता है और मन निर्मल हो जाता है। संक्षेप में, शरीर में नवजीवन का संचार होकर किसी भी कार्य के करने में शक्ति और उत्साह दुगुने हो जाते हैं।

12. यात्रा का उचित समय

मई से नवंबर के अंत तक लीपूलेख के ऊपर बर्फ पिघल जाती है, जिससे देश के लोगों के लिए मार्ग सुगम हो जाता है, यद्यपि तिब्बती लोग वर्ष में दस महीने तक आते-जाते रहते हैं। जून के प्रारंभ या मध्य में कैलास जाने वाले यात्री अल्मोड़े से सुविधापूर्वक यात्रा कर सकते हैं, जिससे कम-से-कम जाते समय वर्षा से बच सकें। परंतु शीत के भय से प्रायः यात्रीगण जुलाई के आरंभ से चलते हैं, जिससे जाने और आने दोनों समय वर्षा का कष्ट उठाना पड़ता है। लीपूलेख की घाटी के ऊपर की बर्फ से डरने की कोई बात नहीं। कुछ साहसी नवयुवक अल्मोड़े से मई के अंत में ही निकलकर जाते हैं, यद्यपि घोड़े आदि का खर्च कुछ अधिक पड़ जाता है। अन्य घाटों के मार्ग के खुलने का समय उन-उन मार्गों की तालिका में दिया गया है।

13. यात्रा में कितना समय लगता है?

अल्मोड़े से मानसरोवर होकर कैलास की परिक्रमा और खोचारनाथ का दर्शन करके अल्मोड़े लौटने तक (धारचूला, गर्ब्यांग और तकलाकोट में कुली, घोड़े आदि के प्रबंध और मुकाम के दिनों को मिलाकर) पचास दिन लग जाते हैं। ज्ञानिमा मंडी और तीर्थपुरी भी जाना हो, तो एक सप्ताह और लग जाता है; मानसरोवर की प्रदक्षिणा भी करे, तो दो-तीन दिन और भी लग जाते हैं। अर्थात् सारी यात्रा पूरे दो महीने में समाप्त होती है। अल्मोड़ा, धारचूला, गर्ब्यांग और तकलाकोट में घोड़े आदि के लिए पहले ही चिट्ठी लिखने या किसी व्यक्ति के द्वारा प्रबंध करने से पचास दिन में ही संपूर्ण यात्रा हो सकती है, पर इस प्रकार कुछ हड़बड़ी में होगी।

14. डाक[1]

अल्मोड़े से लीपूलेख घाटा होकर कैलास जाने वाले मार्ग में गर्ब्यांग ही अंतिम डाक-घर है। इसलिए यात्रियों को उचित है कि अपनी चिट्ठी-पत्रियों को लौटने के समय तक

1. देखिए 'डाकघर' पृ0—165।

डाकघर में ही रखने के लिए पोस्टमास्टर से कह दें, या तकलाकोट में ठा0 नंदराम जी गर्ब्याल के द्वारा उनके पते पर मँगवा लें। यात्रियों की डाक के प्रबंध करने में ये बड़ी सहायता पहुँचाते हैं।

15. खाद्यपदार्थ

अल्मोड़े से गर्ब्यांग तक (मालपा में एक दिन छोड़कर, जो जिपती और गर्ब्यांग के बीच में है) सारे मार्ग में खाने-पीने के सभी प्रकार के सामान दूकानों में मिल जाते हैं। बेसन, सूजी, अचार, सागूदाना और सेवँई आदि वस्तुओं को विशेषरूप से चाहने वाले लोग अल्मोड़े से ही ले जायँ। जिपती से मालपा के पड़ाव के लिए भोजन का सामान साथ ले जाना चाहिए। यात्रियों को चाहिए कि आगे की यात्रा के लिए पुनः गर्ब्यांग लौटने तक ही पर्याप्त भोजन-सामग्री और आलू गर्ब्यांग से ही ले जायँ। बेरीनाग से धारचूले तक मोटे केले प्रचुर परिमाण में सस्ते मूल्य पर मिलते हैं। बाड़ेछीना, सेराघाट, थल और धारचूले में कैलास आते-जाते समय आम की ऋतु में पर्याप्त आम मिलते हैं। लौटते समय गर्ब्यांग में बंद गोभी, राई का साग और मूली; सिरखा में सेब और नाशपाती और धारचूला में अमरूद अधिक मिलते हैं। खेला और धारचूले में बहुत बढ़िया दानेदार घी रुपए में एक सेर से डेढ़ सेर तक मिलता है। अल्मोड़े से सिरखा तक ककड़ी मिल जाती है। अक्टूबर से नवंबर के अंत तक बलुवाकोट, जौलजीबी, गर्जिया, अस्कोट, डीडीहाट और थल में संतरा या नारंगी मिलती है।

तकलाकोट मंडी में कभी-कभी (नेपाल की सीमा लिमी से) हरा मिर्चा, मूली, चुल्लू (एक प्रकार की खुमानी) और आलू बिकने के लिए आते हैं। कद्दूकश पर घिसी हुई सूखी मूली भी यहाँ पर किसी-किसी व्यापारी के पास मिल जाती है। तकलाकोट से करदुङ तक हरा मटर बहुत मिलता है। तकलाकोट मंडी में मिलने वाली खाने-पीने की वस्तुओं के भाव आगे दिए गए हैं।[1] ये सभी पदार्थ देश से ही आते हैं, इसलिए इनके भाव भी देश के भाव के अनुसार घटते-बढ़ते रहते हैं।

गेहूँ का आटा	प्रति रु0 3 से 5 सेर	गुड़ की भेली जो दो से ढाई सेर तक
चावल	" 3 से 5 सेर	की होती है ।।) से ।।।=)आने
मसूर की दाल	" 3 से 4 सेर	मिट्टी का तेल छोटा कनिस्टर 2।।) से 3) रुपए
उड़द की दाल	" 4 से 5 सेर	इनके अतिरिक्त बिस्कुट, मोमबत्ती, दियासलाई,
चीनी या मिसरी	"1। से 1।। सेर	सिगरेट, बर्तन, स्टेशनरी, सभी प्रकार के कपड़े,
जौ का सत्तू	" 3 से 5 सेर	जूते आदि वस्तुएँ यहाँ मिलती हैं।

1. चूँकि युद्ध के कारण सभी वस्तुओं के दाम बढ़ गए हैं, इसलिए जो दरें इस पुस्तक में दी गई हैं, उनमें स्वभावतः आदि परिवर्तन की आवश्यकता पड़ेगी; उसी प्रकार वर्तमान समय के भाड़े के संबंध में भी कोई निश्चित दर नहीं बताई जा सकती।

मटर का सत्तू	"	3 से 5 सेर	
किसमिस या मुनक्का	"	1। से 1।। सेर	
मक्खन	"	1 से 1।। सेर	
मसाले	"	1 सेर	

तरछेन में जोहार और दारमा परगने वालों की मंडी लगती है। यहाँ पर भी सभी प्रकार के खाने-पीने के सामान तथा अन्य वस्तुएँ कुछ कम अंशों में मिल जाती हैं; पर भाव तकलाकोट से अधिक होता है। तकलाकोट से ज्ञानिमा मंडी होकर तीर्थपुरी जाने वालों के लिए सभी वस्तुएँ ज्ञानिमा मंडी में मिल जाती हैं। घर से आते समय यात्रियों को बड़ी, पापड़, अचार, चटनी, सूखे साग तथा बहुत दिनों तक ठहरने वाली मिठाई आदि वस्तुओं को अपने साथ ले जाना चाहिए, क्योंकि गर्ब्यांग में कोई शाक या भाजी नहीं मिलती। तकलाकोट से आगे कहीं-कहीं गड़रियों के काले तंबुओं में चँवर गाय तथा भेड़ और बकरियों का दूध, दही, 'छुरा', मक्खन, मट्ठा आदि खरीदने पर मिल जाते हैं। तकलाकोट, तरछेन और ज्ञानिमा की मंडियों तथा गड़रियों के डेरों में मक्खन रुपए का एक से डेढ़ सेर के भाव तक मिल जाता है।

प्रातःकाल मध्य मार्ग में, या जिस समय भी भोजन की आवश्यकता पड़े, खाने के लिए पहाड़ में गुड़पापड़ी नामक एक मिठाई बना लेते हैं, जिसे घी में आटा भूनकर और गुड़ मिलाकर बना लेते हैं। उसे देश में पँजीरी कहते हैं। पँजीरी में गुड़ के स्थान पर चीनी मिलाते हैं। गुड़पापड़ी तैयार करके बादाम, किशमिश और नारियल की गरी आदि मेवे मिलाते हैं। उसे इस प्रकार तैयार करके एक कनिस्टर में रखा जाता है। पड़ाव से निकलते समय मार्ग में खाने या किसी सेवक को देने के लिए थोड़ी पँजीरी एक छोटी-सी थैली में बाहर निकालकर साथ रख लेनी चाहिए। विशेषकर लीपूलेख घाटा, गरला ला, गौरीकुंड आदि स्थानों पर साथी यात्रियों तथा सेवकादिकों में इसका वितरण करना पड़ता है। इसे प्रायः खेला या गर्ब्यांग में बनवाकर ले जाते हैं। आवश्कयता पड़ने पर जहाँ कहीं भी बना सकते हैं।

16. ईंधन

अल्मोड़े से लेकर गर्ब्यांग तक सभी स्थानों में, दुकानों में जलाने के लिए लकड़ियाँ मिल जाती हैं। गर्ब्यांग से कालापानी तक जंगलों से चीड़ की लकड़ी मिल जाती है। कालापानी से चार-पाँच मील आगे तक पदम (एक प्रकार का छोटा देवदारु) की झाड़ी मिलती है। आगे तिब्बत में चलकर कैलास की यात्रा में 'डमा' की झाड़ियों (जो हरी जलती है) को छोड़कर अन्य किसी प्रकार की लकड़ी नहीं मिलती। प्रायः तिब्बती लोग याक के कंडे और भेड़-बकरियों की लेंड़ियों को जलाने के काम में लाते हैं। आग सुलगाने के लिए साथ में भाथी रखते हैं। चकमक पत्थर से आग बनाकर घोड़े की लीद में लगाकर अग्नि प्रज्वलित कर लेते हैं। यात्रियों को अपनी आवश्यकता के अनुसार स्टोव, मिट्टी का तेल, स्पिरिट और दियासलाई आदि साथ ले जाना चाहिए।

17. सिक्का[1]

तकलाकोट तक भारत के सभी सिक्के और नोट[2] चलते हैं, परंतु तिब्बत में भारत के नोट बिल्कुल नहीं चलते। उससे आगे तिब्बती टंका या टंगा व्यवहार में लाते हैं। भोटिए व्यापारी भारत के सभी सिक्कों को ले लेते हैं। हूणियों (तिब्बती) के साथ नित्य व्यवहार के लिए तीन-चार रुपए का 'टंगा' भुना लेना चाहिए—अधिक लेने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि तिब्बती लोग टंकाओं से भारत के रुपए को अधिक पसंद करते हैं। आजकल मानसखंड में रुपए में आठ टंके मिलते हैं। ल्हासा की दर के अनुसार कभी-कभी एक टंका का भाव यहाँ बढ़ या घट जाता है। आधा टंका भी वहाँ प्रचलित है, जो 'जव' कहलाता है। नौ-दस वर्षों से ल्हासा में रुपए, अठन्नी और नोट भी प्रचार में आने लगे हैं।

18. यात्रा में होने वाली व्याधियाँ

हल्द्वानी या काठगोदाम स्टेशन से अल्मोड़े तक मोटर में चलते समय उतार और चढ़ाई के कारण पित्त–प्रकोप वालों को उल्टी हुआ करती है। उन्हें चाहिए कि बारह आने या एक रुपए अधिक देकर आगे की सीट पर बैठें। यदि चल सकें तो पैदल चलकर हल्द्वानी से दो दिन में अल्मोड़ा पहुँचें। यात्रा में साधारणतया होने वाली बीमारियाँ ये हैं—मरोड़ या पेचिश, दस्त,सर्दी (जुकाम), खाँसी, थकावट, मार्ग में चढ़ाव-उतार की थकावट के कारण ज्वर, शरीर में भारीपन, घाटों पर चढ़ते समय चक्कर आना और सिर-दर्द। कठिन चढ़ाइयों पर चढ़ते समय किसी दुर्बल या स्थूल शरीर वालों को छाती में धड़धड़ाहट होने लगती है या दम घुट जाता है। पित्त–प्रकोप वालों को कभी-कभी घाटों पर चढ़ते समय विकार या उल्टी होने लगती है। उन लोगों को चाहिए कि चढ़ाई के पहले अपनी जेब में अनारदाना, अमचूर, नीबू का सत, इमली या किसी और प्रकार की खटाई को लेकर उक्त समय पर उनका प्रयोग करें। ऐसा करने से ये रोग निवृत्त हो जाते हैं। सिर–चक्कर, हल्का बुखार या शरीर के भारीपन के लिए 'एस्पिरिन' या 'एस्प्रो' खाकर लाभ उठा सकते हैं। किसी-किसी को 15000 फीट से अधिक ऊँचाई के स्थानों में रक्त–संचार की गति (ब्लड प्रेशर) के बढ़ जाने से कभी-कभी नाक या मुँह से रक्त निकलने लगता है। इससे घबराना नहीं चाहिए। शीतल जल छिड़कने से यह शिकायत दूर हो जाती है।

कुछ लोगों की धारणा है कि घाटों को लाँघते समय विषैली जड़ी-बूटियों के फूलों के ऊपर से आई हुई वायु को सूँघने के कारण विष चढ़ जाता है और उससे सिर में पीड़ा, सिर-चक्कर, उल्टी आदि होने लगते हैं। परंतु इनके कारण विषैली बूटियों की गंध नहीं है, अपितु यह है कि समुद्रतल से जितनी अधिक ऊँचाई पर हम जाते हैं, वायु उतना ही

---

1. देखिए, 'सिक्का' पृ0 171।
2. युद्ध के कारण गत वर्ष में अल्मोड़े से भारत की सीमा तक दुकानदार और व्यापारी लोग नोट बहुत कम ले रहे हैं। इसलिए यात्रियों को चाहिए कि चाँदी के रुपए ही साथ ले जायँ।

पतला होता रहता है। श्वसोच्छ्वास के लिए आवश्यक परिमाण में प्राणवायु न मिलने के कारण दम घुटता है और लोग हाँफने लगते हैं। मैदानों में एक बार श्वास लेने से जितना प्राणवायु मिलता है, उतना के लिए अधिक ऊँचाई पर चढ़ते समय चार-पाँच बार श्वास लेना पड़ता है; इसलिए दम घुटने लगता है। विषैले फूलों की गंध से 'जहर चढ़ने' की कथा में केवल भ्रम और अज्ञान है।

पैर की पीड़ा के लिए रात में सोने के पहले पर्याप्त गरम किए हुए पानी में नमक डालकर पैर को उसमें थोड़ी देर रखे और फिर उसी से पैरों को धो देने से कष्ट दूर हो जाता है और सबेरे तक पैर स्वस्थ हो जाते हैं। यात्रा में सबेरे-शाम गर्म चाय पीने से शरीर में गर्मी उत्पन्न होकर थकावट दूर होती है।

बर्फ पर चलते समय, धूप में और बर्फीली चोटियों के सामने जाते समय, आँखों पर हरा या रंगीन चश्मा न हो तो सूर्यरश्मियों के बर्फ पर पड़ने की चमक से आँख लाल हो जाती है और आँख-उठने के समान असह्य दुःख होता है; ऐसा प्रतीत होता है मानो आँख बालू से भरी हो और हजारों सूईयाँ उसमें चुभाई जा रही हैं। उस समय आँखों में बोरिक का पानी (एक चुटकी बोरिक पाउडर एक आउंस पानी में मिलाकर) या फिटकिरी को आग पर रखके फुलाकर, उसे पानी में डाल दें और उस पानी को आँख में डालने से दुःख दूर हो जाता है।

यदि पैर की उँगलियाँ ठंढक से सूज जायँ, तो कभी भी आग पर नहीं सेंकना चाहिए। रबड़ की थैली में गरम पानी डालकर उसे पैर के नीचे रखना चाहिए तथा दिन में ऊनी मोजे पहनने चाहिए। यदि पैर या हाथ की उँगलियाँ ठंढक के कारण अत्यंत सुन्न हो जायँ या सूज जायँ, तो उन्हें भी आग के ऊपर कभी नहीं सेंकना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से नखों के भीतर सूईयों के चुभाने के दर्द के समान असह्य पीड़ा होने लगती है। उस समय अँगुलियों को काँख और घुटनों के घोंचों में रखकर दबाना चाहिए। थोड़ी ही देर में अपूर्व लाभ होता है। मार्ग में भोजन के संबंध में थोड़ा सावधान रहना चाहिए।

अध्याय 2

लीपूलेख घाटा होकर कैलास जाने का मार्ग

1. अल्मोड़ा कैसे पहुँचें?

कलकत्ते से बरेली जंकशन (ई0आई0आर0) 762 मील की दूरी पर है। बरेली से काठगोदाम (ओ0टी0आर0 छोटी लाइन) 66 मील है। तीसरे दर्जे का कुल किराया 12) है। बनारस से काठगोदाम 399 मील है। तीसरे दर्जे का किराया 7) है। प्रयाग से काठगोदाम 291 मील है, तीसरे दर्जे का किराया 6) है। दिल्ली से काठगोदाम 222 मील की दूरी पर है। तीसरे दर्जे का किराया 4) है। भारत से अल्मोड़े जाने के मार्ग में काठगोदाम अंतिम रेलवे स्टेशन है। प्रायः लोग हल्द्वानी स्टेशन में ही, जो काठगोदाम से 5 मील पीछे का स्टेशन है, उतर जाते हैं, क्योंकि यहाँ पर मोटर आदि का सुभीता रहता है। हल्द्वानी एक बड़ी भारी मंडी है। पहाड़ और देश के मध्य में यह व्यापार का केंद्र है। यहाँ पर डाक और तारघर, अस्पताल, डाकबँगला, मोटर एजेंसी, होटल और अन्य प्रकार की सुविधाएँ हैं। अल्मोड़े जाने वाले सभी मोटरबस यहाँ से ही छूटते हैं। स्टेशन से पचास गज की दूरी पर 'मोटर ट्रांसपोर्ट एजेंसी' का ऑफिस है। सबेरे की गाड़ी से उतरते ही 'बस' मिल जाते हैं, हल्द्वांनी में रुकने की आवश्यकता नहीं पड़ती। दिन में ठीक समय पर पाँच–छह मोटरें छूटती हैं। सिर में चक्कर आने वालों को चाहिए कि मोटर में सदा आगे की सीट पर ही बैठें। यहाँ से अल्मोड़े तक का किराया 3) रुपए है। मेल-बस का किराया इससे अधिक होता है; परंतु वह ठीक समय पर चलता है।

काठगोदाम रेलवे का अंतिम स्टेशन है। यहाँ पर भी डाक और तारघर, डाकबँगला, मोटर एजेंसी और होटल हैं। हल्द्वानी से अल्मोड़ा 88 मील की दूरी पर है। मोटर सात घंटे में पहुँचती है। काठगोदाम से[1] 12 मील के बाद नैनीताल के लिए मोटर की सड़क फूटती है। यहाँ से नैनीताल 15 मील दूर है। 15 मील के पास डॉक्टर कक्कड़ का 'हिलक्रेस्ट' नामक क्षय रोगियों का प्रसिद्ध सेनटोरियम है। 17वें मील पर, गेठिया से नैनीताल को एक पगडंडी जाती है। यहाँ से नैनीताल 3 मील है। 22वें मील पर भवाली में क्षय रोगियों का सरकारी सेनटोरियम है। यहाँ सुंदर सजे हुए बाजार हैं, डाक और तारघर हैं। सेब, नासपाती, खुमानिया और विलायती साग यहाँ मिलते हैं। 35वें मील बाद गर्मपानी नामक स्थान में एक छोटा-सा बाजार है, जहाँ दुकानें और होटल हैं। यहाँ पर भोजन या जलपान के लिए मोटर आधे घंटे तक ठहरती है। स्नान करने के लिए एक जल-धारा है। 49वें और 53वें मील के बीच में रानीखेत की छावनी और शहर है। यह काफी बड़ा बाजार है। यहाँ पर डाक और तारघर तथा होटल हैं। यह एक ठंढा स्थान है। यहाँ से एक मार्ग

---

1. मील पत्थर काठगोदाम से लगे हुए हैं, इसलिए मील की गणना काठगोदाम से ही समझनी चाहिए।

कर्णप्रयाग होकर बदरीनाथ जाता है। यदि बदली न हो, तो यहाँ से पंचचूल्ही, नंदाकोट, नंदादेवी, त्रिशूल, नंदाकना, द्रोणगिरि, कॉमेट और बद्रीनाथ की बर्फीली चोटियों के सुंदर दृश्य देखने में आते हैं। अल्मोड़ा पहुँचने से 2।। मील पहले ही एक चुंगीघर है, जहाँ पर सभी सवारियों को आठ-आठ आने चुंगी देनी पड़ती है। पगडंडी के मार्ग से हल्द्वानी से नैनीताल 16 मील और अल्मोड़ा 41 मील है।

हल्द्वानी से भीमताल	.... 12मील	मार्ग तो चढ़ाई-उतार के हैं, पर दृश्य बड़े ही सुहावने और मनोरम हैं।
भीमताल से रामगढ़	.... 9।। मील	
रामगढ़ से प्यूड़ा	.... 10 मील	
प्यूड़ा से अल्मोड़ा	.... 9।। मील	

2. अल्मोड़ा

अल्मोड़ा, नैनीताल और गढ़वाल के जिले मिलकर कुमायूँ या कूर्मांचल के नाम से प्रसिद्ध हैं। अल्मोड़ा जिले का प्रधान स्थान अल्मोड़ा है। यह समुद्रतल से 5210-5494 फीट की ऊँचाई पर अवस्थित है। यहाँ की जनसंख्या लगभग 20000 है। भारत के प्रसिद्ध और आरोग्यप्रद पहाड़ी स्थानों में (हिल स्टेशन) यह एक है। अन्य 'हिल स्टेशनों' से यहाँ का जीवन सस्ता है। यह स्थान शांत है। जलवायु सुंदर है। यहाँ पर गवर्नमेंट इंटरमीडिएट कॉलेज, लड़कियों और लड़कों के लिए अलग-अलग हाईस्कूल, ऊन की कताई-बुनाई तथा बढ़ईगिरी का स्कूल और अन्यान्य संस्थाएँ, डाक और तारघर, अस्पताल, बैंक, जिलाकोर्ट, जेल, जंगलात के ऑफिस, डिस्ट्रिक्ट और म्युनिसिपल बोर्ड, छावनी, सुंदर सजे हुए बाजार, होटल, सिनेमाघर और आरोग्यप्रद स्थान (सेनटोरियम) हैं। इनके अतिरिक्त नंदादेवी, कसारदेवी, पातालदेवी, स्याहीदेवी, बदरीश्वर, नृसिंहवाड़ी, बालेश्वर इत्यादि देव-मंदिर हैं और रामकृष्ण कुटीर तथा दो-तीन ईसाईयों के मिशन और गिरजाघर हैं।

श्रीमान और श्रीमती ब्रूस्टर्स (अमेरिका निवासी), आलफ्रेड सोरेनसेन (डेनमार्क निवासी) और एक स्वीडेन देशवासी हिन्दू धर्मावलंबी पाश्चात्य साधक स्वतंत्र रूप से यहाँ रहते हैं। श्रीमान और श्रीमती ब्रूस्टर्स उच्चकोटि के साधक और चित्रकला विशारद हैं।

अल्मोड़े से चार मील पश्चिम कसारदेवी नामक एक पहाड़ की चोटी पर काषायेश्वर महादेव तथा देवी का मंदिर है। मंदिर के समीप 25 एकड़ के एक जंगल में अमेरिका के डॉक्टर एवेंसवेंस ने एक सुंदर आश्रम बनवाया है। यहाँ से चारों तरफ का पर्वतीय दृश्य अति रमणीक है। भारत के सुप्रसिद्ध, जगतविख्यात और नाट्य-शास्त्र प्रवीण श्री उदयशंकर जी का नृत्यकला भवन यहीं पर है, जिसके लिए एक उत्तम स्थान पर विशाल भवन बनने वाला है। एक सुंदर नगर बनने के सभी साधनों के रहते हुए भी यहाँ एक धर्मशाला का नितांत अभाव बहुत खटकता है। अल्मोड़े के लक्ष्मी के लाड़लों का कर्तव्य है कि इस ओर अपना ध्यान देकर अवश्य ही इस अभाव को शीघ्र दूर करें।

जब आकाश निर्मल रहता है, तो उत्तर में स्थित गगनचुंबी हिमाच्छादित पर्वतमालाएँ नेत्रों को आनंद प्रदान करती हैं। इन मालाओं में नेपाल की सीमा की चोटियाँ, पंचचूल्ही, नंदाकोट, बनखंडी, नंदाकना, त्रिशूल, द्रोणगिरि, कॉमेट, बदरीनाथ के चौखंभे और केदारनाथ के शिखर तक देखने में आते हैं। प्रायः वर्षा ऋतु में जलद-पटलों से आवृत होकर ये दर्शकों को अपने दर्शनों से वंचित कर देते हैं। परंतु नवंबर के प्रारंभ से ही इन श्वेत हिमाच्छादित शुभ्र शिखरों के दृश्य गोस्वामी जी के 'गिरा अनयन नयन बिनु बानी' को पूर्ण चरितार्थ करते हैं। दिसंबर के महीने में ताजी बर्फ चारों तरफ के समस्त ऊँचे पहाड़ों पर तथा चीड़ और देवदारु के जंगलों के मध्य में पड़कर उपर्युक्त दृश्य को और भी प्रोज्ज्वल और मनोरम बना देती है।

अल्मोड़े के दक्षिण में 14 मील पर मुक्तेश्वर या मोतेश्वर नामक स्थान 7702 फीट ऊँचे पर्वत की चोटी पर स्थित है। यहाँ संसार–प्रसिद्ध 'वेटेरेनरी रीसर्च इंस्टीट्यूट' है। इसकी स्थापना सन् 1895 में हुई थी। यहाँ एक बड़ी भारी प्रयोगशाला है, जहाँ पशु–संबंधी सभी रोगों की गवेषणा होती है और कई प्रकार के टीके के 'सीरम' बनते हैं। यह एक सुंदर और देखने योग्य स्थान है; यहाँ से नैनीताल 24 मील पर है। रामकृष्ण मिशन का मायावती नामक वेदांत आश्रम यहाँ से आग्नेय कोण में 50 मील की दूरी पर चंफावत और लोहाघाट के पास स्थित है।

अल्मोड़े से ईशान कोण में 13 मील की दूरी पर बिनसर नामक एक स्वास्थ्यप्रद स्थान है। यहाँ सेब और नासपाती के बगीचे और कुछ बँगले हैं। यहाँ के झंडे नामक पहाड़ से बदरीनाथ से लेकर नेपाल तक का रमणीक दृश्य दिखाई पड़ता है।

अल्मोड़े के पश्चिम में दस मील दूर एक पहाड़ की चोटी पर स्याही देवी का मंदिर है। इसी के पास एक तालाब बना है, जिसका जल नल के द्वारा अल्मोड़ा ले जाया जाता है। स्याही देवी से एक मील नीचे शीतलाखेत का एस्टेट और गाँव हैं, जहाँ सेब, नासपाती और विलायती फलों के बगीचे हैं। यह एक सुंदर और एकांत स्थान है। अल्मोड़े जिले के कई जंगलों में चीड़ के पेड़ों से 'लीसा' (एक प्रकार का चिपचिपा, लसदार द्रव-पदार्थ) निकाला जाता है, जिससे तारपीन बनता है। अल्मोड़े से कैलास जाने के तीन मार्ग हैं।

3. कठिन चढ़ाइयाँ

पर्वतों के कारण कैलास और मानसरोवर जाने के मार्ग में बहुत चढ़ाइयाँ और उतार पड़ते हैं, परंतु मानसरोवर की परिक्रमा का मार्ग सीधा है।

(1) सुपाई से	1 मील।
(2) धौल छीना जाने में	2 "
(3) सेराघाट से नरुवा का घोल	2 $\frac{3}{4}$ "
(4) बेरीनाग जाने में	2 "

(5) थल से	3 ,,
(6) छोलिओखी धार जाने में	1 ,,
(7) रौंती गाड़ से खेला	2 ,,
(8) धौली गंगा से ठानीधार	3 ,,
(9) जुंगती गाड़ से सोसा	$1\frac{3}{4}$,,
(10) रुंगलिंग (सुमरिया) धार जाने में	3 ,,
(11) निजंग से बोला	$\frac{3}{4}$,,
(12) मालपा से	$\frac{1}{2}$,,
(13) पेलसिपी से कोथला	$4\frac{1}{2}$,,
(14) बुदी से	$2\frac{1}{2}$,,
(15) किरोङ कोङ जाने में	1 ,,
(16) ङा बिदङ से लीपूलेख	5 ,,
(17) गरू से	$\frac{3}{4}$,,
(18) गोरी उड्यार से गुरला ला	4 ,,
(19) डिरफुक् से डोलमा ला	4 ,,

4. कठिन उतार

(1) चिताई से चौखुटिया	$1\frac{1}{4}$ मील
(2) धौल छीना से भौरा गधेरा	$4\frac{1}{2}$,,
(3) डुंगरलेख छीना से	1 ,,
(4) नरुवा का घोल से	$\frac{1}{2}$,,
(5) बेरीनाग से गुरघटिया का पुल (बीच-बीच में कुछ विराम)	6 ,,
(6) अस्कोट जाने में	$3\frac{1}{2}$,,
(7) अस्कोट से गरजिया	3 ,,
(8) कालिका जाने में	1 ,,
(9) खेला से धौली गंगा	$1\frac{1}{2}$,,
(10) तिथलाकोट से सिरखा	$\frac{1}{4}$,,
(11) रुंगलिंगधार से सिंखोला गाड़	$3\frac{1}{4}$,,
(12) बिंदाकोट से जुमली उड्यार	$2\frac{1}{2}$,,
(13) बोला से	$1\frac{1}{4}$,,
(14) कोथला से	$\frac{3}{4}$,,
(15) खेतो (बुदी की चढ़ाई के अंत) से	1 ,,
(16) लीपूलेख से पाला	6 ,,
(17) गुरला ला से मानसरोवर	5 ,,

3 ”

(18) डोलमा ला से

लौटते समय पहली 18 चढ़ाइयाँ उतार बन जाती हैं और 17 उतार चढ़ाइयाँ हो जाते हैं। यहाँ केवल कैलास के सीधे मार्ग में आने वाली चढ़ाइयाँ और उतार दिए गए हैं। तीर्थपुरी के मार्ग में पड़ने वाली चढ़ाइयों और उतारों के विवरण के लिए तालिकाएँ देखिए।

यह मार्ग छह खंडों में विभक्त किया जा सकता है।

5. पहला खंड

अल्मोड़े से धारचूला 30 मील है, जो सात या आठ दिनों की यात्रा है। यहाँ के लिए घोड़े, खच्चर और कुली जाते हैं।

जागेश्वर—अल्मोड़े से 18 मील की दूरी पर है। यह पहाड़ों के बीच में एक संकीर्ण स्थान पर देवदारु के वन के मध्य में स्थित है। बाड़ेछीना से यात्रा के मार्ग को छोड़कर दाहिनी ओर जाना पड़ता है। यहाँ जागेश्वर महादेव का प्रधान मंदिर है। कुछ लोगों का विश्वास है कि जागेश्वर द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक है। इसके अतिरिक्त मृत्युंजय, पुष्टिदेवी, नवग्रह और सूर्य के मंदिर तथा अन्य देवताओं के कई छोटे-छोटे मंदिर तथा मुसलमानों के समय की खंडित मूर्तियाँ भी यहाँ विद्यमान हैं। मंदिर के पास ही एक छोटा-सा नाला बहता है। यहाँ पर कई धर्मशालाएँ और कुछ घर हैं। शिवरात्रि और वैशाख पूर्णिमा के दिन मेला लगता है। यह एक प्राचीन क्षेत्र तथा अच्छे आध्यात्मिक वातावरण से युक्त सुंदर स्थान है। यहाँ से सवा मील की चढ़ाई पर वृद्ध जागेश्वर का मंदिर एक पहाड़ की रीढ़ पर स्थित है।

गंगोली हाट—जागेश्वर से 18 मील की दूरी पर यह एक बड़ा गाँव है। बाजार में छोटे-छोटे पुराने मंदिर हैं। यहाँ से दो-तीन फर्लांग की दूरी पर देवदारु के वनों में महाकाली का मंदिर है, जहाँ नवरात्र में दुर्गाष्टमी के दिन बड़ा भारी मेला लगता है तथा उक्त अवसर पर बड़े समारोह के साथ रामलीला होती है।

पाताल भुवनेश्वर—यह स्थान गंगोली हाट से $6\frac{1}{2}$ मील पर है। यहाँ तीन प्राचीन मंदिर हैं। मंदिर से एक फर्लांग की दूरी पर एक गुफा है, जिसका द्वार कठिनता से एक मनुष्य के जाने योग्य है। इस गुफा के मध्य में कहीं झुककर, कहीं रेंगकर और कहीं बैठकर एक फर्लांग तक भीतर उतरना पड़ता है। गुफा के भीतरी भाग ठंढे, अंधकारपूर्ण और चिपचिपे हैं। भीतर चलकर गुफा की दीवालों में कई प्रकार की मूर्तियाँ खुदी हुई हैं, जो महाभारत-संबंधी व्यक्तियों और अन्यान्य देवी-देवताओं की कही जाती हैं। गुफा में एक गज की ऊँचाई के स्थान पर से गाय के थनों के आकार की बनी हुई टोटियों से श्वेत जल की बूँदें टपकती रहती हैं, जिसे वहाँ के लोग कामधेनु कहते हैं। पुरातत्ववेत्ताओं को चाहिए कि इन गुफा की दीवालों के पत्थरों पर की मूर्तियों के वास्तविक रूप का पता लगाएँ। गुफा में भीतर जाने के लिए चीड़ की लकड़ियों की मशाल या बिजली का 'टॉर्च' लेकर जाना पड़ता है। यहाँ

के पुजारी, जो क्षत्रिय हैं, साथ आकर सभी मूर्तियों का परिचय बताते हैं। यहाँ शिवरात्रि के अवसर पर मेला लगता है।

बेरीनाग— यह अल्मोड़े से 42 मील की दूरी पर यात्रा के मार्ग में है और पाताल भुवनेश्वर से 11 मील की दूरी पर है। वेणी नागों का यह वासस्थान कहा जाता है। इसलिए इसको वेणीनाग, वेरीनाग और बेरीनाग भी कहते हैं। नाग का मंदिर गाँव से पौन मील की दूरी पर एक पहाड़ के ऊपर है। आस पास के पहाड़ और गाँवों में पिंगल, मूल, फणि, धौल, वासुकि, काल और अन्य नागों के भी स्थान हैं। यहाँ पर जो कालनाग का पहाड़ है, वह रमणीक द्वीप के नाम से भी प्रसिद्ध है। बेरीनाग के डाकबँगले से बर्फीली चोटियों के दृश्य अल्मोड़े के समान बड़े सुंदर दिखाई पडते हैं। जागेश्वर, गंगोली हाट और पाताल भुवनेश्वर के दर्शनाभिलाषी बाड़े छीने से यात्रा का मुख्य मार्ग छोड़कर, इनका दर्शन करके, बेरीनाग के समीप से पहले मार्ग पर लौट सकते हैं। बागेश्वर जाने के इच्छुक कैलास से लौटते समय बेरीनाग से जाकर वहीं से सीधे अल्मोड़ा पहुँच सकते हैं।

बागेश्वर के मार्ग में बेरीनाग से पाँच मील की दूरी पर नरगोली ग्राम है, वहाँ से मार्ग से हटकर एक मील की दूरी पर पर्वत के ऊपर भद्रकाली का मंदिर है। समीप ही भद्रकाली या भद्रवती नदी पहाड़ के भीतर सुरंग में होकर बहती है, जिसका दृश्य अतीव सुंदर है। बेरीनाग से दस मील पर बागेश्वर के मार्ग में सानीउड्यार नामक एक गुफा है, जहाँ शांडिल्य ऋषि ने तपस्या की थी।

बागेश्वर—बागेश्वर या वागीश्वर नामक गाँव गोमती और सरयू नदी के संगम पर एक पहाड़ के नीचे स्थित है। संगम के पास बाघनाथ, दत्तात्रेय, भैरवनाथ तथा गंगा जी का मंदिर और श्मशानभूमि हैं। यहाँ एक बड़ा बाजार, डाकघर और अस्पताल हैं। संगम के सामने सरयू के बाँएँ तट पर त्रियुगीनारायण और वेणीमाधव के मंदिर हैं। इनके पार्श्ववर्ती पहाड़ पर चंडीदेवी का एक मंदिर है। बाघनाथ के मंदिर के सामने गोमती के बाँएँ किनारे के पहाड़ के ऊपर मिडिल स्कूल और डाकबँगले हैं, जहाँ से बागेश्वर, सरयू-गोमती के संगम और उनके ऊपर के दोनों लोहों के झूले के पुलों का सुंदर दृश्य दिखलाई पड़ता है। गाँव के उत्तर की ओर प्रकटेश्वर महादेव का एक मंदिर है। सरयू के बाँएँ किनारे पर भी एक बाजार है। यहाँ के सरयू के पुल के नीचे नदी के मध्य में एक बड़ा भारी चट्टान है। इसके संबंध में एक पुराण-गाथा है कि यहीं पर मार्कंडेय ऋषि ने तपस्या तथा दुर्गासप्तशती का निर्माण किया था और शिव ने हिमवत्-पुत्री पार्वती का पाणिग्रहण यहीं किया था।

मकरसंक्रांति के अवसर पर यहाँ तीन-चार दिनों तक बड़ा भारी मेला लगता है। उस समय भोटिया लोग तीन-चार लाख रुपए तक का व्यापार करते हैं। बागेश्वर समुद्रतल से 3200 फीट की ऊँचाई पर स्थित बुहत गर्म स्थान है। यहाँ से चारों तरफ बीस मील दूर तक धान की खेती अधिक होती है। इसलिए चावल रुपए में सात से दस सेर तक मिल जाता है। यहाँ से अल्मोड़ा 27 मील, बेरीनाग 23 मील और पिंडारी ग्लैसियर 47 मील पर है। 1920 में कुमाऊँ में सरकारी बेगार प्रथा को उठाने के लिए यहीं से आंदोलन आरंभ

हुआ था, जिसके परिणामस्वरूप वह प्रथा उठ भी गई। 20-25 वर्ष पहले कैलास के यात्री यहीं से मिलम जाकर लीपूलेख के मार्ग से लौटते थे।

बागेश्वर के आस-पास खरही आदि स्थानों में लोहा, ताँबा और खड़िया मिट्टी (सोप स्टोन) की खानें हैं। कई स्थानों में बिल्लौर या स्फटिक भी मिलता है।

गोरी उड्यार—बागेश्वर से उत्तर में 6 मील पर गोरी उड्यार नामक एक बड़ी गुफा है। गुफा की छत पर गौ के थन-जैसे चार-चार, छह-छह अंगुल की टोंटियाँ बनी हुई हैं, जिनकी नोकों से दूध-जैसे सफेद पानी की बूँदें नीचे छह-छह अंगुल से लेकर दो-दो गज की ऊँचाई वाले श्वेत शिवलिंगों पर टपकती रहती हैं। इस प्रकार के शिवलिंग सदा बनकर बढ़ते रहते हैं। इनमें से कुछ तो गिर भी जाते हैं और कई ऐसे भी हैं, जिनके ऊपर के थन और लिंग मिलकर एक हो गए हैं। नीचे के लिंग की भाँति ऊपर के थन भी कितने नए-नए निकलते हैं और कितने बढ़ जाते हैं। यह गुफा देखने में बड़ी सुंदर लगती है। गुफा के बीच में एक घंटा लगा हुआ है तथा निकट के गाँव वालों के प्रबंध से एक शिवलिंग की पूजा भी होती है।

गुफा के नीचे एक सुंदर नाला बहता है, जिसमें छोटे-छोटे जलप्रपात और कुंड हैं। ऊपर का पहाड़ चूने का है और छत से चूने का श्वेत जल नीचे टपकता रहता है। कुछ पानी के नीचे गिरने के पहले ही भाप बन जाने के कारण उसका चूना जम जाता है, जिससे छत में थन का-सा आकार बनकर नीचे टोंटी-सी बन जाती है थन के ठीक नीचे गिरे हुए पानी के वाष्पीकरण से उड़-उड़कर चूना जम जाता है, जो प्रतिदिन तहों में बढ़कर लिंग का रूप धारण कर लेता है। इस प्रकार श्रद्धालु दर्शकों को ऊपर छत पर गौ-थनों से गिरती हुई दूध की बूँदें नीचे के शिवलिंगों पर अभिषेक करती हुई-सी प्रतीत होती हैं। अंग्रेजी में नीचे वाले शिवलिंगों को 'स्टेलग्माइट्स' और छत पर लटकने वाली टोंटियों को 'स्टेलक्टाइट्स' कहते हैं ।

बैजनाथ—यह गाँव बागेश्वर के वायव्य कोण में 13 मील की दूरी पर गोमती नदी के बाँएँ किनारे पर स्थित है। इसे वैद्यनाथ भी कहते हैं। नवीं या दसवीं शताब्दी में कत्यूरी राजा लोग जोशीमठ से आकर यहाँ बस गए थे। यहाँ के मंदिर बारहवीं या तेरहवीं शताब्दी के हैं—जो अब जीर्णावशेष हैं, जिनमें से बामनी देवल, बैजनाथ के मंदिर और केदारनाथ के मंदिर प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त कई छोटे-छोटे मंदिर और मूर्तियाँ हैं। बैजनाथ के प्रधान मंदिर के द्वार पर रखी हुई पार्वती की मूर्ति की शिल्पकला बहुत सुंदर और देखने योग्य है। यहाँ से दो फलाँग की दूरी पर तलीहाट नामक गाँव में भी उसी समय के बने हुए कई मंदिर हैं। ग़ाँव के मध्य में कत्यूरी राजाओं के बैठने के चबूतरे, लक्ष्मीनारायण का मंदिर, राक्षस देवल, और सत्यनारायण के मंदिर हैं। सत्यनारायण और उनके आस-पास की मूर्तियों की शिल्पकला बहुत ही सुंदर है। गाँव से $1\frac{1}{2}$ मील पर एक पहाड़ के ऊपर रणचूलकोट है, जिस पर भ्रामरीदेवी का मंदिर है। यहाँ से आधा मील की दूरी पर नागनाथ

का मंदिर है। रणचूलकोट से सारी कत्यूरी घाटी का दृश्य काश्मीर के समान रमणीक दिखाई पड़ता है। अल्मोड़े जिले की यह सबसे सुंदर घाटी है। यहाँ से त्रिशूल की तीनों चोटियाँ स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं।

बैजनाथ से एक मील की दूरी पर गरुड़ गंगा के किनारे गरुड़ नामक एक छोटा-सा बाजार है। हल्द्वानी से यहाँ तक 114 मील मोटर का मार्ग है, बैजनाथ देखने के इच्छुक यात्री अल्मोड़े से भी मोटर पर जा सकते हैं, जो 42 मील की दूरी पर है। बैजनाथ से पैदल 5 मील की दूरी पर कौसानी नामक एक रमणीक स्थान है। यहाँ से हिमालय की बर्फानी चोटियों का दृश्य बिनसर से भी अधिक सुहावना दिखाई पड़ता है। यहीं पर महात्मा गाँधी ने कुछ दिन रहकर 'अनासक्तियोग' नामक पुस्तक लिखी है। कौसानी से नीचे सोमेश्वर और द्वाराहाट में भी पुराना मंदिर है। द्वाराहाट और बैजनाथ के मंदिर सरकारी पुरातत्व-विभाग के संरक्षण में हैं।

6. दूसरा खंड

धारचूले से गर्ब्यांग 55 मील है, जो कि पाँच दिनों की यात्रा है। यहाँ कुली और डाँडी जा सकते हैं।

छिप्लाकोट—धारचूले से 5 मील आगे, यात्रा-मार्ग से जुम्मा गाँव होकर, 21 मील की दूरी पर, छिप्लाकोट या छिप्लाकेदार नामक प्रसिद्ध तीर्थ है। यह स्थान 14400 फीट ऊँचे पहाड़ की चोटी पर स्थित है। सड़क से लेकर यहाँ तक एक लंबी और दुर्गम चढ़ाई है। छिप्लाकोट या नाजुरी मुंड (14000 फीट) के शिखर की दोनों ओर दो तालाब हैं। धारचूले की ओर के छोटे सर का नाम छिप्लाकेदार है, और जिसकी परिधि 840 फीट है। दूसरी ओर का तालाब ककरोलकीद है जिसकी परिधि 1020 फीट है। आठ-दस गाँवों के लोग इस तरफ और उतने ही गाँवों के लोग उस तरफ के सरोवर पर प्रति दूसरे वर्ष यात्रा में जाते हैं। यहाँ की यात्रा बहुत ही कठिन है। इन गाँव वालों को छोड़कर बाहर के बिरले ही यात्री इन स्थानों पर जाते हैं। यहाँ से पंचचूल्ही आदि हिमाच्छादित पर्वतमालाओं का दृश्य बहुत ही गंभीर और मनोमोहक है। चातुर्मास में यहाँ पर ब्रह्मकमल अधिक खिलते हैं। गाँवों के लोग इन सरोवरों के अधिदेवताओं को कई प्रकार के रुपए-पैसे चढ़ाते हैं। उन पैसों को कोई भी नहीं उठाते, क्योंकि उन लोगों की धारणा है कि यदि कोई उस चढ़ावे को वहाँ से उठा ले जाय, तो वह घर पहुँचते-पहुँचते मर जायगा। मैं इन दोनों तालाबों पर 1937 के 22-23 अक्टूबर को गया था। यद्यपि छिप्लाकोट की यात्रा बहुत ही कठिन है, तथापि साहसी युवक कैलास से लौटते समय यहाँ जा सकते हैं।

मृत्यु-गुफा (खरउड्यार)—खेला से गर्ब्यांग जाने वाले मार्ग को छोड़कर दारमा के मार्ग में $9\frac{1}{2}$ मील की दूरी पर न्यों नामक एक गाँव है, जहाँ पर तीन घर हैं। मकानों के पीछे 60 या 80 गज की दूरी पर 'खर उड्यार' नामक एक मृत्यु-गुफा है। यह गुफा एक पहाड़ की तलहटी में है। गुफा का मुख दक्षिण की ओर है। भीतर अँधेरा नहीं, पर्याप्त

प्रकाश है। इसकी लंबाई 24 फीट है और चौड़ाई सामने 9 फीट और भीतर 6 फीट है, ऊँचाई मुँह के पास 12 फीट और भीतर 6 फीट है। इस गुफा में जो कोई प्राणी जाता है, वह तत्क्षण मृत्यु के मुख में चला जाता है। इसी कारण इसका नाम खर उड्यार या मृत्यु-गुफा पड़ा। जब मैं पहले यहाँ 1937 में 5 अक्टूबर को गया था, तो भीतर नीले रंग के 40 कलचूणा नामक पक्षी, कई कौवे, चूहे, मेढक, बड़ी-बड़ी जंगली मकड़ियाँ और कुछ अन्य पक्षियों के मृत शरीर दिखाई दिए। इनके अतिरिक्त दो अजगरों के पुराने अस्थिपंजर पड़े हुए थे। गुफा चिपचिपी है और मृत शरीर ताजे थे। गुफा से कुछ दूर पर गंधक के सोते हैं।

गाँव वालों का कहना है कि चौमासे से गुफा का विष बाहर तक फैलता है। कई अंग्रेज और कमिश्नर यहाँ आए, पर भीतर जाने का साहस किसी को नहीं हुआ। भोट की दो पट्टियों के पटवारियों ने बकरियों को रस्सी से बाँधकर गुफा में प्रविष्ट कर दिया। उनमें से एक तो तत्काल मर गई और दूसरी मरणासन्न हो गई और बाहर खींचकर पानी का छींटा देने पर सचेत हुई। इसलिए भीतर जाकर इसकी परीक्षा करने की मुझे इच्छा हुई।

अतः गाँव के तीन आदमियों को साथ लेकर मैं अपनी कमर में रस्सी बँधबाकर साँस रोककर भीतर गया। वहाँ जाकर धीरे-धीरे साँस खोलने पर मुझे कुछ हानि नहीं हुई[1], जिससे लोग कहने लगे कि मैं जादू कर रहा हूँ। अस्तु, जो भी हो, उस वर्ष मैं वहाँ से चल दिया। दूसरी बार 1939 में 16-18 अक्टूबर को फिर रस्सी बँधवाकर मैं भीतर गया। इस बार जलती हुई चीड़ की लकड़ियों को भीतर ले गया था। धीरे-धीरे उसे नीचे करने पर जमीन से एक गज की ऊँचाई पर वे बुझ गईं। तब मैंने धीरे-धीरे झुककर उस ऊँचाई पर की वायु को सूँघा। वायु के नाक में जाते ही मेरा दम घुटने लगा। फिर तो झट सिर को उठाकर बाहर निकल आया। 'एमोनिया' या गंधक की गंध न होने तथा मशाल बुझ जाने के कारण और विषैली वायु के निचले ही भागों में होने के कारण मैंने अनुमान किया कि वहाँ का वायु 'कार्बन डाइआक्साइड' ही होगा। पर उस समय किसी विशेष रासायनिक परिशोधन करने का साधन मेरे पास नहीं था। 1940 में 12 नवंबर को फिर गुफा में जाकर मैंने 'बेरियम पेरोक्साईड' के जल को लेकर परीक्षा की। मेरा अनुमान सही निकला। उस गुफा में सचमुच 'कार्बन-डाइआक्साइड' ही है। गुफा में पानी पड़ने पर गैस निकलती है। उस समय चार फीट की ऊँचाई तक गैस उसके भीतर थी। यह कोयले की गैस भारी होती है, जिससे भूमि के बहुत ऊपर नहीं उठती। इसीलिए नीचे जाने वाले जंतु दम घुटकर मर जाते हैं। चौमासे में पानी के कारण यह गैस बहुत उत्पन्न हो जाती है। वैज्ञानिकों का कर्तव्य है कि इसके संबंध में विशेष अन्वेषण करें। कैलास से लौटते समय यात्रीगण इस गुफा का निरीक्षण कर सकते हैं।

भोट की बातें—धौलीगंगा से लेकर भोट प्रांत प्रारंभ होता है। हिमालय में भारत की

---

1. मुझे कुछ हानि न होने का कारण यह भी हो सकता है कि उस वर्ष में बरसात के बहुत दिनों बाद गया था और उस वर्ष वर्षा भी अल्प ही हुई थी।

की उत्तरी सीमा के निवासियों को भोटिया नाम से पुकारते हैं। अल्मोड़े जिले में सोबला (खेला से 12 मील आगे) से भारत की सीमा तक की दारमा पट्टी, धौलीगंगा से बिंदाकोट तक की चौदाँस पट्टी, बिंदाकोट से भारत की सीमा तक की ब्याँस पट्टी, और नेपाल की सीमा के छंगरू और टिंकर गाँव, तेजम के ऊपर भारत की सीमा तक का जोहार परगना, गढ़वाल जिले में भविष्य बदरी से भारत की सीमा तक के प्रदेश, टिहरी रियासत से सीमांत के नीलंग गाँव—ये सब स्थान मिलकर भोट नाम से प्रसिद्ध हैं; यहाँ के निवासी भोटिया कहलाते हैं। भोट और भोटियों का, भूटान या भूटान के लोगों से कोई संबंध नहीं है और न तिब्बत और तिब्बतियों से ही। ये लोग तिब्बत को 'हूण देश' और तिब्बतियों को 'हूणियाँ' कहते हैं।[1] माना के भोटिया मारछा, नीती के तोलिया और जोहार के शौका या रावत कहलाते हैं।

अल्मोड़े के दारमा, चौदाँस और ब्याँस तीनों भोट-पट्टियों को मिलाकर दारमा परगना के नाम से पुकारते हैं। भोटिए हिंदूमतावलंबी हैं और क्षत्रिय जाति के हैं। इनके नामों के अंत में सिंह लगा रहता है। इनमें से बहुत से लोग यज्ञोपवीत धारण करते हैं और नियमित रूप से गायत्री मंत्र का जप करते हैं। हिंदी और तिब्बत की मिश्रित-भाषा बोलते हैं। चिट्ठी-पत्री, लिखा-पढ़ी, और बही-खाता नागरी में लिखते हैं। गर्मी के दिनों में ये भारत की सीमा के अलग-अलग घाटों से होकर तिब्बत जाकर व्यापार करते हैं। वहाँ के ऊन, सोहागा, नमक इत्यादि तिब्बती वस्तुओं को लेकर शीतकाल में देश की मंडियों में नीचे उतरते हैं। वहाँ उनको बेंचकर देश से कपड़े, बर्तन आदि सामानों को लेकर फिर गर्मी के दिनों में तिब्बत चले जाते हैं। इन लोगों में हजारों रुपए का व्यापार करने वाले व्यक्ति हैं।

पुरुष पायजामा, ऊन का सफेद अंगरखा और पगड़ी पहनते हैं; और अंगरखा के ऊपर एक लंबी-सी धोती कमरबंद के रूप में बाँध लेते हैं। यह उनका जातीय पहनावा है। परंतु वे प्रायः पायजामा, वेस्टकोट, कोट और टोपी पहनते हैं। स्त्रियाँ घर में अपने हाथ से बुने हुए लकीरदार और बूटेदार ऊनी कपड़े की लुंगी, कुरता और चोंगा पहनती हैं। चोंगे के ऊपर कमरबंद बाँधती हैं। सिर के ऊपर कपड़े की 'घोघी' पहनती जाती हैं। छोटी लड़कियाँ और युवतियाँ कपड़े के लहँगे और रंगबिरंगे कुरते पहनती हैं। रुपए, अठन्नी, चवन्नी आदि चाँदी के सिक्के के हार और अन्य प्रकार के वजनदार चाँदी के आभूषण पहनती हैं। इन आभूषणों की तौल कभी-कभी आठ सेर तक होती है।

---

1. भूटान, सिकिम और नेपाल के राज्यों में, विशेषकर उत्तरी सीमाओं पर, तिब्बती प्रजाएँ अधिक बसी हुई हैं। बौद्ध-धर्मावलंबी होने से या किसी अन्य कारण से लोग उन्हें भोटिया कहने लगे। यह कहाँ तक ठीक है, इसका निर्णय मैं यहाँ नहीं कर रहा हूँ। नेपाल की सीमा पर कितने ही ऐसे तिब्बती हैं, जो नेपालियों और तिब्बतियों की मिश्रित संतान हैं। इनके अतिक्ति रामपुर-बशहर तथा मंडी रियासतें और कांगड़ा जिले के सीमा प्रांत के भारतीय बौद्धों को भी कुछ लोग भोटिया कहते हैं। परंतु इस पुस्तक में वर्णन किए हुए भोटिए और उन राज्यों के भोटिया नामधारी लोगों से कोई संबंध नहीं है।

भोटिया लोग बड़े ही हृष्ट-पुष्ट, परिश्रमी और पुरुषार्थी होते हैं। यहाँ स्त्रियों में परदा नहीं है तथा वर-वधू की सम्मति से प्रौढ़ावस्था में विवाह होता है। स्त्री-पुरुष त्योहार और विवाहादि अवसरों पर अलग-अलग कतारों में गाते हुए आमने-सामने होकर नाचते हैं। इस प्रकार के नृत्य हिमालय भर में काश्मीर से लेकर आसाम तक, बौद्ध और हिंदुओं में प्रचलित हैं। इस प्रकार के नाच को मैंने गंगोत्तरी के पंडों (ब्राह्मण) में और अल्मोड़े के खश जाति के कृषकों और क्षत्रियों में भी देखा। पुरुष मंडियों में जाकर व्यापार करते हैं। स्त्रियाँ घरों में रहकर हल जोतने के अतिरिक्त खेती के सारे काम तथा ऊन के कपड़े या कंबल बुनने का काम बड़ी फुरती और कुशलता के साथ करती हैं। जब कोई काम नहीं रहता, तो उस समय स्त्री और पुरुष ऊन की कताई का काम करते हैं। यहाँ तक कि पीठ पर एक-एक मन का बोझे ढोते समय भी ऊन कातते रहते हैं। इनके ऊनी कारोबार से देश को लाभ पहुँचाने एवं इन्हें प्रोत्साहित करने के लिए अखिल भारतीय चर्खा संघ ने अपना एक केंद्र अल्मोड़े जिले के सोमेश्वर नामक स्थान में खोलकर जोहार और चौदाँस में उसकी शाखाएँ खोली हैं। चार-पाँच वर्षों से यह कार्य चल रहा है। ये लोग प्रतिवर्ष तिब्बत में जाकर तिब्बतियों के साथ व्यापार करने के कारण उनके साथ हिलमिल गए हैं और उनके साथ खाने-पीने में संकोच नहीं करते, जैसे विलायत जाने वाले हमारे ही भाई-बंधु। जब वे नीचे, देश में, लौटते हैं, तो देश के लोग उन लोगों के साथ खान-पान का व्यवहार नहीं रखते। जो हो, हमारे यहाँ भी कितने ही ऐसे ब्राह्मण और क्षत्रिय हैं, जो आपस में खान-पान का व्यवहार नहीं रखते।

भोटियों की उत्पत्ति के संबंध में बहुत मतभेद है। कुछ लोगों का मत है कि ये मुसलमानों के शासनकाल में मुसलमान होने से इनकार करके राजपुताने को छोड़कर पहाड़ों में आ बसे हैं। कुछ लोगों का मत है कि धारानगर से जो क्षत्रिय गढ़वाल गए, वे रावत नाम से प्रसिद्ध हैं और रावत-क्षत्रिय लोग इन प्रांतों में आकर बस गए। इसके प्रमाण-स्वरूप जोहार भोटियों में कई रावतवंशीय हैं। कुछ औरों का मत है कि एक समय भारत के क्षत्रिय राजा पश्चिम तिब्बत में, गरतोक में राज्य करते थे। कुछ वर्ष के बाद तिब्बतियों से परास्त होकर भारत की सीमा पर आकर बस गए। मुझे ये तीनों प्रमाण युक्तियुक्त प्रतीत होते हैं।

इनकी भाषा, उनके मंगोल-स्वरूप और रीतिरिवाजों को देखकर कुछ मानव-शास्त्रज्ञों (एंथ्रोपोलाजिस्टों) का कहना है कि ये तिब्बत से आकर भारत की सीमा पर बसे हुए मंगोल जाति के तिब्बती हैं। मैं उनके मत से सहमत नहीं हूँ। हाँ, संशोधन का मैं सदा स्वागत करता हूँ। तिब्बत की सीमा के पास के निवासी होने तथा छह-छह महीने व्यापार के लिए तिब्बतियों के साथ रहने के कारण इनकी भाषा में तिब्बती शब्दों के समावेश होने एवं इनकी वेश-भूषा में कुछ समानता होने में कोई आश्चर्य की बात नहीं है। बिहार की मैथिली भाषा में आधे बंग भाषा के शब्द होने मात्र से बिहारी बंगाली नहीं हो सकते और न बंगाली बिहारी हो सकते हैं। ऐसे ही स्वरूप के विषय में भी। नेपाल के गोरखे तिब्बतियों से स्वरूप में एकदम मिलते-जुलते हैं। इनमें से कुछ तो नेपाल के बौद्ध मंदिरों में भी दर्शन के लिए जाते हैं। फिर भी हम यह नहीं कह सकते कि नेपाली तिब्बती हैं। अंतर्जातीय विवाहों के

कारण। इनमें स्वरूप-साम्य या भाषा-मिश्रण हो सकता है। अब यह रहा कि इनका भोटिया नाम कैसे पड़ा? इनके पूर्वज कभी बौद्धमतावलंबी रहे होंगे। अब तो ये नहीं हैं। क्या भारतवर्ष में एक समय सबके सब बौद्धमतावलंबी नहीं थे? ऐसा ही इनके संबंध में भी समझ लेना चाहिए। सौ वर्ष पहले सुमात्रा, जावा, अफ्रीका आदि देशों में जो हिंदू गए हैं, उनकी वेश-भूषा में कितना अंतर आ गया है। इन उपर्युक्त कारणों से भोटियों के क्षत्रिय होने में कोई संशय नहीं है।

हाँ, आजकल ये लोग, विशेषकर जोहार के भोटिए, अपने-आपको भोटिया कहने में हिचकते तथा अस्वीकार भी करते हैं। संभवतः वे समझते हों कि भोटवासी या भोटिया कहने से तिब्बती या बौद्धमतावलंबियों का भाव आता है, पर अपने-आपको भोटवासी या भोटिया कहलाने में उन्हें गर्व होना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार से उनका एक स्वतंत्र व्यक्तित्व है तथा उनका अलग प्रांत है, जहाँ उन्हें विशेष सुविधाएँ हैं। भोट के निवासियों की आय पर इनकम टैक्स नहीं लगाया जाता और वहाँ भट्टी पर शराब बनाने में भी कोई प्रतिबंध नहीं है। तिब्बत से लाए हुए लाखों रुपयों के ऊन, भेड़, बकरी, सोहागा और नमक आदि वस्तुओं पर, या तिब्बत को जाने वाले कपड़े के सहस्रों गट्ठरों पर इन्हें एक पैसा भी चुंगी नहीं देनी पड़ती। इनमें से रायबहादुर किशनसिंह और रायबहादुर पं० नयनसिंह तिब्बत देश के प्रख्यात अन्वेषक हुए, जिन्होंने अज्ञात तिब्बत में सर्वप्रथम सर्वे का काम किया। अभी भी इनमें से कैप्टेन हयातसिंह जी और बाबू लक्ष्मणसिंह जी, ब्रिटिश ट्रेड एजेंट आदि उच्च पदों पर नियुक्त हैं। जोहारियों में अन्य कई नवयवुक उच्च शिक्षा पा रहे हैं। रायसाहब शोभन-सिंह–जैसे उपाधिधारी हैं। दारमा परगना में भी पं० गोबरिया गर्ब्याल एक विख्यात व्यक्ति हो गए हैं।

आजकल यहाँ कोई उपाधिधारी नहीं है, यद्यपि ठा० मोहनसिंह जी गर्ब्याल, ठा० नंदराम जी गर्ब्याल और ठा० खुशहालसिंह जी ह्यांकी–जैसे नामी व्यक्ति उक्त पदवी के लिए उम्मेदवार हैं। आशा है, ब्रिटिश सरकार उनको शीघ्र ही उपाधि से सुशोभित करेगी।

अल्मोड़ा जिले के भोटियों में जोहारी लोग विशेष पढ़े-लिखे हैं। इनके बाद चौदाँस और ब्याँस वाले हैं। पर दारमा के भोटिए बहुत पिछड़े हुए हैं। इन्हें चाहिए कि अपने भाइयों के समान उन्नति करें।

भोट प्रांत में मदिरापान, रंगबंग और डुडुम—ये तीन प्रथाएँ प्रचलित हैं। अति शीत प्रदेश होने और सर्वदा पर्वतों में भ्रमण करने के कारण ठंढ और थकावट दूर करने के लिए भोटिया लोग एक प्रकार की मदिरा पीते हैं। यह जौ से निकाली जाती है, जिसे दारू या अरक के नाम से पुकारते हैं। यह प्रथा बुरी तो अवश्य है, पर अन्य प्रांतवासियों की अपेक्षा बहुत कम है। इस मदिरा में व्यय भी कम है और मादकता भी अधिक नहीं है। जोहार भोट में मदिरापान अधिकांश बंद हो गया है। दारमा में अभी चालू है, यद्यपि चौदाँस और ब्याँस में पढ़े–लिखे बहुत–से व्यक्ति इस व्यसन को छोड़ रहे हैं।

दारमा परगना में कई गाँवों में ऐसे घर हैं, जहाँ गाँव के अविवाहित युवक और युवतियाँ कभी-कभी एकत्र होकर प्रेम-गीत के साथ नाचते हैं। किसी युवक और युवती में यदि प्रेम हो जाय, तो पीछे से विवाह हो जाता है। इसको रंगबंग कहते हैं। यह प्रथा आजकल जोहार में बिलकुल नहीं है। दारमा में भूतपूर्व समाज-सुधारक ठाकुर मोतीसिंह जी के उद्योग से बहुत कुछ बंद हो गई है। शिक्षित युवकगण इस प्रथा का पूर्ण रूप से उन्मूलन करने का उद्योग कर रहे हैं।

मृतक श्राद्ध को यहाँ डुडुम कहते हैं। मृतात्मा पुरुष हो तो चँवर बैल और स्त्री हो तो चँवर गाय को लेकर उसे प्रेतात्मा के प्रतिनिधि के रूप में मृतक के कपड़े आदि से सजाकर खूब खिलाते हैं। आखिरी दिन उस गाय या बैल को गाँव के बाहर किसी पहाड़ के ऊपर छोड़ आते हैं। कुछ हूणिए ऐसे पशुओं की ताक में रहते हैं और पाते ही उनको पकड़ ले जाते हैं और मारकर खा लेते हैं। इस प्रथा को बंद करने के लिए कई वर्षों से यत्न हो रहा है और श्राद्ध के अवसर पर छोड़ी हुई चँवर गायों और बैलों के जंगलों में पाले जाने का प्रबंध हो रहा है। इस संबंध में दारमा सेवा-संघ का प्रयत्न सराहनीय है।

भोट की चौदाँस पट्टी में बारह वर्ष में एक बार 'कंग्डाली की लड़ाई' नामक त्योहार मनाते हैं। इस प्रांत में सात-आठ हजार फीट की ऊँचाई पर एक पौधा उगता है। इसकी ऊँचाई लगभग चार फीट तक होती है और इसमें बारह गाँठें होती हैं। यह बारह वर्ष में एक बार फूलता है। वहाँ के लोगों की धारणा है कि उस वर्ष इन फूलों को बिना काटे छोड़ने से स्त्रियों को कुछ अशुभ होगा। इस त्योहार की कोई निश्चित तिथि नहीं होती। भाद्रपद, आश्विन या कार्तिक के महीने में भिन्न-भिन्न गाँव वाले अपनी-अपनी सुविधा के अनुसार अलग-अलग समय में मनाते हैं, ताकि दूसरे गाँव के लोग भी त्योहार में सम्मिलित हो सकें।

यह लगभग एक सप्ताह तक मनाया जाता है। त्योहार के पहले दिन मकानों की सफाई, लिपाई-पुताई आदि होती है। दूसरे दिन तेल में एक प्रकार का मालपूवा बनाते हैं और प्रचुर मात्रा में जौ की शराब भी तैयार करते हैं। तीसरे दिन ग्राम-देवता की पूजा करने के बाद मालपूवा को अपने भाई-बंधुओं में बाँटते हैं। चौथे दिन कंग्डाली की लड़ाई होती है। पुरुष अपनी देशी पोशाक—लंबे-लंबे चोंगे और पगड़ी पहनते हैं। स्त्रियाँ भी अच्छे-अच्छे रेशमी वस्त्र और अनेक प्रकार की चाँदी के आभूषणों को तथा तिब्बती जूते पहनती हैं, जो ऊन के बने हुए और घुटने तक के होते हैं। दिन में बारह बजे तक गाँव के लोग सब-के-सब एक स्थान पर एकत्रित हो जाते हैं, जिसे वे सभा कहते हैं। त्योहार के दिनों में कोई भी गाँव का व्यक्ति निजी व्यापार नहीं कर सकता; यदि करे तो पंचायत द्वारा उसे दंड दिया जाता है। हर एक घर से एक-एक लोटा शराब लाकर सभा में उपस्थित करते हैं। लोटे में फूल रखे जाते हैं, तब 'परमेश्वरा' कहकर उद्बोधन करते हुए सभी लोग चावल हवा में फेंकते हैं। उसके बाद छोटे-छोटे कटोरे में सभी को शराब बाँटी जाती है।

लगभग एक बजे बाजे-गाजे के साथ जुलूस निकलता है। सबसे पहले ढोल, झाँझ आदि बजाने वाले चलते हैं, उनके पीछे पुरुष लोग एक हाथ में तलवार और दूसरे हाथ

में ढाल लेकर चलते हैं। यदि ढाल–तलवार नहीं होती, तो एक हाथ में लाठी और दूसरे हाथ में पत्तियों का गुच्छा लेकर निकलते हैं। उनके पीछे स्त्रियाँ एक हाथ में 'रेल'[1] और दूसरे हाथ में रेशमी कपड़ा लेकर चलती हैं। जुलूस में एक के पीछे एक, कतार बनाकर निकलते हैं। चलते समय दाहिने से बाँईं और बाँईं से दाहिनी तरफ घूम-घूमकर नाचते हुए गाँव से एक-दो मील बाहर एक पहाड़ के छोर पर पहुँच जाते हैं, किंतु स्त्रियाँ पहाड़ की ढालुओं में, जहाँ कंग्डाली के पौधे उगते हैं, दौड़-दौड़कर जाती हैं। जंगल से फूलों सहित कंग्डाली की डालें काट-काटकर अपने साथ विजय-चिह्न के रूप में लाती हैं। इसी को कंग्डाली की लड़ाई कहे हैं। सभा में एकत्रित सभी स्त्री-पुरुष एक-एक करके थोड़ी देर तक नाचते हैं। इसके अनंतर कतार बाँधकर पूर्ववत नाचते हुए शाम तक गाँव लौट जाते हैं। वहाँ किसी एक बड़े आदमी के घर के आँगन में गोल बाँधकर नाँचना प्रारंभ करते हैं; और नाच के साथ गाना भी होता है। एक प्रकार का प्रेम-गीत रात बारह बजे तक पहाड़ी रागों में गाते हुए नाचते रहते हैं। नाचते समय बाँएँ पैर को दाहिनी तरफ तथा दाहिने को बाँईं तरफ करते हुए वाँईं तरफ चक्कर लगाते हैं। दूर-दूर के गाँवों के लोग भी इस मेले को देखने के लिए एकत्रित हो जाते हैं। कंग्डाली की लड़ाई के पश्चात तीन दिन तक गाँव में दावत, खेल-कूद और नाच-गाना होता रहता है। बारह वर्ष में मनाए जाने वाले इस कंग्डाली के त्योहार की भाँति आश्विन के महीने में चौदाँस के ये भोटिया लोग त्योहार मनाते हैं, केवल भेद इतना है कि प्रतिवर्ष के त्योहार में कंग्डाली नहीं कटती।

दारमा सेवा-संघ—चौदाँस भोट में ठाकुर मोतीसिंह नामक एक सुप्रसिद्ध व्यक्ति थे, जिनका स्वर्गवास 1940 में हुआ। ये आजीवन भोट समाज में सुधार में लगे रहे। डुडुम, रंगबंग और मदिरापान आदि कुप्रथाओं को दूर करने के लिए और शुद्ध वैदिक धर्म का प्रचार करने के लिए इन्होंने बहुत काम किया। सन् 1935 में 'दारमा सेवा-संघ' के नाम से इन्होंने एक संस्था की स्थापना की, जिसके मुख्य उद्देश्य ये हैं—(1) श्री कैलास और मानसरोवर के यात्रियों की सेवा, (2) दारमा भोट वासियों के धार्मिक तथा सामाजिक सुधार, (3) शिक्षा-प्रचार, (4) कलाकौशल तथा ग्राम-उद्योग–धंधों की उन्नति और (5) धर्मशाला, पुस्तकालय तथा औषधालय आदि की स्थापना करना।

इस संघ के पहले अध्यक्ष श्री मोतीसिंह ही थे। यद्यपि संघ अभी शैशवावस्था में है, परंतु बहुत कार्य होने की आशा है। इस संघ की धर्मशालाएँ कैलास के मार्ग में धारचूला, खेला, पंगू, जुंगती गाड़, सोसा, सिरदंग, मालपा, गर्ब्यांग और तकलाकोट में हैं। बलुवाकोट, धारचूला, बुदी, मानसरोवर आदि स्थानों में भी धर्मशालाएँ बनवाने का यत्न हो रहा है। यात्रियों को चाहिए कि वे भी धर्मशाला बनाने में इस संघ की यथाशक्ति सहायता करें। इस संघ के सभापतियों से पत्र-व्यवहार करने से वे गर्ब्यांग से आगे का सारा प्रबंध कर देते हैं। आजकल ठाकुर मोहनसिंह जी गर्ब्याल, ठाकुर कल्याणसिंह जी गर्ब्याल और ठाकुर खुशालसिंह जी या ठा0 प्रेमसिंह जी ह्यांकी सभापति हैं तथा ठाकुर जमनसिंह जी गर्ब्याल,

1. बुनाई के काम में आने वाली एक विशेष प्रकार की चपटी लकड़ी।

ठाकुर परमसिंह जी ह्यांकी और शोभनसिंह जी इसके मंत्री हैं।

श्री नारायण आश्रम—सोसा के पूर्व तीन मील की दूरी पर एक सुंदर पर्वत की रीढ़ पर श्री 108 नारायण स्वामी जी महाराज ने 'श्री नारायण आश्रम' नामक एक आश्रम स्थापित किया है। यह 8000 फीट से अधिक ऊँचाई पर एक रमणीक और एकांत स्थान है। वृक्ष-समन्वित, सोपान-सदृश, शस्य-श्यामल खेतों से सुशोभित चारों दिशाओं के दृश्य अति मनोमोहक हैं। पूर्व की ओर नेपाल की हिमाच्छन्न पर्वतमालाएँ और कई सहस्र फीट नीचे सर्प की भाँति बहती हुई काली नदी का दृश्य, उस स्थान की शोभा को और भी बढ़ा रहा है। आश्रम में एक विशाल संकीर्तन हाल, पुस्तकालय, श्रीकृष्ण मंदिर, एक छोटा-सा शिवालय, एकांतवासी महात्माओं के लिए पाँच-छह कुटियाँ, अतिथिगृह, पाकशाला, दो बड़े-बड़े मैदान, शाक तथा पुष्पोपवन और एक जलधारा बन रही है। इन सबों के निर्माण का कार्य शीघ्र ही समाप्त होने वाला है। सुनते हैं कि आश्रम के निर्माण में अब तक 20000 रुपए लग चुका है। यह आश्रम यात्रियों के लिए दर्शनीय है तथा भजनानंदियों के लिए निवास करने योग्य है। श्री स्वामी जी महाराज दो-तीन साधकों के साथ यहाँ निवास करते हैं और अपने संकीर्तन और भजनों द्वारा भोट वासियों में धर्म की जागृति कर रहे हैं। इस प्रकार धर्म और समाज-सुधार में पिछड़े हुए भोट वासियों में नागरिकता, सभ्यता, नारायण-संकीर्तन का अभ्यास और शुद्ध सनातन-धर्म के भावों का प्रचार कर कृतकृत्य हो रहे हैं।

याक और झब्बू—देखिए 'याक' पृष्ठ 151।

7. तीसरा खंड

गर्ब्यांग से तकलाकोट की दूरी $31\frac{1}{2}$ मील है। शीघ्रता से दो दिन, धीरे-धीरे जाय तो तीन दिन की यात्रा है। यहाँ से घोड़े, याक, झब्बू, खच्चर तकलाकोट तक ही लेने चाहिए, क्योंकि आगे के लिए हूणियों के घोड़े-खच्चर सस्ते में मिल जाते हैं। गर्ब्यांग से ही सारी यात्रा के लिए तंबू, चुटका आदि किराए पर लेने पड़ते हैं। सारी यात्रा के लिए यहीं से प्रबंध करना चाहिए। गर्ब्यांग आदि भोट के प्रांतों के पर्वतों पर आर्चा या डोलू (रेवदचीनी), गंधराणी (सुगंधित द्रव्य और पाचक), लोएंट, सोमा, गुगुल, मासी, कुट्ट, वत्सनाभि आदि औषधियाँ और कस्तूरी-मृग, चीता, भालू आदि जंगली पशु अधिक पाए जाते हैं।

लीपूलेख घाटा—यात्रा के इस खंड में लीपूलेख घाटा (16750 फीट) को पार करना पड़ता है, जो गर्ब्यांग से $20\frac{1}{2}$ मील की दूरी पर है। यह घाटा भारत और तिब्बत की सीमा पर अवस्थित है। यदि तीव्र वायु न हो, तो यहाँ दस-पंद्रह मिनट तक विश्राम करके घाटा के दोनों ओर भारत और हूण देश के सुंदर दृश्यों का अवलोकन कर आनंद लूटना चाहिए। घाटे पर चढ़ते समय अपने साथ किसी प्रकार की खटाई अवश्य रखें, जिससे सिरचक्कर, पित्त–विकार या कंठ सूखते समय इनका प्रयोग कर सकें। साथ-साथ 'गुड़पापड़ी' (पँजीरी) या किसी और प्रकार के खाद्यपदार्थ को साथ में रखना चाहिए, क्योंकि

लीपूलेख पर चढ़कर आनंद मनाने के लिए अपने साथियों और घोड़े वालों में कुछ बाँटने की परिपाटी-सी बन गई है। लोगों की धारणा है कि इस प्रकार कुछ खाद्यपदार्थों को बाँट देने से घाटा का अधिदेवता आगे के लिए सुगमता से मार्ग दे देता है।

जैसा कि पहले भी कह चुके हैं, समुद्रतल से 10000 फीट से अधिक ऊँचाई पर पहुँचने पर बहुधा लोगों को क्रोध चढ़ आता है। इसलिए उचित है कि इस बात को ध्यान में रखकर इसके अनुचित प्रभाव से अपने को प्रभावित न होने दें।

तकलाकोट–यह ली लेख से 10 मील की दूरी पर है। मार्ग में यही पहला तिब्बती गाँव है। यहाँ एक पहाड़ के ऊपर सिंबिलिङ मठ और जोङपोन का दुर्ग है। पहाड़ के नीचे जून से अक्टूबर के अंत तक प्रतिवर्ष दारमा परगना (दारमा, चौदाँस, और ब्याँस पट्टियों) के भोटों की बड़ी भारी मंडी लगती है। मंडी में भोटिए व्यापारी कपड़े, गुड़ आदि सभी देशी वस्तुओं का व्यापार करते हैं और तिब्बतियों से ऊन, नमक, सोहागा आदि वस्तुओं को खरीदते हैं। व्यापार नकद रुपयों द्वारा याँ वस्तु-विनिमय से होता है। इस मंडी में लगभग 500 डेरे रहते हैं। तकलाकोट से जाकर फिर तकलाकोट लौटने के समय तक के लिए आवश्यक आटा, चावल, सत्तू, दाल, गुड़, चीनी, मेवे, मिट्टी का तेल आदि सामग्रियों को यहीं से ले जाना चाहिए। गर्ब्यांग में लिए गए कंबलों और डेरों में कुछ कमी अनुभव हो, तो उसकी पूर्ति यहाँ पर कर सकते हैं। बंदूक का भी प्रबंध यहीं पर कर लेना पड़ता है। अपने लिए आवश्यकता न पड़े पर भी भिखमंगों में बाँटने के लिए दो-चार सेर संत्तू साथ में अवश्य रख लेना चाहिए। तिब्बत में पहुँचते ही कुत्तों से सावधान रहना चाहिए। डेरे के स्थानों में अपनी वस्तुओं को असावधानीपूर्वक बाहर नहीं रहने देना चाहिए, क्योंकि कौतूहलार्थ देखने के लिए आए हुए तिब्बती बच्चे उन्हें उठा ले जाते हैं।

सिंबिलिङ मठ—देखिए, पृष्ठ 138।

गुकुङ–तकलाकोट मंडी से $\frac{1}{2}$ मील पर करनाली के दाहिने किनारे पर एक पहाड़ की दीवाल से लगा हुआ गुकुङ नामक गाँव है। तकलाकोट और गुकुङ गाँव के पहाड़, मकान की नींव में डाले हुए सिमेंट और कंकड़ के चट्टान-जैसे (सेंड स्टोन) होते हैं। यहाँ प्राकृतिक गुफाओं के सामने दरवाजा लगाकर घर बनाए गए हैं। इस प्रकार कई घर तो दुमंजिले भी हैं। एक तिमंजिली गुफा में एक गोम्पा बना हुआ है। यहाँ करनाली के ऊपर एक तिब्बती पुल है। प्रायः तिब्बत में नदियों के पुलों के ऊपर रंगबिरंगे कपड़ों के झंडे और तोरण लगे रहते हैं, जिससे देवता लोग प्रसन्न होकर पुल की रक्षा करते रहें। पुल के उस पार नेपालियों की बड़ी भारी मंडी लगती है, जहाँ नेपाल से आए हुए व्यपारी चावल, गेहूँ, जौ, आटा आदि बेचकर ऊन, नमक, सोहागा और बकरियों तथा भोटियों की मंडी की अन्य वस्तुओं को मोल ले जाते हैं।

खोचारनाथ–तकलाकोट के आग्नेय कोण में 12 मील पर करनाली नदी के बाँएँ किनारे पर ही खोचार का गोम्पा है। भारतवासी इसे खोचारनाथ कहते हैं और कुछ लोग

भ्रम से इसे खेचरी तीर्थ कहकर पुकारते हैं। इस गोम्पा को कैलास जाने से पहले या वहाँ से लौटते समय देख सकते हैं। यह देखने योग्य है। तकलाकोट से शीघ्रता में जाएँ, तो एक ही दिन में या धीरे-धीरे जायँ, तो दो दिन में लौटकर आ सकते हैं। विशेष विवरण के लिए देखिए 'खोचार गोम्पा', पृष्ठ 140।

8. चौथा खंड

तकलाकोट से मानसरोवर होकर तरछेन 62 मील है, शीघ्रता से जाने से चार दिन और धीरे-धीरे जाने से पाँच दिन की यात्रा है। यहाँ घोड़े, याक और झब्बू जा सकते हैं। तीर्थपुरी जाने वाले यात्री ज्ञानिमा मंडी होकर जाते हैं, जिससे पश्चिमी तिब्बत भर की सबसे बड़ी मंडी ज्ञानिमा को भी देख सकें। तकलाकोट से ज्ञानिमा 49 मील, वहाँ से तीर्थपुरी 27 मील और तीर्थपुरी से तरछेन 28 मील है। कुल योग 114 मील होता है, जो सात-आठ दिनों का मार्ग है। जो लोग ज्ञानिमा मंडी नहीं जाना चाहते, वे सीधे तकलाकोट से करदुङ और दुलचू गोम्पा होकर तीर्थपुरी का दर्शन करके तरछेन जा सकते हैं। ज्ञानिमा और इस मार्ग में अधिक-से-अधिक एक दिन का अंतर पड़ता है। चाहे जिस मार्ग से भी जायँ, तकलाकोट से गर्ब्यांग लौटने तक का सारा प्रबंध तकलाकोट में ही करना चाहिए।

तकलाकोट या गर्ब्यांग से घोड़ों को तय करते समय घोड़े वालों से ये बातें पहले ही तय कर लेनी चाहिए—(1) यदि सीधे कैलास जाना हो, तो मानसरोवर होकर ही जायँगे, राक्षसताल होकर नहीं।[1] (2) यदि तीर्थपुरी होकर कैलास जाना हो तो तीर्थपुरी से सीधे तरछेन ले जाना होगा, सीधे न्यनरी गोम्पा नहीं; क्योंकि सीधे तरछेन न ले जाकर इस प्रकार सीधे न्यनरी जाने से बीच के दृश्य, ध्वजा तथा लाल दरवाजा देखने से यात्रीगण वंचित रह जाते हैं। (3) कैलास की परिक्रमा तरछेन से आरंभ होकर तरछेन में ही पूरी कराई जाय, क्योंकि घोड़े वाले प्रायः दो–तीन मील की दूरी से बचने के लिए जुंठुलफुक् से ही बिना तरछेन हुए परखा आ जाते हैं। (4) मार्ग में जितनी गोम्पाएँ हैं, सबों का दर्शन कराते हुए ही ले जायँ।

तोयो—यह तकलाकोट से 3 मील पर है। इसी गाँव में काश्मीर के वीर जोरावर सिंह की समाधि है। देखिए पृष्ठ 165।

गुरला ला—यह तकलाकोट से 24$\frac{3}{4}$ मील की दूरी पर है। समुद्रतल से 16200 फीट की ऊँचाई पर स्थित है। घाटे के ऊपर बड़े-बड़े लप्चे या पत्थरों के बड़े-बड़े ढेर, रंगबिरंगे कपड़ों के झंडे और तोरण हैं। यह मांधाता-माला का एक घाटा है। यहाँ से चारों ओर के अद्भुत और विशाल दृश्य शरीर की सुधबुध भुला देते हैं। मानसरोवर की दिव्य और रमणीक छटा इस संपूर्ण दृश्य को स्वर्गीय बनाकर आनंदसागर में निमग्न करा देती है। इन झंडों के पास थोड़ी देर ठहरकर तथा कुछ काल विश्रामकर चारों तरफ विस्तृत और विराट प्रकृति

1. राक्षसताल का मार्ग तीन-चार मील कम होने के कारण घोड़े वाले प्रायः अनजान यात्रियों को उसी मार्ग से ले जाकर मानसरोवर के किनारे पर तीन दिन तक रहने के सुअवसर से वंचित कर देते हैं।



63. मंडी में गुड़, चाय और कपड़ों की गठरियाँ

[देखिए पृ० 227



64. गुरला ला घाटा से मांधाता का दृश्य

[देखिए पृ० 228



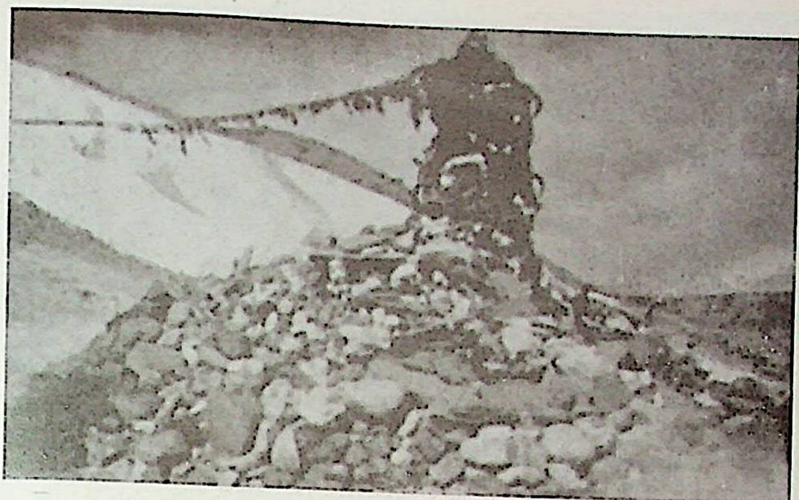
65. तीर्थपुरी का प्रधान गोम्पा

[देखिए पृ० 229



66. गुफा में स्थित दूसरा गोम्पा

[देखिए पृ० 229



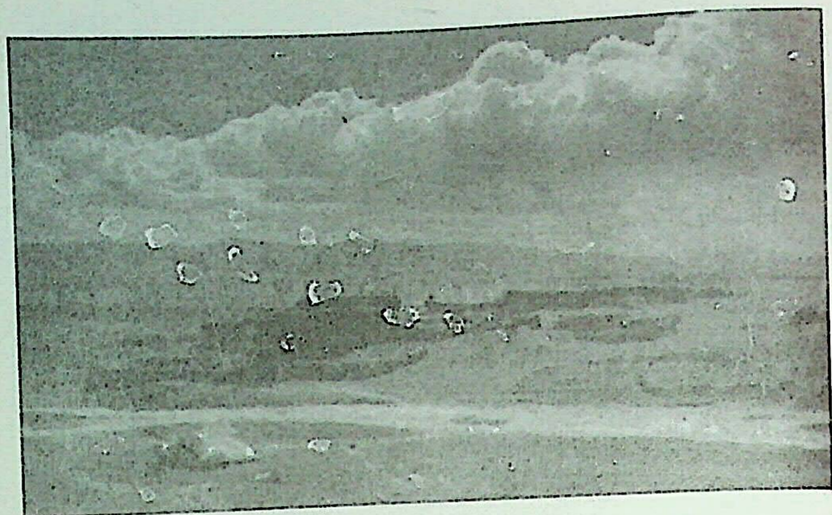
67. तीर्थपुरी गोम्पा के नीचे डोलमा का एक प्रतीक

[देखिए पृ० 229



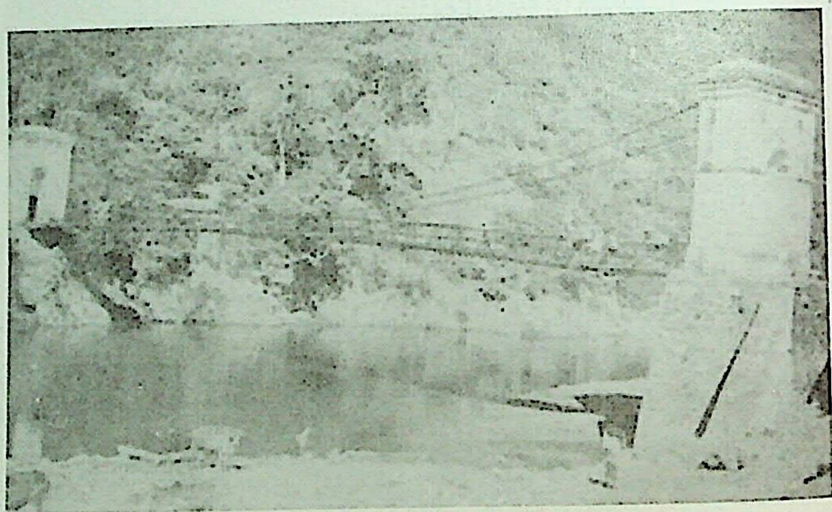
68. तीर्थपुरी के गर्म जल के सोते

[देखिए पृ० 229



69. तरछेन

[देखिए पृ० 232



70. सरयू नदी पर लोहे का झूलानुमा पुल

[देखिए पृ० 240



71. काली और गौरी नदी का संगम–जौलजीबी

[देखिए पृ० 243



72. अंतरिक्ष में लटक रहा है–रस्सी का पुल, धारचूला

[देखिए पृ० 244



73. कालापानी के स्रोत–काली नदी का उद्गम

[देखिए पृ० 250



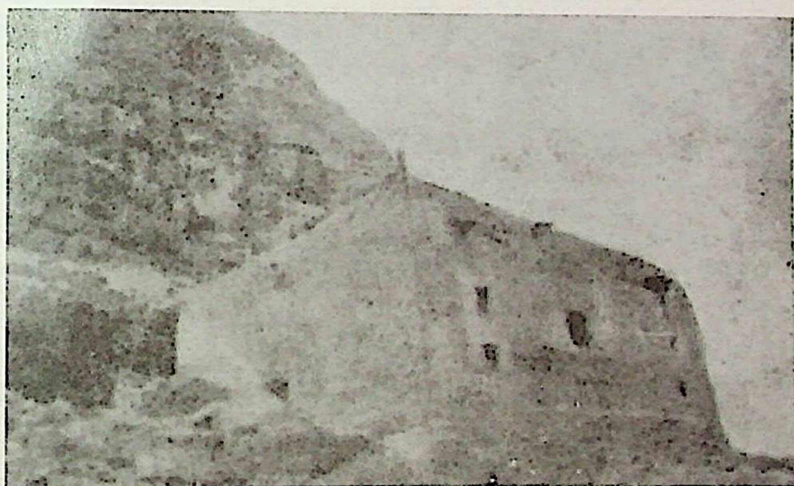
74. हिमालय की मालगाड़ी–भेड़-बकरियाँ

[देखिए पृ० 152



75. पूरब में जोरावर सिंह के तोड़ हुए दुर्ग के खंडहर

[देखिए पृ० 253



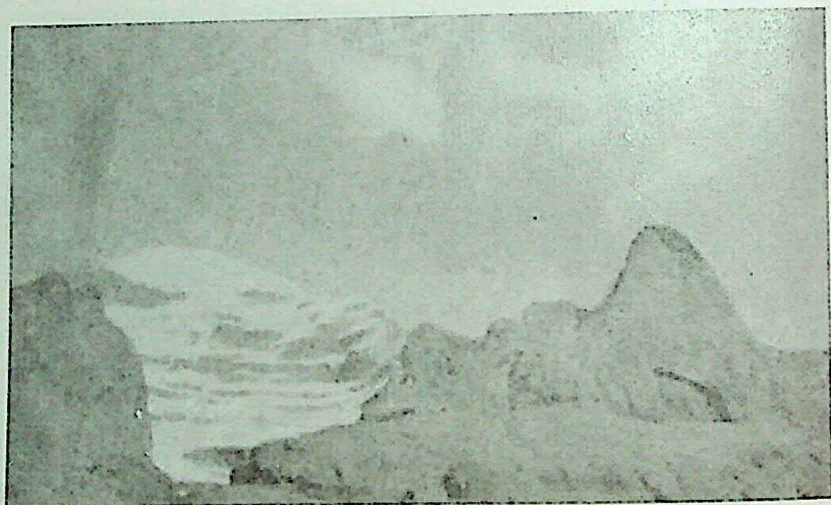
76. न्यनरी गोम्पा–श्री कैलास का पहला मठ

[देखिए पृ० 256



77. न्यनरी गोम्पा से कैलास और गोंबोफेंग (रावण-पर्वत)

[देखिए पृ० 256



78. कैलास की पीठ–पश्चिमी दृश्य

[देखिए पृ० 257

का सौंदर्यावलोकन करना चाहिए। पीछे दाहिनी तरफ मांधाता की गंगनचुंबी चोटियाँ हैं, इन्हीं के चरणप्रांत में सरोवर के किनारे मांधाता ने तपस्या की थी। पीछे की ओर नेपाल और भारत की सीमा की बर्फीली चोटियों से गुथी हुई पर्वतमालाएँ विराजमान हैं। सामने दाहिनी ओर राजहंसों से युक्त, स्वच्छ नीलोदक परिपूर्ण मानसरोवर और बाँईं ओर रावणह्रद दर्शकों को आनंद-समुद्र में निमग्न करके रसाप्लावित कर देते हैं। रावणह्रद के सामने ही, दूर पर नीलाकाश का भेद करते हुए महान रजत-लिंग के समान सम्मोहक श्री कैलास–शिखर अपने महावैभव से युक्त होकर विराजमान हो रहा है, वहीं पर पार्वती-परमेश्वर का निवास स्थान है।

पुनीत मानसरोवर—देखिए प्रथम तरंग।

राक्षसताल–देखिए प्रथम तरंग।

गंगा छू–यह मानसरोवर से राक्षसताल में जाने वाला एकमात्र नाला या निकास है। देखिए पृष्ठ 61।

राजहंस–देखिए पृष्ठ 71।

परखा या बरखा–यह गाँव कैलास और मानसरोवर के मार्ग के मध्य में अवस्थित है। तसम या तजम नामक तिब्बती डाक एजेंसी के अफसर यहाँ रहते हैं। यहाँ दो मकान हैं, जिनमें से एक में तसम के अफसर रहते हैं, दूसरा मकान सरकारी विश्रामशाला (डाक बँगला) है। इसके अतिरिक्त गड़रियों के सात-आठ तंबू भी हैं। परखा के उत्तर में कैलास और दक्षिण में मानसरोवर व राक्षसताल के मध्य में, पूर्व से पश्चिम की ओर कई मीलों तक फैला हुआ एक बड़ा भारी मैदान है। यहाँ की भूमि विशेषकर दलदल और चरागाह है। ग्रीष्म ऋतु में इस मैदान में यत्र-तत्र चरवाहों के काले तंबू लगे रहते हैं। सहस्त्रों भेड़ें, बकरियाँ, याक और घोड़े चरते हुए देखे जाते हैं। इस मैदान में जंगली घोड़े, झुंडों में स्वेच्छा से बिचरते रहते हैं। यहाँ जहाँ-कहीं भी बिना पूर्व प्रबंध के वायुयान उतर सकते हैं या उतरने के स्थान यहाँ सुगमता से बनाए जा सकते हैं।

तीर्थपुरी–तकलाकोट से ज्ञानिमा मंडी होकर तीर्थपुरी 76 मील है, जो पाँच-छह दिनों की यात्रा है। बीच का मार्ग दुलचू गोम्पा होकर हो, तो 65 मील की दूरी है और चार दिनों का मार्ग है। तीर्थपुरी से तरछेन 28 मील है, जो दो दिनों की यात्रा है। पश्चिमी तिब्बत की राजधानी गरतोक यहाँ से 49 मील पर है। तीर्थपुरी को तिब्बती भाषा में टेटापुरी भी कहते हैं। यह सतलज नदी या लङ्चेन खंबब् के दाहिने किनारे पर है। यह मठ तीन मकानों में है, जिनमें एक प्रधान मठ है। शक्य थुब्बा (शाक्य मुनि) की इसमें प्रधान मूर्ति है। गोम्पा के बाहर ध्वजा है। दूसरा एक गुफा में है, जिसमें दोरजेफगमो नामक प्रधान देवी की मूर्ति है; तथा तीसरा सिंदूरी पहाड़ पर है। वास्तव में ये तीनों एक ही हैं। यह मठ और मानसरोवर का लङ्पोना मठ लदाख के सुप्रसिद्ध हेमिस गोम्पा की शाखाएँ हैं। इसमें पाँच भिक्षु रहते हैं। गोम्पा के ऊपर, परिक्रमा के मार्ग में, देवी का डोलमा नामक एक प्रतीक बना है। गोम्पा

के निकट और उससे कुछ पूर्व में बड़ी-बड़ी मणि–दीवालें हैं। गोम्पा से आधे मील नीचे उबलते हुए पानी के गर्म सोते हैं। ये सोते कभी-कभी अपने स्थानों को बदलते रहते हैं और किसी-किसी समय एकदम बंद भी हो जाते हैं। गुफा वाले मठ के आसपास भी कुछ गर्म सोते हैं। इन गर्म सोतों के आसपास चुगान नामक चूने-जैसे एक श्वेत पदार्थ के बड़े-बड़े टीले या ढेर बने हुए हैं, जिन्हें हिंदू लोग भस्मासुर के टीले कहते हैं और उस श्वेत पदार्थ को भस्मासुर का भस्म मानकर प्रसाद के रूप में घर ले जाते हैं। कहते हैं कि इस विभूति को लगाने से भूतप्रेत की बाधा दूर होती है। इसी स्थान पर भस्मासुर ने शिव की तपस्या की थी, जो पुराणों में बड़े रोचक ढंग से वर्णित है।

भस्मासुर की कथा—एक बार भस्मासुर नामक एक राक्षस ने श्री महादेव जी की कठिन तपस्या की। तपस्या से तुष्ट होकर शिव ने उससे वर माँगने को कहा। इस पर भस्मासुर ने कहा—"मैं जिसके माथे पर अपने हाथ रख दूँ, वह तत्काल भस्म हो जाय।" "तथास्तु"—कहकर शिव ने वरदान दे दिया। फिर क्या था, भस्मासुर अपने वर की सत्यता की परीक्षा के लिए सर्वप्रथम शिव के ही मस्तक पर हाथ रखने को उद्यत हो गया। आत्मरक्षा के लिए शिव वहाँ से भागे, पर भस्मासुर उनका पीछा ही करता गया। अंत में शिव को इस संकटापन्न स्थिति में देखकर विष्णु भगवान वैकुंठ को छोड़ मोहिनी नामक एक सौंदर्य-संपन्न रमणी के रूप में भस्मासुर के सामने प्रकट हो गए। भस्मासुर ने भगवान के उस विश्वविमोहन-रूपराशि पर मुग्ध होकर उसके साथ संभोग करने की इच्छा प्रकट की। इस पर मोहिनी ने भस्मासुर से कहा—"हे राक्षसराज, तुम्हारे साथ संभोग करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं, पर बहुत दिनों से कष्ट-तपस्या में निरत रहने पर एवं स्नानादि नहीं करने के कारण तुम्हारे शरीर से दुर्गंध आ रही है, इसलिए प्रथम तुम स्नान कर आओ।" यह सुनकर वह असुर स्नान करने की इच्छा से जलाशय की खोज करने लगा। इधर विष्णु भगवान ने अपनी मायां के बल से एक छोटे से झरने को छोड़कर, जिससे बड़ी ही कठिनता से थोड़ा-सा जल निकल रहा था, आसपास के समस्त जलाशयों के जल को सुखा डाला। अंत में अल्पजल के कारण स्वभावतः अंज़लि में जल लेकर स्नान करते समय भस्मासुर के दोनों हाथों का उसके मस्तक से स्पर्श हो गया और शिव के वरदान के प्रभाव से वह तत्क्षण भस्म होकर ढेर हो गया।

यही कथा एक दूसरे रूप में भी प्रचलित है। जिस समय भस्मासुर वरदान पाकर श्री महादेव जी के मस्तक पर हाथ रखने के विचार से उनका पीछा कर रहा था, वे भाग गए। पार्वती को अकेली पाकर उस असुर ने अपनी कामलिप्सा को तृप्त करने का प्रस्ताव किया। इस पर पार्वती ने भस्मासुर से कहा—"कैलासपति श्री शंकर जी हमें तांडव नृत्य दिखाकर तुष्ट करते थे, अतः तू भी हमें पहले तांडव नृत्य दिखाकर संतुष्ट कर, फिर तेरे प्रस्ताव को मैं स्वीकार कर लूँगी।" इस पर वह असुर पार्वती के सामने तांडव नृत्य करने लगा। नृत्यकाल में, अनेक प्रकार की भाव-भंगियों का प्रदर्शन करते हुए अपनी हथेलियों से उसके माथे का स्पर्श हो गया, जिससे वह दैत्य शिव के वरदान के अनुसार, वहीं भस्म बनकर ढेर हो गया। कहते हैं, जो तीर्थपुरी में पहाड़ दिखाई पड़ता है, वह इसी विकराल दानव के भस्म का ढेर है।

उपर्युक्त गोम्पा के नीचे सिंदूर पहाड़ से सिंदूर-जैसी मिट्टी (येल्लो ओकार) को यात्रीगण प्रसाद के रूप में ले जाते हैं। गोम्पा से एक-दो फलाँग पर, नदी के किनारे बथुआ का साग बहुत मिलता है। तीर्थपुरी के आसपास 'जिंबू' अधिकांश मिलता है। दारमा के खंपा इसे बहुत ले जाते हैं। हिंदुओं तथा तिब्बतियों का विश्वास है कि 'तीर्थपुरी' का बिना दर्शन किए कैलास की यात्रा पूर्ण नहीं होती।

गुरुगेम—तीर्थपुरी से पाँच मील नीचे सतलज के किनारे पर गुरुगेम नामक स्थान है। यहाँ आठ-नौ वर्ष पहले ल्हासा की ओर से एक लामा आए थे, उन्होंने भारत की सीमा के छंगरू ग्राम से लकड़ी ले आकर यहाँ एक गोम्पा का निर्माण करना प्रारंभ किया। उस पर कई सहस्र रुपए व्यय हुए और तीन-चार वर्ष हुआ एक सुंदर मठ बन गया। लामा की अविवेकता के कारण और अपने मंत्र-तंत्र के गर्व के कारण यह गोम्पा सन् 1941 में कज्जाकियों के हाथ में पड़ गया, जिन्होंने गोम्पा के दो भिक्षुओं को गोली से उड़ाकर सारी संपत्ति लूट ली। उस समय से कज्जाकी डाकू लोग जोहारियों के सहस्रों रुपए के कपड़ों का गट्ठर लूट ले गए और अंत में लामा को नंगा छोड़ गए।

गुरुगेम से दो-तीन मील नीचे सतलज के दाहिने किनारे पर पल्क्या या पल्ये नामक स्थान में एक जीर्ण मठ तथा करदुङ जोङ के दुर्ग और भवनों के ख़ंडहर हैं। सन् 1841 में जनरल जोरावर सिंह ने इस गाँव का विनाश कर दिया। उससे पहले यह एक प्रसिद्ध स्थान था। अब भी दस या ग्यारह कुटुंब वाले यहाँ रहते हैं। सन् 1935 में इटली के चुसेप्पे तूछे ने यहाँ से कई तिब्बती ग्रंथों का संग्रह किया था।

यहाँ से 10 मील और नीचे, सतलज के बाँएँ तट पर ख्युङ्लुङ नामक एक गाँव है। यहाँ भी कुछ गर्म जल के सोते और एक मठ है, जिसमें 8 भिक्षु हैं। स्थान गर्म होने के कारण थोड़ी खेती भी होती है। मकान गुफाओं में बने हुए हैं। शीतकाल में आस-पास के गड़रिए अपनी भेड़-बकरियों और याकों को यहाँ चराने के लिए लाते हैं। यहाँ सतलज के ऊपर एक पुल बना हुआ है।

दुलचू गोम्पा—यह तीर्थपुरी से 14 मील है। यहाँ से तरछेन 21 मील की दूरी पर है। यहाँ से एक मार्ग करदुङ और एक मार्ग ज्ञानिमा मंडी को जाता है। तिब्बतियों का कहना है कि दुलचू मठ जिस पहाड़ पर है, वह हाथी के स्वरूप-जैसा है और सतलज का उद्गम मठ से थोड़ी ही दूर पर दलदल भूमि में स्थित सोतों में है। इसलिए सतलज को तिब्बती भाषा में लङचेन खंबब् या हस्तिमुख से निकलने वाली नदी कहते हैं। राक्षसताल से दुलचू गोम्पा तक सतलज को छोलुङ्बा कहते हैं। गोम्पा के भिक्षुओं का कहना है कि राक्षसताल से यहाँ तक नदी में जल निरंतर बहता है। गोम्पा के चकङ और दुवङ एक ही हैं। इसमें शाक्य थुब्बा (शाक्य मुनि) की प्रधान मूर्ति है। यहाँ कंजूर की पोथियाँ और मठ के निर्माणकर्ता लोबसङ देनछिङ का छोरतेन है। इसकी स्थापना आज से लगभग 275 वर्ष पूर्व हुई थी। कुछ अन्य लोगों का कहना है कि इसका निर्माण हुए अभी 100 ही वर्ष हुए। गोम्पा के

सामने ध्वजा तथा कई मणि-दीवालें हैं। दो-चार घर और कुछ काले तंबू भी हैं।

9. पाँचवाँ खंड

कैलास–परिक्रमा–कैलास पर्वत की परिक्रमा 32 मील की है, जो सुगमता से तीन दिन में और शीघ्रता से दो दिन में समाप्त की जा सकती है। कुछ तिब्बती कैलास की परिक्रमा एक ही दिन में करते हैं, जिसे तिब्बती भाषा में 'निङकोर' कहते हैं। देखिए, पहला तरंग।

तरछेन या दरचेन–यह कैलास पर्वत की दक्षिणी तलहटी में है। कैलास की परिक्रमा यहीं से आरंभ की जाती है। यह गाँव भूटान राज्य के अंतर्गत है। यहाँ भूटान के लामा का एक बड़ा मकान है, जिसमें भूटान के एक भिक्षु अफसर रहते हैं, जो तिब्बत के अन्य भूटानी उपनिवेशों की देखभाल करते हैं। इनको तरछेन लब्रङ या तरछेन का राजा कहते हैं। इस भवन के अतिरिक्त चार-पाँच घर और कुछ काले तंबू हैं। जुलाई और अगस्त के महीनों में यहाँ एक मंडी लगती है, जिसमें जोहार और दारमा के भोटिया व्यापारी दुकान लागते हैं। उस समय 60-80 तंबू लग जाते हैं। ऊन यहाँ पर बहुत कटता है और खाने-पीने का सामान भी मंडी में मिल जाता है। तरछेन से कैलास की परिक्रमा करते समय परिक्रमा में अनावश्यक सामान को तरछेन में किसी व्यापारी के पास रखकर कुछ घोड़े थके हुए नौकरों को सवारी के लिए दे देने चाहिए।

सेरशुङ—यह तरछेन से 3½ मील है। यहाँ तरबोछे नामक एक बड़ी ध्वजा है। इसके पास ही 200 गज की दूरी पर छोरतेन कङनी नामक एक लाल छोरतेन या दरवाजा है। देखिए पृष्ठ 49।

डोलमा ला–(देवी का घाटा) कैलास और मानसरोवर की यात्रा के मार्ग की चढ़ाई में यह सबसे ऊँचा है। यह समुद्रतल से 18600 फीट की ऊँचाई पर अवस्थित है।

गौरीकुंड–यह डोलमा ला घाटा से दो सौ गज नीचे उतरने पर पड़ता है। यहाँ पर और डोलमा ला पर प्रायः प्रतिदिन बर्फ गिरती है। देखिए पृष्ठ 50।

सेरदुङ-चुकसुम् और छो कपाली—ये दोनों तीर्थ कैलास–शिखर की दक्षिणी तलहटी पर हैं। देखिए पृष्ठ 51।

10. छठा खंड

मानसरोवर–परिक्रमा–मानसरोवर की परिधि 54 मील है, जो शीघ्रता से तीन दिन और सुगमता से पाँच दिन की यात्रा है। मानसरोवर की परिक्रमा करने वाले कैलास की परिक्रमा को पूरा करके तरछेन से सीधे निकलकर गुरला ला या तकलाकोट में परिक्रमा पूरी कर देते हैं। जिन्हें अधिक समय हो, वे गोछुल गोम्पा (मानसरोवर का पहला मठ) से प्रारंभ करके फिर गोछुल में ही उसका अंत कर सकते हैं। देखिए प्रथम तरंग।

11. प्रसाद

कैलास–(1) श्री कैलास-शिखर के नीचे 16000 फीट की ऊँचाई पर पत्थरों के बीच में कङरी पो (कैलास धूप) नामक एक छोटी-सी सुगंधित लता उगती है। इस लता को सुखाकर लोग धूप के काम में लाते हैं। लोगों की धारणा है कि यह सुगंधित लता कैलास के समीपवर्ती प्रांत के अतिरिक्त उतनी ऊँचाई के अन्य प्रांतों में नहीं पाई जाती है। परंतु मैंने इस लता को गतवर्ष नमरेलडी छू की घाटी के ऊपरी भागों में 17000 फीट की ऊँचाई पर पाया। संभव है, यह कुछ अन्य स्थानों में भी उगती हो। (2) कैलास-शिखर से सेरदुङ चुकसुम के पास गिरने वाले जल या कैलास-शिखर से आया हुआ जल जहाँ–कहीं सुगमता से प्राप्त हो। (3) डिरफुक् गोम्पा के पास के लोग कैलास-शिखर की उत्तरी तलहटी में जाकर वहाँ की एक प्रकार की सफेद मिट्‌टी लाते हैं और उससे पेड़े के समान चिपटी टिकड़ियाँ या संदेश की आकृति का पिंड बनाते हैं, और 'कैलास की विभूति' कहकर व्यवहार करते हैं। (4) गौरीकुंड का जल। (5) कपाली सर का जल। (6) कपाली सर के पत्थरों के बीच में स्थित कोमल मृत्तिका, जिसे प्रसाद के रूप में ले जाते हैं। (7) तीर्थपुरी के गर्म सोतों के पास के श्वेत भस्म को भस्मासुर की विभूति कहकर धारण करते हैं। कहते हैं कि इसके खाने से ज्वर हट जाता है और शरीर पर लगाने से छोटे-छोटे बच्चों की रुलाई और प्रेत-बाधा दूर हो जाती है। (8) तीर्थपुरी के सिंदूरी पहाड़ की पीली मिट्‌टी को प्रसाद के रूप में ले जाते हैं।

मानसरोवर—(1) मानसरोवर के जल को बोतलों या बरतनों में भरकर तीर्थजल के रूप में ले जाते हैं। निर्धन तिब्बती, जिनके पास जल ले जाने का कोई बोतल नहीं रहता, उसी जल में सत्तू भिगोकर गोलियाँ बना लेते हैं और बड़ी श्रद्‌धा से ले जाते हैं। (2) यात्री सरोवर के किनारों से रंगबिरंगे स्निग्ध और छोटे-बड़े सभी प्रकार के पत्थरों को अपनी रुचि के अनुसार चुनकर ले जाते हैं। इनको पूजा के काम की तावीजों और अँगूठियों में रखते हैं।

(3) पूर्वी किनारे पर 3 मील तक किनारे-किनारे चेमानेङ नामक पंचरंग की रेत पतली-सी तहों में पाई जाती है। ये तहें लहरों से बनती हैं। इसे कागज से उठा लेने पर नीचे साधारण सफेद रेत रह जाती है। फिर दूसरे दिन सरोवर की लहरों से दूसरी तह बन जाती है। यह देखने में सुनारों के जेवरों को पॉलिश करने वाले मानिक रेत के समान बैंगनी रंग की होती है। परंतु इसमें श्वेत, लाल, काले, पीले और हरे रंग के कण होते हैं। तिब्बतियों का विश्वास है कि इसमें सोने, चाँदी, पिरोजे, मूँगे और लोहे के कण होते हैं और इसके खाने से ज्वर दूर हो जाता है। किसी के दृष्टिदोष से गाय का दूध देना बंद हो गया हो, तो इसे दूध में डालकर कैलास की धूप देने से गाय पूर्ववत् दूध देने लग जाती है। इस बालू के संबंध में तिब्बती पुराणों में एक कथा है कि एक समय एक टाशी लामा मानसरोवर की यात्रा के प्रसंग में मानसरोवर की इस रेत को कई घोड़ों पर लादकर टाशी ल्हुम्पो ले जा रहे थे। मार्ग में घोड़े वाले उन्हें पागल समझकर सारी रेत को मार्ग में ही फेंकते गए। टाशी ल्हुम्पो पहुँचने

पर चेमनेङा के सारे बोरे खाली हो गए। केवल एक थैली में एक मुट्ठी भर रेत बच रही थी, जिससे टाशी ल्हुम्पो के मंदिर में सोने का पानी चढ़ाया गया, जो अब तक विद्यमान है। लोग इसी रेत को बड़ी श्रद्धा से प्रसाद के रूप में ले जाते हैं। मानसरोवर के प्रसाद रूप में ली जाने वाली रेत यही है।

(4) मानसरोवर की चारों ओर एक प्रकार का सुगंधित छोटा पौधा उगता है, जिसे सुखाकर धूप के काम में लाते हैं। यह पौधा हिमालय के अन्य भागों में भी पाया जाता है। (5) मानसरोवर के कई मठों में, विशेषकर ठुगोल्हो गाँव में, पंगपो नामक सुगंधित धूप मिलती है, जिसे भोटिया लोग मासी कहते हैं। यह विशेषकर मानसरोवर के पूर्व की ओर होती है। (6) मानसरोवर में छोटी-बड़ी बहुत-सी मछलियाँ हैं। बड़ी-बड़ी लहरों से चोट खाकर कितनी ही मछलियाँ मरकर किनारे पर लग जाती हैं। वहाँ के लोग इन्हें सुखाकर रख लेते हैं। इन्हें पास रखने या इनकी धूप जलाने से ग्रह और भूतों की बाधा हट जाती है। किंतु जीवित मछलियों को कोई नहीं मारते। कैलास की धूप और विभूति, मानसरोवर की धूप, चेमानेङा, पंगपो और मछलियाँ वहाँ की गोम्पाओं में बेची जाती हैं।

उपसंहार

यात्रा में लौटते समय आवश्यकतानुसार, बीच-बीच में विश्राम करते हुए अग्रसर होना चाहिए। मार्ग की दुर्गमता के कारण जीवन में बहुधा इस यात्रा पर जाने का अवसर एक से अधिक बार नहीं आता, अतः यात्री को चाहिए कि अवकाश निकालकर कुछ दिनों तक श्री कैलास-शिखर के चरणप्रांत में या परम पुनीत मानसरोवर के गंभीर और प्रशांत तट पर बैठकर कुछ काल अविच्छिन्न ध्यान में व्यतीत करे, जहाँ से श्री कैलास–शिखर के दिव्यदर्शन एवं पुनीत मानसरोवर का स्पर्श तथा उसके निर्मल जल में मज्जन करने का सौभाग्य प्राप्त हो सकेगा। कोई भी व्यक्ति को, चाहे वह धार्मिक हो या भ्रमण करने के उद्देश्य से गया हो, इस महान तीर्थ में कुछ दिनों तक निवास करने के सौभाग्य से वंचित नहीं होना चाहिए। यथासंभव यह यात्रा मानसिक चंचलता और दौड़धूप में न हो तो अधिक अच्छा, थोड़े समय के लिए देश और काल का भाव भूलकर, किंचित इस बात पर भी दृष्टि प्रसारकर विचार कीजिए कि अपनी जीवन-यात्रा की नौका कहाँ से चली, अब कहाँ है, आगे कहाँ और कैसे जाने वाली है और इसका क्या उद्देश्य है? मन लगे तो एक पग आगे जाकर इस पर भी तनिक विचार कीजिए कि इस यात्रा के सूत्रधार के प्रति हमारा क्या संबंध या कर्तव्य है?

परम पवित्र श्री कैलास-शिखर की मंत्रवत मुग्ध करने वाली महत्ता, शोभा और उसके वैभव का अथक दृष्टि से निरीक्षण करते हुए और नीलमणि के समान वक्षस्थल वाले मानसरोवर के पुनीत तट पर, उसके द्वारा श्रद्धा को उद्बोधित करने वाली प्रशांतता की थपकियों का अनुभव करते हुए, कोई भी व्यक्ति रात–दिन अखंड ध्यान और तत्वविचार में निमग्न होकर, समय को क्षण की भाँति व्यतीत कर सकता है। यहाँ के स्वच्छंद वातावरण में प्राणी स्वाभाविक रूप से आनंद का श्वास लेने लगता है। उसे जीवन का वास्तविक आनंद अनुभूत

होने लगता है। मन स्वेच्छा से, देशकाल से परे होकर उस विमुग्धकारी एवं स्वच्छ नीलोदक से तरंगायित सरोवर में विहार करने के लिए छटपटाने लगता है। भूगोल या भूगर्भशास्त्र के विशाल साम्राज्य में श्री कैलास-शिखर के अन्वेषण या इसके जलीय तत्व के तारतम्य से, पृथिवी के दूसरे भागों में स्थित सरोवरों से इस अतुल सरोवर की तुलना की बात निस्संदेह बहुत ही सुंदर मनबहलाव की सामग्री हो सकती है और वह साधारण धीमानों के लिए प्रयत्न का विषय हो सकता है। पर स्वर्गीय सौंदर्य और नैसर्गिक गुणों से युक्त सर्वदा शुभ्र हिमाच्छन्न छत्रों से शुशोभित श्री कैलास-शिखर के—जहाँ हिंदू-पुराणों के अनुसार परम पुरुष शिव अर्धांगिनी पार्वती के साथ, और तिब्बती शास्त्रों के अनुसार भगवान बुद्ध अपने पाँच सौ बोधिसत्वों के साथ निवास कर रहे हैं—सम्मुख होने के अंतरानंद का सजीव वर्णन, ग्रंथकार की अपेक्षा कोई प्रतिभाशाली कवि ही भलीभाँति कर सकता है। यदि इनकी विवश करने वाली सुंदरता और रूपराशि ने मानव-मन को आकर्षित न किया होता, तो दो विभिन्न धर्म—हिंदू और बौद्ध—के लिए ये दोनों समान प्रतिष्ठा के योग्य अन्य किस कारण से हो सकते? उस दिव्य शिखर ने अपने गौरव की अमिट छाप इस प्रकार डाल दी है कि वे इसे भूतल की नहीं, वरन् स्वर्ग की सृष्टि मान बैठते हैं। गुरला घाटा या सरोवर के तटस्थित पहाड़ों के किसी स्थान से शिखर का प्रथम दर्शन भी उस स्वर्गीय दृश्य से शरीर को रोमांचित कर नयनों को आनंदाश्रु से भर देता है। निस्संदेह निकट का सहवास विलक्षण समाधि में निमग्न कर देता है, तब अन्य अवसरों की अपेक्षा परमात्मा का निकटतम अनुभव होता है।

ग्रंथकार की यह धारणा है कि यदि वह किसी भी पाठक के हृदय में इस आनंदधाम (कैलास-मानसरोवर) की शिक्षाप्रद तथा शरीर एवं आत्मा को बलवती बनाने वाली यात्रा की ओर अभिरुचि तथा उत्साह उत्पन्न करने में सार्थक हुआ और अंतरानंद की वह अनुभूति जगाने में सफल हुआ, जो लेखक की भाँति प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनुभवसाध्य है, तो वह अपने परिश्रम को सफल तथा धन्य मानेगा। इसके अतिरिक्त यदि कोई भक्त सर्वांतर्यामी की प्रेरणा से स्वयं सिद्धि प्राप्तकर अपने मित्रों के हृदय में भी अखंड ज्योति का प्रकाश उद्दीप्त कर सका, तो आत्मप्रेरणा की शृंखला को उत्पन्नकर इस प्रकार कार्यकर होते हुए देख उसे परम संतोष होगा कि वह प्रेरणा की इस क्रमानुवर्तित शृंखला का जन्मदाता है। अपने पर न्यस्त मानव-सेवा की महान तथा स्वाभाविक पूर्ति होने पर इस प्रकार का संतोष होना उचित ही है।

इसी प्रसंग में एक पाश्चात्य व्यक्ति, जो मानसरोवर पर केवल भौगोलिक अन्वेषण के लिए गए थे, के मन पर मानसरोवर का क्या प्रभाव पड़ा, उसे जान लेना उचित है। 'ट्रेंस-हिमालया' नामक पुस्तक में डॉ० स्वेन हेडिन लिखते हैं—"मानसरोवर पवित्रता और शांति का भंडार है। धरातल पर कोई भाषा नहीं है, जिसमें ऐसे जोरदार शब्द हों, जो इस सरोवर का पूरा वर्णन कर सकें। हंस के झुंड तैर रहे हैं और चारों ओर अवर्णनीय सन्नाटा छाया हुआ है, जो अजीब किस्म की अलौकिकता, प्रशांतता, गंभीरता और सूक्ष्मता के वातावरण से परिपूर्ण है। जिससे मुझे श्वास-प्रश्वास लेना भी कठिन-सा हो गया। मेरे जीवन

भर में किसी विवाह के जलूस, किसी विजय या मृत्यु का गीत, किसी गिरजाघर के उपदेश ने इतना प्रभाव नहीं डाला, जितना गोछुल गोम्पा के छत से इस सरोवर के दृश्य ने। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मैं अंतरिक्ष में तरण कर रहा था। इस अनुभूति के भ्रम में पड़कर मैंने छत के चबूतरे की दीवाल को जोर से पकड़ा। .... अहा! मानसरोवर कैसा आश्चर्यजनक सरोवर है। इसे वर्णन करने के लिए मेरे पास पर्याप्त शब्द नहीं हैं। मैं अपने जीवन भर में इसे नहीं भूल सकता हूँ। सरोवर से विदा होकर चलते समय मुझे असह्य दुःख हुआ। .... इसका प्रभाव मेरे मन पर ऐसा पड़ा है, जैसे यह एक कथा या कविता या गीत हो। मेरे जीवन भर के पर्यटनों में कोई ऐसी वस्तु या घटना नहीं है, जो इस सरोवर पर की हुई एक रात्रि की मुग्ध करने वाली नौका-यात्रा से तुलना कर पाए। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ-मानों मैं परमात्मा की वीणा से हृद्‌तंतुओं के महान और गंभीर स्पंदनों को सुन रहा था। मुझे ऐसा भान हुआ कि यह सारा संसार मिथ्या है और चारों ओर के दृश्य लौकिक, भौतिक या आडंबरयुक्त नहीं हैं, अपितु स्वर्ग की सीमा के—परलोक के हैं! ...... संसार में कई इससे भी अधिक सुंदर सरोवर हैं। जैसे इसके पश्चिम में स्थित राक्षसताल निस्संदेह इससे सुंदरतर है, परंतु प्राकृतिक सौंदर्य के साथ इस प्रकार का अलौकिक प्रतिभाशाली और प्रभाव डालने वाला सरोवर संसार भर में अन्य कोई नहीं है।''

———————

चतुर्थ तरंग

मार्ग-तालिकाएँ

सूचना

इन तालिकाओं में सर्वप्रथम पड़ावों की क्रमिक संख्या दी गई है। उसके बाद पड़ावों के नाम दिए गए हैं। फिर दो स्थानों के अंतर तथा कुल दूरी का जोड़ क्रमशः दो छोटे कोष्ठकों में मीलों में दिया गया है। उसके बाद बड़े कोष्ठक में उस स्थान की समुद्रतल से ऊँचाई फीटों में दी गई है और अंत में उन स्थानों का संक्षिप्त विवरण दिया गया है। विवरण में पंक्तियों के प्रारंभ में दी हुई मीलों की संख्या क्रमशः एक स्थान से दूसरे स्थान की दूरी प्रकट करने के लिए हैं। स्थानों के विशेष विवरण पादटिप्पणियों (फुट नोट्स) में दिए गए हैं। पाठकगण पढ़ते समय इन विशेषताओं पर ध्यान रखें।

सांकेतिक शब्द

डा0 = डाकघर
ता0 = तारघर
अ0 = अस्पताल
डाब0 = डाकबँगला
जं0 = जंगलात का बँगला या 'फॉरेस्ट रेस्ट हाउस'
रे0 = रेस्ट हाउस

स्कू0 = स्कूल
ध0 = धर्मशाला
डेरे = डेरे के स्थान
पी0 = पी0 डब्ल्यू0 डी0
दे = देखिए पृष्ठ
चाय = चाय की दुकान
? = संदिग्ध विषय

Mild descent=मंद उतराई
Descent=उतराई
Steep descent=कड़ी या कठिन उतराई
Very Steep descent=बहुत कठिन उतराई
Falling descent=लुढ़कती उतराई

Mild ascent=मंद चढ़ाई
Ascent=चढ़ाई
Steep ascent =कड़ी या कठिन चढ़ाई
Very steep ascent =बहुत कठिन चढ़ाई
Almost pre Pen dicular ascent = खड़ी चढ़ाई

6. श्री कैलास और मानसरोवर जाने का पहला मार्ग की उतराई-चढ़ाइयों का ग्राफ

कामेट
नंदादेवी
त्रिशूल
चौखंभा
द्रोण गिरि
नंदाकोट
पंचचूल्ही
गुरला मांधाता
श्री कैलास
मानसरोवर
दूरी, मील

तालिका 1

श्री कैलास और मानसरोवर का पहला मार्ग

अल्मोड़े से लीपूलेख घाटा होकर–239 मील

अल्मोड़ा—(0) (0) [5414] यह जिले का प्रधान स्थान है। डा0, ता0, डाब0, जं0, होटल, बाजार, चाय, मोटर एजेंसी इत्यादि। हल्द्वानी रेलवे स्टेशन पैदल के मार्ग से 41 मील और मोटरबस के मार्ग से 88 मील है।

1 मील ढूँगाधारा की 'टोल बार', दुकान, चाय।
$\frac{1}{2}$ मील बल्ढोटी, खच्चर और टट्टुओं के ठहरने का स्थान।
1 मील ईसाईयों के मिशन का सेनटोरियम।
$1\frac{3}{4}$ मील चितई, दुकान, चाय, मंदिर, जल-धारा।
$1\frac{1}{4}$ मील चौखुटिया या पेटसाल तक कठिन उतराई, गधेरे को पुल से पार करें, यहाँ से बाड़े छीना तक मंद चढ़ाई है।
$\frac{1}{2}$ मील दुकान, चाय, जल की धारा।
$\frac{3}{4}$ मील एक संकीर्ण पुल को पार करें।
$\frac{3}{4}$ मील शील, दुकान, चाय।

बाड़े छीना[1] ($8\frac{1}{2}$) ($8\frac{1}{2}$) [4000] 1 मील चाय, डा0, जं0, स्कू0, बाजार, यहाँ से धारचूले तक ऋतु में आम में मिलते हैं।

1 मील सुपई, दुकान।
1 मील चीड़ के जंगल में होकर चढ़ाई है।
1 मील मंद उतराई।

1. धौल छीना[2] (5) ($13\frac{1}{2}$) [6000] 2 मील धौल छीना तक कड़ी चढ़ाई[3], चा0,

---

1. यहाँ से एक मार्ग मिरतोला जाता है, जहाँ श्री कृष्णप्रेम (निक्सन) तथा श्री आनंदप्रिय (मेजर अलेकजेंडर) आदि कुछ अंग्रेज भक्तों ने उत्तर वृंदावन नामक आश्रम का निर्माण किया है। यह एक रमणीक स्थान है। यहाँ कृष्ण भगवान का एक सुंदर मंदिर है। बाड़े छीने से मिरतोला पगडंडी से $5\frac{1}{2}$ मील और घोड़े की सड़क से 7 मील की दूरी पर है। मिरतोला से जागेश्वर 2 मील पर है।
2. यहाँ से पूर्व की तरफ मिरतोला 5 मील पर है। पश्चिम की तरफ बिनसर नामक एक स्वास्थ्यप्रद स्थान 6 मील पर है। वह 7913 फीट की ऊँचाई पर है। यहाँ का जलवायु ठंढा है। यहाँ से बदरीनाथ से नेपाल की सीमा तक के बर्फीली चोटियों के मनोहर दृश्य दिखाई पड़ते हैं।
3. धौल छीना पहुँचने के 5 फलांग पहले कालून नामक स्थान पर 2 दुकान तथा यात्रियों के ठहरने के लिए मकान बने हुए हैं और यहाँ पर एक पानी की धारा है।

डाब0, दुकान, ठंढा स्थान, यहाँ से भौंरा का गधेरे तक लगातार कड़ी उतराई है।

बूंगा ($2\frac{1}{2}$) (16) $2\frac{1}{2}$ मील, बूंगा तक घने जंगल में होकर उतराई, दुकान, चाय, घोड़े वालों का ठहराव, सुंदर पड़ाव।

2 मील भौंरे के गधेरे तक चीड़ के जंगलों से उतराई, दुकान, चाय।

कनारी छीना ($2\frac{3}{4}$) ($18\frac{3}{4}$) $\frac{3}{4}$ मील डा0, जं0, दुकान।

$\frac{1}{4}$ मील कड़ी उतराई।

$1\frac{3}{4}$ मील जालीखेत, दुकान, आम के बगीचे।

$\frac{1}{2}$ मील डुंगरलेख छीना, यहाँ पर ऋतु में आसपास में आम बहुत मिलते हैं।

1 मील कड़ी उतराई।

$1\frac{3}{4}$ मील सरयू के पुल तक मंद उतराई, पुल पार करें।[1]

सेराघाट-मल्ला ($5\frac{1}{4}$) (24) यह सरयू के बाँएँ किनारे पर है। यहाँ दुकान, चाय, आम और केले मिलते हैं। गर्म स्थान है, (यहाँ से एक मार्ग गंगोलीहाट होते हुए पिठौरागढ़ जाता है) दुकान से कुछ नीचे एक शिवालय है, जिसकी ठीक दूसरी तरफ, नदी के पार जैगणा नदी सरयू से मिलती है। दोनों के संगम बहुत सुंदर हैं।

2. शल्या ($2\frac{1}{2}$) ($26\frac{1}{2}$) $2\frac{1}{2}$ मील की कड़ी चढ़ाई शल्या, दुकान, चाय, पानी की धारा।

$\frac{1}{4}$ मील चढ़ाई, नरुवा का घोल, दुकान।

$\frac{1}{2}$ मील फड्याली नदी पर पुल पार करें।

गणाई[2] ($3\frac{1}{2}$) (30) $2\frac{3}{4}$ मील गणाई तक मंद चढ़ाई, डा0, स्कूल, दुकान, चाय, पानी का नल, यह गर्म स्थान है। सड़क के आधे मील हटकर जं0।

$\frac{3}{4}$ मील तपोवन, दुकान।

$1\frac{3}{4}$ मील सिमलता, दुकान।

1 मील साता, दुकान।

1 मील कुलरूँ गाड़ के ऊपर की बिस्तरद्यो पुल को पार करें, (पुल से $\frac{1}{4}$ मील पहले मार्ग के नीचे एक शिवालय है।)

बाँसपटान (6) (36) $1\frac{1}{2}$ मील बाँसपटान, मार्ग भर के सुंदर स्थानों में से यह एक है। यहाँ कई उपत्यकाएँ मिलती हैं। कगारें, संकीर्ण घाटियाँ, कई प्रक़ार की खेतीबारी, दुकान, चाय।

---

1. पुल पहुंचने से पहिले और मार्ग से कुछ नीचे कलमी आम के बगीचे लगे हुए हैं, जहाँ पर आम सस्ते मूल्य पर प्राप्त हो जाते हैं।
2. यहाँ भंगेरा के बीज बहुत मिलते हैं, जो मार्ग में खटाई में डालने के लिए अच्छी वस्तु है।

$1\frac{1}{2}$ मील गोदी गाड़, दुकान, चाय।

$\frac{1}{2}$ मील स्याली, दुकान, चाय।

सुक्ल्याडी (3) (39) 1 मील दुकान, चाय, घोड़ेवालों का ठहराव।

1 मील मार्ग सीधा है।

2 मील बेरीनाग के शिखर तक चीड़ के जंगलों में होकर कड़ी चढ़ाई, (यहाँ से बागेश्वर 23 मील है); यहाँ से गुरघटिया के पुल तक ($6\frac{3}{4}$ मील) लगातार उतराई, बरसात में मार्ग में बिछलन होती है।

3. बेरीनाग[1] ($3\frac{1}{4}$) ($42\frac{1}{4}$) [7000] $\frac{1}{4}$ मील बेरीनाग या वेणीनाग तक उतराई, डा0, अ0, स्कूल, बाजार, चाय, मिठाई मिलने का अंतिम स्थान, धर्मशाला, चाय के बगीचे, पहाड़ की रीढ़ पर एक ओर नाग का मंदिर और दूसरी ओर जं0, यहाँ से बदरीनाथ, त्रिशूल, नंदादेवी, नंदाकोट, पंचचूल्ही और छिपलाकोट की बर्फीली चोटियों का सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है। यहाँ से एक मार्ग पाताल-भुवनेश्वर और गंगोलीहाट जाता है।

$1\frac{1}{2}$ मील उतराई, मुंडकट्टा गणेश, दुकान, केले, यहाँ से एक मार्ग पाताल-भुवनेश्वर और गंगोलीहाट जाता है।

मंगरोली ($1\frac{3}{4}$) (44) $\frac{1}{4}$ मील उतराई, दुकान, मूल स्रोत की सुंदर धारा, दूध, दही, केले मिलते हैं, ठहरने का अच्छा स्थान, चाय।

गड़तिर ($2\frac{1}{2}$) ($44\frac{3}{4}$) $\frac{3}{4}$ मील गड़तिर तक उतराई, दुकान, केला।

$\frac{1}{2}$ मील उतराई, बघोरा।

$\frac{3}{4}$ मील उतराई, चौपाता, दुकान। 1 मील बलगडी, दुकान, चाय।

$1\frac{1}{2}$ मील लिकतड, उतराई, दुकान, अमरूद के बगीचे, बेरीनाग से यहाँ तक पास के पहाड़ों का दृश्य बहुत सुंदर है, रास्ते में, बाँज (ओक) के पेड़ हैं। $\frac{1}{4}$ मील

---

1. जागेश्वर, गंगोलीहाट और पाताल-भुवनेश्वर के दर्शनार्थी बाड़े छीने से यात्रा के मार्ग को छोड़कर इनका दर्शन करके बेरीनाग के पास आकार पहले मार्ग पर लौटकर आते हैं। अल्मोड़े से बाड़े छीना $8\frac{1}{2}$ मील, पणुवा नौला $5\frac{1}{2}$ मील, जागेश्वर 3 मील, नैनी 8 मील, हरारा $2\frac{1}{4}$ मील, सेराघाट तल्ला $1\frac{3}{4}$ मील, गंगोलीहाट $6\frac{1}{2}$ मील, पाताल–भुवनेश्वर $6\frac{1}{2}$ मील और बेरीनाग 11 मील (कुल 53 मील) है।

बागेश्वर जाने वाले कैलास से लौटते समय बेरीनाग से जाकर वहाँ से सीधे अल्मोड़ा पहुँच सकते हैं। बेरीनाग से सानी उड्यार 10 मील है, बागेश्वर 13 मील, ताकुला 12 मील और अल्मोड़ा 15 मील (कुल 50 मील) है। या बागेश्वर से सोमेश्वर 14 मील है और वहाँ से अल्मोड़े तक, जो 25 मील की दूरी पर है, सीधे मोटरबस जाती है, बागेश्वर से बैजनाथ तेरह मील पर है, वहाँ से सोमेश्वर 18 मील है और वहाँ से अल्मोड़ा 42 मील दूर है। बैजनाथ से अल्मोड़े और काठगोदाम तक मोटरें भी जाती हैं।

उतराई, गुरघटिया का पुल पार करें।

1 मील चढ़ाई। $\frac{3}{4}$ मील अम्तड़ गाँव।

4. थल[1] (7$\frac{3}{4}$) (51$\frac{3}{4}$) [3000] 1$\frac{1}{4}$ मील थल, डा0, दुकान, चाय। यहाँ आम और केले मिलते हैं, गर्म स्थान है। यहाँ पहुँचने से पहले आधे मील पर एक पहाड़ की चोटी पर जं0 [3400]। थल रामगंगा के दोनों तटों पर बसा हुआ है, यहाँ रामगंगा का पुल पार करें। बाँएँ किनारे पर बालेश्वर महादेव का एक पुराना मंदिर है। वैशाख पूर्णिमा को एक सप्ताह तक बड़ा भारी मेला लगता है। (यहाँ से एक मार्ग पिठौरागढ़ जाता है, जो अट्ठाईस मील है।) पास ही एक गाड़ है।

$\frac{1}{4}$ मील स्कू0 (यहाँ से एक मार्ग तेजम होकर मिलम जाता है, जो 12 + 47$\frac{3}{4}$ = 59$\frac{3}{4}$ मील की दूरी पर है।)

3 मील की कड़ी चढ़ाई, यहाँ से सांदेव तक बीच-बीच में विश्राम के साथ चढ़ाई पड़ती है।

2$\frac{1}{4}$ मील साता, ईसाई मिशनरी का एक मकान, यहाँ से बेरीनाग दिखाई पड़ता है।

1$\frac{1}{4}$ मील मापानी, गाड़ पहाड़ के ऊपर से एक मार्ग पर गिरती है।

सांदेव (7$\frac{3}{4}$) (59$\frac{1}{2}$) [6400] 1 मील सांदेव का जं0 मार्ग से एक फलांग ऊपर पहाड़ की चोटी पर है, जहाँ से बर्फों का सुंदर दृश्य दिखलाई पड़ता है। सड़क के पास ही एक दुकान है।

5. डीडीहाट (2$\frac{1}{2}$) (62) [6000] 2$\frac{1}{2}$ मील कड़ी चढ़ाई, डीडीहाट या दिक्तड़ डा0, स्कू0, चाय, डीडीहाट का गाँव पड़ाव से एक मील की दूरी पर, पहाड़ों के मध्य एक विशाल दून में है।

3$\frac{1}{2}$ मील काँडाधार तक बीच-बीच में विश्राम के साथ चढ़ाई है, दुकान है, यहाँ से अस्कोट के रजवाड़ों का प्रांत प्रारंभ होता है, अस्कोट तक कड़ी उतराई। $\frac{1}{2}$ मील एक जलधारा। 1 मील चोरपानी।

अस्कोट[2] (7) (69) [5000] 2 मील डा, जं0 (अस्कोट पहुँचने से आध मील इधर ही सड़क के पास एक पहाड़ के ऊपर है), स्कू0, बाजार, चाय, धर्मशाला, मंदिर, अस्कोट के जमींदार या रजवाड़े यहाँ रहते हैं, यहाँ उनका साधुओं के

---

1. थल से लगभग एक मील आगे सड़क के दाहिनी तरफ एक फलांग की दूरी पर एकहथिया देवल नामक मंदिर है। इस मंदिर को एक ही हाथ वाले शिल्पकार ने 30 फीट लंबा, 17 फीट चौड़ा और 17 फीट ऊँचे पत्थर की चट्टान से खोदकर 7$\frac{1}{2}$ फीट लंबा, 3$\frac{1}{2}$ फीट चौड़ा और 10 फीट ऊँचा मंदिर बनाया।

2. अस्सीकोट = अस्सी दुर्ग। कहा जाता है कि यहाँ अस्सी राजाओं ने राज्य किया था, इसलिए अस्कोट नाम पड़ा। यहीं पर टनकपुर की सड़क मिलती है। जिसका ब्यौरा यों है—टनकपुर से सुखीढाँग का पड़ाव या मालझाड़ी 8 मील; (यहाँ से पुण्यागिरि देवी का स्थान 7 मील टनकपुर से भी उतना ही दूर); मोलझाड़ी से दीउरी 8 मील; वहाँ से चम्पावत 16 मील;

लिए सदावर्त है।

$3\frac{1}{4}$ मील चीड़ के जंगल होकर गरजिया के पुल तक कड़ी उतराई, यहाँ वर्षा के समय बहुत बिछलन रहती है। एक ऊँचे पहाड़ पर से एक सुंदर जलप्रपात चट्टानमय दीवालों पर कई धाराओं में विभक्त होकर गिरता है; यहाँ गोरीगंगा या गौरीगंगा को एक पुल से दाहिनी तरफ पार करना पड़ता है, दुकान, यहाँ से एक मार्ग गौरीगंगा के किनारे-किनारे पर ऊपर की तरफ जोहार को जाता है। पुल से कुछ गज आगे दो-तीन स्थानों पर सड़क पर ऊपर से पत्थर गिरते रहते हैं, ऊपर के पहाड़ के बालूमय होने के कारण सूखे दिनों में ये गिरते हैं।

1 मील मार्ग सीधा है, (यहाँ से प्रधान सड़क होकर दुदी गाँव तक पौन मील तक कड़ी चढ़ाई है)।

6. जौलजीबी[1] (5) (74) [2100 ?] $\frac{3}{4}$मील प्रधान सड़क को बाँईं तरफ छोड़कर गोरी के किनारे-किनारे जौलजीबी तक बढ़ें। काली और गोरी का संगम।

(यहाँ से मायावती आश्रम ऊपर पहाड़ पर दो मील है); लोहाघाट 6 मील, लोहाघाट से छीड़ा 9 मील, गुरना 10 मील, पिठौरागढ़ 8 मील, सातगढ़ 10 मील, सिंगाली $9\frac{1}{2}$ मील और अस्कोट $6\frac{1}{2}$ मील (योग 91 मील) है।

1. यहीं पर लीपूलेख से आई हुई काली गंगा तथा मिलम हिमनदी से आई हुई गौरीगंगा का संगम है। जौल = जोड़ा या दो नदी + जीब = दो नदियों के मध्य जीभ-जैसा लंबा भू-भाग। संगम से थोड़ा ऊपर एक ऊँचे स्थान में आम के एक सघन बगीचे में महादेव जी का एक छोटा-सा मंदिर है। यहाँ से संगम का सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है। मंदिर के नीचे गौरी के किनारे पर गाँव बसा हुआ है, जिसके सभी निवासी प्रायः मुसलमान हैं। गाँव के पास ही भोटियों के शीतकाल के डेरे हैं। वृश्चिक संक्रांति पर (15, 16 नवंबर) जौलजीबी में एक बड़ा मेला लगता है, जो तीन-चार दिनों तक रहता है। इस मेले में तिब्बती माल—ऊन, ऊनी कंबल, चमड़े, नमक आदि को लेकर जोहार और दारमा परगने के भोटिए व्यापारी बहुत संख्या में एकत्रित होते हैं। लगभग चार-पाँच लाख रुपए का व्यापार होता है। नेपाली और देशी लोग भी दस हजार तक एकत्रित होते हैं। यहाँ तिब्बत और भोट के ऊनी थुल्मे, गुदमे, चुटके, पंखियाँ, अन्य प्रकार के कंबल और कालीन, यी (तिब्बत का एक प्रकार का बर्फानी चीता), यजी, गुवा (एक प्रकार की बारहसिंगी), बरड़,बकरी, भेड़, आदि की खाल, टट्टू, खच्चर, भेड़ और बकरी, कस्तूरी, आसपास और नेपाल से घी, मधु, और च्यूरे का घी और गुड़ इन वस्तुओं की विशेषता रहती है। इनके अतिरिक्त अन्य मेलों में आने वाली सभी वस्तुएँ मिलती हैं। अक्टूबर के अंत में गर्ब्यांग का डाकघर बंद होने के बाद छह महीने के लिए यहाँ खुल जाता है। मेले के कुछ दिन पहले से ही, जब नदियों में जल घट जाता है, संगम से कुछ ऊपर—काली और गोरी—दोनों नदियों पर कच्चे पुल लग जाते हैं, जो प्रायः छह महीने तक रहते हैं। यहाँ से लीपूलेख घाटा तक मार्ग प्रायः काली नदी के किनारे ही जाता है, जो नेपाल और ब्रिटिश भारत की सीमा है। यहाँ से लेकर लीपूलेख तक काली फुफकारती हुई, एवं अपनी दाढ़ को बढ़ाकर गंभीर गर्जन करती हुई प्रवाहित होती है, जिससे

$\frac{1}{2}$ मील प्रधान सड़क के किनारे के दुदी गाँव तक चढ़ाई है, यह दारमा के भोटियों के शीतकाल के निवास हैं।

$2\frac{1}{2}$ मील विश्राम के साथ किखोला तक चढ़ाई, सड़क के ऊपर और नीचे गाँव हैं।

1 मील थोड़ा-सा ऊँचा-नीचा मार्ग।

$\frac{3}{4}$ मील तोला तक कठिन उतराई, गाँव सड़क के ऊपर है, ठीक सामने काली के दूसरे पार नेपाल की ओर अति रमणीक दृश्य है।

$\frac{1}{4}$ मील बंड नामक स्थान तक कड़ी उतराई।

$\frac{1}{4}$ मील एक गाड़। $\frac{1}{4}$ मील वेंड्या गाँव तक कड़ी चढ़ाई।

बलुवाकोट ($6\frac{1}{2}$) ($80\frac{1}{2}$) [3000] $\frac{3}{4}$ मील बलुवाकोट तक उतराई, स्कूल, दुकान, गर्म स्थान, दारमा के भोटियों का शीतकाल का निवास, सड़क के ऊपर बलुवाकोट नामक गाँव एक ऊँचे मैदान पर है, इसे बलुआकोट या बल्वाकोट भी कहते हैं, यहाँ से पंगू गाँव तक विषैले सर्प पाए जाते हैं।

1 मील कुचिया, सरकारी पड़ाव, दुकान, यहाँ एक धर्मशाला की अत्यावश्यकता है, जिसके आभाव से यात्रियों को बहुत कष्ट होता है।

1 मील नंतड़ी। $1\frac{1}{4}$ मील छरसम। $\frac{3}{4}$ मील धीमी चढ़ाई।

1 मील छोलियोकी धार तक कड़ी चढ़ाई, ठीक नदी के पार एक बड़ा गाँव है, जहाँ ऊख आदि विशाल सीढ़ीदार खेतियों के दृश्य बहुत मनोमोहक हैं।

कालिका (6) ($86\frac{1}{2}$) 1 मील कालिका गाँव तक कठिन उतराई, कालिका से उतरते समय सामने बहुत दूर तक फैले हुए गाँव के खेत और उतरती हुई टेढ़ी-मेढ़ी काली नदी के दृश्य बहुत ही सुहावने हैं, नदी को पार करें, दुकान, कालिका का गाँव गाड़ की दोनों ओर है।

$\frac{1}{4}$ मील काली की सुंदर धारा।

$\frac{1}{2}$ मील गोठी, दारमा के भोटियों का शीतकाल का निवास।

$\frac{3}{4}$ मील निगल पानी, दारमा के भोटियों का शीतकाल का निवास।

$\frac{1}{2}$ मील फुलतड़ी, नदी को पार करें।

$\frac{1}{4}$ मील गलाती, दारमा के भोटियों का शीतकाल का निवास।

7. धारचूला[1] (4) ($90\frac{1}{2}$) [3000] $1\frac{3}{4}$ मील धारचूला, डा0, डाब0, स्कू0, दुकान,

---

उसको पैदल पार करना असंभव है। जौलजीबी में दारमा के भोटिए लोग शीतकाल में रहते हैं। संगम से एक मील नीचे काली के दाहिने किनारे पर हंसेश्वर नामक स्थान है। वहाँ हंसेश्वर महादेव का मंदिर है।

1. यहीं पर घोड़े का प्रबंध समाप्त हो जाता है। आगे गब्यांग तक कुली का प्रबंध यहाँ से या खेला से करना पड़ता है, जो पं0 उमापति जी और हरिदत्त जी दुकानदार या रायसाहब पं0 प्रेमवल्लभ जी के द्वारा हो सकता है। यहाँ बारहों महीने केले और ऋतु में आम और अमरूद

गर्म स्थान।

तपोवन (2) (92$\frac{1}{2}$) 2 मील तपोवन, लगभग ग्यारह वर्ष पहले यह रामकृष्ण मिशन का एक केंद्र था, जो अब टूट गया है। आजकल यहाँ सरकारी ग्राम-सुधार संघ का एक अस्पताल है, उसके समीप ही एक छोटा-सा शिवालय और धर्मशाला है। यहाँ से दो सौ गज पर काली नदी के किनारे गर्म जल के सोते हैं, जो बाढ़ के दिनों में पानी के भीतर डूब जाते हैं।

$\frac{1}{2}$ मील राँथी या तांथ्रा गाड़, जो दो-तीन धाराओं में बहती है, मार्ग से ऊपर दो मील पर एक पहाड़ के ऊपर राँथी नामक गाँव है।

3 मील कुला गाड़, जो पहाड़ से उछलती-कूदती, पत्थरों पर टकराती हुई उतरती है, इसका दृश्य बड़ा रमणीक है, नदी को पुल से पार करें।

1 मील यहाँ से एक मार्ग जुम्मा गाँव होकर छिप्लाकोट[1] जाता है।

$\frac{1}{4}$ मील येला गाड़ या रील गाड़, जो छिप्लाकोट की पर्वतमाला से निकलती है। यहाँ से रजबाड़ का प्रांत समाप्त हो जाता है, नदी को पुल से पार करना पड़ता है।

$\frac{3}{4}$ मील साँकुरी की दुकान, चाय, साँकुरी का गाँव सड़क से एक मील ऊपर पहाड़ पर है।

$\frac{1}{2}$ मील रौंती गाड़।

8. खेला[2] (8) (100$\frac{1}{2}$) [5500] 2 मील खेला तक कड़ी चढ़ाई, दुकान, दारमा सेवा-संघ की दो छोटे-छोटे कमरेवाली धर्मशाला, यहाँ से चारों तरफ के पहाड़ का दृश्य बहुत ही सुंदर है, गाय का विशुद्ध घी रुपए में एक सेर से सवा सेर तक मिल जाता है, यहाँ से आगे दारमे की सड़क पर लगभग आधे मील पर गाँव में डा0 और स्कू0 है।

मिल जाते हैं, शीतकाल में ब्यांस के भोटिया लोग यहाँ उतरते हैं। यहाँ काली में एक रस्सी का पुल है, जिसे पार करके नेपाल की सीमा में पहुँचते हैं, जहाँ एक नेपाली लेफ्टिनैंट कुछ सिपाहियों के साथ रहते हैं। नेपाल की इस सीमा से घी के सैंकड़ों कनिस्टर धारचूला होकर अल्मोड़े भेजे जाते हैं। बढ़िया घी रुपए में सेर से सवा सेर तक मिल जाता है। यहाँ और खेले में घी, मट्ठा आदि वस्तुओं के रखने लायक लकड़ी के बर्तन मिलते हैं।

1. छिप्लाकोट के पूरे विवरण के लिए देखिए, पृष्ठ 219।
2. यहाँ से एक मार्ग दारमा घाटा और ज्ञानिमा मंडी होकर कैलास जाता है। देखिए श्री कैलास मानसरोवर का दूसरा मार्ग। दारमा के मार्ग में खेला से 9$\frac{1}{2}$ मील की दूरी पर न्यों नामक गाँव में खर उड्यार या मृत्यु-गुफा है। पूरे विवरण के लिए देखिए पृष्ठ 219। खेला या धारचूला से गर्ब्यांग तक के कुली या डाँडी का प्रबंध दुकानदार ठाकुर प्रतापसिंह जी मानसिंह के द्वारा हो सकता है। यह आरोग्य दायक स्थान होने के कारण एक-दो दिन ठहरकर विश्राम करने योग्य है। यहाँ गाय का विशुद्ध घी और भंगेरी नामक एक प्रकार का बीज मिलता

[3600] $1\frac{1}{2}$ मील तोवाघाट तक कड़ी उतराई, उछलती-कूदती, उफान मारती और गरजती हुई धौलीगंगा को पुल से पार करें। धौलीगंगा दारमा घाटा से आकर पुल से पौन मील नीचे काली गंगा से मिलती है। इसका गंभीर दृश्य दर्शनीय है, यहाँ से भोटियों की चौदाँस की पट्टी आरंभ होती है।

[600] 3 मील ठानीधार तक बहुत कड़ी चढ़ाई है। यहाँ से खेले का विशाल सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है, धार या घाटे पर पहले-पहल पत्थरों के ढेर और झंडे देखने में आते हैं।

पंगू[1] (6) ($106\frac{1}{2}$) [6900] $1\frac{1}{2}$ मील साधारण चढ़ाई, इस मार्ग में यह भोटियों का पहला गाँव, स्कूल, अखरोट के पेड़।

(6698?) $1\frac{1}{4}$ मील जुंगती गाड़ तक उतराई ।

9. सोसा[2] (3) ($109\frac{1}{2}$) [8400?] $1\frac{3}{4}$ मील सोसा तक कड़ी चढ़ाई, स्कू0, दारमा सेवा-संघ की धर्मशाला, यहाँ आलू अधिक मिलते हैं, ठंढा स्थान है।

तिथलाकोट ($1\frac{1}{2}$) (111) [9068] $1\frac{1}{2}$ मील तिथलाकोट तक चढ़ाई, धर्म-द्वार नामक एक दरवाजा रास्ते की बाँईं ओर थोड़ी ऊँचाई पर है, जिसमें एक बड़ा घंटा लगा हुआ है, पत्थरों का ढेर और झंडे, देवी का स्थान, यह पहले सरकारी पड़ाव था। यहाँ कोई गाँव और दुकान नहीं है, केवल सोसा और तिथलाकोट के बीच एक छोटी-सी धर्मशाला है।

सिरदंग ($\frac{3}{4}$) ($111\frac{3}{4}$) $\frac{3}{4}$ मील सिरदंग तक कठिन उतराई, दारमा सेवा-संघ की धर्मशाला, सड़क के नीचे गाँव, स्कू0, ठहरने के लिए अच्छे स्थान हैं।

सिरखा ($\frac{1}{2}$) ($112\frac{1}{4}$) $\frac{1}{2}$ मील कठिन उतराई, गाँव सड़क से एक फलाँग नीचे है। डा0, स्कू0, धर्मशाला, अखरोट और सेब के बगीचे, सड़क से एक फलाँग ऊपर ईसाई मिशन के बगीचे हैं, जहाँ ऋतु में आड़ू, सेब और नासपाती मिलते हैं, (सिरदंग से कुछ नीचे रुंग नामक एक गाँव है, जहाँ कई प्रकार की साग-सब्जियाँ मिलती हैं।)

$1\frac{3}{4}$ मील समरे या सुमरिया तक उतार, यहाँ पर कभी-कभी दुकान लगती है।

[9840] $2\frac{3}{4}$ मील रुंगलिंग या सुमरिया धार तक सघन जंगल से होकर बहुत कड़ी चढ़ाई, पत्थरों का ढेर और झंडे हैं।

है। इसके दाने सरसों के दाने के बराबर होते हैं; खटाई में डालने से वस्तु स्वादिष्ट हो जाती है। यह यात्रा में बहुत काम देता है। नीचे आते वक्त यह साथ लाने की वस्तु होती है। गणाम में मिलने वाले भाँग के बीज (भंगेरा) से और इससे कोई संबंध नहीं है।

1. यहाँ से आगे सभी गाँवों में खाने-पीने के सामान मिल जाते हैं, क्योंकि गाँव के निवासी व्यापारी हैं तथा प्रत्येक गाँव में कोई-न-कोई धर्मशालाएँ अवश्य हैं।

2. यहाँ से मार्ग छोड़कर तीन मील की दूरी पर एक सुंदर पहाड़ के ऊपर श्री 108 नारायण स्वामी जी महाराज का बनाया हुआ अति मनोरम एवं दर्शनीय श्री नारायण आश्रम है।

3$\frac{1}{4}$ मील सिंखोला गाड़ तक घने जंगल होकर कठिन उतराई, (आधे मार्ग में एक सोता है,) नदी की दो शाखाओं को पुल से पार करें।

[7000] 1$\frac{1}{2}$ मील गल्ला गाँव तक मंद चढ़ाई, गाँव छोटा है, जो ठहरने के उपयुक्त नहीं है, यहाँ पर अखरोट और बाँज के पेड़ हैं।

10. जिपती (11) (123$\frac{1}{4}$) [8000?] 1$\frac{3}{4}$ मील जिपती तक मंद चढ़ाई, एक छोटी धर्मशाला, खेला से जिस काली नदी का साथ छोड़ दिया था, वह यहाँ आने पर मिलती है। यहाँ काली नदी सड़क से कई सौ फीट नीचे है।

1 मील बिंजू कुटी या बिंदाकोट तक उतार, केवल ठहरने के स्थान, धारा, यहीं पर चौदाँस की पट्टी समाप्त हो जाती है तथा आगे से ब्याँस की पट्टी आरंभ हो जाती है, यहाँ से निजंग तक निरपानी कहलाता है, यहाँ से गर्ब्यांग तक का मार्ग सारी यात्रा में सब से कष्टप्रद है।

2$\frac{1}{2}$ मील जुमली उड्यार तक बहुत कड़ा उतार पड़ता है। बीच-बीच में खड़ी सीढ़ियों से होकर उतरना होता है। एक गुफा है, भोटियों का पड़ाव है, पास ही पहाड़ के ऊपर से एक गाड़ मार्ग पर गिरता है। इस स्थान को नजंग तल्ला और लोकरफू भी कहते हैं, काली समीप में ही है, (काली के पुल को पार करके नदी के बाँईं तट पर 1932 से पहले नेपाल में एक मील तक मार्ग जाता था, जो बंद हो गया, अब काली के दाहिने किनारे पर मार्ग चालू है।)

$\frac{1}{2}$ मील काली के पार नेपाल की तरफ तंपाकू या थिंग गाड़ का एक जल-प्रपात 50 फीट की ऊँचाई से नीचे काली गंगा के बाँएँ तट पर गिरता है।

$\frac{3}{8}$ मील सीढ़ीदार बहुत कड़ी चढ़ाई। $\frac{3}{8}$ मील सीढ़ीदार बहुत कड़ी उतराई। $\frac{1}{2}$ मील मार्ग सीधा है। $\frac{3}{8}$ मील चढ़ाई कड़ी है।

नजंग जलप्रपात (5$\frac{3}{4}$) (129) $\frac{1}{8}$ मील नजंग गाड़ के जलप्रपात तक कड़ी उतराई, जलप्रपात की ऊँचाई लगभग 70 फीट है, दृश्य बहुत सुंदर है, प्रपात के नीचे भी नजंग गाड़ उछलती-कूदती उतरती है, गाड़ के ऊपर का पुल पार करें।

[8000] $\frac{3}{4}$ मील बोला घाटा[1] तक कड़ी चढ़ाई, यहाँ पर काली गंगा लगभग 2000 फीट नीचे चट्टानमय कगारों की दीवालों के मध्य में एक पतले साँप की भाँति बहती है। $\frac{3}{4}$ मील कड़ी उतराई, लुङतीयर (मार्ग से 100 गज नीचे कुनकुना पानी का सोत)। $\frac{1}{2}$ मील कड़ी उतराई। $\frac{1}{2}$ मील मालपा के भोटियों का पड़ाव, मालपा नदी को पुल से पार करें।

---

1. यहाँ से निजंग जलप्रपात के ऊपर होते हुए जिपती को छोड़कर उस पहाड़ के ऊपर से निरपनिया का पुराना मार्ग गल्ला गाँव तक जाता था, मार्ग में पानी के अभाव के कारण उसका निरपनिया नाम पड़ा है। अब यह मार्ग बंद हो गया है और जो नया मार्ग जिपती होकर चालू है, उसमें स्थान-स्थान पर पर्याप्त पानी मिलता है।

11. मालपा ($2\frac{1}{2}$) ($131\frac{1}{2}$) [7200] एक ऊँचे टीले पर मालपा, माल्पा या मालिपा की दरमा सेवा-संघ की धर्मशाला तथा हलकारे का छप्पर है, यहाँ कोई गाँव या दुकान नहीं है, इस पड़ाव के लिए भोजन की सामग्री जिपती से ले जानी चाहिए। ठंढा स्थान है। मालपा से गर्ब्यांग तक का मार्ग खतरनाक है, वर्षा होते समय कहीं-कहीं पहाड़ के टूटने से सड़क पर पत्थर गिरते रहते हैं।

$2\frac{1}{2}$ मील पेलशीती तक बीच-बीच में विश्राम के साथ कड़ी चढ़ाई, भोटियों का पड़ाव, यहाँ पहुँचने के कुछ पहले दो ऊँचे जलप्रपात के फुहारे पड़ते हैं, जो ठीक मार्ग के ऊपर वर्षा के समान जोरों से गिरते रहते हैं। [8000] 2 मील लामारी तक चढ़ाई, बुदी के खेत, कोई गाँव नहीं। $2\frac{1}{2}$ मील कोथला[1] तक कड़ी चढ़ाई, बुदी के खेत।

$\frac{3}{4}$ मील पाला या बुदी गाड़ तक कड़ी उतराई, पुल से नदी पार करें।

बुदी ($8\frac{3}{4}$) ($840\frac{1}{4}$) [8800] 1 मील बुदी गाँव तक मंद चढ़ाई, मार्ग से एक फलांग की दूरी पर गाँव है, स्कू0, धर्मशाला, गाँव के ठीक सामने नेपाल की सीमा पर नन्जुंग की बर्फीली चोटी और ढालुओं का सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है, दो फसलें होती हैं; इस गाँव वाले तथा ऊपर के लोग शीतकाल में नीचे धारचूले-जैसे गर्म स्थानों में उतर जाते हैं, गाँव की रक्षा के लिए दो-एक व्यक्ति रहते हैं।

[10500] $2\frac{1}{2}$ मील बहुत कड़ी चढ़ाई है, चढ़ाई के अंत में दो पत्थरों के बीच मार्ग संकीर्ण हो जाता है, कुछ आगे चलकर दो–तीन टूटे-फूटे घर पड़ते हैं, जहाँ कई वर्ष पहले तिब्बती लोग शीतकाल में नमक लाकर अनाज से बदलते थे।

$\frac{3}{8}$ मील खेत, मैदान में भोटियों के पड़ाव हैं, जो तीन फलांग तक फैले हुए हैं, यहाँ के मैदानों में यत्र-तत्र शीत प्रदेशों में होने वाले कई प्रकार के जंगली फूल खिले रहते हैं, जो देखने में अति सुंदर लगते हैं।

$\frac{1}{2}$ मील चीड़ के जंगलों में से होकर कठिन और बिछलन वाली उतराई, एक छोटी गाड़। $\frac{1}{8}$ मील छोङपू छू, एक और गाड़।

$\frac{3}{4}$ मील गाँव के घंटे तक मंद चढ़ाई, मार्ग में भिन्न-भिन्न रंग और नाना प्रकार के फूलों से सुसज्जित घास के मैदान हैं। ये फूल-भरे मैदान मनोमुग्धकारी एवं नेत्ररंजक हैं।

12. गर्ब्यांग[2] (5) ($145\frac{1}{4}$) [10320] $\frac{3}{4}$ मील गर्ब्यांग तक वर्षा के समय बिछलनदार

---

1. चढ़ाई अंत होने से $\frac{1}{4}$ मील पहले एक छोटी-सी धर्मशाला है।

2. कुलियों का प्रबंध यहाँ से समाप्त हो जाता है। आगे घोड़े या झब्बू आदि के प्रबंध के लिए यहाँ से गाइड, पटवारी, पोस्ट-मास्टर, या स्कूल के पंडित से सहायता मिलती है। यहाँ कंबल और तंबू किराए पर मिलते हैं। खाने–पीने के सभी सामान भी यहाँ मिल जाते हैं। यहाँ गेहूँ,

और पंकिल मार्ग पड़ता है, इसमें भारत का अंतिम गाँव और डाकघर है। गाँव से $\frac{1}{4}$ मील बाहर डाब0, स्कू0, गाँव के बीच में एक दारमा सेवा-संघ की धर्मशाला है, ब्यांस के भोटियों का सबसे बड़ा गाँव है, इसमें लगभग 200 घर हैं।

$\frac{3}{4}$ मील काली के किनारे तक बहुत कड़ी और बिछलनदार उतराई[1] है।

$\frac{1}{2}$ मील यहाँ पर ओवलटीन के रंग के समान जल वाली काली और दूध के रंग के जल वाली टिकर नदी का संगम[2], काली के ऊपर सीता पुल को पारकर बाँई तरफ जायें, यह नेपाल के राज्य में हैं, पुलिस की चौकी है।[3]

$\frac{1}{2}$ मील काली के किनारे-किनारे।

$1\frac{1}{4}$ मील बीच-बीच में विश्राम करते हुए चढ़ाई, यहाँ झकती गाड़ को पार करें। $\frac{1}{4}$ मील कड़ी चढ़ाई, यहाँ से कौवा-तल्ला के खेत, डेरे और मकान आरंभ होते हैं।

$1\frac{3}{4}$ मील काली और कुटी नदी का संगम, जो मार्ग से दो-तीन फलांग नीचे है। यद्यपि कुटी दुगुनी या तिगुनी बड़ी है फिर भी काली ही प्रधान नदी मानी जाती है।

जौ, फाफर, आलू, गोभी, राई और मूली आदि खाद्य वस्तुएँ उत्पन्न की जाती हैं। यहाँ खेती-बारी पर्याप्त रूप में होती है। स्थान ठंढा है। परंतु जल की बहुत कमी है। पीने का जल सोतों से मिलता है। इस गाँव से लगभग एक मील काली नदी है। गर्ब्यांग के लोग गर्ब्याल, बुदी के लोग बुद्याल, कुटी के लोग कुट्याल और छंगरू के लोग छंग्यील कहलाते हैं।

1. उतराई के मार्ग में बाँईं ओर खड़ी दीवालों में स्तरों के तह-पर-तह बिछे हुए देखने में आते हैं। इन तहों की ऊँचाई कहीं-कहीं 200 फीट तक है। इन तहों में कई प्रकार की मिट्टी और रेत स्पष्ट दिखाई पड़ती है। भूगर्भशास्त्रज्ञ भूगर्भ के अंतस्तल के इन स्तरों से इन स्थानों की बनावट, समय और कई अन्य विषयों का पता लगा सकते हैं।

2. यहाँ से एक मार्ग कुटी को जाता है, जो $18\frac{1}{2}$ मील की दूरी पर है। यहाँ समीप के गाँवों में शालग्राम या सामुद्रिक प्रस्तरावशेष प्रायः मिल जाते हैं, जिनमें कई 'आयर्न पाइराइट' या स्वर्णमाक्षिक के भी होते हैं। कुटी से 7 मील आगे जोलिङ्कोङ नामक स्थान पर तिब्वतियों की मंडी लगती है। मंडी से 13 मील आगे लंपियाधुरा नामक घाट है। कुटी और धुरा के बीच में छोटा कैलास और मानसरोवर पड़ता है, जिसका दृश्य अति रमणीक है।

3. पुल से पौन मील की दूरी पर पहाड़ के नीचे एक समतल भूमि पर छंग्रू नामक एक गाँव 9990 फीट की ऊँचाई पर है। गाँव के ऊपर के पहाड़ में छंग्रू राखू नामक एक बड़ी भारी गुफा है। इसमें कई नरकंकाल, पेटियाँ और कई पुराने कालीन आदि पड़े हैं। कई वर्ष पहले जब गाँव में चेचक की बीमारी फैली, तो गाँव के लोग उस गुफा में जाकर छिपे थे और वहाँ पर बीमारी के विशेष रूप से फैलने के कारण सभी मर गए। इस संबंध में वहाँ के लोग कई विचित्र कथाएँ सुनाते हैं। गुफा का मार्ग बहुत दुर्गम और संकीर्ण है। छंग्रू गाँव और वहाँ से बारह मील ऊपर के टिंकर नामक गाँव भोटियों की बस्ती है।

यहाँ से कौवा-मल्ला के खेत, मकान और पड़ाव के छप्पर आरंभ होते हैं। खेती के दिनों में गुंजी गाँव के लोगों का यहाँ डेरा रहता है। 1¼ मील कौवा के खेत।

½ मील यहाँ काली के ऊपर शंगडूमा के पुल को पारकर दाहिने किनारे पर उतरें, अंग्रेजी राज। 1¼ मील लारेला के डेरे। 1¼ मील सिङडिङुप गाड़। 2 मील आगे काली को पुल से पार करें।

13. कालापानी[1] (11) (156¼) [12000] कुछ गज आगे चलकर पहाड़ के मूल में बड़े-बड़े पत्थरों के बीच से सोते निकलते हैं। यह जल एक छोटे-से नाले के रूप में कुछ गज आगे चलकर काली में मिल जाता है। सोते कालापानी और नाला काली नदी के नाम से पुकारा जाता है, इसलिए नेपाल की सीमा यहाँ समाप्त होती है। पास ही गर्ब्यालों के दो मकान हैं।

¾ मील पंखा गाड़ को पुल से पार करें।[2]

½ मील गरिफू और यिरखा गाड़ (काली) का संगम, कुछ आगे चलकर काली को पुल से पार करें, यहाँ भी थोड़े खेत हैं, यहाँ से 2 फर्लांग की दूरी पर यिरखा गाड़ के बाँएं किनारे पर दो पुराने मकान हैं।

1 मील किरमोकोङ, दो धर्मशालाएँ, धारा, कभी-कभी दुकान, यहाँ झब्बू के चौकीदार रहते हैं, आस-पास के पहाड़ के दृश्य बहुत सुंदर हैं।

1 मील ङुर, पड़ाव की दीवाल[3], यहीं से ङुर गाड़ को पार करें।

⅛ मील तल्ला-तरा, दो धर्मशालाएँ।

---

1. ये सोते काली नदी का उद्गम-स्थान माना जाता है, यद्यपि प्रधान नदी लीपूलेख घाटे से आती है। यह काली के नाम से कालापानी कहा जाता है, जो अपभ्रंश होकर कालापानी हो गया है। कुछ लोगों का मत है कि सोतों का पानी जिन पत्थरों पर बहता है, वह काले हैं, इसलिए उसका नाम कालापानी पड़ गया। सोतों के दोनों ओर पड़ाव हैं। यहाँ से एक मील तक गर्ब्यालों के खेत पड़ते हैं। चलते समय कुछ खट्टे पदार्थ यहाँ से जेब में रख लें, ताकि घाटे पर चढ़ते समय वह काम आए। कालापानी से सबेरे 4 या 5 बजे उठकर चल दें और धूप कड़ी होने के पहले ही लीपूलेख को पार कर लें, जिससे चढ़ते समय विशेष कष्ट न हो। यहाँ से और विशेषकर घाटे पर चढ़ते समय मुँह, नाक और होठों पर वेसलिन लगा लेनी चाहिए, जिससे उन स्थानों पर ठंढक और वायु का प्रभाव न पड़ सके।
2. इस स्थान को भोटिया लोग पंखा कहते हैं, परंतु कालापानी के सोतों से लेकर यहाँ तक के सभी स्थान कालापानी के नाम से ही व्यवहृत हैं। यहाँ पर गर्ब्यालों के चार-पाँच मकान हैं, जिनमें प्रायः यात्री ठहरा करते हैं। पंखा में पहले–पहल मणि-पत्थरों के ढेर दिखाई पड़ते हैं।
3. जहाँ पर पानी और घास का पास होता है, भोटिया लोग वहीं पर पड़ाव डालते हैं। उन स्थानों में वायु के झोंकों से बचने के लिए पत्थरों की छोटी-छोटी 3 या 4 फीट की ऊँचाई की अर्धचंद्र या गोलाकार दीवालें बनाते हैं और दीवालों के पास सामान को रखकर वहाँ रात में विश्राम करते हैं। मैं इन स्थानों को 'डेरे के स्थान' और दीवालों को 'पड़ाव की दीवालें' कहूँगा।

$\frac{3}{8}$ मील मल्ला-तरा तक चढ़ाई, दो धर्मशालाएँ।

ङाविदङ (4$\frac{1}{4}$) (160$\frac{1}{2}$) $\frac{1}{2}$ मील ङाविदङ तक चढ़ाई, दो धर्मशालाएँ, आग जलाने के लिए पेमा की झाड़ी, एक बड़ी उपत्यका से बहती हुई लिलिङ्ती नामक नदी काली से बाँएँ किनारे पर मिलती है, घोड़े के लिए अच्छा चरागाह, यहाँ से लीपूलेख घाटे तक कड़ी चढ़ाई पड़ती है। $\frac{3}{4}$ मील चील तक चढ़ाई, डेरे के स्थान।

[15000] 1 मील [14800 ?] शंगचम तक चढ़ाई, गीली जगह, बहुत ठंढा स्थान, मार्ग की अंतिम धर्मशाला, लकड़ी का अभाव, जहाँ तक हो सके यहाँ पर पड़ाव न डालें।

1$\frac{1}{4}$ मील छिनकू तक चढ़ाई।

लीपूलेख घाटा[1] (5) (165$\frac{1}{2}$) [16750] 2 मील लीपूलेख घाटा तक कड़ी चढ़ाई, इसे तिब्बती भाषा में फोबिया ला कहते हैं, झंडे और पत्थरों के ढेर।

2 मील नामशन तक तिब्बत की तरफ बहुत कड़ी उतराई, डेरे।

1$\frac{3}{4}$ मील कोंबाछुमी, लीपूलेख से आई हुई नदी तक कड़ी उतराई, नदी को दाहिनी ओर को पार करें।

2 मील पाला-कोङ, चार कमरे वाली एक धर्मशाला।

पाला[2] (6) (171$\frac{1}{2}$) [14000] $\frac{1}{4}$ मील पाला तक उतराई, चार-चार कमरों वाली दो धर्मशालाएँ, विशाल डेरे, थक गए हों तो यहीं ठहरकर दूसरे दिन सबेरे तकलाकोट जा सकते हैं।

$\frac{1}{4}$ मील यहाँ लीपूलेख से आई हुई नदी और टिंकर लीपू से आई हुई जुङ्जुङ नदी का संगम है, इसे भोटिया लोग तिसुम (तीन पानी) भी कहते हैं, जुङ्जुङ को पुल से पार करें, यहाँ घोड़ों को पानी में से जाना पड़ता है, कभी-कभी दोपहर के बाद नदी का जल बढ़कर अलंघ्य हो जाता है, जिससे यात्रियों को इसी पार रहकर दूसरे दिन सबेरे पार करना पड़ता है।

1$\frac{1}{4}$ मील नदी के किनारे-किनारे चलें, इस नदी से पानी को छोटी-छोटी नहरों में तकलाकोट के कई गाँवों में खेती के लिए ले जाते हैं।

---

1. जून के महीने में लीपूलेख घाटा पहुँचने में दो–तीन फर्लांग तक बर्फ पर जाना पड़ता है, पर जौलाई के महीने में बहुत कम बर्फ रहती है। यहाँ से भारत की सीमा का अंत होकर तिब्बत की सीमा प्रारंभ हो जाती है। यदि तीव्र वायु न हो तो घाटा पर थोड़ा विश्राम करके चारों ओर के दृश्यों का आनंद लेते हुए जलपान करके तिब्बत की ओर बढ़ें। घाटा से पाला तक लगातार उतराई पड़ती है, जिसमें आधा भाग बहुत कठिन है। यहाँ से मांधाता की बर्फीली चोटियाँ दिखाई पड़ती हैं।
2. इस ग्रंथ में तिब्बत में दी हुई मीलों की दूरी में किंचित संशोधन की आवश्यकता है।

$1\frac{3}{4}$ मील टाशीगोंग का गाँव, जिसमें एक ही घर है, यहाँ से मार्ग जौ और मटर के हरे-भरे लहलहाते हुए खेतों से होकर जाता है। छोटी-छोटी नहरों को काट-काटकर उनसे खेतों की सिंचाई होती है, यहाँ का दृश्य रमणीक है।

$1\frac{1}{2}$ मील मगरुम, बड़ा गाँव, देश की भाँति यहाँ भी मैदान में नहरें और खेत हैं, गाँव के नीचे नदी के किनारे कई पनचक्कियाँ हैं, जिनमें मटर और जौ पीसे जाते हैं, नदी को पुल से पार करके आगे बढ़ें।

14. तकलाकोट[1] ($5\frac{1}{4}$) ($176\frac{3}{4}$) [13100] $\frac{1}{2}$ मील तकलाकोट मंडी ।

$\frac{1}{8}$ मील चढ़ाई। $\frac{3}{8}$ मील गुकुङ तक कठिन उतराई, यहाँ के घर गुफाओं में बने हुए हैं, गोम्पा, पुल से करनाली या मप्छू को दाहिनी ओर पार करें। नेपालियों की मंडी है, जोङपोन का व्यापारी मकान ।

$1\frac{1}{2}$ छेमो छोरतेन,[2] यहाँ से गरु गाँव तक जौ और मटर की खेती।

तोयो (3) ($177\frac{3}{4}$) 1 मील तोयो, एक बड़ा गाँव, यहाँ काश्मीर के जनरल जोरावर सिंह की समाधि है। दे0 पृष्ठ 165।

$\frac{1}{2}$ मील गरु छू को पुल से पार करें। $\frac{1}{4}$ मील गरु गाँव तक चढ़ाई।

$1\frac{1}{2}$ मील हरा ला तक मंद और कड़ी चढ़ाई, पत्थरों का एक ढेर, जिसे तिब्बती भाषा में लप्चे कहते हैं, यहाँ से सिंबिलिङ गोम्पा दिखाई पड़ता है। $\frac{1}{2}$ मील चढ़ाई।

$\frac{3}{4}$ मील खिरोक नामक एक सुंदर छू तक उताई, जो नीचे ली छू नाम से पुकारा जाता है, डेरे, नदी को पार करें।

2 मील शिकठा तक मंद चढ़ाई, एक बड़ा लप्चे। $1\frac{3}{4}$ मील अधित्यका।

रिंगुंग छू ($8\frac{1}{2}$) ($188\frac{1}{4}$) [14000] $\frac{1}{4}$ मील रिंगुंग छू तक कठिन उतराई, यह नदी चातुर्मास में बड़े वेग से बहती है। दो फीट से अधिक जल रहता है और नदी को पैदल पार करना पड़ता है। डेरे, पड़ाव की दीवाल, मणि-दीवाल, रिंगुंग गाँव मार्ग से आधे मील नीचे गुफाओं में बसा हुआ है।

$\frac{1}{8}$ मील रिंगुंग नदी से रिंगुंग गाँव तक जाने वाली नहर को यहाँ पार करें। $\frac{1}{8}$ मील रिंगुंग छू की एक शाखा पार करें, जो परबू छू में मिलती है। $2\frac{1}{4}$ मील लाजेकेप,

---

1. तकलाकोट की मंडी एक पहाड़ के नीचे की संकीर्ण अधित्यका पर है। पहाड़ नदी से लगभग 300 फीट ऊँचा है, जिसके ऊपर सिंबिलिङ गोम्पा और जोङपोन का किला है। मंडी में पाँच-छह सौ तंबू या डेरे लगते हैं, जो ब्याँस, चौदाँस और दारमा के भोटियों के रहते हैं। मंडी से सब प्रकार के सामान मिलते हैं। यहाँ ईंधन का बहुत अभाव है। कैलास जाने और लौटकर गर्ब्यांग तक पहुँचने के लिए घोड़े आदि का प्रवंध यहीं पर करें। आगे के लिए भोजन का सामान भी यहीं से पूरा करें। आवश्यकता पड़ने पर मोटे तिब्बती कंबल यहाँ खरीद सकते हैं। बंदूक और पथप्रदर्शक यहीं पर मिलते हैं। यहाँ से खोचारनाथ 12 मील पर है। कैलास जाते या लौटते समय यहाँ जा सकते हैं। देखिए तालिका 4।
2. यहाँ मार्ग की दाहिनी ओर बड़े-बड़े दो छोरतेन हैं, जो जोरावर सिंह के सूबेदारों के कहे जाते हैं।

कुछ चढ़ाई और उतराई[1], डेरे।

15 बलडक[2] (4½) (192¾) [15000] 2 मील बलडक छू, नदी को दाहिनी ओर पैदल पार करें, बड़े डेरे, पड़ाव की कई दीवालें।

1½ मील मंद चढ़ाई, 50 गज के भीतर तीन लप्चे, यदि आकाश विमल हो, तो यहाँ से श्री कैलास-शिखर के अग्रभाग का प्रथम दर्शन होता है।

1¼ मील लप्चे, यहाँ से कैलास का अग्रभाग फिर दिखाई पड़ता है।

¼ मील से गङ, डेरे, दलदल भूमि के बीच में पड़ाव की दीवाल।

गुरलाफुक् या गोरी उड्यार (4½) (197¼) 1½ मील गुरला छू, यह कभी-कभी पानी के बढ़ जाने से अलंघ्य हो जाता है, नदी को पार करें, गुरलाफुक्, जिसे भोटिया लोग गोरी उड्यार कहते हैं, डेरे। पड़ाव की दीवालें और गुफाएँ हैं, कुछ लोगों की धारणा है कि इन्हीं गुफाओं में गणेश का जन्म हुआ था। यहाँ से गुरला घाटा तक तीक्ष्ण पत्थरों से होकर कठिन चढ़ाई पड़ती है।

3½ मील कड़ी चढ़ाई, एक बड़ा लप्चे। ⅛ मील दूसरा बड़ा लप्चे।

⅜ मील छङ छू तक उतार है, जो मांधाता के शिखरों से निकलकर राक्षसताल में गिरता है।

गुरला ला[3] (4) (201¼) [16200] लगभग 100 गज की कड़ी चढ़ाई चढ़कर गुरला ला या गुरला घाटा, एक बड़ा लप्चे, झंडे और तोरन (जिन्हें तिब्बती भाषा में

---

1. यहाँ से परबू या बुरफू का गाँव लगभग एक मील है, वहाँ एक ही घर है और थोड़ा-सा खेत है। गाँव के पास ही नदी के बाँएँ तट पर एक अधित्यका के किनारे पुराने दुर्ग का खंडहर है। वहाँ पर अब भी बाईस फीट की ऊँचाई की मोटी-मोटी दीवालें खड़ी हैं। इस दुर्ग को सन् 1841 में जोरावर सिंह ने तोड़ डाला। लाजेकेप का जल परबू और दुङमर होकर करनाली में गिरता है। परबू से दुङमर एक मील दूरी पर है। दुङमर में प्रायः सभी घर गुफाओं में निर्मित हैं, वहाँ पर्याप्त खेत हैं।

2. बलडक से एक मार्ग राक्षसताल होकर सीधा च्यू गोम्पा या परखा को जाता है। यह मार्ग वर्णित मार्ग से केवल 2 मील कम तो है, पर आगे वर्णित मार्ग से मानसरोवर के सारे पश्चिमीय किनारे की यात्रा का पूरा आनंद प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए यात्रियों को चाहिए कि तकलाकोट में ही घोड़े वालों से मानसरोवर के किनारे होकर जाने वाले मार्ग से ही जाने की व्यवस्था बाँध लें। बलडक से करदुङ गाँव लगभग 3-4 मील की दूरी पर है। परखा का तसम शीतकाल में यहाँ रहता है। पहाड़ की चोटी पर एक मठ है, जो मशङ गोम्पा के अंतर्गत है।

3. यहाँ से श्री कैलास और पुनीत मानसरोवर तथा राक्षसताल का विशाल एवं मनोरम दृश्य दिखाई पड़ता है। दाहिनी ओर मांधाता की गगनचुंबी चोटियाँ हैं और पिछली ओर भारत की सीमा की स्वच्छ हिमाच्छादित पर्वतमालाएँ हैं। देखिए पृष्ठ 228। गुरला ला से एक मार्ग ईशान कोण से ठुगोल्हो गोम्पा जाता है, जो मानसरोवर का आठवाँ मठ है और यहाँ से 9¾ मील दूर है।

तर्चोक कहते हैं) और मंडल (एक के ऊपर एक रखे हुए दस-पंद्रह पत्थरों का ढेर)।

$\frac{1}{4}$ मील उतराई, बड़ा लप्चा।

$\frac{1}{2}$ मील लङ छू तक उतराई, लङ छू मांधाता से निकलकर राक्षसताल में गिरती है, पड़ाव की दीवालें।

$\frac{3}{4}$ मील उतराई, मंडल, पास ही एक लामा का शपजे या पादचिह्न है।

$2\frac{1}{2}$ मील थंपारा के डेरे तक कड़ी उतराई।

16. **मानसरोवर** (9) ($210\frac{1}{4}$) [14950] 5 मील मानसरोवर के नैऋत्य कोण तक तीन मील उतराई और दो मील मंद उतार, शुशुप छो के वायव्य कोण में डेरे, इस तालाब में हंस और अन्य जल–पक्षी अधिकांश में पाए जाते हैं।

गोछुल गोम्पा[1] (4) ($214\frac{1}{4}$) [15100] 4 मील मानसरोवर के पश्चिमी किनारे-किनारे गोछुल या गोसुल गोम्पा तक।

$1\frac{1}{4}$ मील गोछुल-चङमा, डेरे। $\frac{3}{4}$ मील सरोवर के किनारे-किनारे छेरिङ-मदङ तक, डेरे, मणि-दीवाल। $\frac{1}{2}$ मील यहाँ से मानसरोवर को छोड़कर कुछ ऊपर जायँ।

$\frac{1}{4}$ छेती छो[2], बाँईं ओर थोड़ी ही दूर पर छेती छो है और दाहिनी ओर सरोवर के

---

1. सरोवर के तल से लगभग 150 फीट की ऊँचाई पर गोछुल गोम्पा, पक्षी के लटकते हुए घोंसले के समान, एक पहाड़ पर स्थित है। यह कैलास का पहला मठ है। गोम्पा के शिखर से सरोवर का विशाल सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है। ऊपर बैठकर घंटों ध्यान में व्यतीत किया जा सकता है। यह मानसरोवर का सबसे अधिक उष्ण स्थान है। पर कैलास-शिखर के दर्शन के लिए गोम्पा से 200 गज की कड़ी चढ़ाई तय करनी पड़ती है या मानसरोवर के किनारे-किनारे तीन-चार फर्लांग उत्तर की ओर जाना पड़ता है। गोम्पा के निकट और मानसरोवर के पास कई छोटी-बड़ी गुफाएँ हैं। गोम्पा से $2\frac{1}{2}$ मील ऊपर पहाड़ पर चढ़कर पश्चिम में टापुओं के सहित राक्षसताल, पूर्व में मानसरोवर, दक्षिण में मांधाता का महान और अपूर्व सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है।

2. मानसरोवर से आधे मील पश्चिम में है, जिमसें कई टापू हैं। तालाब और टापुओं में सोहागा और शोरा होता है। यह तालाब लगभग 1 मील लंबा और $\frac{1}{2}$ मील चौड़ा है। देखिए पृष्ठ 106। बलडक से राक्षसताल होकर आने वाला मार्ग यहाँ पर मिलता है, जिसका विवरण इस प्रकार है—बलडक से गुरला छू $3\frac{3}{4}$ मील, गुरला छू पार करके मैदान में 1 मील, थल्लातोङ्ला तक दो–तीन विराम के साथ कड़ी और बहुत कड़ी चढ़ाई $5\frac{1}{2}$ मील, रेजङ छू तक उतार $1\frac{1}{4}$ मील, लंका डोङखङ (एक धर्मशाला की टूटी हुई दीवाल) $\frac{1}{2}$ मील, (योग 12 मील, पहले दिन का मार्ग), राक्षसताल के किनारे-किनारे 2 मील, राक्षसताल को छोड़कर बहुत कड़ी चढ़ाई $1\frac{1}{2}$ मील, तरको ला 2 मील, वहाँ से छेती छो तक मंद उतराई 4 मील, (योग $9\frac{1}{2}$ मील)। बलडक से राक्षसताल होकर यहाँ तक $21\frac{1}{2}$ मील है और मानसरोवर होते हुए $24\frac{1}{4}$ मील है। अर्थात् दोनों मार्गों में लगभग 3 मील का अंतर पड़ता है।

किनारे पर लगभग एक मील लंबा, संकीर्ण एवं थोड़ी गहराई वाला अर्धचंद्राकार तालाब है।

$1\frac{1}{4}$ मील छेती छो और अर्धचंद्राकार तालाब के बीच में।

$\frac{1}{2}$ मील मंद चढ़ाई, छकछल-गङ (जहाँ से साष्टांग दंडवत् नमस्कार किया जाता है), लप्चे और मणि-दीवाल।

$\frac{1}{2}$ मील सेरा ला, लप्चे। $\frac{3}{4}$ मील उतराई, यहाँ से सेरका-खीरो तक दाहिनी ओर बाँईं तरफ पहले के सोने की खुदाई के गढ़े दिखाई पड़ते हैं।

$1\frac{1}{4}$ मील रास्ते से बाँईं तरफ सेरका–खीरो का छोरतेन, देखिए पृष्ठ 106।

1 मील मंद चढ़ाई।

17. गंगा छू[1] (च्यू गोम्पा के पास) ($8\frac{1}{4}$) ($222\frac{1}{2}$) $\frac{1}{4}$ मील उतार, गंगा छू, गर्म पानी के सोते और कुंड, डोङखङ (तिब्बती धर्मशाला), डेरे, दोनों किनारों में गुफाएँ।

परखा या बरखा[2] (9) ($231\frac{1}{2}$) [15050] 9 मील परखा, तसम या तरजम, यहाँ से कैलास का सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है। देखिए पृष्ठ 229। इसके पास ही डमा[3] छू है, नदी को पार करें।

18. तरछेन या दरचेन ($7\frac{1}{2}$) (239) [15100] $7\frac{1}{2}$ मील दलदल भूमि होकर झोङ छू और तरछेन छू की पाँच-सात शाखाओं को पारकर तरछेन पहुँचें। यहीं से कैलास की परिक्रमा प्रारंभ होती है।

---

1. जैसा कि पहले भी कह चुके हैं, मानसरोवर का पानी गंगा छू से बाहर जाता है, जो राक्षसताल में ही गिरता है। गंगा छू के बाँएँ किनारे पर गर्म जल का सोता है, जिस पर स्नान के लिए कुंड बने हुए हैं। गंधक के इस गर्म जल में नहाने से थकावट दूर होती है। गठिए के रोगी यहाँ स्नान करने आते हैं। देखिए पृष्ठ 61 और 108। यहाँ से च्यू गोम्पा तक 2 फलाँग की कड़ी चढ़ाई है। च्यू गोम्पा गंगा छू के दाहिने तट पर मानसरोवर के वायव्य कोण में एक पहाड़ की चोटी पर बना हुआ है। यह मानसरोवर का दूसरा मठ है। गरम जल के पास की धर्मशाला च्यू गोम्पा की ओर से बनाई गई है। इन सोतों से मानसरोवर दो फलाँग पर है। गोम्पा में ठहरने की अपेक्षा मल्लाठक के पास मानसरोवर या गर्म जल के सोतों के निकट डेरा डालना उत्तम है।

2. यदि परखा में डेरा डालना हो, तो जाते समय गंगा छू से और लौटते समय कैलास से तंबू गाड़ने के लिए एक बड़ा पत्थर साथ ले जाना चाहिए, क्योंकि कील ठोंकने के लिए आस-पास में कहीं भी पत्थर नहीं मिलता।

3. डमा छू से तरछेन छू तक लगभग पाँच मील दलदल भूमि में जाते समय यात्री सावधान रहें। इसके दोनों ओर बहुत दलदल भूमि या 'डम' होने के कारण इसे डम या डमा छू कहते हैं।

तालिका 2
श्री कैलास-परिक्रमा
- 32 मील

तरछेन या दरचेन (0) (0) [15100] कैलास की परिक्रमा यहीं से आरंभ होकर यहीं समाप्त भी होती है। यहाँ से कैलास के अग्रभाग के किंचित् दर्शन हो जाते हैं, निकटवर्ती पहाड़ के ऊपर से तो पूर्ण दर्शन होता है। यहाँ तरछेन लब्रङ का मकान और अन्य चार-पाँच घर हैं, मंडी तथा काले तंबू हैं, देखिए, पृष्ठ 232।

$2\frac{1}{4}$ मील छकछल-गङ तक कुछ ऊँचाई-नीचाई के साथ, कई मणि-दीवालें हैं, कैलास-शिखर यहाँ से दिखाई पड़ता है।

सेरशुङ ($3\frac{3}{4}$)($3\frac{3}{4}$) $1\frac{1}{2}$ मील सेरशुङ तक उतराई, यहाँ पर तरबोछे नामक महाध्वजा है, वैशाख पूर्णिमा को बुद्ध भगवान के जन्म-दिवस पर यहाँ भारी मेला लगता है। देखिए पृष्ठ 49। यहाँ से 200 गज आगे छोरतेन कङनी नामक लाल दरवाजा है।

1 मील ल्हा छू के किनारे-किनारे, दाहिनी ओर के पहाड़ में नरोपुंजुङ की गुफा है, नीचे कई मणि-दीवालें और छोरतेन हैं, ल्हा छू की एक शाखा को पैदल पार करके प्रधान शाखा को पुल से पार करें।

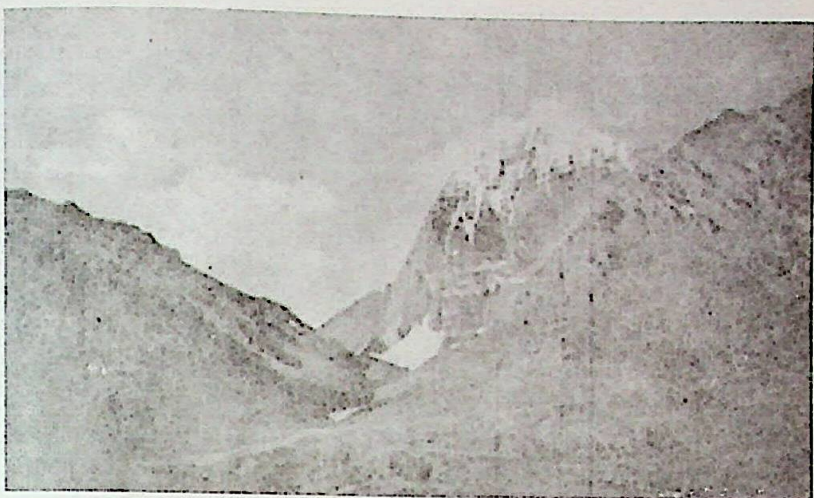
न्यनरी या[1] छुकू गोम्पा ($1\frac{1}{4}$) (5) $\frac{1}{4}$ मील न्यनरी गोम्पा तक तीक्ष्ण पत्थरों में कड़ी चढ़ाई।

गोम्पा के मार्ग में कई मणि-दीवालें हैं, ल्हा छू को पार करके फिर बाँएँ किनारे पर जायँ।

$2\frac{1}{2}$ मील मार्ग की दाहिनी ओर और कैलास से पश्चिम ओर गोंबोफेङ नामक एक सर्प की फण की भाँति काला-सा पहाड़ है। देखिए, पृ0 43, नदी के दाहिने किनारे,

---

1. कुछ लोग इसे अपभ्रंश करके नंदी या न्यंदी भी कहते हैं। यह कैलास का पहला मठ है, इसमें पाँच डाबे रहते हैं। दुवङ के प्रधान देवता छुकू रिंपोछे की मूर्ति श्वेत संगमर्मर की बनी हुई है। मूर्ति की दोनों ओर दो बड़े-बड़े हाथी के दाँत हैं, जिनकी लंबाई 54 इंच और मोटाई की परिधि 20 इंच है। इसके अतिरिक्त ङावा नम्ग्यल की एक मूर्ति है, जिसकी दाढ़ी श्वेत और टोपी गुरु नानक-जैसी है, इसलिए लोग इसे भूल से गुरु नानक की मूर्ति मान बैठते हैं। यहाँ पर कंजूर की पोथियाँ हैं। छत के ऊपर की छोटी-सी कोठरी चकङ है, इसमें कङरी-ल्हप्चेन, महाकाली और महाकाल की मूर्तियाँ हैं। पास में हाथी के दो छोटे-छोटे दाँत हैं। कमरे के बाहर और भीतर कई बंदूकें, जोरावर सिंह के लोहे की कवच, टोपी, तलवार, लठ और चमड़े की ढाल तथा बहुत-से भारतीयों के चढ़ाए हुए चिमटे आदि हैं। गोम्पा की छत से कैलास का सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है। नदी के दाहिने और बाँएँ दोनों किनारों से होकर मार्ग है। बाँएँ किनारे का मार्ग कुछ कम दूर है।



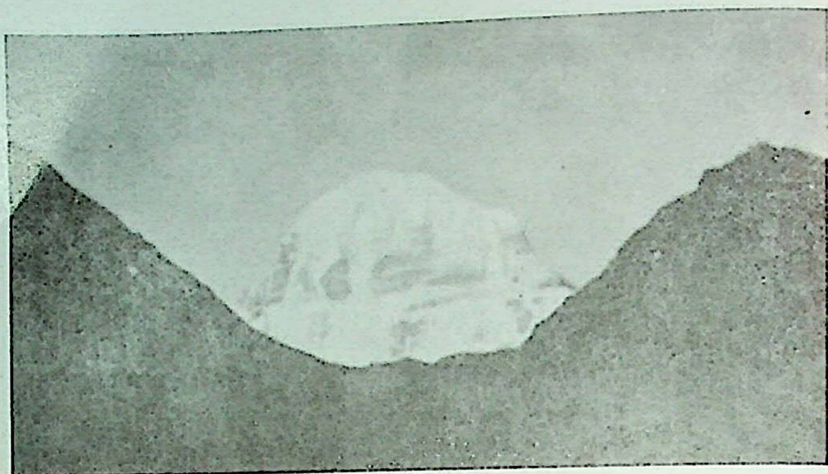
79. कैलास के वायव्य कोण का दृश्य

[देखिए पृ० 257



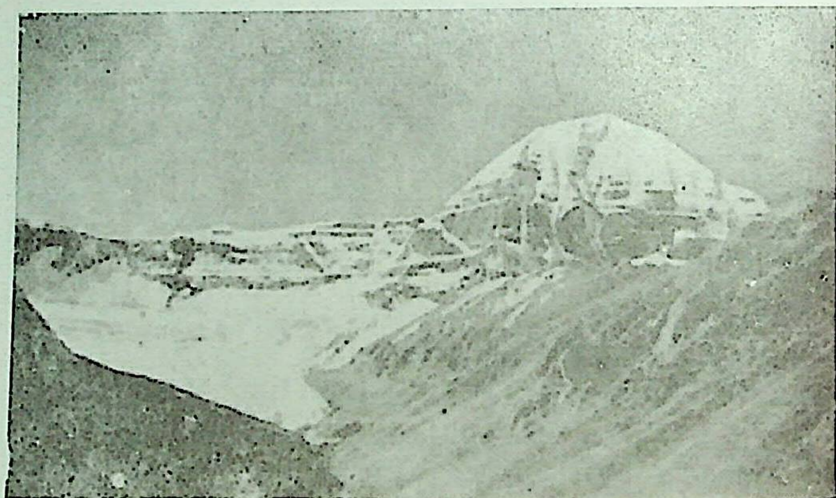
80. डिरफुक् गोम्पा–कैलास का दूसरा मठ

[देखिए पृ० 257



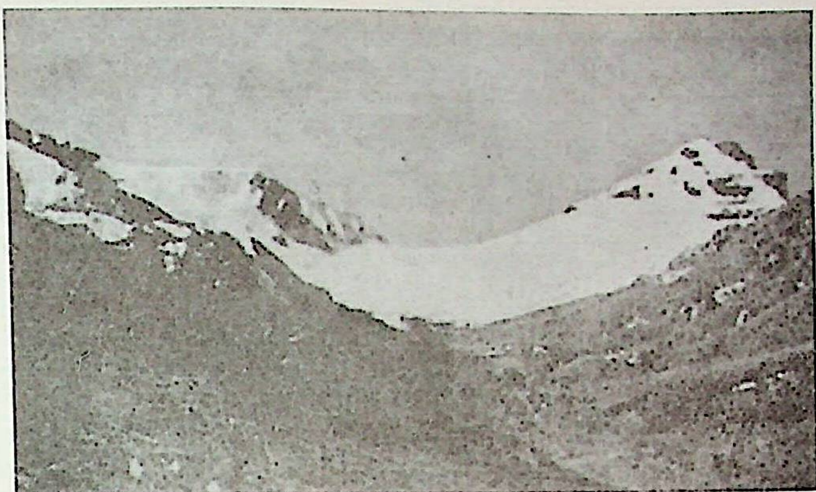
81. पूर्णिमा की चाँदनी में कैलास की दिव्य छटा

[देखिए पृ० 258



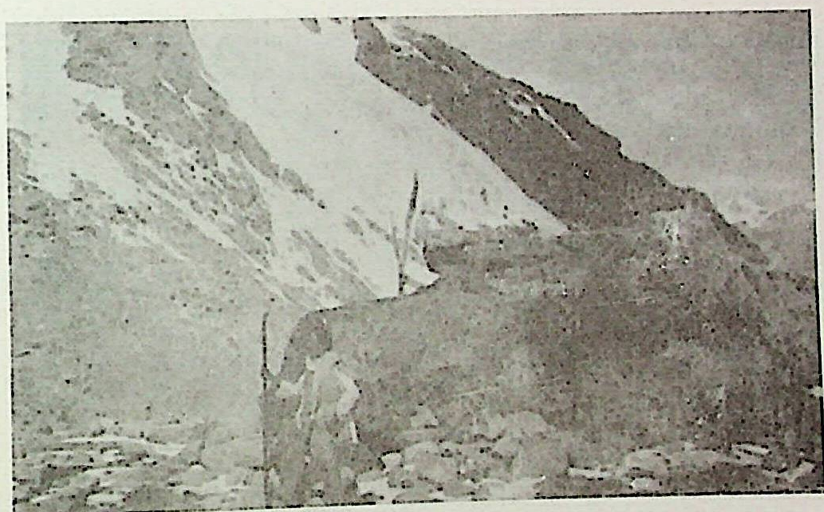
82. अवलोकितेश्वर और मंजुश्री शिखरों की मध्यवर्ती हिम-पीठिका पर स्थित कैलास का दृश्य

[देखिए पृ० 258



83. खंडोसङलम ला

[देखिए पृ० 258



84. डोलमा ला

[देखिए पृ० 259



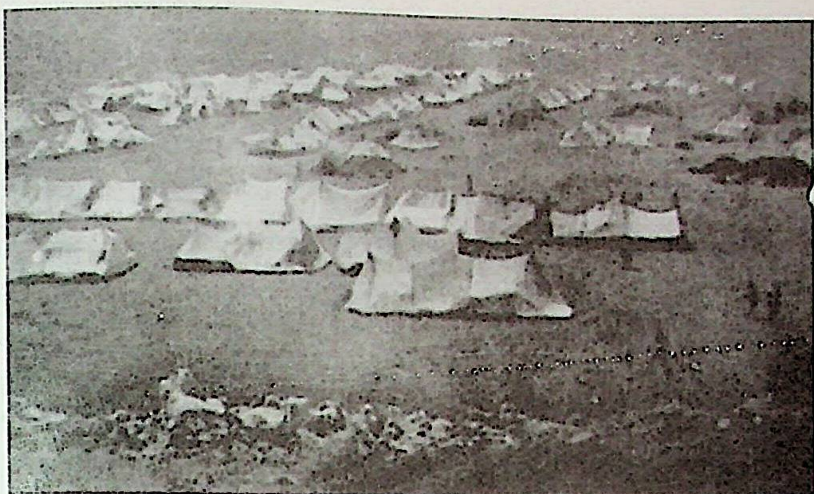
85. उछलती-कूदती हुई धौलीगंगा

[देखिए पृ० 264



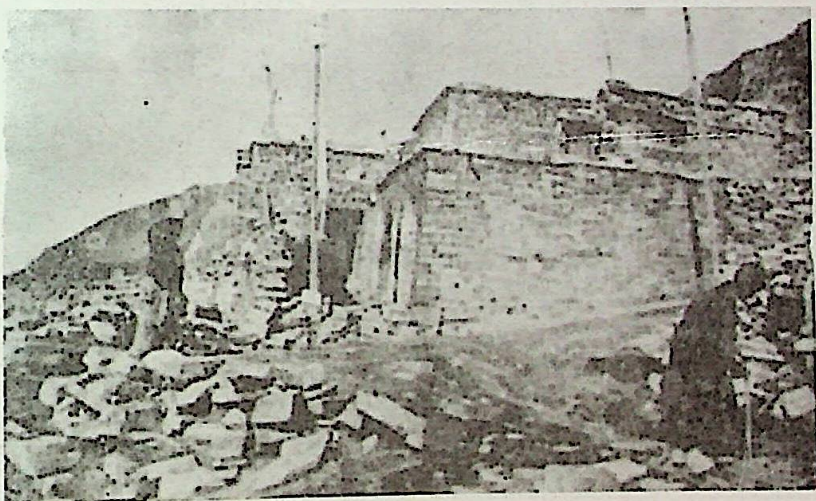
86. मप्चा चुंगो स्रोत-करनाली का उद्‌गम

[देखिए पृ0 53, 271



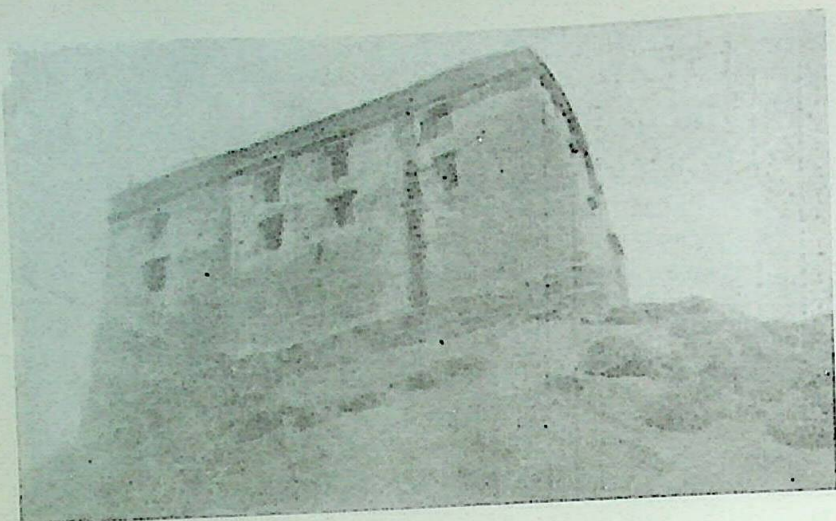
87. ज्ञानिमा मंडी

[देखिए पृ० 272



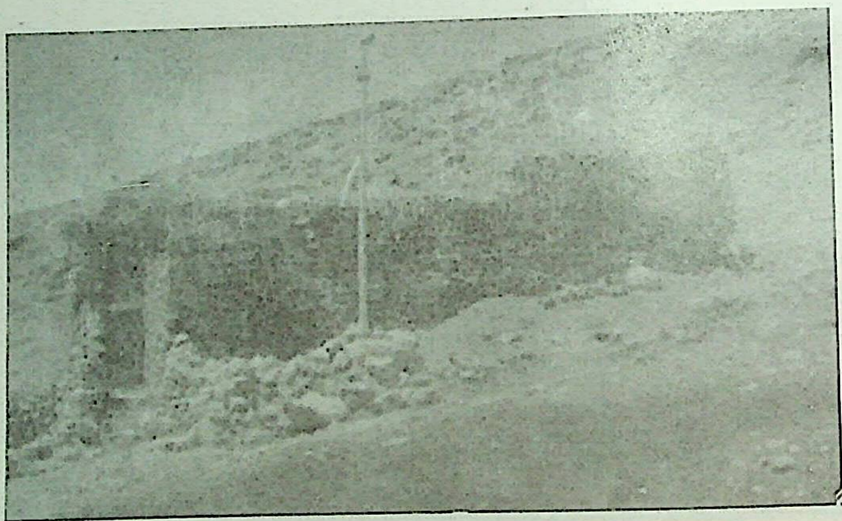
88. जुंठुलफुक् गोम्पा–कैलास का तीसरा मठ

[देखिए पृ० 260



89. गेङ्टा गोम्पा–कैलास का चौथा मठ

[देखिए पृ० 260



90. सिलुङ गोम्पा–कैलास का पाँचवाँ मठ

[देखिए पृ० 260



91. सिलुङ गोम्पा से कैलास का दक्षिणी दृश्य

[देखिए पृ० 261



92. गोछुल गोम्पा–पुनीत मानसरोवर का पहला मठ

[देखिए पृ० 262



93. च्यू गोम्पा–मानसरोवर का दूसरा मठ और गंगा छू

[देखिए पृ० 263



94. चेरकिप गोम्पा–मानसरोवर का तीसरा मठ

[देखिए पृ० 263

न्यनरी गोम्पा और इस स्थान के बीच में तीन-चार छोटी-छोटी नदियाँ न्यनरी पहाड़ से जलप्रताप की भाँति नीचे गिरती रहती हैं, जिनमें से एक 700 फीट ऊँची है।

2 मील तमडिन डोङखङ नामक स्थान पर बुद्ध भगवान का एक पाद–चिह्न (शपजे) है।

$\frac{1}{2}$ मील सामने उत्तर और वायव्य कोण से बेलुङ और डुङलुङ[1] नामक दो नदियाँ ल्हा छू के दाहिने किनारे पर गिरती हैं, दाहिने किनारे पर जाने वाले पहली नदी को पैदल पारकर दूसरी नदी को पुल से पार करें। $2\frac{1}{4}$ मील कङजम छू को पार करें।

$\frac{1}{4}$ कङजम छू की दूसरी धारा को पार करें। डेरे, पड़ाव की दीवारें।[2]

1. **डिरफुक् गोम्पा**[3] ($7\frac{1}{4}$) ($12\frac{1}{4}$) मील कुछ गज नीचे ल्हा छू पार करें। डिरफुक् गोम्पा [16400] फीट, मठ के पास 2 या 3 घर हैं।

$\frac{1}{4}$ मील ल्हा छू के पुल तक उतराई, यहाँ पर नदी को पुल से पार करें, डोलमा ला तक पत्थरों की बहुत कठिन चढ़ाई है, ऊँचाई के कारण वायु के पतली होने से दम घुटने लगता है।

---

1. इस नदी की घाटी के ऊपरी भागों में जंगली याक बहुत हैं। नदी के किनारे-किनारे होकर एक मार्ग सिंधु नदी के उद्गम को जाता है।
2. प्रायः यात्रियों के जत्थे, जिनके पास तंबू हैं, यहीं पर डेरा डालते हैं। अकेले-दुकेले यात्री या तिब्बती यात्री गोम्पा में ठहरते हैं। यहाँ एक दिन मुकाम करके कैलास-शिखर के मूल पर जाना चाहिए। मार्ग का विवरण इस प्रकार है—

   $\frac{1}{8}$ मील कड़ी चढ़ाई, छोरतेन, $\frac{1}{8}$ मील हरी बरफ, $\frac{1}{2}$ मील बर्फ के ऊपर और उसके पार्श्व में कड़ी चढ़ाई, मार्ग में गुग्गुल, वत्सनाभि और कुछ अन्य प्रकार के फूल हैं। यहाँ कैलास के मूल में 'डोम'–जैसी काली मिट्टी से मिली हुई बर्फ की हिमनदी है। इस काली बर्फ के ऊपर सुरम्य, छोटे-बड़े, श्वेत हिम के लिंगों की कई पंक्तियाँ हैं। यहाँ से कैलास के मूल की दीवाल तक बाँईं या दाहिनी ओर जा सकते हैं। $\frac{3}{4}$ मील बाँईं ओर कड़ी चढ़ाई, ढोंकेदार पत्थर, मिट्टी और कभी-कभी बर्फ के ऊपर जाना पड़ता है। मार्ग में कहीं-कहीं कैलास-धूप उगती है, $\frac{1}{4}$ मील आगे चलकर कैलास की खड़ी दीवाल पर पहुँचते हैं। यहाँ सदा कैलास के शिखर से हिमखंड गिरने की आशंका बनी रहती है। यहाँ तक कुल दूरी $1\frac{3}{4}$ मील है। डेरे से लेकर यहाँ तक दृश्य बहुत ही गंभीर और अद्भुत है। प्रायः यहाँ बादल आया-जाया करते हैं और ओले गिरते रहते हैं।
3. इसे डिर्थिनुफुक् भी कहते हैं। कैलास का यह दूसरा मठ है। यहाँ एक लामा और पाँच डाबा रहते हैं। मंदिर का प्रधान देवता शाक्यपेंदे है, जिसके पेट में कई देवता प्रदर्शित किए गए हैं। मंदिर में स्थित एक गुफा में गेवा गोजङबा की मूर्ति है, जिसके संबंध में कहा जाता है कि कैलास के मार्ग का प्रथम अन्वेषण करने वाला यही है। गोम्पा के बाहर सामने एक ध्वजा है। कैलास–पुराण का एक संस्करण इस गोम्पा से छपता है। यहाँ से कैलास का सबसे सुंदर और गंभीर दृश्य दिखाई पड़ता है। उसकी नैसर्गिक प्रतिभा आनंद देने वाली है। यह एक वेदी पर स्थित रजत-कँगूरे के समान स्थित है, जिसके संरक्षक की भाँति दोनों ओर से वज्रपाणि

1 मील बहुत कड़ी चढ़ाई, तंग्यू, डेरा।[1]

1 मील कठिन चढ़ाई, तुठुप, यहाँ तिब्बती लोग बाल काटकर चढ़ाते हैं और चित लेटकर मृत्यु का अभिनय करते हैं।

और अवलोकितेश्वर हैं। कैलास के सामने खड़े होकर दिखाई पड़ने वाले शिखरों के नाम ये हैं—वज्रपाणि (छाना दोर्जे), श्री कैलास-शिखर (कङरिम्पोछे), अवलोकितेश्वर (चेनरेसी), मंजुश्री (जंबियङ) और छोगेल-नोरसङ। गोम्पा के छत या मठ की कोठरी के झरोखे पर बैठकर रात-दिन को क्षण के समान बिना थके हुए कैलास के सौंदर्य का निरीक्षण करने में व्यतीत किया जा सकता है। दृश्य की महत्ता और गंभीरता तथा वहाँ के स्थानों में व्याप्त आध्यात्मिक वातावरण का वर्णन नहीं किया जा सकता। रात के समय चंद्रमा की कांति पड़ने से इसकी शोभा और भी बढ़ जाती है। यहाँ से एक मार्ग ल्हा छू के किनारे-किनारे ल्हे ला होकर सिंधु के उद्गम को जाता है, जो लगभग 34 मील की दूरी पर है। कुछ लोग भ्रमवश सिंधु का उद्गम कैलास के तल में मानते हैं, पर यह धारणा निराधार है।

1. कङजम छू से $\frac{1}{4}$ मील पर पोलुङ छू (पो=धूप, लुङ=घाटी) को पार करें। इस नदी की घाटी में हिमनदी तक कैलास–धूप बहुत उगती है। इस छू से एक मील कड़ी चढ़ाई चढ़कर तंग्यू तक पहुँचते हैं; यहाँ से कैलास का दृश्य (चेनरेसी और जंबियङ के मध्य) बहुत मनोरम है। रजत-पीठिका पर रखे हुए शिवलिंग की भाँति कैलास-शिखर के पूर्वी तल से जंबियङ तक हिम नदी फैली हुई है। तङ्यू से डोलमा ला $2\frac{3}{4}$ मील रह जाता है, जो कैलास की बारह परिक्रमा कर चुके हैं, वे तेरहवीं परिक्रमा में यहाँ से यात्रा-मार्ग छोड़कर खंडोसङ्लम के मार्ग से जाने के अधिकारी हो जाते हैं। उस मार्ग का विवरण इस प्रकार है—

तंग्यू से $\frac{1}{8}$ मील कड़ी उतराई है, यहीं डोलमा ला छू को पार करें, (यहाँ से एक-दो फलांग नीचे डोलमा ला छू के बाँई किनारे पर एक बड़े पत्थर के नीचे एक गुफा है। वायु से बचने के लिए गुफा के चारों ओर पत्थर की चिनाई हुई दीवालें हैं। गुफा के भीतर पर्याप्त प्रकाश है, जिसमें तीन-चार मनुष्य रह सकते हैं। इसमें कई वर्ष पहले एक लामा ने निवास किया था, जिसके नाम पर यह 'लामा क्यङगुन कङरी फुक्पा' नाम से प्रसिद्ध है, $\frac{1}{8}$ मील पर खंडोसङ्लम छू को पार करें, $\frac{3}{4}$ मील पत्थरों में नदी की बाँई ओर कड़ी चढ़ाई है। (बाँई ओर खंडोसङ्लम छू के सिरे पर पिरोजी रंग का छोटा-सा तालाब है), एक मील धोखेदार दरारों से युक्त हिम पर कड़ी चढ़ाई है। बर्फ पर चलते समय कभी-कभी ऊपर की पतली बर्फ के टूटने के कारण भीतर के दो-दो गज गहरे खड्डों या पानी में गिरने का डर रहता है। चढ़ाई के अंत में खंडोसङ्लम ला है। दाहिनी ओर फकनारी-शिखर है और बाँई ओर खंडोसङ्लम-शिखर है। चारों ओर का दृश्य सुरम्य है। यहाँ से कुछ गज आगे एक लप्चे है; यहाँ से $1\frac{3}{4}$ मील लुढ़कती हुई कड़ी उतराई पड़ती है, बाँई ओर खंडोसङ्लम छू और दाहिने ओर शिङ्जोंङ का संगम है। यहाँ पर नदी पार करें, $\frac{3}{4}$ मील पत्थरों के बीच होकर कड़ी उतराई, खंडोसङ्लम और ल्हमछिखिर का संगम; यहीं पर कैलास की परिक्रमा का मार्ग मिल जाता है। कङजम छू से कुल दूरी यहाँ तक $5\frac{3}{4}$ मील है। इस मार्ग में घोड़ा या याक नहीं चलते। डोलमा ला की अपेक्षा खंडोसङ्लम ला कम ऊँचा है। यह मार्ग डोलमा ला के मार्ग से $1\frac{1}{2}$ मील कम है। इस पर जाने के इच्छुक डिरफुक् गोम्पा के किसी पथप्रदर्शक को साथ लेकर जाते हैं, जिसको एक रुपया मजदूरी देनी पड़ती है। बादल के समय इस मार्ग से नहीं जाना चाहिए, क्योंकि यहाँ बहुत वर्फ गिरने की संभावना बनी रहती

$\frac{1}{2}$ मील कठिन चढ़ाई के बाद दिक्पा-करनक[1], 20 गज आगे एक और छोटा दिक्पा-करनक है, पास ही मार्ग से कुछ ऊपर चरोक डोङ्खङ (एक टूटी हुई धर्मशाला), डेरे, पड़ाव की दीवालें।

$\frac{1}{4}$ मील समतल, बीच में पत्थरों से होकर एक छोटी-सी नदी बहती है।

डोलमा ला[2] (4) (16$\frac{1}{4}$) 1 मील डोलमा ला के घाटे तक दम घुटने वाली बहुत कड़ी चढ़ाई।

गौरीकुंड ($\frac{1}{4}$) (60$\frac{1}{2}$) [18200] $\frac{1}{4}$ मील बड़े-बड़े पत्थरों के बीच बहुत कड़ी उतराई, इसे तिब्बती भाषा में ठुकीजिङ्बू कहते हैं। यह तालाब लगभग बारहों महीने बर्फ से ढका रहता है, जिससे बर्फ तोड़कर स्नान करना पड़ता है। देखिए पृष्ठ 50। यहाँ से ल्हमछिखिर छू तक पत्थरों के बीच लुढ़कती हुई बहुत कठिन उतराई पड़ती है, वहाँ से जुंठुलफुक् तक साधारण उतार है।

2$\frac{1}{2}$ मील शप्जे डक्थोक तक बहुत कड़ी और लुढ़कती चढ़ाई है, यहाँ एक बड़े भारी चट्टान पर बुद्ध भगवान का पादचिह्न है, डेरे, पड़ाव की दीवाल है।

$\frac{1}{4}$ मील ल्हमछिखिर के दाहिने किनारे तक उतराई।

1$\frac{3}{4}$ मील ल्हमछिखिर छू के किनारे-किनारे दलदल भूमि होकर खंडोसङलम छू तक उतार, यहाँ से इस नदी को पार करें। मार्ग से दाहिनी ओर पहाड़ के बीच में मेज की भाँति खंडोसङलम की बर्फीली चोटी है और उसके पीछे कैलास का शिखर दिखाई पड़ता है।

3$\frac{1}{2}$ मील तोपछेन छू और ल्हमछिखिर तक उतराई है। तोपछेन छू ल्हमछिखिर के

है। लेखक इस मार्ग से दो बार जा चुका है।

1. दिक्पा-करनक=पापियों की परीक्षा का पत्थर। यहाँ एक बड़ा भारी चट्टान है, जिसके नीचे बिल की भाँति एक गुफा है, जिसमें पतला मनुष्य सिमटकर रेंगते हुए कठिनता से जा सकता है। यह गुफा चार-पाँच गज से अधिक तो नहीं है, पर बनावट में टेढ़ी-मेढ़ी होने के कारण उसे पार करने में कठिनता होती है। इसे पेट के बल रेंगकर इधर से उधर पार करने वाला व्यक्ति निष्पाप समझा जाता है और पार करने में असमर्थ व्यक्ति पापी गिने जाते हैं। मोटे आदमी के लिए पार करना असंभव ही होता है। कभी-कभी बिल में घबड़ाहट से बीच में अटक जाने के कारण उसे पीछे से पैर पकड़कर या आगे से हाथ खींचकर निकालना पड़ता है। देह को ढीलीकर तथा हाथ को फैलाकर युक्तिपूर्वक इसे पार किया जा सकता है।
2. डोलमा ला या देवी के घाटे पर डोलमा के नाम पर एक बड़ा भारी पत्थर है, जिसके ऊपर कपड़े के रंग-बिरंगे झंडे लगे रहते हैं। इसके अतिरिक्त कई लप्चे, तरचोक, तोरण और मंडल आदि हैं। डोलमा की चट्टान की दरार में तिब्बती लोग अपने टूटे हुए दाँतों को रख देते हैं, जिससे उसमें दाँतों की एक माला-सी बन गई है। घाटा पर पहुँचकर यात्री लोग वहाँ कपड़े के झंडे लगाते हैं तथा पत्थर में मक्खन लगाकर उसकी प्रदक्षिणा करते हैं और कुछ खाद्यवस्तु बाँटते हैं। यहाँ से गौरीकुंड दिखाई पड़ता है। यहाँ से उतरकर मार्ग सीधा गौरीकुंड पर ही जाता है।

बाँएँ किनारे पर आकर मिलती है, संगम से नीचे चलकर नदी झोङ छू के नाम से प्रसिद्ध है। (जो लोग डिरफुक् गोम्पा से ल्हे ला होकर सिंधु के उद्गम पर जाते हैं, वे तोपछेन छू के किनारे-किनारे इस स्थान पर लौटकर आते हैं।

जुंठुलफुक् गोम्पा[1] (9 $\frac{1}{4}$) (25 $\frac{3}{4}$) 1 $\frac{1}{4}$ मील जुंठुलफुक् गोम्पा तक मंद उतराई, खंडो संगम से यहाँ तक स्थान-स्थान पर और गोम्पा के पास कई बड़ी-बड़ी मणि-दीवालें हैं।

1 मील इस बीच में 3 या 4 नदियों को पार करना पड़ता है।[2]

3 मील छकछल-गङ[3] मणि-दीवालें, यहाँ से झोङ छू कगारे को छोड़कर परखा के मैदान में प्रवेश करती है। मार्ग नदी को छोड़कर पश्चिम की ओर मुड़ता है। 1 मील यहाँ से तरछेन दिखाई पड़ता है। $\frac{1}{2}$ मील यहाँ पर एक छोटी नदी को पार करें। $\frac{3}{4}$ मील यहाँ लंबी-लंबी मणि-दीवालें हैं।

2 तरछेन[4] (6 $\frac{1}{4}$) (32) यहाँ पर तरछेन या उमा छू को पुल से दाहिनी ओर पारकर तरछेन

---

1. यह कैलास का तीसरा मठ है, जिसमें तीन डाबा हैं। मठ की गुफा में मिलरेपा और अन्य देवताओं की मूर्तियाँ हैं। गुफा में हाथी के दो दाँत हैं, जो न्यनरी गोम्पा वाले दाँतों से छोटे हैं। गुफा के बाहर दाहिनी ओर दुवङ में ङावानमग्यल की मूर्ति है और बाँईं ओर लगभग सात फीट ऊँचा चौकोर पत्थर का खंभा है, जो तिब्बत के विख्यात सिद्ध मिलरेपा का लट्ठ कहा जाता है। यात्री लोग इसे उठाने में अपने बल की परीक्षा करते हैं। गोम्पा के सामने वाहर एक ध्वजा है। यह और न्यनरी गोम्पा तरछेन लब्रङ के अंतर्गत है।
2. यहाँ से एक मार्ग गेङ्टा गोम्पा को जाता है, जो 6 मील पर है। तीन-चार पहाड़ों को पार करके जाना होता है। चढ़ाव-उतार के कारण बहुत कम यात्री इस मार्ग से जाते हैं, परंतु मैं तो तीन बार इस मार्ग से जा चुका हूँ। लोग प्रायः तरछेन से होकर जाते हैं।
3. यहाँ से च्यू गोम्पा सीधे मार्ग से 13 मील है, (डमा छू 4 मील, च्यू गोम्पा 8 $\frac{1}{2}$ मील = 13 मील इस मार्ग में डमा-छू के आर-पार आध–आध मील की दलदल भूमि से जाना पड़ता है। यात्री सावधानी से जायें।
4. तिब्बती लोग श्री कैलास की तुलना सहस्त्रार चक्र से, ल्हा छू, झोङ छू और तरछेन छू की केङ्मा, रेङ्मा और उमा अर्थात् इडा, पिंगला और सुषुम्ना से करते हैं। तरछेन से भी एक मार्ग गेङ्टा गोम्पा को जाता है, जो 2 $\frac{1}{4}$ मील की बहुत कड़ी चढ़ाई पर है। यह कैलास का चौथा मठ है, यह एक पहाड़ की चोटी पर बना हुआ है और एक बड़े किले के समान प्रतीत होता है। इसमें पाँच डाबा हैं। यह कैलास का सबसे बड़ा मठ है। दुवङ का प्रधान देवता छोलोकेश्वरी और चकङ की खंडो है। गोम्पा की एक कोठरी में जोरावर सिंह के लोहे के दो कवच, टोप, तलवार और फरसा विद्यमान हैं। गोम्पा के सामने, बाहर एक ध्वजा है। यहाँ से कैलास नहीं दीखता। दक्षिण में परखा मैदान, राक्षसताल और मांधाता आदि की बर्फीली चोटियों का मनोहर दृश्य दिखाई पड़ता है। गोम्पा के नीचे दो-तीन घर, कई मणि-दीवालें, छोरतेन और पड़ाव की दीवालें हैं। यहाँ से सिलुङ गोम्पा दो मील पर है ($\frac{1}{4}$ मील उतार, $\frac{5}{8}$ मील चढ़ाई, 1 मील कठिन उतराई और $\frac{1}{8}$ मील सिलुङ छू पार करके सिलुङ

पहुँचें, यहाँ श्री कैलास की परिक्रमा समाप्त हो जाती है। सतलज या सिंधु कैलास की परिक्रमा में कहीं नहीं मिलतीं।

———

गोम्पा)। सिलुङ गोम्पा के दुवङ में दोर्जेछङ और ङोजुन-डुप्थो की मूर्ति और चकङ में अप्ची की मूर्ति है। यहाँ मंदिर के सामने एक ध्वजा है। यहाँ पर दो घर और पड़ाव की दीवालें हैं। सिलुङ और गेङटा गोम्पा ल्हासा की ओर के डेकुङ नामक मठ के अंतर्गत है। यह कैलास का पाँचवाँ मठ है और सबसे छोटा है। इसमें दो डाबा रहते हैं। यहाँ से कैलास का दक्षिणी दृश्य बड़ा मनमोहक है। यहाँ से सेरशुङ के तरबोछे डेढ़ मील की लुढ़कती हुई कठिन उतराई के मार्ग में हैं। यहाँ से एक मार्ग सेरदुङ-चुकसुम और छो कपाला को जाता है, जिसका ब्योरा इस प्रकार है—

तरछेन से सिलुङ गोम्पा $2\frac{1}{2}$ मील की चढ़ाई, $1\frac{1}{4}$ मील कड़ी चढ़ाई, बाँईं ओर पहाड़ में कई गुफाएँ, $\frac{3}{4}$ मील कड़ी चढ़ाई, मंडल, छकछल-गङ, (पहाड़ के नीचे सेरदुङ-चुकसुम छू और छो कपाला छू का संगम है। इन दोनों के मध्य में नेतेन्–येलक्जुङ नामक पर्वत है, जो लेटे हुए नंदी के आकार का है), $\frac{1}{2}$ मील उतराई, यहाँ पर लिङसिङ्जेन नामक पक पत्थर पर घोड़े का एक पाद-चिह्न है, $\frac{1}{4}$ मील नदी के किनारे-किनारे, $1\frac{1}{4}$ मील पत्थरों में कड़ी चढ़ाई, $\frac{1}{2}$ मील अति कठिन चढ़ाई, सेरदुङ-चुकसुम है। देखिए पृष्ठ 50। $\frac{1}{4}$ मील कैलास की मेखला में चढ़कर चरोक-फ़ुरदोद ला पार करें। मिट्टी और पत्थरों की 1 मील लुढ़कती हुई उतराई, 2 मील कड़ी उतराई, $\frac{3}{4}$ मील पुनः उतराई, $\frac{1}{2}$ मील पत्थरों में होकर कड़ी चढ़ाई, छो कपाला, रुकता और दुर्ची नामक दो छोटे-छोटे तालाब, $1\frac{1}{4}$ मील बहुत कड़ी उतराई, यहाँ पर नदी पार करें, सिलुङ गोम्पा तक $2\frac{1}{4}$ मील कड़ी उतराई, तरछेन तक $2\frac{1}{2}$ मील उतराई है। इस प्रकार तरछेन से सेरदुङ-चुकसुम तक की कुल दूरी $7\frac{3}{4}$ मील है, वहाँ से छो कपाला $4\frac{1}{4}$ मील है, सिलुङ गोम्पा $3\frac{1}{2}$ मील है, तरछेन $2\frac{1}{2}$ मील है, कुल यात्रा लगभग 18 मील की है।

तालिका 3
पुनीत मानसरोवर की परिक्रमा
आठों मठों का दर्शन करते हुए–64 मील

गोछुल गोम्पा[1] (0) (0) यह पुनीत मानसरोवर का प्रथम मठ है। इसमें 3 डाबा रहते हैं। 200 गज ऊपर चढ़ने पर कैलास का दर्शन होता है। देखिए पृष्ठ 254। $1\frac{1}{4}$ मील गोछुल चङ्मा, डेरे। $\frac{3}{4}$ मील छेरिङ मदङ, डेरे, मणि-दीवाल। $1\frac{1}{4}$ मील मानसरोवर के पास श्वेत जल के एक संकीर्ण जलाशय का प्रारंभ, इसके और सरोवर के मध्य का अंतर आठ-दस गज का है।

$1\frac{1}{4}$ मील जलाशय और मानसरोवर के बीचोबीच लाल पहाड़ के एक अंतरीप तक, (यहाँ से मार्ग छोड़कर आधा मील ऊपर सेरा ला के पास सरोवर का पहला छकछल-गङ है)।

$1\frac{1}{4}$ मील सेरका-खितोङ, यहाँ से राक्षसताल तक सोने की खानें हैं, मणि-दीवाल।

$1\frac{1}{4}$ मील मल्लाठक, यहाँ पर एक ज्वालामुखी पहाड़ का अंतरीप सरोवर तक चला गया है, जो खड़ी दीवाल के समना है[2], गोछुल गोम्पा से यहाँ तक मार्ग सरोवर के किनारे-किनारे है।

$\frac{1}{4}$ मील कड़ी चढ़ाई, (यहाँ से एक मार्ग गंगा छू को पार करके सीधा च्यू गोम्पा को जाता है)।

1 मील गंगा छू के पास के गर्म सोतों तक उतराई, यहाँ से गंगा छू को पार करें।

---

1. गोम्पा के चकङ में गोंबोसेटुप और दुवङ में थुजीछिंबो और चेनरेसी की मूर्तियाँ हैं। चेनरेसी की मूर्ति में ग्यारह सिर और एक हजार हाथ हैं। दुवङ में केंगुनजिंबानुरबू-कङरी-लामा शकबर की मूर्तियाँ तथा अन्य कई मूर्तियाँ हैं। उपर्युक्त लामा इस मठ के निर्माता हैं। कंजूर के 108 खंड यहाँ विद्यमान हैं। अतिशा कैलास से खोचार जाते समय यहाँ पर सात दिन ठहरे थे। गोम्पा से पहाड़ के ऊपर 200 गज चढ़ने पर कैलास का दर्शन होता है। देखिए पृष्ठ 254।
2. यहाँ से आगे सरोवर के किनारे होकर नहीं जा सकते, क्योंकि जल गहरा है और खड़ा पहाड़ है। जब शीतकाल में सरोवर जम जाता है, तो उस समय बर्फ के ऊपर होकर यहाँ से जाना संभव हो जाता है। एक फलांग बर्फ पर जाने के बाद फिर सरोवर के किनारे होकर जा सकते हैं। वहाँ से एक या दो फलांग आगे चलकर चट्टान के बीच में ङावाङोपो–ड्रुपुक् नामक एक गुफा है। यहाँ कभी-कभी शीतकाल में कोई डाबा रहता है। वहाँ से दो फलांग आगे संतोकपरी नामक पहाड़ के नीचे मणि-दीवाल और डेरे की दीवालें हैं। यहाँ पर शीतकाल में च्यू गोम्पा के चरवाहे भेंड़-बकरी चराने के लिए रहते हैं। किनारे से 50 गज की दूरी पर मानसरोवर के भीतर एक गर्म जल के सोते हैं। मानसरोवर के किनारे-किनारे कई प्रकार के छोटे-मोटे चिकने पत्थर पाए जाते हैं। प्रायः यात्री लोग पश्चिमी किनारे पर अधिक जाते हैं। अतः उन पत्थरों को वहाँ से प्रसाद के रूप में लाते हैं।

देखिए पृष्ठ 108।

च्यू या ज्यू गोम्पा $(8\frac{1}{2})$ $(8\frac{1}{2})$ $\frac{1}{4}$ मील च्यू गोम्पा तक चढ़ाई, यह मानसरोवर का दूसरा मठ है। इसमें पाँच डाबा हैं। यहाँ से कैलास, मानसरोवर और मांधाता तथा राक्षसताल का विशाल दृश्य दिखाई पड़ता है। यह कैलास के डिरफुक् गोम्पा के अंतर्गत है। चकङ में पद्मसंभव की मूर्तियाँ हैं। पहाड़ के ऊपर 2 या 3 घर हैं। यह पहाड़ की चोटी पर बैठे हुए पक्षी के समान प्रतीत होता है। च्यू = पक्षी। यहाँ पर सरोवर का पहला लिङ है। $\frac{1}{2}$ मील सरोवर के वायव्य कोण में उतराई। $\frac{3}{4}$ मील सेमाफुक् ला तक कठिन चढ़ाई, लप्चे। 2 मील मंद उतार।

चेरकिप गोम्पा[1] (4) $(12\frac{1}{2})$ $\frac{3}{4}$ मील चेरकिप गोम्पा तक कठिन उतराई, यह मानसरोवर का तीसरा मठ है, एक डाबा है। 1 मील तासालुङ तक सरोवर के किनारे-किनारे, मणि-दीवाल। सरोवर छोड़ के 1 मील चढ़ाई।

1. **लङपोना गोम्पा**[2] $(4\frac{1}{2})$ (17) $2\frac{1}{2}$ मील लङपोना गोम्पा तक साधारण चढ़ाई-उतराई, इसमें एक लामा और चार डाबे रहते हैं।

$\frac{1}{4}$ मील ग्युमा छू तक, जिसमें बाढ़ के दिनों में $3\frac{1}{2}$ फीट तक जल रहता है, बाँएँ किनारे को पार करके आगे विशाल मैदान के मार्ग में बढ़ें, यहाँ झुंड-के-झुंड क्यङ नामक जंगली घोड़े चरते हुए देखने में आते हैं। $4\frac{5}{8}$ मील यहाँ लुङ नक छू को पार करें।

$1\frac{1}{4}$ मील एक छू को पार करें। इन दोनों छू के मध्य में तरुआ नामक एक काँटेदार झाड़ी होती है, जिसके फल पीले तथा खाने में खट्टे होते हैं।

पोनरी गोम्पा[3] (8) (25) 2 मील पोनरी गोम्पा तक साधारण और कठिन चढ़ाई, यह

---

1. यह मठ सरोवर के किनारे ही पर है। दुवङ में गुरु रिंपोछे की मूर्ति है, चकङ अलग नहीं है। सरोवर का यह सब से छोटा मठ है। मंदिर के सामने एक ध्वजा है। यह तरछेन के अंतर्गत है। यहाँ से कैलास-शिखर के दर्शन होते हैं। पड़ाव की दीवाल है, जहाँ शीतकाल में गड़ेरियों के दो-तीन तंबू लगते हैं। गोम्पा के निकट ही सरोवर के किनारे कई गुफाएँ हैं, जिनमें कुछ भिक्षु लोग शीतकाल में एकांतवास करते हैं।
2. यह ग्युमा छू के दाहिने किनारे पर सरोवर से डेढ़ मील पर है। यहाँ पर सरोवर का दूसरा लिङ है। चकङ में ल्हप्सेन, ल्हमो आदि की और दुवङ में शाक्य मुनि की मूर्तियाँ हैं। मंदिर के प्रांगण में एक और बाहर में एक ध्वजा है। यह लदाख के हेमिस गोम्पा के अंतर्गत है। यहाँ से कैलास के दर्शन होते हैं। गोम्पा से 50 गज की दूरी पर दक्षिण दिशा में एक चट्टान की अंतरीप हाथी की सूँड़ की भाँति है, जहाँ एक छोटा-सा मठ लङपोना के नाम पर बना हुआ है। गोम्पा के दक्षिण में विशाल मैदान है, जहाँ पर अधिक घास होने के कारण होर पुरङ के चरवाहे शीतकाल में याक और भेड़-बकरियों को चराने के लिए जाते हैं।
3. यह गोम्पा हिमाच्छादित पोनरी शिखर (19664 फीट) के तल में एक संकीर्ण घाटी में स्थित है। गोम्पा के चकङ में ल्हप्सेन और दुवङ में गेबाचंबा की मूर्तियाँ हैं। गोम्पा के वाहर एक ध्वजा है। यह मठ पूर्वी तिब्बत के सेरा महाविहार के अंतर्गत है। इसमें कंजूर की पोथियाँ

मानसरोवर का पाँचवाँ मठ है, इसमें एक लामा और 5 डाबा रहते हैं।

1 $\frac{3}{4}$ मील कठिन उतराई, कोजिनछुंगो के डेरे, पड़ाव की दीवालें।

2 $\frac{1}{4}$ मील पलचेन छू तक मैदान में मंद उतार, इसमें लगभग दो या तीन फीट गहरा जल रहता है, यहाँ नदी को पार करें।

1 $\frac{1}{2}$ मील पलचुङ छू, लप्चे, मणि-पत्थर, यहाँ इसी नदी की तीन शाखाओं को पार करें, जिनमें से दो में दो-तीन फीट का गहरा जल रहता है।[1]

$\frac{1}{4}$ मील ङादुङ्जे, डेरे, पड़ाव की दीवाल, यहाँ पर शीतकाल में गड़रिए रहते हैं। $\frac{1}{2}$ मील पेगुर, डेरे, यहाँ शीतकाल में गड़रिए रहते हैं। 1 मील समो छङ्पो, दो फीट गहरी नदी को बाँईं ओर पार करें। 1 मील सरोवर का किनारा। 1 मील सरोवर के किनारे-किनारे हवासेनी-मदङ तक मणि-दीवाल, सरोवर का दूसरा छकछल गङ। $\frac{1}{2}$ मील सरोवर को छोड़कर बाँईं ओर चढ़ाई, लप्चे। $\frac{1}{2}$ मील अधित्यका।

2. सेरालुङ गोम्पा[2] (11 $\frac{3}{4}$) (36 $\frac{3}{4}$) $\frac{1}{2}$ मील सेरालुङ गोम्पा तक उतराई, मानसरोवर का छठवाँ मठ, यहाँ 1 अवतारी लामा और 19 डाबा रहते हैं।

1 $\frac{1}{4}$ मील सेरालुङ उपत्यका होकर सरोवर के किनारे तक उतराई, सेरा डोङ्खङ नामक

हैं। यहाँ से कैलास के दर्शन तो नहीं होते, किंतु मांधाता के महान शिखरों को प्रतिबिंबित करते हुए सरोवर का दृश्य दिखाई पड़ता है। सरोवर यहाँ से लगभग 6 मील की दूरी पर है। सरोवर और पोनरी के बीच में कुर्क्यल छुंगो, शम छो, और डिङ छो हैं। कुर्क्यल छुंगो देवताओं के स्नान करने का तालाब है और यह मानसरोवर का सिर माना जाता है।

1. तरछेन से सीधा आया हुआ मार्ग यहाँ मिलता है, जिसका विवरण इस प्रकार है—तरछेन से झोङ छू 3 मील, तीन फीट गहरी नदी को पार करें, अवङ छू 3 मील, फिलुङ-कोङ्मा छू 2 मील, फिलुङ–फरमा $\frac{3}{4}$ मील, फिलुङ–योङ्मा 2 $\frac{3}{4}$ मील, ग्युमा छू 3 मील, ढाई फीट गहरी नदी की दो-तीन शाखाओं को पार करना; क्यो $\frac{1}{4}$ मील, डेरे कुगलुङ छू 2 $\frac{1}{2}$ मील; (योग 17 $\frac{1}{4}$ मील, जो एक दिन में समाप्त किया जाता है) लुङ्नक छू 3 $\frac{3}{4}$ मील; कुर्क्यल छुंगो का प्रारंभ 2 $\frac{1}{2}$ मील (कुर्क्यल छुंगो का झील लगभग 2 $\frac{3}{4}$ मील लंबा है); पलचेन छू 2 $\frac{1}{4}$ मील; पलचुङ छू 1 $\frac{1}{4}$ मील; और सेरालुङ गोम्पा 6 $\frac{1}{4}$ मील (योग 16 मील, दूसरे दिन समाप्त किया जाता है)।

2. गोम्पा में पहुँचने के पहले मार्ग में सुंदर छोरतेनों और मणि-दीवालों की एक पंक्ति है। गोम्पा सेरालुङ–उपत्यका में दाहिने किनारे पर है। उसके चकङ में अप्ची और दुवङ में लोबन रिंपोछे (पद्मसंभव), शाक्य थुब्बा (बुद्ध भगवान) आदि की मूर्तियाँ हैं। सरोवर का तीसरा लिङ यहीं पर है। मंदिर के प्रांगण में एक ध्वजा है। यह गोम्पा डेकुङ मठ के अंतर्गत है। यहाँ मठ के अतिरिक्त तीन-चार घर, एक डोङ्खङ और पाँच काले तंबू हैं। मठ की छत से कैलास के दर्शन तो नहीं होते, पर मंदिर के बाहर कुछ गज आने के बाद मानसरोवर और अस्तकालीन सूर्य और कैलास का सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है। इसके पास ही एक सुंदर जल का सोता है। मानसरोवर यहाँ से 1 $\frac{1}{4}$ मील है।

एक टूटी-फूटी धर्मशाला है[1], डेरे, मणि-दीवाल।

1 मील सरोवर के किनारे-किनारे रिकसुम गोम्पा (वज्रपाणि, अवलोकितेश्वर और मंजुश्री के तीन टीले), यहाँ पर सेरालुङ गोम्पा से एक मार्ग सीधा आता है, जो लगभग $1\frac{1}{2}$ मील पर है, जिसमें आधे मार्ग रेत में होकर लुढ़कती हुई कठिन उतराई है।

2 मील सरोवर के किनारे-किनारे केतर डोङखङ तक, सूखे हुए ङोमोशङ छू के किनारे पर सरोवर के पास ही पुरानी धर्मशाला है, मानसरोवर की परिक्रमा करते समय मैंने यहाँ पर चार-पाँच बार पड़ाव डाले।

$\frac{3}{4}$ मील टेढ़ा-मेढ़ा और सूखा दंगुक–चमदोङ छू।

$4\frac{1}{4}$ मील टग छम्पो[2] तक कुछ दूर सरोवर के किनारे और कुछ आगे थोड़ी-सी ऊँची-नीची भूमि में होकर, दनी को पार करें।

2 मील एक पहाड़ की नोक के ऊपर होकर कुछ चढ़ाई और उतराई, नीमापेंडी छू,[3] यहाँ नदी को पार करें।

$\frac{1}{2}$ मील नीमापेंडी की उपत्यका में होकर।

---

1. यह स्थान हवासेनी–मंदङ से (जहाँ से सरोवर को छोड़कर सेरालुङ गोम्पा जाते हैं) 1 मील की दूरी पर है। हवासेनी–मदङ से लेकर सरोवर के किनारे-किनारे 3 मील तक चेमानेङा नामक पंचरंग की रेत मिलती है, जिसे यात्री लोग प्रसाद रूप में ले जाते हैं। देखिए पृष्ठ 233।

2. सरोवर से आधे मील ऊपर के स्थान में यह पार करने योग्य होता है। चौमासे में जल कभी-कभी पाँच या छह फीट तक बढ़कर अलंघ्य हो जाता है। मानसरोवर से लगभग 4 मील की दूरी पर टग नदी के दाँईं और बाँईं ओर गर्म जल के सोते हैं। इनके आसपास चौमासे में जिंबू (तिब्बती प्याज) काटने के लिए खंपा लोग कई दिनों तक डेरा डालते हैं। यहाँ से 2 या 3 मील आगे नदी के बाँएँ किनारे पर अवस्थित पुरूरव नामक स्थान पर सितंबर के पहले या दूसरे सप्ताह में सात-आठ दिन तक एक मंडी लगती है, जहाँ नेपाल के लिमी प्रांत के लोग अनाज और लकड़ी की बनी वस्तुएँ और तिब्बती लोग नमक, याक आदि लेकर बेचने के लिए लाते हैं। यहाँ दो-तीन भोटियों की भी दुकानें लगती हैं। यहीं से नदी के किनारे-किनारे होकर टग ला जाकर ब्रह्मपुत्र के उद्गम तक एक मार्ग जाता है, जो मानसरोवर से 63 मील पर है।

   टग छम्पो मानसरोवर में गिरने वाली नदियों में सब से बड़ी है। इसका उद्गम कङलुङ कङरी नामक हिमनदियों में है। कुछ लोग मानते हैं कि ब्रह्मपुत्र नदी मानसरोवर के पूर्व तट से निकलती है, परंतु यह धारणा सर्वथा भ्रममूलक और निराधार है।

3. नीमापेंडी की उपत्यका बहुत चौड़ी है। उपत्यका की दोनों ओर ऊँचे पहाड़ और अधित्यकाएँ हैं। सरोवर से एक मील की दूरी पर नोनोकुर नामक चरवाहों के डेरे हैं, जहाँ नदी की दोनों ओर 25 काले तंबू मील भर तक लगते हैं। गर्मी में ये तंबू उपत्यका के उपरी भागों में तलिङ नामक स्थान में ले जाए जाते हैं।

2 मील यहाँ रिलजुङ नामक छोटे छू तक सरोवर के किनारे-किनारे, छू को बाँएँ किनारे को पार करें, मणि-दीवालें और छोरतेन, सरोवर का तीसरा छक्छल-गङ।

येर्नगो गोम्पा[1] (14$\frac{3}{4}$) (50$\frac{1}{2}$) 1 मील येर्नगो गोम्पा, मानसरोवर का सातवाँ मठ, 5 डाबे, गोम्पा के पास ही रिलजेन छू को पार करें।

3. ठुगोल्हो गोम्पा[2] या ठोकर मंडी (8) (2$\frac{1}{4}$) (53$\frac{3}{4}$) 2$\frac{1}{4}$ मील ठुगोल्हो गोम्पा तक

---

1. इस मठ के चकङ और दुवङ एक है, उसमें गुरु रिम्पोछे की मूर्ति है। मंदिर से सटे हुए दो-तीन घर हैं। यह साक्य गोम्पा के अंतर्गत है। यह मानसरोवर के किनारे ही स्थित है। गोम्पा के पश्चिम में पास ही रिलजेन छू बहती है। इस नदी में एक प्रकार के काले पत्थर हैं, जिनके ऊपर मणि-मंत्र खोदे जाते हैं। गोम्पा के आस-पास और कुछ आगे ठुगोल्हो गोम्पा के मार्ग में सुंदर मणि-पत्थरों के कई ढेर और दीवालें हैं।
2. ठुगोल्हो, ठु = स्नान, गो = सिर, ल्हो = दक्षिण। यह मठ सरोवर के पास ही पूर्वाभिमुख स्थित है। तिब्बती लोग यहीं स्नान करते हैं। कम-से-कम अपने सिर को तो अवश्य धो लेते हैं। यहाँ तक कि भेड़-बकरियों के ऊपर भी पानी छिड़क देते हैं। यह सरोवर के मठों में सबसे प्रसिद्ध और प्रधान मठ है। चकङ में कङरी ल्हप्सेन और दुवङ में दोर्जेछङ की मूर्तियाँ हैं। मठ के भीतर से पश्चिम का किवाड़ खोलने पर सामने कैलास का दर्शन होता है। यहाँ पर सरोवर का चौथा लिङ है। गोम्पा के प्रांगण और बाहर में ध्वजा है। यह और गोछल गोम्पा सिंबिलिङ मठ की शाखा है। यहाँ के भिक्षु लोग सिंबिलिङ से प्रति तीन वर्ष पर नियुक्त किए जाते हैं। यहाँ के वर्तमान लामा का नाम नौ कुशोक ला (1940 से 1943 तक) है, जो एक टुलकू (अवतारी) लामा हैं। ये बड़े विद्वान और सुयोग्य व्यक्ति हैं, लेखक सन् 1936-37 में वर्ष भर अपनी तपस्या के लिए यहीं ठहरा था और प्रतिवर्ष यहीं चातुर्मास में जाया करता है। लेखक की प्रेरणा से सन् 1936 से यहाँ पर श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी के अवसर पर एक वृहत यज्ञ, भजन और प्रसाद-वितरण तथा भोजादि समारोह होता है। 1941 के अगस्त में यहाँ पर एक सुंदर यज्ञवेदी और मंडप श्री कनकदंडि नारायण शास्त्री, श्री गोपालकृष्ण शास्त्री तथा श्री शंकर शास्त्री के द्रव्य-सहायता से उनके पिता श्री विश्वपति शास्त्री जी के स्मारक में निर्मित कराया गया है।

गोम्पा के पास आठ घर और एक डोङखङ है। परंतु प्रायः गाँव वाले बकरी के साथ चरागाह में रहते हैं। जुलाई और अगस्त के महीने में यहाँ एक अच्छी मंडी लगती है। उस समय ब्याँस और चौदाँस के भोटियों के 10 या 15 तंबू लगते हैं। कुछ दिन के लिए 10-15 खंपों के भी डेरे लगते हैं। यह ऊन कतरने का सबसे भारी केंद्र है। भोटिए लोग इसे ठोकर मंडी के नाम से पुकारते हैं। इस नाम का ठाकुर शब्द से कोई संबंध नहीं है। मठ की दक्षिण दिशा में मांधाता श्रेणी के दो छोटे शिखर हैं। इसमें दाहिने शिखर का नाम थुब्बारी है, जो ठुगोल्हो से लगभग 5$\frac{1}{2}$ मील पर है। इस शिखर के ऊपर से समस्त मानसरोवर, टापुओं के सहित राक्षसताल, साम्ने का कैलास और दूर तक का विशाल दृश्य अति रमणीक और नेत्ररंजक है। शिखर की पश्चिम दिशा में नमरेल्डी का कगारा दिखाई पड़ता है। ठुगोल्हो से एक मार्ग सीधे गुरला ला को जाता है, जिसका ब्यौरा इस प्रकार है—ठुगोल्हो से नमरेल्डी छू 2 मील, सेलुङ-हुरदुङ 1$\frac{1}{4}$ मील, (यहाँ से गुरला ला तक मंद चढ़ाई), गोगटा 2$\frac{1}{2}$ मील, पड़ाव की दीवालें 3$\frac{1}{2}$ मील, गुरला ला $\frac{1}{2}$मील; योग 9$\frac{3}{4}$ मील।

कुछ दूर डमाओं के बीच और कुछ दूर सरोवर के किनारे, मानसरोवर का आठवाँ मठ है, जिसमें 1 लामा और 7 डाबा रहते हैं, यहाँ से गोसुल गोम्पा तक मार्ग प्रायः सरोवर के किनारे से ही है।

$\frac{1}{2}$ मील अनुरा छू, छोटा-सा छू। 1$\frac{1}{4}$ मील नमरेल्डी छू[1], यहाँ 2-3 फीट गहरी नदी को पार करें। $\frac{1}{4}$ मील ठानदोवा, नमरेल्डी की एक शाखा। 1$\frac{1}{4}$ मील सेलुङ-हुर्दुङ छू, 2 या 3 फीट की गहरी नदी को पार करें। सेलुङ-हुर्दुङ नदी अपने स्थान को प्रायः बदलती रहती है तथा कभी-कभी नमरेल्डी में मिलकर एक हो जाती है।

1 मील मोमो दुनगू[2], टूटी-फूटी धर्मशाला की नींव। $\frac{1}{4}$ मील युशुप छो का प्रारंभ। 2 मील युशुप छो[3] के दूसरे सिरे तक मार्ग सरोवर और युशुप छो के बीच से जाता है, डेरे।

1 मील तक्शुर, मणि-दीवाल, बाँईं ओर मार्ग से कुछ ऊपर तक्शुर के पड़ाव की दीवालें हैं, जहाँ शीतकाल में कुछ गड़रिए डेरे डालते हैं।

2$\frac{1}{4}$ मील गोछुल–ल्होमा, मार्ग के ऊपर पहाड़ पर एक छोरतेन के ऊपर गोछुल–ल्होमा (दक्षिण गोछुल), गड़रियों के शीतकाल के डेरे हैं, छोरतेन होकर पहाड़ ही पहाड़ गोछुल गोम्पा तक एक मार्ग जाता है, परंतु सरोवर के किनारे के मार्ग से ही जाना चाहिए।

4. गोछुल गोम्पा (10$\frac{1}{4}$) (64) $\frac{3}{4}$ मील सरोवर के किनारे-किनारे चलकर 100 गज

---

1. इस नदी के ऊपरी कगारे में कई प्रकार के रंग-बिरंगे फूल हैं। यहीं पर दो सुंदर बर्फानी तालाब हैं तथा वे गुफाएँ हैं, जिनमें मानसरोवर के आस-पास के लोगों ने उस समय में आश्रय लिया था, जब जोरावर सिंह ने तिब्बत पर आक्रमण किया था। इस नदी के सिरे पर दो छोटे-छोटे सुंदर तालाब बर्फ के मध्य में हैं, जिनमें 'छूश्या' (जल-मांस) नामक एक शाक पैदा होता है। समीप में कैलास की धूप भी मिलती है। यहाँ से आगे चलकर पर्वत-माला पार करके तकलाकोट जा सकते हैं, किंतु मार्ग बहुत दुर्गम है।
2. यहाँ पर गुड़ की भेली और थू-जैसे तथा चाय की ईंट के आकार के एक प्रकार के पत्थर के सात ढेर तथा कुछ मणि-पत्थर भी हैं। कहा जाता है कि प्राचीन काल में भारत की सात कुमारियों ने इन्हें भारत से लाकर रखा था। यहाँ पर सरोवर का चौथा छकछल गङ है।
3. मानसरोवर के किनारे नैऋत्य कोण का यह छोटा-सा धनुषाकार (शशुप) जलाशय लगभग 2 मील लंबा और 100–200 गज चौड़ा है। मानसरोवर और जलाशय के मध्य का अंतर लगभग 60 फीट का है, जो छोटे-छोटे चिकने पत्थरों से आकीर्ण है। जलाशय के कोण में एक और छोटा-सा जलाशय है। इन जलाशयों में ङङ्वा (हंस) आदि अन्य जल-पक्षी बहुत रहते हैं। युशुप छो के जलाशय के मध्य से होकर गोछुल गोम्पा से तीन फलांग आगे तक कैलास के दर्शन नहीं होते।

ऊपर पहाड़ पर खड़ी चढ़ाई पार करने पर गोछुल गोम्पा में पहुँचते हैं, मानसरोवर[1] की परिक्रमा यहाँ पर समाप्त हो जाती है।

---

1. मानसरोवर की परिधि 54 मील है और यह दक्षिण की अपेक्षा उत्तर में विशेष चौड़ा है। इसका पूर्वी, दक्षिणी, पश्चिमी और उत्तरी तट क्रम से 16, 10, 13 और 15 मील है। गहराई लगभग 300 फीट तथा क्षेत्रफल लगभग 200 वर्गमील है। राक्षसताल की परिधि 77 मील है और क्षेत्रफल 140 वर्गमील है। मानसरोवर के किनारे पर 8 और राक्षसताल के किनारे पर एक मठ है। चातुर्मास में मलाठक से लेकर चेरकिप तक और तासालुङ से लेकर समो छम्पो तक छोड़कर सर्वत्र सरोवर के किनारे-किनारे आ-जा सकते हैं। शीतकाल में जब सरोवर जम जाता है, तो सारे सरोवर की परिक्रमा किनारे-किनारे कर सकते हैं। पूर्ण विवरण के लिए देखिए प्रथम तरंग।

तालिका 4
तकलाकोट से खोचारनाथ
–12 मील

तकलाकोट (0) (0) दे0 227, 252। $\frac{1}{8}$ मील चढ़ाई, एक नया छोरतेन।

गुकुङ ($\frac{1}{2}$) ($\frac{1}{2}$) $\frac{3}{8}$ मील तक कठिन उतराई, गुफाओं में घर, गोम्पा, यहाँ पर पुल से करनाली को बाँईं ओर को पार करें।

डंगेछिन छू ($\frac{1}{4}$) नदी को पुल से बाँईं ओर पार करें। डंगेछिन गाँव नदी के ऊपर एक मील की दूरी पर है। यहाँ से गेजिन तक मार्ग में स्थान-स्थान पर मणि-दीवालें और छोरतेन हैं। मार्ग के दोनों ओर खेत और गाँव हैं।

किरोङ ($1\frac{1}{4}$) (2) मार्ग के पास ही बाँईं ओर एक गोम्पा है।[1]

गेजिन छू (1) (3) नदी को बाँईं ओर पार करें।

गेजिन[2] ($\frac{1}{4}$) ($3\frac{1}{4}$) गाँव मार्ग के दोनों ओर स्थित है।

---

1. बहुत वर्ष पहले यहाँ पर एक गोम्पा था, जिसके जीर्ण होने पर सिंबिलिङ गोम्पा के अवतारी लामा नौकुशोक ने आज से 20 वर्ष पहले इसका निर्माण कराया। देवागार में चंवा, जंबयङ लुबजङदारा और डोलमा की मूर्तियाँ हैं। फसल के दिनों में अन्न एकत्रित करने के लिए उक्त लामा गुरु 20-25 डाबाओं के साथ आकर यहाँ दो मास तक ठहरते हैं।
2. गाँव के समीप मार्ग से बाँईं ओर 100 गज की दूरी पर दीपंकर श्रीज्ञान का पादचिह्न है। ठीक सामने करनाली नदी के पार एक पर्वत की चोटी पर सिद्दीखर नामक गोम्पा है, जो सिंबिलिङ की शाखा है। उस गोम्पा से तकलाकोट और खोचार के मध्य में स्थित करनाली नदी की घाटी का सुंदर दृश्य देखने में आता है। पहले वहाँ एक बड़ा दुर्ग था, जिसको 1854 में गोरखों ने विध्वंस कर दिया। 6 फीट मोटी और 25 फीट ऊँची दीवालों के खंडहर अभी विद्यमान हैं। इसके समीप में कई गाँव हैं, जिनमें अधिकांशतः खेती होती है। वहाँ जाने के लिए सीधा तकलाकोट से ही करनाली नदी के दाहिने किनारे से जाना पड़ता है, क्योंकि यात्रा के दिनों में करनाली नदी को पार करना प्रमादयुक्त है।

तकलाकोट से सिद्दीखर 5 मील है। सिद्दीखर से लुक्पू नामक गाँव लगभग 9 मील है। वहाँ से खितुरफुक् 9 मील पर है। खितुर में एक फुक् या गुफा है, जिसमें एक समय एक कुत्ता भीतर जाकर अदृश्य हो गया और कुछ काल बाद नेपाल में निकला। (खी कुत्ता, तुर=भाग गया या अदृश्य हो गया) कुष्ट रोगी इस गुफा के दर्शन के लिए जाते हैं। लोगों का विश्वास है कि उस गुफा में जाने से कुष्ट रोग छूट जाता है या कम से कम बढ़ नहीं सकता। लक्पू से खितुर तक का मार्ग बहुत चढ़ाई-उतराई का है। वहाँ से एक मार्ग खोचार को भी जाता है, जो लगभग 10 मील की दूरी पर है।

डुप छू (1) मार्ग की बाँईं ओर दीपंकर श्रीज्ञान द्वारा निर्मित एक छोटा-सा स्रोत है। यहाँ से कङ्जे तक खेती नहीं होती।

कङ्जे छू (3$\frac{3}{4}$) (8) यहाँ से नदी को बाँईं ओर पार करें।[1]

1 मील कड़ी चढ़ाई, एक बड़ा लप्चे। यहाँ से खोचार तक ज्वालामुखी पर्वत का अवशेष मालूम होता है।

2 मील तक बीच-बीच में चढ़ाइयों के साथ उतराई, पुराने छोरतेन, मणि, लप्चे और मंडल हैं। यहाँ से खोचार गोम्पा का प्रथम दर्शन होता है।

लालुङ्बा छू (3$\frac{1}{4}$) (11$\frac{1}{4}$) मील, यहाँ से फिर खेत प्रारंभ हो जाते हैं, नदी को बाँईं ओर पार करें।

1. खोचारनाथ ($\frac{3}{4}$) (12) तिब्बती लोग इसको केवल खोचार कहते हैं। देखिए पृष्ठ 140।

----

1. नदी के दोनों किनारों पर कई पनचक्कियाँ हैं। मार्ग से ऊपर नदी की घाटी में चङमा नामक कई पेड़ हैं। नदी के बाँएँ तट पर मार्ग के दोनों ओर कङ्जे नामक गाँव है, उसमें खेत अधिक हैं। मार्ग में बहुत-सी धर्मशालाएँ भी हैं। मार्ग की बाँईं ओर के गाँव में एक गोम्पा है, जो पूर्वी तिब्बत के छङ–सुगलिङ विहार की एक शाखा है।

तालिका 5
तकलाकोट से कैलास (तरछेन)
ज्ञानिमा मंडी और तीर्थपुरी होकर –111 मील

तकलाकोट (0) (0) देखिए पृष्ठ 227, 252।

तोयो (3) गाँव, यहाँ पर जोरावर सिंह की समाधि है, और खेत हैं।

देलालिङ ($\frac{1}{4}$) गरु छू को पुल से पार करें, देलालिङ का गाँव, यहाँ पर लामा ङुटुप का एक बड़ा छोरतेन है। आगे का मार्ग करनाली के किनारे-किनारे है।

लीं (2) तोय का एक छोटा गाँव, खेत, लीं नदी को पार करें।

छुरकुती (1$\frac{1}{4}$) यहाँ पर गर्म जल का एक सोता था, जो अब सूख गया है, ठीक सामने करनाली के पार कुनकुने गर्म जल का एक सुंदर सोता है।

सलुङ का डेरा (1$\frac{1}{2}$) करनाली के पार दाहिने किनारे पर सलुङ नामक तीन-चार घर का एक गाँव है, खेत।

रोनम (1$\frac{1}{2}$) मार्ग से 2 फर्लांग ऊपर तीन घर का गाँव है, खेत, नदी के पार दोह का गाँव, जहाँ खेत हैं।

रिंगुंग छू (1) यहाँ से रिंगुंग छू पार करें।

मप्छू या करनाली ($\frac{1}{4}$) 3 या 4 फीट की गहराई वाली वेगवती करनाली नदी के दाहिने किनारे को पार करें, 1 मील चलने के बाद नदी के बाँएँ किनारे पर खेत से भरे हुए दुङमर का गाँव दिखाई पड़ता है।

हरकोङ छू और करनाली का संगम (1$\frac{1}{4}$) मार्ग के नीचे पड़ाव की दीवालें, कुछ खेत और उसके नीचे संगम, यहाँ से करनाली का किनारा छोड़कर हरकोङ छू के किनारे-किनारे जाना चाहिए।

1. हरकोङ (2$\frac{1}{4}$) (14$\frac{1}{4}$) गाँव, तीन घर, कुछ काले तंबू, थोड़े खेत।

उर ला (6$\frac{3}{4}$) अंत में पौन मील की कड़ी चढ़ाई, लप्चे।

मप्चा चुंगो (2) (23) प्रारंभ में पौन मील की उतराई, मणि-दीवालें।[1]

मप् छू (2) यहाँ पर 3 या 4 फीट गहरी वेगवती मप् छू को पार करें।

---

1. मार्ग से दाहिनी ओर करनाली के तट के तल से एक बड़ा सोता तीव्र वेग से निकलता है, जिसका नाम मप्चा चुंगो (मयूर का मुख) है। यह करनाली का उद्गम माना जाता है। सोते का पानी हरी-हरी घासों के ऊपर से होकर नदी में गिरता है। घास का रंग मयूर-कंठ के वर्ण का है। करनाली की हिमनदी-उद्गम (ग्लेशियल सोर्स) लंपिया घाटा के पास है, जो यहाँ से लगभग दो दिन के मार्ग पर है। मप्चा चुंगो से लगभग दो मील पर बाँईं ओर पहाड़ पर प्रसिद्ध मशङ या मङशम गोम्पा नामक लाल टोपी शाखा के बौद्ध धर्मावलंबियों का है,

2. अनलङ (3¾) (28¾) अनलङ या अमलङ, डेरे, पड़ाव की दीवालें।

शींगलप्चे ला (1½) अंत में एक मील की कड़ी चढ़ाई।

छू जू (छूजा) (7) प्रारंभ के एक मील तक कठिन उतराई के बाद नदी को पार करें, कई काले तंबू।

छू जू ला (2¾) अंत के दो मील में कड़ी चढ़ाई।

छकरा मंडी[1] (4) (44) प्रारंभ के दो मील में बहुत कठिन उतराई।

3. ज्ञानिमा मंडी[2] (5) (49) [15100] इसे खरको भी कहते हैं।

ज्ञानिमा रप (4½) यहाँ तक मार्ग श्वेत शोरा की दलदल भूमि में होकर जाता है, तीन-चार फीट गहरे पानी को पार करें, यहाँ से दारमा याङ्ती नदी का उद्गम दो दिन के मार्ग की दूरी पर है।

एक कम ऊँचाई का घाटा (3¼) अंत में पौन मील की कड़ी चढ़ाई।

छूरूलबा ला (5) प्रारंभ में ¼ मील तक कठिन उतराई तथा अंत के 2¼ मील में बहुत कड़ी चढ़ाई पड़ती है।

शिठुम (3) (64¼) अंत तक उतराई है, परंतु प्रारंभ में ½ मील तक कठिन उतराई, डेरे, पहाड़ों के बीच में एक चौबटिया, संकुचित स्थान है, एक छोटा सोता, यहाँ प्रायः डाकुओं का भय रहता है।

तरा ला (3) घाटे तक चढ़ाई। 5 मील एक नदी के सूखे पाट तक बहुत कठिन और लगातार उतराई पड़ती है। 3 मील सतलज के किनारे तक नदी के पाट से होकर। ¼ मील सतलज के किनारे-किनारे जाकर 3 या 4 फीट गहरी वेगवती सतलज को पार करें।

इसमें 1940 ई० के अगस्त महीने में 6 वर्ष के एक अवतारी लामा को गद्दी पर विठाया गया है। मठ की गद्दी पर बैठने वाले दूसरे लामा यही हैं।

1. यहाँ दारमा के भोटियों की बड़ी मंडी है। परंतु कुछ जोहारी भी इस मंडी में आते हैं। मंडी अगस्त और आधे सितंवर तक लगती है। यहाँ पर एक पेय जल का स्रोत तथा एक भारी तालाव है, जिसके चारों ओर शोरा है। इस तालाव से निकलकर एक छू ज्ञानिमा के तालाव में गिरता है। यह मंडी परखा-तसम के शासन के अंतर्गत है। जिस पहाड़ के तल में मंडी लगती है, उसके शिखर से कैलास का भव्य दर्शन होता है।

2. ज्ञानिमा पश्चिमी तिव्वत की सभी मंडियों में बड़ी है। यहाँ 500 या 600 तंबू लगते हैं। यह प्रधानतया जोहारियों की मंडी है। परंतु सभी घाटे और सभी स्थानों—दारमा, व्याँस, नीती, माना, नीलंग, रामपुर, रुदोक, कुल्लू, लदाख, काश्मीर, ल्हासा, नेपाल, पुरङ आदि—के व्यापारी यहाँ आते हैं। इस मंडी में हरे साग के अतिरिक्त कलकत्ते के बाजार की सभी वस्तुएँ मिलती हैं। मंडी जौलाई और अगस्त के महीने में एक छोटे-से पहाड़ के दोनों ओर लगती है। यहाँ स्वच्छ जल के कई सोते हैं। समीप ही एक छोटी-सी नदी है, जो कुछ दूर आगे जाकर एक चौड़े तालाव-सी बन जाती है। मंडी के चारों ओर शोरा पाया जाता है। मंडी के पूर्व के पहाड़ के उत्तरी छोर पर जोरावर सिंह के तोड़े हुए एक पुराने किले

5. तीर्थपुरी गोम्पा[1] ($8\frac{1}{4}$) (76) [14600] कुछ तिब्बती लोग इसे टेटापुरी भी कहते हैं। देखिए पृ0 229।

ट्रोकपो–नुप् छू ($5\frac{1}{4}$) 2 या 3 फीट गहरी नदी को पार करें, इसके दोनों ओर डेरे।

ट्रोकपो-शर छू[2] 3 या 4 फीट की गहरी वेगवती नदी को पार करें; (यहाँ से सतलज के दोनों ओर मार्ग है)।

सतलज (2) गोयक नामक नदी सतलज के दाहिने किनारे पर मिलती है। सतलज के बाँएँ किनारे को पार करें, जो 2-$3\frac{1}{2}$ फीट गहरा है।

चुकटा (4) यह नदी भी सतलज के दाहिने किनारे पर मिलती है, इस नदी का पाट बहुत चौड़ा है और यह कई शाखाओं में बहती है; यहाँ से ऊपर चलकर सतलज का स्वरूप खेतों को सींचने वाली एक पतली नहर की भाँति हो जाता है, यहाँ नदी थोड़ी दूर तक दक्षिण की ओर मुड़ जाती है। 1 मील आगे सतलज को दाहिनी ओर पार करें।

6. दुलचू गोम्पा (2) (90 $\frac{3}{4}$) [14820] 1 मील (?) आगे दुलचू गोम्पा सतलज के दाहिने किनारे पर स्थित है, गोम्पा से एक फर्लांग की दूरी पर दलदल में स्थित सोतों में सतलज का परंपरागत उद्‌गम-स्थान है, देखिए पृष्ठ 231, तालिका 6।

चङजे-चङजू ($8\frac{1}{4}$) डेरे, पड़ाव की दीवालें।

करलेब छू ($7\frac{1}{2}$) यहाँ 2 या $2\frac{1}{2}$ फीट गहरी नदी को बाँएँ किनारे पर पार करें।

ल्हा छू (3) $2\frac{1}{2}$ या 3 फीट गहरी वेगवती नदी को बाँएँ किनारे पर पार करें।

7. कैलास (तरछेन) ($2\frac{1}{2}$) (111) देखिए पृष्ठ 256।

के खंडहर हैं। पहाड़ के शिखर से कैलास के दर्शन होते हैं। पश्चिमी तिब्बत के सभी प्रधान स्थानों और घाटों को यहाँ से मार्ग जाता है। यह दापा जोङ के शासन के अंतर्गत है।

1. यहाँ से सीधा न्यनरी गोम्पा जाने के मार्ग का विवरण इस प्रकार है—तीर्थपुरी से ट्रोपो-नुप् छू $5\frac{1}{4}$ मील; ट्रोकपो-शर $\frac{3}{4}$ मील; गोयक छू 2 मील; चुकटा छू $7\frac{1}{2}$ मील, यह दो या तीन फीट गहरी नदी है, योग $15\frac{1}{2}$ मील है, यह पहले दिन का मांग है। दूसरे दिन का मार्ग—चुकटा से शरला-चकङ $2\frac{1}{2}$ मील है; शर ला $\frac{3}{4}$ मील; लप्चे, यह नाममात्र का ला है। यहाँ पर एक पहाड़ है, जिसके वारे में कहा जाता है कि वैशाख पूर्णिमा के दिन कैलास की छाया इस पर गिरती है। इस पहाड़ की लाल मिट्‌टी को तिब्वती लोग प्रसाद रूप में ले जाते हैं, जो पशु-रोगों में औषधि का काम देती है। $\frac{3}{4}$ मील करलेप छू, लप्चे, $\frac{1}{16}$ मील लप्चे; $\frac{3}{16}$ मील लप्चे, मंडल की कतारें, एक-दो फीट गहरी करलेप छू को पार करें; $1\frac{1}{4}$ मील करलेप की एक छोटी सी शाखा; $\frac{1}{4}$ मील दलदल भूमि पर; 1 मील पर करलेप छू की प्रधान नदी, दो या ढाई फीट की गहरी इस नदी को पार करें; $1\frac{1}{4}$ मील डेरे; $1\frac{1}{4}$ मील एक छू; $\frac{1}{4}$ मील एक और छोटी छू; $\frac{1}{4}$ मील के भीतर एक और छोटी छू; $\frac{1}{8}$ मील की कड़ी चढ़ाई, लप्चे; $\frac{1}{8}$ मील घाटे के ऊपर, छकछल-गङ, मंडल, यहाँ से ल्हा छू और कैलास दिखाई पड़ता है; $\frac{1}{2}$ मील ल्हा छू के तट तक बहुत कठिन उतराई; $1\frac{1}{4}$ मील न्यनरी गोम्पा, योग $11\frac{3}{4}$ मील है। तीर्थपुरी से न्यनरी कुल $26\frac{1}{4}$ मील है और तीर्थपुरी से तरछेन 28 मील है।

तालिका 6
तकलाकोट से तीर्थपुरी
सीधा मार्ग–65 मील

तकलाकोट (0) (0) देखिए पृष्ठ 252 और तालिका 5।

रिंगुग छू ($10\frac{1}{2}$) " "

1. मप् छू ($\frac{3}{4}$) ($11\frac{1}{4}$) करनाली नदी का बाँयाँ तट।

$\frac{1}{2}$ दुङ्मर छू दुङ्मर का गाँव[1] यहाँ से $\frac{1}{2}$ मील की दूरी पर है।

$\frac{1}{2}$ मील यहाँ से ठीक सामने करनाली के पार हरकोङ छू है, जिसकी बाँईं ओर और करनाली के दाहिने तट पर गर्म पानी के कुछ सोते हैं। $\frac{3}{4}$ मील बलडक छू, यहाँ से गुरला छू तक दलदल भूमि है। यहाँ घुड़सवार को सावधानी से चलना चाहिए, हो सके तो उतरकर चलें, क्योंकि प्रायः घोड़े कीचड़ में धँस जाते हैं।

गुरला छू[2] ($2\frac{3}{4}$) (14) 1 मील $1\frac{1}{2}$ या 2 फीट गहरी नदी के दाहिने किनारे को पार करें। यहाँ से कुछ नीचे चलकर गुरला छू करनाली में मिलती है। $1\frac{3}{4}$ मील करनाली के किनारे-किनारे, नदी छोड़कर दाहिने ओर 1 फर्लांग जाने पर एक लप्चे।

$\frac{3}{4}$ मील उपत्यका पर । $\frac{1}{4}$ मील उतार, रो नामक स्थान, खेत। 2 मील ग्युङडी, यहाँ दलदल भूमि में कुछ सोते हैं। $\frac{3}{4}$ मील छमी, करदुङ गाँव के खेत हैं, यहाँ से $\frac{3}{4}$ मील आगे करनाली को बाँईं ओर छोड़कर छिबरा छू के किनारे-किनारे ऊपर जाना चाहिए।

2. छिपरा पड़ाव (10) (24) $4\frac{1}{2}$ मील छिपरा छू के किनारे पर पड़ाव है।

छिपरा ला (2) 2 मील कड़ी चढ़ाई, लप्चे, तरचोक, यहाँ से मांधाता और धौली की हिमाच्छादित पर्वतमालाएँ दिखाई पड़ती हैं।

2 मील छिपरा दो तक कुछ दूर बहुत कड़ी फिर कुछ कम कड़ी उतराई है। बाँईं ओर की दून अनलङ को और दाहिने ओर की राक्षसताल को जाती है। $\frac{3}{4}$ मील

---

1. दुङ्मर से बुरफू एक मील और पुरबू से बलडक 4 मील है।
2. यहाँ से लगभग $1\frac{1}{2}$ मील ऊपर गुरला छू के बाँएँ किनारे करदुङ (कर= सफेद, तुङ= शंख) नामक एक गाँव है। यहाँ पर परखा तसम शीतकाल में रहता है, 7-8 घर हैं, पर्याप्त खेत हैं। एक छोटे-से पहाड़ की चोटी पर गोम्पा है, जो लगभग बीस वर्ष पहले निर्मित हुआ था। यह मशङ गोम्पा की शाखा है। गोम्पा की चकङ डोलमा दुवङ में शाक्य थुब्बा की मूर्ति है। दूसरे भवन में चार बड़े-बड़े मणि-चोंगे हैं। सौ वर्ष पहले यहाँ पर एक जोङपोन होते थे, जोरावर सिंह ने यहाँ के दुर्ग का विध्वंस कर दिया था।

एक ला तक चढ़ाई, लप्चे, यहाँ से कैलास के दर्शन होते हैं। 2 मील ग्येकुङ तक कुछ दूर बहुत कड़ी और कुछ दूर कड़ी उतराई है।[1] $\frac{1}{4}$ मील मैदान। $\frac{1}{4}$ मील से अधिक चढ़ाई, लप्चे। $\frac{3}{4}$ मील उतार, लप्चे, मांधाता दिखाई पड़ता है। $\frac{1}{4}$ मील बहुत कठिन उतराई। 1 मील विशाल मैदान (अंत में राक्षसताल और ज्ञानिमा मार्ग की काट)। $\frac{1}{2}$ मील मंद चढ़ाई। $\frac{1}{4}$ मील मंद उतराई, डेरे। $\frac{1}{4}$ मील मंद उतराई। 1 मील पर्वत के नीचे एक विशाल मैदान के किनारे-किनारे।

3. युपचा[2] ($9\frac{1}{4}$) ($35\frac{1}{4}$) छोटे-छोटे सोते हैं और चारों ओर विशाल मैदान है।

$2\frac{1}{2}$ मील एक ला तक मंद चढ़ाई; राक्षसताल, मांधाता, नंदादेवी और त्रिशूल की चोटियाँ दिखाई पड़ती हैं। $\frac{1}{2}$ मील बहुत कड़ी उतराई। $2\frac{1}{4}$ मील मैदान (उस मैदान का जल राक्षसताल में जाता है।)

छलम ला ($6\frac{1}{4}$) 1 मील मंद चढ़ाई, इसे थलम ला भी कहते हैं, कैलास के दर्शन, ज्ञानिमा-कैलास मार्ग की काट (छूमिकशला यहाँ से 3 मील की दूरी पर है)।

2 मील सामान्य, कठोर और मंद उतराई, डेरे।

$\frac{1}{2}$ मील कड़ी और मंद उतराई। एक सूखा नाला, जो छूमिकशला नाले में मिलता है, छूमिकशला आगे सतलज में जाकर मिलती है।

3 मील मैदान में दोमरा तक, एक लाल पर्वत के अग्रभाग के नीचे मणि-दीवालें हैं।

सतलज (8) $2\frac{1}{2}$ मील एक पर्वत के किनारे-किनारे।

1 मील टेढ़ी-मेढ़ी सतलज के बाँएँ किनारे दलदल भूमि होकर, यहाँ पर सतलज 6 फीट चौड़ी है, 2 फीट गहरी सतलज के दाहिने किनारे को पार करें।

लङचेन खंबब् ($1\frac{1}{4}$) $\frac{1}{4}$ मील दलदल भूमि में, 50 गज लंबे-चौड़े दलदल भूमि में कुछ सोते हैं, जो तिब्बती पुराणों के अनुसार सतलज के उद्गम माने जाते हैं। राक्षसताल से यहाँ तक सतलज नदी छोलुङबा के नाम से भी पुकारी जाती है।

4. दुलचू गोम्पा ($\frac{1}{4}$) (51) $\frac{1}{4}$ गोम्पा, दे0 पृष्ठ 231।

$\frac{3}{8}$ मील सतलज के बाँएँ किनारे को पार करें।

$\frac{1}{8}$ मील गोम्पा के पास रहने से यहाँ डेरा डालने में विशेष सुविधा होती है।

---

1. पर्वतों के मध्य में चारों ओर फैला हुआ यहाँ एक विशाल मैदान है। मैदान के बीच में एक छोटा-सा नाला बहता है। बरसात में होरग्येवा वालों के तंबू यहाँ लगते हैं। बाँईं ओर का मार्ग अनलङ और दाहिनी ओर का टक्-करपो जाता है।
2. यहाँ से $\frac{3}{4}$ मील आगे दाहिनी ओर एक छोटा-सा पहाड़ है। उसका रंग 'यु' (पिरोजा) जैसा नीला है, इसलिए इस स्थान का नाम युपचा पड़ गया।

$\frac{1}{2}$ मील तक सतलज एक तालाब-सी बन जाती है।

चुकटा छू[1] (2) $\frac{3}{4}$ मील। $\frac{1}{2}$ मील पर्वतों के मध्य में। $1\frac{1}{2}$ मील के बाद लप्चे, अंत में 1 फर्लांग कड़ी चढ़ाई। $1\frac{1}{2}$ मील एक सूखा नाला।

सतलज (4) $\frac{1}{2}$ मील $2-3\frac{1}{2}$ फीट गहरी और वेगवती सतलज के दाहिने किनारे को पार करें। यहाँ से आगे लगभग 2 मील तक सतलज के विशाल दून में (इस स्थान को शकारीजे कहते हैं) चौमासे में गड़रियों के कई तंबू लगते हैं, क्योंकि नदी के दोनों ओर दलदल भूमि और चरागाहें हैं।

ट्रोपो-शर छू[2] (2) 2 मील यहाँ तक मार्ग दलदल भूमि में है, सतलज का मनोरम दृश्य है। दे० तालिका 5। $\frac{1}{4}$ मील कड़ी चढ़ाई, लप्चे। $\frac{1}{4}$ मील ऊँची-नीची। $\frac{1}{4}$ मील कड़ी उतराई।

ट्रोपो-नुप ($\frac{3}{4}$) यह भी एक वेगवती नदी है, जो 3 फीट गहरी है, दाहिने किनारे को पार करें। $\frac{3}{4}$ मील कड़ी चढ़ाई, लप्चे। $2\frac{1}{2}$ मील उपत्यका, खंडोमा नामक मंडलों का एक गोल। $1\frac{1}{2}$ मील उपत्यका पर, एक सूखा नाला। $\frac{1}{2}$ मील सूखा नाला।

5. तीर्थपुरी ($5\frac{1}{4}$) (65) $\frac{1}{4}$ मील तीर्थपुरी गोम्पा। देखिए पृष्ठ 229।

---

1. यह नदी कैलास पर्वत-माला से आकर सतलज के दाहिने किनारे पर मिलती है। इसका पाट $\frac{3}{4}$ मील चौड़ा है। यह कई शाखाओं में बहती है और सतलज से लगभग 10 गुना अधिक पानी लाती है। बरसात में कभी-कभी सतलज से 50 गुना बढ़ जाती है। यहाँ तक सतलज का स्वरूप खेतों को सिंचाने वाली एक छोटी-सी नहर की भाँति है; चुकटा के मिलने के बाद सतलज सचमुच हिमालय की अन्य नदियों के वैभव को प्राप्त करती है और बहुत वेग से बहती है। यहाँ से $\frac{1}{2}$ मील तक नदी ऊँची पर्वत-मालाओं के मध्य बहुत संकीर्ण घाटी में बहती है। वहाँ एकदम बहुत सुंदर और गंभीर हो जाती है। इस घाटी में जाते समय मनुष्य एक अलौकिक आनंद का अनुभव करता है।

2. इसे टोकपो-शर भी कहते हैं। यह बहुत वेगवती नदी है और 4 फीट गहरी है। कुछ यात्री इस नदी के बाँएँ किनारे पर डेरा डालकर तीर्थपुरी होकर शाम को वापस लौट आते हैं। ऐसा करने में ट्रोपो-शर और ट्रोपो-नुप इन दोनों नदियों को सारे घोड़े और सामान लेकर दो बार पार करने के कष्ट से बच जाते हैं। सतलज और ट्रोपो-शर का संगम यहाँ से बहुत समीप है और खड़ी दीवालों के पर्वत की मध्य में है।

तालिका 7
कैलास (तरछेन) से ज्ञानिमा मंडी
–38 मील

कैलास (तरछेन) (0) (0) देखिए पृष्ठ 256।

ल्हा छू ($2\frac{1}{4}$) $2\frac{1}{2}$ या 3 फीट गहरी वेगवती नदी के दाहिने किनारे को पार करें।

खलेब छू (3) $2\frac{1}{2}$ फीट गहरी नदी को दाहिने किनारे पर पार करें।

सतलज ($8\frac{3}{4}$) यहाँ एक फुट गहरी सतलज को बाँएँ किनारे पर पार करें।

लेजेंडक या ललिङ्टक ($\frac{1}{2}$) डेरे, यहाँ सतलज को दाहिनी ओर छोड़कर मार्ग से दाहिनी ओर पहाड़ में बड़ी-बड़ी गुफाएँ हैं, यहाँ प्रायः डाकुओं का भय रहता है।

ललिङ्टक ला ($\frac{3}{4}$) चढ़ाई, लप्चे।

1. छूमिक्शला[1] ($6\frac{1}{2}$) ($21\frac{3}{4}$) डेरे, छोटा-सा नाला, मार्ग में दाहिनी ओर दूर में दुलचू गोम्पा दिखाई पड़ता है।

छलम ला (3) लप्चे, यहाँ तक कैलास के दर्शन होते हैं। यहाँ से एक मार्ग दुलचू जाता है, जो $9\frac{1}{2}$ मील पर है।

रंदक छू (4) एक छोटा-सा छू, डेरे।

पसालुङ ला (1) चढ़ाई।

पसालुङ (3) प्रारंभ में $\frac{3}{4}$ मील तक कड़ी उतराई, डेरे।

रप[2] (4) 2 या 3 फीट गहरे रप को पार करें। रप बहुत दलदल है।

2. ज्ञानिमा मंडी ($1\frac{1}{4}$) (38) एक पहाड़ पर चढ़कर दूसरी ओर उतरें और दलदल भूमि से होते हुए एक छोटी-सी नदी को पार करें, ज्ञानिमा मंडी, देखिए तालिका 5।

---

1. यह स्थान छूमरशला, छूमीशला और छूमिगशला नामों से भी प्रसिद्ध है।
2. नदी को पार करने का योग्य स्थान।

तालिका 8

अल्मोड़े से लीपूलेख घाटा, तकलाकोट, ज्ञानिमा मंडी और तीर्थपुरी होकर कैलास, कैलास-परिक्रमा, मानसरोवर-परिक्रमा और गुरला ला होकर खोचारनाथ और गर्ब्यांग होते हुए अल्मोड़े लौटने तक के संपूर्ण यात्रा की संक्षिप्त तालिका–600 मील

	स्थान का नाम	दो स्थानों के अंतर	कुल दूरी मील
	अल्मोड़ा	0	0
1.	बाड़े छीना	$8\frac{1}{2}$	$8\frac{1}{2}$
	धौल छीना	5	
	बुंगा	$2\frac{1}{2}$	
	कनारी छीना	$2\frac{3}{4}$	
2.	सेराघाट	$5\frac{1}{4}$	24
	गणाई	6	
	बाँसपटान	6	
	सुक्ल्याड़ी	3	
3.	बेरीनाग	$3\frac{1}{4}$	$42\frac{1}{4}$
	गड़तिर	$2\frac{1}{2}$	
4.	थल	7	$51\frac{3}{4}$
	सांदेव	$7\frac{3}{4}$	
5.	डीडी हाट	$2\frac{1}{2}$	62
	अस्कोट	7	
6.	जौलजीबी	5	74
	बलुवाकोट	$6\frac{1}{2}$	
7.	धारचूला	10	$90\frac{1}{2}$
	तपोवन	2	
8.	खेला	8	$100\frac{1}{2}$
	पंगु	6	
9.	सोसा	3	$109\frac{1}{2}$
	सिरदंग	$2\frac{1}{4}$	
	सिरखा	$\frac{1}{2}$	
10.	जीबती	11	$123\frac{1}{4}$
	निजङ जलप्रपात	$5\frac{3}{4}$	

	स्थान का नाम	दो स्थानों के अंतर	कुल दूरी मील
11.	मालपा	$2\frac{1}{2}$	$131\frac{1}{2}$
	बुदी	$8\frac{3}{4}$	
12.	गर्ब्यांग	5	$145\frac{1}{4}$
13.	कालापानी	11	$156\frac{1}{4}$
	लीपूलेख घाटा	$9\frac{1}{4}$	$165\frac{1}{2}$
	पाला	6	
14.	तकलाकोट	$5\frac{1}{4}$	$176\frac{3}{4}$
	तोयो	3	
	मप् छू या करनाली	$7\frac{3}{4}$	
15.	हरकोङ	$3\frac{1}{2}$	191
	मयूचा चुंगो	$8\frac{3}{4}$	
	मप् छू	2	
16.	अनलङ	$3\frac{3}{4}$	$205\frac{1}{4}$
	शिंगलप्चे ला	$1\frac{1}{2}$	
	छूजू ला	$9\frac{3}{4}$	
	छकरा मंडी	4	
17.	ज्ञानिमा मंडी (खरको)	5	$225\frac{3}{4}$
	ज्ञानिमा रप	$4\frac{1}{2}$	
18.	शिठुम	$11\frac{1}{4}$	$241\frac{1}{2}$
	तरा ला	3	
19.	तीर्थपुरी	$8\frac{1}{4}$	$252\frac{3}{4}$
	ट्रोक्पो-शर छू	6	
20.	दुलचू गोम्पा	$8\frac{3}{4}$	$267\frac{1}{2}$

21.	कैलास (तरछेन)	21½	288¾
	न्यनरी गोम्पा	5	
22.	डिरफुक् गोम्पा	7¼	301
	डोलमा ला	4	
	गौरीकुंड	¼	
	जुंठुलफुक् गोम्पा	9¼	
23.	झोङ छू	3	317½
	ग्युमा छू	11½	
24.	कुगलुङ छू	2¾	331¾
	पलचेन छू	8½	
	पलचुङ छू	1¼	
	समो छङ्पो	2¾	
25.	सेरालुङ गोम्पा	3½	347¾
	टग छंङ्पो	9¾	
	येर्नगो गोम्पा	5½	
26.	ठुगोल्हो गोम्पा (मानसरोवर)	2¾	364¾
	गुरला ला	9¾	
	गुरलाफुक् (गौरी उड्यार)	4	
27.	बलडक	4½	382½
28.	तकलाकोट	16	398½
29.	खोचारनाथ	12	410½
	तकलाकोट	12	
30.	पाला	5¼	427¾
	लीपूलेख घाटा	6	
31.	कालापानी	9½	443
32.	गर्ब्यांग	11	454
33.	मालपा	13¾	467¾
34.	जीपती	8¼	476
35.	सोसा	13¾	489¾
36.	खेला	9	498¾
37.	धारचूला	10	508¾
38.	जौलजीबी	16½	525¼
39.	डीडीहाट	12	537¾
40.	थल	10¼	547½
41.	बेरीनाग	9½	557
42.	सेराघाट	18¼	575¼
43.	बाड़े छीना	15½	590¾
44.	अल्मोड़ा[1]	8½ (¾)	600

तालिका 9

कैलासखंड और केदारखंड के कुछ प्रधान स्थानों के मध्य की दूरी

		मील
1.	अल्मोड़े से कैलास (लीपूलेख घाटा होकर)	239
2.	अल्मोड़े से कैलास (दारमा घाटा होकर)	230
3.	अल्मोड़े से कैलास (ऊँटाधुरा होकर)	210
4.	जोशीमठ से कैलास (गुरला-नीती घाटा होकर)	200

1. मार्ग में घोड़े और कुलियों के प्रबंध तथा विश्राम के लिए 16 दिन और लगाकर पूरी यात्रा—कैलास और मानसरोवर की परिक्रमा और ज्ञानिमा मंडी, तीर्थपुरी और खोचारनाथ के दर्शन—दो महीने में अच्छी प्रकार से कर सकते हैं। जो उतना समय नहीं लगा सकते तथा इतने दिनों तक लगातार यात्रा के कष्ट को नहीं सहन कर सकते, वे अपनी अनुकूलता के अनुसार यहाँ पर दी हुई तालिका से अपना यात्रा-क्रम बना लें।

	मील
5. जोशीमठ से कैलास (डमजन-नीती होकर)	160
6. जोशीमठ से कैलास (होती-नीती होकर)	158
7. बदरीनाथ से कैलास (माना घाटा होकर)	238
8. मुखुवा (गंगोत्तरी) से कैलास (जेलूखागा होकर)	243
9. शिमला से कैलास (शिपकी घाटा और गरतोक होकर)	445
10.शिमला से कैलास (थुलिङ मठ होकर)	473
11.काश्मीर-श्रीनगर से कैलास (लदाख होकर)	605
12.पशुपतिनाथ (नेपाल) से कैलास (मुक्तिनाथ और खोचार होकर)	?525
13.ल्हासा से कैलास	? 800
14.कैलास-परिक्रमा	32
15.मानसरोवर की परिधि	54
16.रावणह्रद की परिधि	77
17.कैलास (तरछेन) से सिंधु नदी का उद्गम (ल्हे ला या तापछेन ला होकर)	46
18.परखा से ब्रह्मपुत्र का उद्गम	92
19.परखा से सतलज का उद्गम (दुलचू गोम्पा के पास)	22
20.परखा से टग छङपो का उद्गम	65
21.तकलाकोट से करनाली का उद्गम	23
22.कैलास से मानसरोवर	16
23.कैलास से तीर्थपुरी	28
24.कैलास से दुलपू गोम्पा	21
25.कैलास से ज्ञानिमा मंडी	38
26.तीर्थपुरी से ज्ञानिमा मंडी	27
27.ज्ञानिमा मंडी से गरतोक	76
28.ज्ञानिमा मंडी से सिबचिलिम मंडी	28
29.ज्ञानिमा मंडी से तकलाकोट	49
30.तकलाकोट से ठुगोल्हो	34
31.तकलाकोट से खोचारनाथ	12
32.सिबचिलिम से नाब्रा मंडी	$38\frac{1}{2}$
33.नाब्रा से थुलिङ मठ	$33\frac{1}{2}$
34.थुलिङ से बदरीनाथ	?100
35.तरछेन से सेरदुङ-चुकसुम	$7\frac{3}{4}$
36.तरछेन से छो कपाला	6
37.तरछेन से सेरदुङ-चुकसुम और छो-कपाला होकर तरछेन	18
38.हल्द्वानी से अल्मोड़ा (पैदल)	41
39.हल्द्वानी से अल्मोड़ा (बस)	86
40.अल्मोड़े से पिंडारी ग्लेशियर	73
41.हृषीकेश से यमुनोत्तरी	$118\frac{1}{2}$
42.हृषीकेश से गंगोत्तरी	145
43.हृषीकेश से केदारनाथ	$133\frac{1}{2}$
44.हृषीकेश से बदरीनाथ	$167\frac{1}{2}$
45.हृषीकेश से जोशीमठ	$148\frac{1}{2}$
46.जोशीमठ से बदरीनाथ	19
47.रामनगर से बदरीनाथ	164
48.यमुनोत्तरी से गंगोत्तरी	$98\frac{1}{2}$
49.गंगोत्तरी से केदारनाथ	123
50.केदारनाथ से बदरीनाथ	101
51.मसूरी से यमुनोत्तरी	86
52. हृषीकेश से यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी, केदारनाथ तथा बदरीनाथ होकर हृषीकेश	608
53.गंगोत्तरी से गोमुख	13
54.उत्तरकाशी से डोडीताल	18
55.केदारनाथ से बासुकीताल	? 2
56.चमोली से गोहन	16
57.पांडुकेश्वर से लोकपाल	15
58.बदरीनाथ से सतोपंथ	18
59. मिलम से शांडिल्यकुंड	6
60.धारचूला से छिपलाकोट	25

तालिका 10

श्री कैलास और मानसरोवर का दूसरा मार्ग

अल्मोड़े से दारमा घाटा होकर–230 मील

अल्मोड़ा (0) (0)

1.—7. ... ...

8. खेला ($100\frac{1}{2}$) ($100\frac{1}{2}$) देखिए श्री कैलास का पहला मार्ग। इस मार्ग का अंतिम डाकघर, धौलीगंगा के किनारे।

न्यो ($9\frac{1}{2}$) दो घर का गाँव, खरउड्यार या मृत्युगुफा। देखिए पृष्ठ 219।

सोवला ($\frac{1}{2}$) दारमा भोटियों का गोदाम-घर, दारमा भोट यहाँ से प्रारंभ होता है।

9. दर (2) ($112\frac{1}{2}$) गाँव, गाँव से 1 मील ऊपर गर्म सोते। 3 मील बोलिङ, गाँव। 5 मील उड़थिंग, गुफाएँ। 1 मील सेला, गाँव।

10. नागलिंग (14) ($126\frac{1}{2}$) 5 मील गाँव। इस गाँव के आस-पास सोमा या सोमकल्प नामक एक औषधि बहुत उत्पन्न होती है। इसका लैटिन नाम 'एफेड्रा वलगेरिस' है। यह दमा की विख्यात औषधि है।

4 मील बालंग, गाँव। 4 मील दुगतू या दुगतुंग और सौन, गाँव।

2 मील दाँतू, गाँव।

11. गो (12) ($138\frac{1}{2}$) 2 मील अंतिम गाँव।

बिदङ (6) यहाँ अगस्त के महीने में एक मंडी लगती है। दारमा, नीती और नेपाल के लोग, खंपा और तिब्बती डोकपा मंडी में आते हैं। विशेषकर ऊन, नमक और अनाज का विनिमय होता है।

12. डावे (11) ($155\frac{1}{2}$) धर्मशालाएँ, घाटे की चढ़ाई प्रारंभ।

दारमा घाटा या नूवे ($5\frac{1}{2}$) (161) [18510] अंत में आध मील की खड़ी चढ़ाई है, जहाँ घोड़े नहीं चल सकते, भारतीय सीमा, यह घाटा जून के महीने से सितंबर के अंत तक जाने के योग्य रहता है, बहुधा बर्फ में दरारों के कारण धोखा हो जाता है।

मङ्वल[1] या मङ्गुल (4) (165) डेरे, यहाँ तक उतराई।

सिलती ($5\frac{1}{2}$) सन् 1930 से यहाँ पर एक छोटी-सी मंडी 10 या 15 दिनों के लिए लगती है।

14. लामा छोरतेन ($4\frac{1}{2}$) (175) यहाँ कंई छोरतेन और मणि-दीवालें हैं। यहाँ एक मंडी

---

1. यहाँ से एक मील पीछे से ही एक मार्ग लंपिया घाटा को जाता है। मङ्वल से लंपिया घाटा $5\frac{1}{2}$ मील [18150 फीट], वहाँ से जोलिङ कोङ 13 मील, कुटी $6\frac{1}{2}$ मील, गर्ब्यांग $18\frac{1}{2}$ मील है।

लगती है।

छकरा मंडी (12) (187) इसे कुछ लोग ज्ञानिमा-छकरा भी कहते हैं। यह दारमा भोटियों की मंडी है, यहाँ से एक मार्ग सीधा छलम ला होकर कैलास जाता है, देखिए तालिका 7।

15. ज्ञानिमा मंडी (5) (192) जोहार भोटियों की मंडी, देखिए तालिका 7।

16. छुमिक्एशला (16$\frac{1}{4}$) (208$\frac{1}{4}$) डेरे ।

17. कैलास (तरछेन) (21$\frac{3}{4}$) (230) देखिए तालिका 1 और 7।

तालिका 11

श्री कैलास और मानसरोवर का तीसरा मार्ग

अल्मोड़े से ऊँटाधुरा घाटा होकर–210 मील

अल्मोड़ा (0) (0)

(6$\frac{1}{2}$) दीनापानी, जं0, दुकान, चाय।

कपड़खान (1) दुकान, अल्मोड़े से यहाँ तक मोटर सड़क है, यहीं से एक मार्ग बिनसर के सेनेटोरियम को जाता है, जो 5 मील पर है।

भैंसोड़ी छीना (2$\frac{3}{4}$) घाटा।

बसौली (1) कड़ी उतराई, गाँव, दुकान।

1. ताकुला (2$\frac{1}{2}$) (14$\frac{3}{4}$) दुकान, डा0, चाय, $\frac{1}{2}$ मील आगे डाब0।

देवलधार (5$\frac{1}{4}$) अंत के 1$\frac{1}{2}$ मील कड़ी चढ़ाई।

बिलोनसेरा (4$\frac{1}{2}$) कड़ी उतराई।

2. बागेश्वर (2$\frac{1}{2}$) (27) [3200] गोमती और सरयू के संगम पर, डा0, अ0 डाब0, बाघनाथ का मंदिर, दे0 217।

लाहुरगाड़ का पुल (3) यहाँ से सड़क को छोड़कर एक मार्ग गोरी उड्यार को जाता है, जो तीन मील की दूरी पर है, दे0 218।

3. कपकोट (11) (41) डा0, डाब0, स्कू0 दुकान।

भानी गाँव (3$\frac{3}{4}$) बागेश्वर से यहाँ तक मार्ग सरयू के किनारे-किनारे जाता है।

श्यामाधुरा (7$\frac{3}{4}$) (52) [6900] अंत के दो मील कड़ी चढ़ाई, डा0, दुकान। $\frac{3}{4}$ मील धार तक कड़ी चढ़ाई। 2 मील कठिन उतराई। 1$\frac{1}{2}$ मील रामगंगा तक बहुत कड़ी उतराई। 2$\frac{1}{2}$ मील के बाद रामगंगा के ऊपर की रस्सी के पुल को पार करके, $\frac{1}{4}$

4. तेजम[1] (7) (59) [3280] तेजम डा0, आयुर्वेदिक औषधालय, स्कू0, जकुला नदी को पुल से पार करके आगे बढ़ें।

बमन गाँव (4) गाँव मार्ग से ऊपर है, सामने नदी के पार एक सुंदर जलप्रपात है।

ला (2¼) तेजम से यहाँ तक मार्ग जकुला नदी के किनारे-किनारे जाता है, नदी को पुल से पार करें।

गिरगाँव (2) कड़ी चढ़ाई, छोटा डाब0, गाँव दूर है।

कालामुनी (2¾) घाटा तक चढ़ाई।

तिकसेन (5¼) बीच-बीच में विश्राम के साथ कड़ी उतराई।

5. राथी (मानस्यारी) (2) (77¼) कड़ी उतराई, डा0, डाब0, आसपास का प्रदेश मानस्यारी के नाम से प्रसिद्ध है, मल्ला जोहार के भोटिए शीतकाल में यहाँ उतरते हैं, मानस्यारी में हरताल और गंधक की खानें हैं।

सुरिङ घाट (2) उतराई, यहाँ से मिलम तक मार्ग गौरीगंगा के किनारे-किनारे जाता है।

लीलम (2¼) गाँव मार्ग से कुछ दूर है।

पिलती गाड़ (2½) पिलती गाड़ बहुत ऊँचाई से एक सुंदर जलप्रपात के रूप में गौरीगंगा के उस पार बाँएँ किनारे पर गिरती है।

रलम गाड़ (1¼) यह नदी भी गौरीगंगा में बाँएँ किनारे पर मिलती है।

ररगड़ी (1¾)

पोटिंग गाड़ (2) नदी के पुल को पार करें।

6. बाग उड्यार (¼) (89¼) [8600] गुफा, डेरे।

टिबू नहर (2) सड़क-जमादार का छप्पर।

मपंग (2¾) डेरे, पड़ाव की दीवालें, टिबू और इस स्थान के मध्य में दो-तीन बड़े-बड़े हिमखंड हैं। ड्राप सीन के समान यहाँ से पहाड़ का दृश्य बदल जाता है।

लासपागड़ी (1) गुफा, गाँव सड़क से दूर पर है।

रिलकोट (2) [12200] एक नदी को पारकर गाँव में पहुँचें। 5-6 घर, धर्मशाला, थोड़ी खेती। ½ मील आगे पुराने रिलकोट के खंडहर।

मरतोली (2¼) [11070] बड़ा गाँव, स्कूल, नंदामाई का मंदिर, गाँव के पास ही भूर्ज

---

1. प्रायः रामगंगा के ऊपर रस्सी के पुल को पार करने में बड़ी कठिनाई पड़ती है। इसलिए बहुत कम लोग इस मार्ग से जाते हैं। तेजम से तल्ला जोहार का भोट आरंभ होता है। शीतकाल में मल्ला जोहार के भोटिए यहाँ उतरते हैं। यहाँ से थल 12 मील पर है।

वृक्षों के जंगल, $\frac{1}{2}$ मील की बहुत कड़ी उतराई के बाद लोवन नदी को पार करें। $\frac{1}{2}$ मील के आगे गौरी को पुल से पार करें।

बुरफू (2) बुरफू का बड़ा गाँव, स्कूल, धर्मशाला।

बिलजू ($2\frac{1}{2}$) स्कू0, गाँव से कुछ आगे चलकर नंदादेवी के पूर्वी शिखर का अपूर्व दृश्य दिखाई पड़ता है। $2\frac{1}{2}$ मील आगे खोपङ या गोङ्खा को पुल से पार करें, जो ऊँटाधुरा से आकर यहाँ से कुछ नीचे गौरी से मिलती है। $\frac{3}{4}$ मील आगे मिलम।

7. मिलम[1] (3) ($106\frac{3}{4}$) [11232] डा0, स्कू0, धर्मशालाएँ।

$5\frac{3}{4}$ मील शिलङ-तल्ला, डेरे, पड़ाव की दीवालें।

1 मील शिलङ-मल्ला, डेरे, धर्मशाला, पड़ाव की दीवालें।

1 छोतपानी या शूंतपानी, दाहिनी ओर काली बर्फ का गल, (काली मिट्टी से मिले हुए होने के कारण बर्फ काला-सा दिखाई पड़ता है।)

$\frac{1}{2}$ मील पलथङ, पहाड़ की चोटी पर धर्मशाला, लप्चे।

8. दुङ या दुङ्गा ($\frac{3}{4}$) ($115\frac{3}{4}$) गोङ्खा के निकट ही 3–4 बड़ी-बड़ी गुफाएँ, डेरे, [13720] लकड़ी का अभाव, धुरा की चढ़ाई यहाँ से प्रारंभ होती है।

---

1. यह जोहार के भोटियों का सबसे बड़ा और मार्ग का अंतिम गाँव है। जून से सितंबर के अंत तक लोग यहाँ रहते हैं। इसमें 500 घर हैं। जौलाई के महीने में यहाँ के प्रायः सभी पुरुष व्यापार के लिए तिब्बत की मंडियों में जाते हैं। इसलिए 90 फीसदी खेत बिना जोते ही रह जाते हैं। सभी भोटियों में यहाँ के लोग विशेष सभ्य और पढ़े-लिखे होते हैं। प्रसिद्ध भौगोलिक पं0 नैनसिंह और कृष्णसिंह यहीं के निवासी थे। आगे ज्ञानिमा मंडी के लिए सभी प्रबंध यहाँ से करना पड़ता है। गाँव से गौरीगंगा एक फर्लांग की दूरी पर है। यहाँ से मिलम ग्लेशियर (हिमनदी) 3 मील की दूरी पर है, जहाँ से गौरीगंगा निकलती है। मिलम ग्लेशियर का मुख (स्नाउट) जहाँ से गौरीगंगा निकलती है, वहाँ 24 फीट ऊँचा और 16 फीट चौड़ा है। इसका दृश्य बहुत सुंदर और गंभीर है। सदा बर्फ के गलने के कारण यहाँ पत्थर नीचे गिरते रहते हैं। मुख के सामने दो-दो, तीन-तीन गज मोटे हिमखंड बिखरे हुए पड़े रहते हैं। हिमनदी के ऊपर तीन मील पर एक पहाड़ के नीचे शंगस या शांडिल्य कुंड नामक एक छोटा-सा तालाब है, जो लगभग 450 फीट लंबा और 225 फीट चौड़ा है। यहाँ पर चौमासे में गड़रिए चरागाह में आते हैं। शंगस कुंड के सामने मिलम ग्लेशियर के दाहिने किनारे पर सिकडम नामक एक और सुंदर हिमनदी आ मिलती है। यहाँ जलाने के लिए लकड़ियाँ बहुत मिलती हैं। श्रावणी पूर्णिमा के समय पर यहाँ मेला लगता है, उस समय मिलम वाले यहाँ पर स्नान के लिए आते हैं। यहाँ का जल बर्फीला नहीं है। 6-7 मील आगे चलकर मिलम ग्लेशियर के सिरे पर सूर्यकुंड नामक एक तालाब है। ग्लेशियर के सिरे की त्रिशूली चोटियों पर चढ़ने के लिए सन् 1939 के जौलाई के महीने में पोलैंड का एक पर्वतारोही दल आया था। शिखर पर चढ़ते समय, तीसरे पड़ाव में हिमखंड टूटकर गिरने के कारण उनमें से दो दबकर मर गए।

बोमलास-मल्ला (2$\frac{1}{4}$) [15010] डेरे, बाँईं ओर सुंदर हिमनदियों के दृश्य।

1 मील कालामटिया, काली मिट्टी की पृथिवी, डेरे। 1 मील सफेद गल, श्वेत बर्फ की हिमनदी। $\frac{1}{2}$ मील ऊँटा का जम, डेरे, धुरा के नीचे।

ऊँटाधुरा (6$\frac{1}{2}$) (122$\frac{1}{2}$) [17950] 2 मील बहुत कड़ी चढ़ाई।

गड्पानी (1$\frac{1}{2}$) डेरे, बहुत कठिन उतराई, यहाँ की नदी गिरथी नदी में जाकर गिरती है।

जयंती या जंती धुरा (2) (125$\frac{3}{4}$) [18500] कठिन चढ़ाई, यहाँ पर बहुत दम घुटता है।

न्हज गाँव (2$\frac{1}{4}$) बहुत कठिन उतराई, डेरे, पड़ाव की दीवालें, यहाँ का जल नीचे गिरथी में जाता है, यहाँ ईंधन का अभाव रहता है।

कुङरी-बिङरी का घाटा (1$\frac{1}{2}$) (129$\frac{1}{2}$) [18300] बहुत कड़ी चढ़ाई, भारत की सीमा, 1 फर्लांग आगे लप्चे, यहाँ से कैलास के दर्शन होते हैं, ये घाटे जौलाई से अक्टूबर तक पार करने योग्य रहते हैं।

9. छिरचिन[1] (5) (134$\frac{1}{2}$) [16390] यहाँ तक बीच-बीच में विश्राम के साथ कठिन उतराई है। डेरे, पड़ाव की दीवालें, गुफा। $\frac{1}{4}$ मील आगे छिरचिन की 1$\frac{1}{2}$ फीट की गहरी एक शाखा के दाहिने किनारे को पार करें। 3 मील सुमनाग या सुमनाथ, डेरे। यहाँ से $\frac{1}{2}$ मील नदी के पाट में चलकर डेढ़ फीट गहरी छिरचिन की दूसरी शाखा को पार करें, डेरे। $\frac{3}{4}$ मील तोकपू डेरे। 2$\frac{1}{4}$ मील सीमा[2] 1$\frac{1}{2}$ मील चिलिमपानी, यह नदी सिबचिलिम जाती है। 1 मील लटुआ, डेरे, कुछ दूर पर गुफाएँ हैं।

---

1. प्रायः दुङ से प्रातःकाल ही उठकर तीनों घाटियों को पारकर यहीं आकर संध्या समय में डेरा डालना पड़ता है। मार्ग में लकड़ी और घोड़े के घास का अभाव रहता है तथा ठंढक बहुत पड़ती है। यदि किसी को लाचार होकर ठहरना हो, तो न्हज गाँव के डेरे में रहते हैं। परंतु वहाँ भी बहुत कष्ट सहन करना पड़ता है। इस पड़ाव के पास तीन नदियाँ मिलकर छिरचिन नदी बनती है। जिसका पाट लगभग $\frac{3}{4}$ मील चौड़ा है, जो पत्थरों से भरा हुआ है। पर नदी की धारा कम चौड़ी है। पाट के विशाल होने के कारण यह तालाब-सा दीखता है। छिरचिन से सुमनाग तक नदी के पाट तथा दोनों के पहाड़ों में कई प्रकार के शालग्राम, थनेली या थनेरी पत्थर, (जिसे घिसकर लगाने से स्तन के ऊपर का व्रण अच्छा होता है) और जहरमोहरा पत्थर मिलता है। दोनों ओर के पहाड़ों पर हिमफुली या गोदंती और हरताल मिलती है। छिरचिन से एक मार्ग सिबचिलिम जाता है।
2. यहाँ पर भारत की सीमा दिखाने के लिए 1938 में भारत के सर्वे वालों ने 3 फीट चौड़ी और 2 फीट ऊँची पत्थरों की एक लंबी दीवाल बना दी हैं। ज्ञात नहीं, सर्वे वालों ने अपनी सीमा को यहाँ पर किस आधार पर निश्चित किया है। परंतु तिब्बती लोग अपनी सीमा को भारत में मिलम से 12$\frac{3}{4}$ मील नीचे मपङ के पास बताते हैं।

10. ठाजङ[1] (12) (146½) 3 मील डेरे।

सूखाठाजङ (2¼) डेरे, पड़ाव की दीवालें।

छिनकू (2½) छिनकू (छू = नदी, नकपो = काला), 1½ या 2 फीट गहरी नदी को पार करें।

ठंपा (3) ठंपा या ठंबा पहुँचने से पहले ½ मील चढ़ाई, डेरे, पड़ाव की दीवालें, एक सोता। यहाँ से ¼ मील चढ़ने पर लप्चे। कैलास के दर्शन होते हैं, ½ मील उतराई, मैदान।

11. गुनियाङ्ती[2] (नदी) (3¾) (158) 3 मील, 2 या 2½ फीट गहरी नदी को पार करें, दोनों ओर डेरे।

दारमा याङ्ती (नदी) (2¼) 2 या 3 फीट गहरी नदी को दाहिने किनारे पार करें, नदी के दोनों किनारों पर डेरे, पड़ाव की दीवालें।

12. ज्ञानिमा मंडी (11¾) (172), देखिए तालिका 5।

13. छूमिक्शला (16¼) (188¼) डेरे, देखिए तालिका 7।

14. कैलास (तरछेन) (21¾) (210), देखिए तालिका 7।

तालिका 12

श्री कैलास और मानसरोवर का चौथा मार्ग

जोशीमठ से गुनला–नीती घाटा होकर–200 मील

जोशीमठ[3] (0) (0) [6200] डा०, ता०, अ०, डाब०, ध०, मंदिर, बाजार, जब की धाराएँ। 6 मील तपोवन, गर्म जल के सोते, कुंड (यहाँ से भविष्यबदरी मार्ग से

---

1. डेरे के स्थान से बाँईं ओर के पहाड़ की चोटी पर एक लप्चे और तरचोक है, जहाँ पर तिब्बती और भोटियों ने पुरानी बंदूकें और अन्य हथियार चढ़ा रखे हैं।
2. गुनियाङ्ती और दारमायाङ्ती के किनारे-किनारे यहाँ से 5-6 मील नीचे दोनों किनारों पर यत्र-तत्र डेरे के स्थान और पड़ाव की दीवालें हैं। व्यापारी लोग अपने अवसर और सुविधा के अनुसार जिस किसी स्थान में पार करके चले जाते हैं। इसलिए ठंबा से लेकर ज्ञानिमा मंडी तक की दूरी, पार करने के स्थान के अनुसार बदल जाती है। कुछ लेखकों ने इन दोनों नदियों के नाम भ्रम से गुणवंती और दमयंती लिखे हैं। याङ्ती = नदी। तिब्बती भाषा में इनके नाम छू मिङ्जुङ और छू मिङजिङ हैं।
3. ज्योतिर्मठ आदि शंकराचार्य के चार मठों में एक है, परंतु 350 वर्षों से जीर्ण रूप में था। सन् 1942 में प्रयाग के कुंभ मेले के अवसर पर इस मठ के एक नए आचार्य नियुक्त किए

हटकर 3 मील पर है), यहाँ 4 मील आगे नीती भोट का प्रांत प्रारंभ होता है।

1. सुरईठोटा (16) (16) 10 मील, डेरे, ध0। 7 मील तमक, डेरे, ध0। 2 मील जुम्मा, डेरे, ध0।

2. मलारी (18) (34) [10150], बड़ा गाँव, ध0, स्कू0 । 5 मील बंपा, बड़ा गाँव, अंतिम, डा0, ध0। $1\frac{1}{2}$ मील गमशाली [10317] ध0।

3. नीती ($9\frac{1}{2}$) ($43\frac{1}{2}$) इस मार्ग का अंतिम गाँव, ध0, स्कू0।

4. गुठिङ ($8\frac{1}{4}$) ($51\frac{3}{4}$) डेरे, पड़ाव की दीवालें, मार्ग में दो कड़ी चढ़ाइयाँ और एक कठिन उतराई। $3\frac{1}{2}$ मील शेपुक, डेरे, पड़ाव की दीवालें। $2\frac{3}{4}$ मील नकुला का बर्फ का पुल। $4\frac{3}{4}$ मील पातालपानी, पाताल गंगा की दोनों ओर डेरे, पड़ाव की दीवालें। $\frac{3}{4}$ मील गेलडुङ, डेरे, पड़ाव की दीवालें।

5. ख्युङलुङ ($15\frac{3}{4}$) ($67\frac{1}{2}$) [14703] $4\frac{1}{4}$ मील डेरे, यहाँ से घाटे तक कड़ी और फिर बहुत कड़ी चढ़ाई पड़ती है।

नीती घाटा ($4\frac{1}{2}$) (72) [16600] अंत के $1\frac{1}{2}$ मील की चढ़ाई बहुत कड़ी और खतरनाक है, भारत की सीमा, यह घाटा जून से नवंबर तक यात्रा के योग्य रहता है। घाटे के ऊपर लगभग 2 मील, लप्चे, यहाँ से कैलास के दर्शन होते हैं। $1\frac{1}{4}$ मील जिंडू, बहुत कठिन उतराई, डेरे।

6. चङलूस (12) (84) $8\frac{3}{4}$ मील डेरे, पड़ाव की दीवालें। 5 मील हार्था, डेरे, पड़ाव की दीवालें।

7. नाब्रा मंडी[1] ($11\frac{1}{2}$) ($95\frac{1}{2}$) $6\frac{1}{2}$ मील नीती भोटियों की बड़ी मंडी है। $5\frac{3}{4}$ मील गेउँल छू (ग्युंगुल या गेयुल), दो घर, कुछ जौ के खेत, नदी के दोनों ओर डेरे, पड़ाव की दीवालें, मणि-दीवालें, 3 फीट गहरी नदी को पार करें। $7\frac{1}{2}$ मील डोङ पू छू, डेरे, यहाँ 3 फीट गहरी वेगवती नदी को पार करें।

8. डोङ पू गोम्पा (14) ($109\frac{1}{2}$) $\frac{3}{4}$ मील गाँव, गोम्पा, कुछ खेत।

9. दोनगू छू ($5\frac{1}{2}$) (115) डेरे, पड़ाव की दीवालें। $2\frac{1}{2}$ दोनगू, डेरे, जल का अभाव। $14\frac{1}{4}$ मील तीसुम छू, नदी की दोनों ओर डेरे, पड़ाव की दीवालें।

गए। यहाँ वासुदेव और नृसिंह के मंदिर हैं। बदरीनाथ यहाँ से 19 मील, हृषीकेश $148\frac{1}{2}$ मील और रामनगर 164 मील की दूरी पर है। यहाँ से नीती घाटा तक मार्ग धौलीगंगा के किनारे-किनारे है।

1. यहाँ 200-250 तंबू लगते हैं। यह मंडी जौलाई से सितंबर तक रहती है। यह दापा से लगभग $6\frac{1}{2}$ मील पर है। दापा जोङ के अत्याचारों से ऊबकर उसके प्रतिकारस्वरूप सन् 1929 में नीती के भोटियों ने मंडी को दापा से उठाकर यहाँ (नाब्रा में) एक विशाल दून में लगाया, जो गरतोक-नीती के राजमार्ग पर है। यहाँ 3-4 पक्के मकान भी बन गए हैं। यह दापा जोङ के शासन के अंतर्गत है। यहाँ से सतलज का पुल लगभग 3 मील पर है। आस-पास की अधित्यकाओं पर जिंबू अधिक होता है।

10. सिबचिलिम मंडी[1] (19) (134) 2¼ मील सिब छू के बाँएँ किनारे पर स्थित एक छोटी-सी मंडी, डेरे, पड़ाव की दीवालें, 30 फीट गहरी जल वाली वेगवती नदी को पार करें।

मणिथङा (7¼) मणि-दीवालें, डेरे, आसपास में 7-8 काले तंबू।

गोंबाचिन[2] (3½) डेरे, पड़ाव की बड़ी–बड़ी दीवालें, किसी समय यहाँ तक बड़ी भारी मंडी लगती थी।

11. गुनियाङती नदी (4¼) (149) 2 या 3 फीट गहरी जल वाली नदी को पार करें, नदी के दोनों किनारों पर डेरे, पड़ाव की दीवालें।

दारमा याङती (नदी) (3¾) 2 या 2½ फीट गहरी जल वाली नदी को पार करें, नदी के दोनों किनारों पर डेरे और पड़ाव की दीवालें, देखिए तालिका 8।

12. ज्ञानिमा मंडी (9¼) (162), देखिए तालिक 5।

13. छूमिक्शला (16¼) (178¼) डेरे।

14. कैलास (तरछेन) (21¾) (200), देखिए तालिक 7।

तालिका 13

श्री कैलास और मानसरोवर का पाँचवाँ मार्ग

जोशीमठ से डमजन-नीती घाटा होकर–160 मील

जोशीमठ (0) (0), देखिए तालिका 12।

1—2. ... ...

3. नीती (43½) (43½) गाँव।

बोमलास घाटा (7) (50½) बहुत कड़ी और खड़ी चढ़ाई, लप्चे और तरचोक।

4. डमजन (3¼) (53¾) कड़ी उतराई, डेरे।

डमजन-नीति घाटा (5¾) (59½) [16200 ?] घाटा तक बहुत कड़ी चढ़ाई, लप्चे और तरचोक, भारत की सीमा, जून से अक्टूबर तक लाँघने योग्य है, यहाँ से कैलास के दर्शन होते हैं।

---

1. जौलाई और अगस्त के महीने में यहाँ नीती वालों के 7-8 तंबू लगते हैं। कभी-कभी एकाध जोहारी भी आ जाते हैं। सिब छू नदी का पाट यहाँ चौड़ा है। यह नदी तीन-चार शाखाओं में बहती है। यहाँ से एक मार्ग ख्युङलुङ होकर तीर्थपुरी जाता है, जो लगभग 32 मील की दूरी पर है और दो दिन का मार्ग है।
2. मणिथङा और गोंबाचिन के मध्य में एक नदी की 4-5 शाखाओं को पार करना पड़ता है। संभवतः यह छिनकू छू ही है।

5. होती ($5\frac{1}{2}$) (65) बहुत कठिन उतराई, डेरे, पड़ाव की दीवालें, यहाँ पर होती घाटा का मार्ग मिलता है।

तोनजेन ला ($3\frac{1}{2}$) ($68\frac{1}{2}$) [16350] घाटा तक बहुत कड़ी चढ़ाई, लप्चे। 4 मील सग, डेरे।

6. छलंपा (10) ($78\frac{1}{2}$) 3 मील की चढ़ाई और 3 मील की उतराई, डेरे।

3 मील की चढ़ाई और 3 मील की उतराई, डेरे, डाकर, पड़ाव की दीवालें। $6\frac{1}{2}$ मील तीसुम, डेरे, पड़ाव की दीवालें।

7. सिबचिलिम ($15\frac{3}{4}$) ($94\frac{1}{4}$) $3\frac{1}{4}$ मील, देखिए तालिका 12।

8. गुनियाङ्कती (15) ($109\frac{1}{4}$) डेरे।

9. ज्ञानिमा मंडी ($12\frac{3}{4}$) (132) मंडी।

10. छूमिक्शला ($16\frac{1}{4}$) ($138\frac{1}{4}$) डेरे।

11. कैलास (तरछेन) ($21\frac{3}{4}$) (160)।

तालिका 14

श्री कैलास और मानसरोवर का छठा मार्ग

जोशीमठ से होती-नीति घाटा होकर–158 मील

जोशीमठ (0) (0)।

1. 2. ... ... देखिए तालिका 12।

3. तिमरसिम ($42\frac{1}{2}$) ($42\frac{1}{2}$) नीती पहुँचने से 1 मील पहले ही एक छोटा-सा गाँव, यहाँ से घाटा तक बहुत कड़ी चढ़ाई है।

3 मील कसाई, डेरे, पड़ाव की दीवालें।

4. कालाजबर (6) ($48\frac{1}{2}$) 3 मील डेरे, पड़ाव की दीवालें।

होती-नीती घाटा (7) ($55\frac{1}{2}$) [16390] इसे होती, चोर-होती, या होती धुरा भी कहते हैं। भारत की सीमा, विशेषकर इस घाटे से वर्षा ऋतु में जाते हैं, यहाँ से रिमखिम तक बहुत बड़ी उतराई है। $2\frac{1}{2}$ मील बंजर-मल्ला, डेरे। $1\frac{1}{2}$ मील बंजर-तल्ला, डेरे।

$1\frac{1}{2}$ मील रिमखिम [14250] डेरे, पड़ाव की दीवालें, यहाँ से होती के डेरे तक होती नदी के किनारे-किनारे ऊपर से जाना पड़ता है।

5. होती ($7\frac{1}{2}$) (63) 2 मील डेरे, डमजन घाटा का मार्ग यहाँ मिल जाता है। यहाँ की होती नदी मलारी के पास धौलीगंगा में मिलती है।

6-10. ... .

11. कैलास (तरछेन) (95) (158), देखिए तालिका 13।

तालिका 15

श्री कैलास और मानसरोवर का सातवाँ मार्ग

बदरीनाथ से माना घाटा होकर–238 मील।

बदरीनाथ (0) (0) [10500] डा0, ता0, अ0, डाब0, ध0, श्री बदरीनारायण का मंदिर, यह भारत के चारों धाम में एक है, यहाँ से हृषीकेश 168 मील और रामनगर 164 मील पर है।

माना (2) (2) इसे माणा या मणिभद्रपुरी भी कहते हैं, मार्ग का अंतिम गाँव, इधर का एक मात्र भोटिया गाँव, यहाँ के भोटिए मार्छे कहलाते हैं। 3 मील बलवाण, गुफा, डेरे। 2 मील मूसापानी, डेरे। 1½ मील शकपाडाँग, 3-4 अच्छी गुफाएँ, डेरे। 1½ मील बुजकुली, 3-4 अच्छी गुफाएँ, डेरे।

1. घसतोली (9½) (11½) 1½ मील, गुफा, डेरे, देहरादून के मार्टिन साहब गंगोत्तरी से मध्य मार्ग होकर यहाँ पर आए थे। 3 मील बुडचौन, डेरे। ½ मील खोरजाकवोट, डेरे, पड़ाव की दीवालें।

2. सरस्वती (8½) (20) 5 मील, डेरे, पड़ाव की दीवालें, घाटे की चढ़ाई यहाँ से प्रारंभ होती है। 2½ मील रत्ताकोणा, डेरे। 1 मील ताराई, डेरे। 3 मील राक्षसताल, बर्फ के बीच में छोटा-सा ताल। ½ मील देवताल, छोटा-सा ताल।

माना घाटा या चिरबिटिया (8½) (28½) [18400] 1½ मील भारत की सीमा, घाटा जौलाई से सितंबर तक लाँघने योग्य है।

3. पोती (9) (37½) डेरे, यहाँ तक उतराई।

4. जोगोराव (8) (45½) डेरे। 3 मील शिपुक-मैदान, डेरे। 3 मील [16400] चरंग ला, चढ़ाई।

5. रामूराव (16) (61½) 10 मील डेरे, प्रारंभ में 3 मील तक उतराई है।

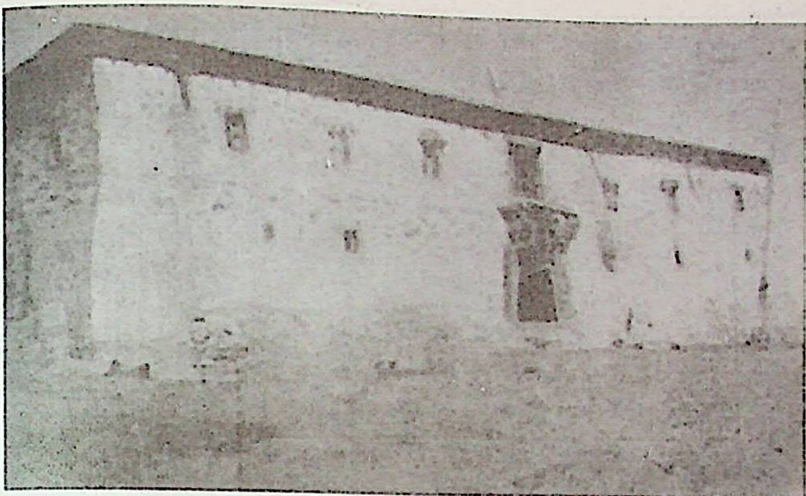
6. शंकरा (10) (71½) डेरे।

7. सत्तूखाना (22 ?) (93) डेरे।

8. थुलिङ गोम्पा[1] (7 ?) (100) [12200] मठ, गाँव, थुलिङ से 1 मील आगे 2 मील तक बहुत कड़ी चढ़ाई है, उसके बाद मंगनङ तक बीच-बीच में अधित्यकाओं

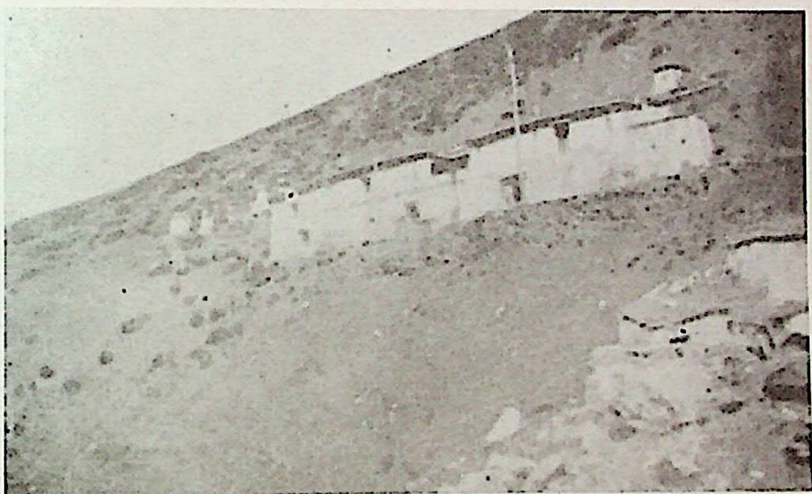
---

1. इसे तुलिङ, थोलिङ या थुंदिङ भी कहते हैं। यह मठ सतलज की बाँईं ओर नदी से एक मील की दूरी पर है। यह पश्चिमी तिब्बत का सबसे प्रसिद्ध मठ है। सन् 1030 में इसका निर्माण हुआ था। तुर्कों ने एक-दो बार इसमें आग लगा दी थी और भारत के कई अमूल्य और प्राचीन संस्कृत और तिब्बती ग्रंथों को जलाकर नष्ट कर दिया था। नालंदा विश्वविद्यालय के आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान सन् 1042 में, बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए यहाँ आकर नौ



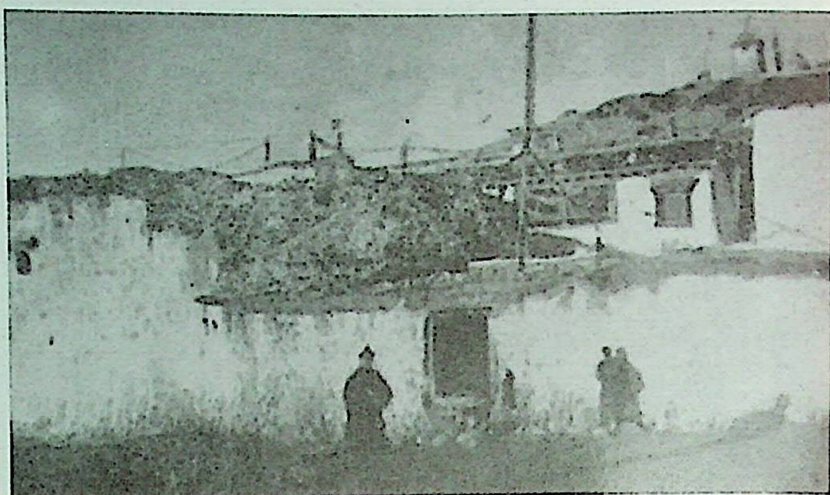
95. लङ्पोना गोम्पा–मानसरोवर का चौथा मठ

[देखिए पृ० 263



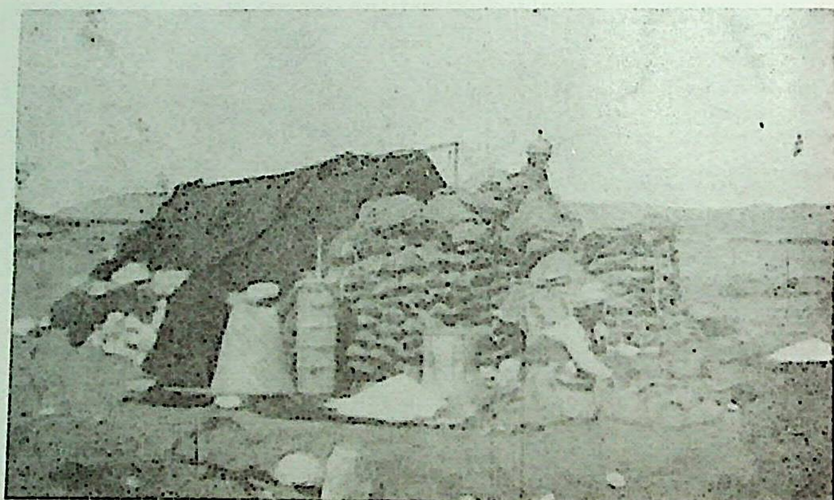
96. पोनरी गोम्पा–मानसरोवर का पाँचवाँ मठ

[देखिए पृ० 263



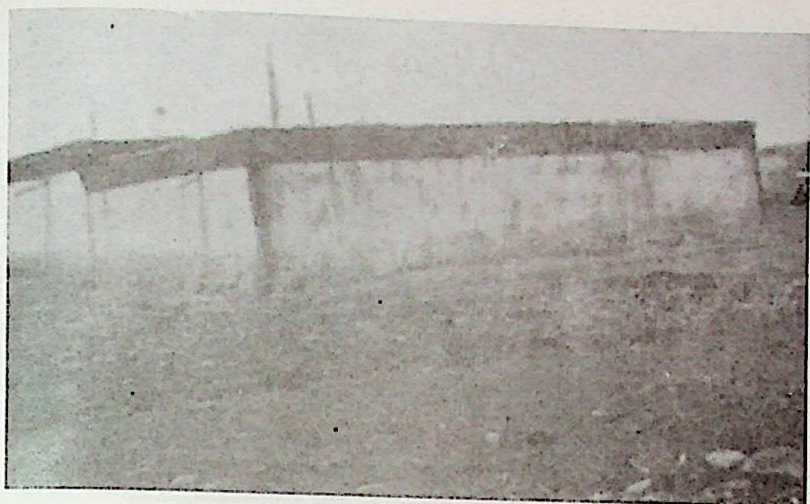
97. सेरालुङ गोम्पा—मानसरोवर का छठा मठ

[देखिए पृ० 264



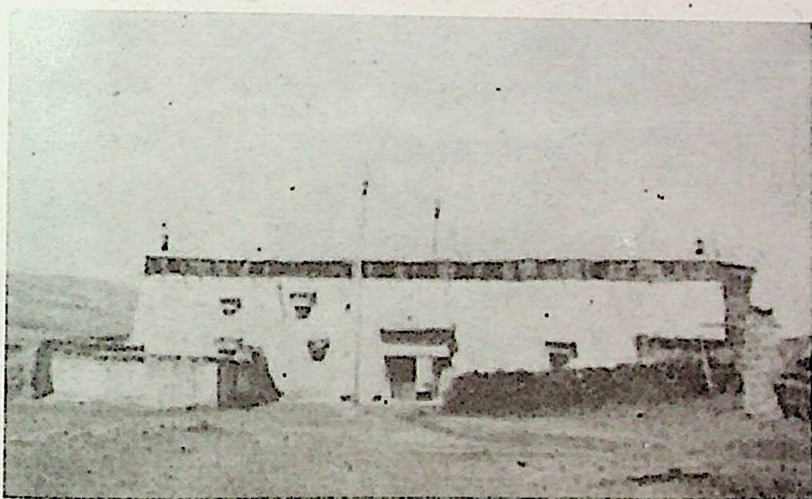
98. पुरुरव छोङरा में एक नेपाली व्यापारी का तंबू

[देखिए पृ० 265



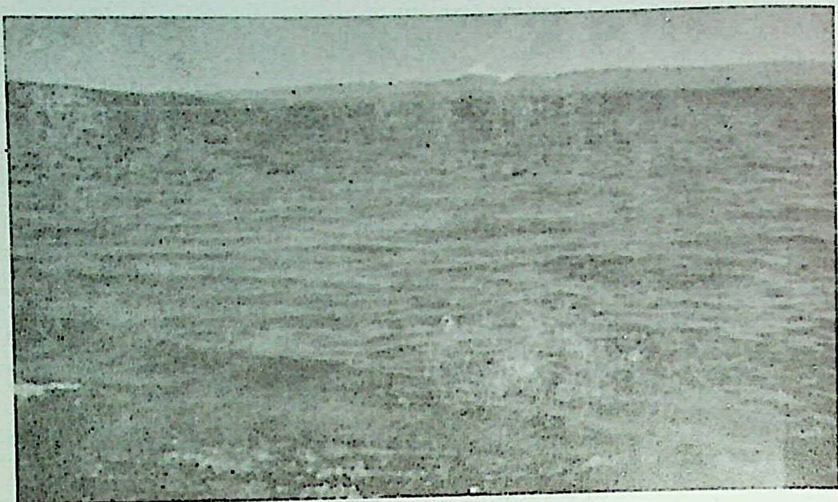
99. येर्नगो गोम्पा–मानसरोवर का सातवाँ मठ

[देखिए पृ० 266



100. ठुगोल्हो गोम्पा–मानसरोवर का आठवाँ मठ

[देखिए पृ० 266



101. ठुगोल्हो से कैलास तथा मानसरोवर का दृश्य

[देखिए पृ० 266

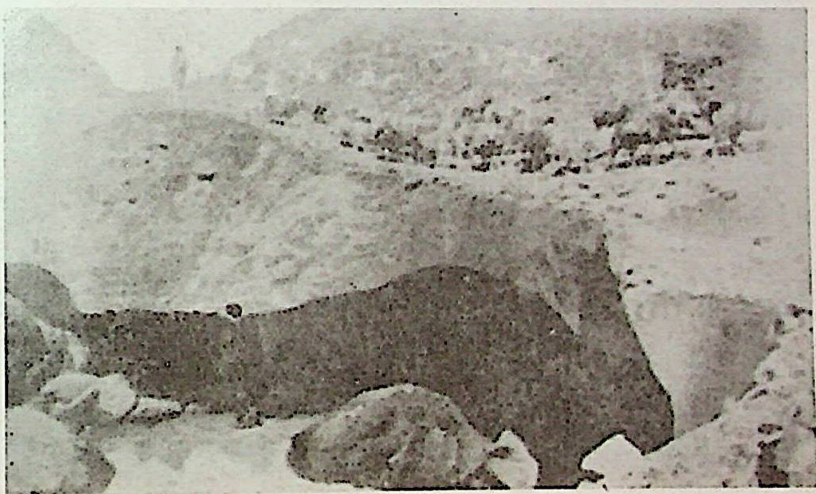


102. केदारनाथ का मंदिर और पीछे के हिम-शिखरों का दृश्य



103. मिलम ग्लेशियर या गौरी की हिमनदी

[देखिए पृ० 284



104. बर्फ का पुल, नकुला

[देखिए पृ0 287



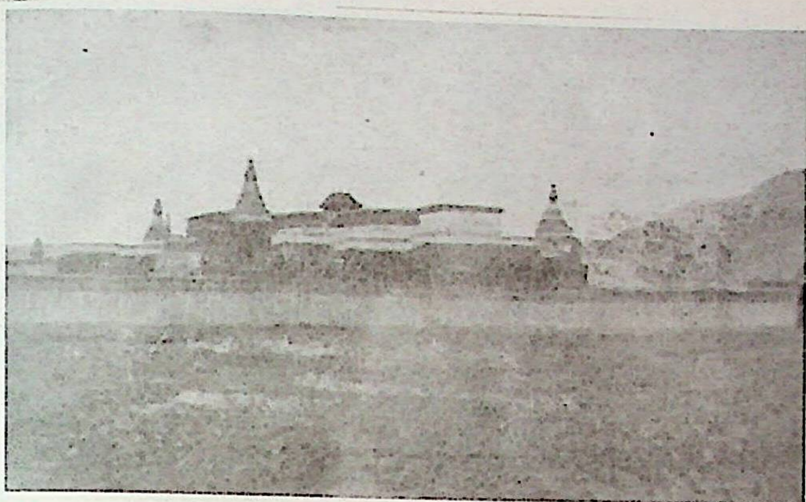
105. नीती घाटा

[देखिए पृ० 287



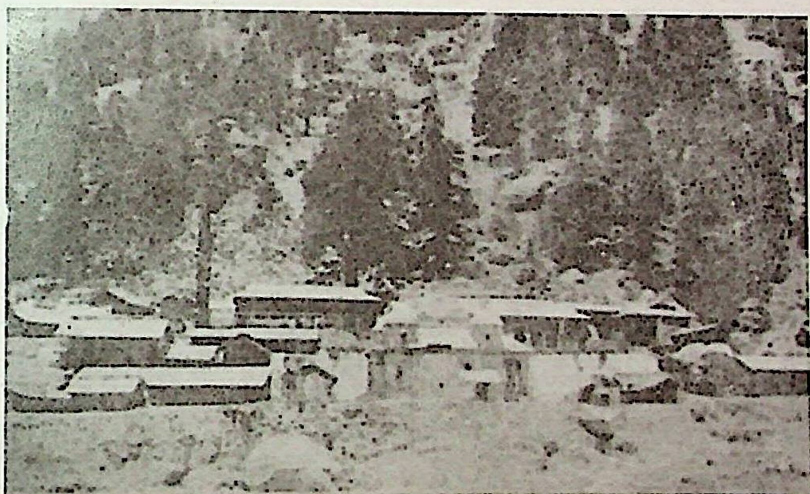
106. बदरीनाथ का मंदिर

[देखिए पृ० 290



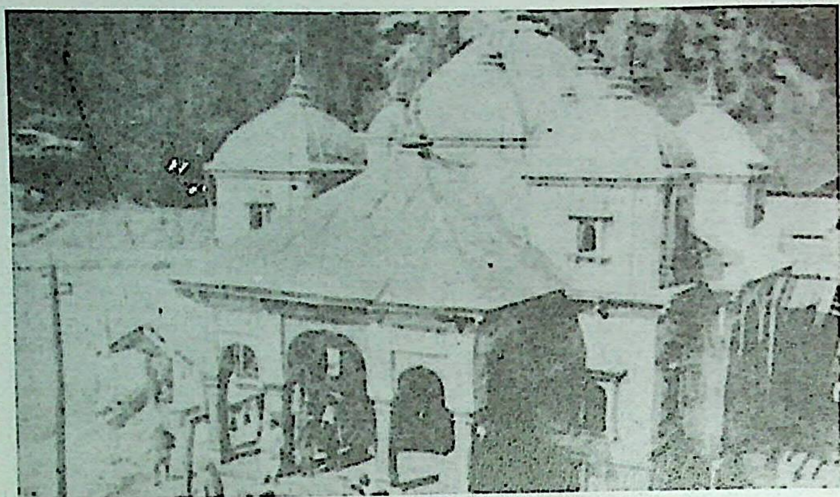
107. थुलिङ मठ

[देखिए पृ० 290



108. गंगोत्तरी

[देखिए पृ० 292



109. गंगोत्तरी में गंगादेवी का मंदिर

[देखिए पृ0 292



110. गोमुख और सतोपंथ के हिम-शिखर

[देखिए पृ० 292

से होकर मंद उतराई पड़ती है।

9. मंगनङ (13) (113) गाँव, खेती, मठ, यह डेपुङ विहार की शाखा है। यहाँ पर 3-4 फीट गहरी और पर्याप्त चौड़ी वेगवती मंगनङ छंपो के दाहिने किनारे को पार करें।

10. दापा या दाबा (14) (127) [14000] जोङ, मठ, गाँव, खेती, यहाँ की मंडी 1929 से यहाँ से उठकर नाब्रा में लगा करती है, नाब्रा मंडी, सिबचिलिम मंडी, ज्ञानिमा मंडी और मिसर तसम दापा जोङ के शासन के अंतर्गत हैं।

महीने तक ठहरे थे और यहीं रहकर कतिपय ग्रंथों का प्रणयन किया था। कई भारतीय पंडितों ने यहीं पर रहकर, बौद्ध धर्म-संबंधी पालि ग्रंथों का अनुवाद तिब्बती भाषा में किया था। इस मठ में छोटे-बड़े 108 देवागार हैं, जिनमें भिन्न-भिन्न आकार और स्वरूप की धातु और मिट्टी की बनी बौद्ध धर्म के देवी-देवताओं, लामाओं और आचार्यों की सहस्रों मूर्तियाँ हैं। अलमारियों में अच्छी तरह से सजी हुई कई छपी और हस्तलिखित पुस्तकों के वेष्टन हैं, जिनमें कंजूर और तंजूर की पोथियाँ भी हैं। बड़े देवागार में प्रधान मूर्ति पद्मासन-स्थित शाक्य थुव्वा (बुद्ध भगवान) की है, जिनके ऊपर सोने के पत्ते चढ़े हुए हैं। छह फीट ऊँची यह मूर्ति एक ऊँची वेदी पर विराजमान है। भ्रम में पड़कर कई हिंदू इसे आदि बदरीनारायण की मूर्ति मानकर घी की बत्तियों के लिए गाय, बकरियाँ, और रुपए-पैसे भी चढ़ाते हैं। यहाँ एक देवागार में 7 या 8 गज की ऊँची चंबा (मैत्रेय) की मूर्ति है। इस मठ में एक दक्षिणावर्त शंख, हंस के एक बड़े अंडे के बराबर एक जौ का दाना और कुछ अन्य अपूर्व वस्तुएँ हैं। ये वस्तुएँ विशेष भेंट चढ़ाने पर ही दिखाई जाती हैं। इस मठ की चहारदीवारी 150 गज से अधिक का वर्ग है। इसके चारों ओर फाटक हैं। इस मठ में 1-2 लामा और लगभग 100 डाबा रहते हैं। मठ के प्रधान लामा प्रति तीन वर्ष में बदलते रहते हैं। वे ल्हासा से आते हैं। शीतकाल में पट बंद होने के पहले, इस मठ से कुछ प्रसाद और भेंट बदरीनाथ के मंदिर के लिए रावल (पुजारी) के यहाँ भेजा जाता है। बदरीनाथ के रावल भी मंदिर के कुछ प्रसाद और भेंट थुलिङ मठ के लिए भेजते हैं। ज्ञात नहीं यह प्रथा कब से प्रचलित है। गोम्पा के चारों ओर कई छोरतेन और मणि-दीवालें हैं, जो मठ के प्राचीन वैभव को प्रकट करती हैं। इसमें से कई तो जीर्ण-शीर्ण हो गई हैं और कुछ अच्छी स्थिति में हैं।

मठ के दक्षिण भाग में 10-15 घरों का गाँव है। और 2-3 मील दूर सतलज नदी तक जौ और मटर के खेत हैं। पर्याप्त गर्म स्थान है। इसलिए सतलज के किनारे 3-4 गज ऊँचे पेड़ होते हैं। गोम्पा से कुछ दूर पर एक छोटे-से नाले के किनारे मठ की ओर से लगाए हुए पीपल के बगीचे हैं। जौलाई और अगस्त के महीनों में यहाँ जेलूखागा घाटा होकर आए हुए खंपाओं, 2-4 माना और नीती के भोटियों की मंडी लगती है। आस-पास के पहाड़ में जिंबू बहुत होता है। यहाँ से 10 मील नीचे सतलज के किनारे पर छबरङ जोङ है। थुलिङ से 2 मील ऊपर सतलज पर एक पुल है।

थुलिङ से गरतोक, तीर्थपुरी, शिमला और कुल्लू को मार्ग जाते हैं। दापा, सिबचिलिम और ज्ञानिमा बिना गए ही यहाँ से एक मार्ग सीधे तीर्थपुरी को जाता है।

11. नाब्रा मंडी ($6\frac{1}{2}$) ($133\frac{1}{2}$), देखिए तालिका 12।

12– 17. ... ...

18. कैलास (तरछेन) ($103\frac{1}{2}$) (238)।

तालिका 16

श्री कैलास और मानसरोवर का आठवाँ मार्ग

मुखुवा (गंगोत्तरी) जेलूखागा घाटा होकर–243 मील

मुखुवा (गंगोत्तरी) (0) (0) गंगोत्तरी के पंडों के गाँव, यहाँ से टिहरी और नरेंद्रनगर होते हुए ह्रषीकेश 145 मील, मसूरी 110 मील और गंगोत्तरी 13 मील की दूरी पर है। 4 मील जांगला, जं0, दुकान। 1 मील कोपांग, डेरे, पड़ाव की दीवालें, हरसील के जाड़ (भोटियों) के डेरे, $\frac{3}{4}$ मील आगे गंगोत्तरी का मार्ग दाहिनी ओर फूटता है, जो $7\frac{1}{4}$ मील पर है, (यहाँ से जाह्नवी और भागीरथी का संगम $\frac{1}{2}$ मील पर है) यहाँ से जेलूखागा तक मार्ग जाह्नवी या जाड़गंगा के किनारे-किनारे होकर जाता है। $2\frac{3}{4}$ मील डाँडा, डेरे, पड़ाव की दीवालें। $3\frac{1}{2}$ मील कर्चा, डेरे, यहाँ 'पदम' के पेड़ होते हैं।

1. लामाथङ ($13\frac{1}{2}$) ($13\frac{1}{2}$) $2\frac{1}{4}$ मील डेरे, यहाँ से $\frac{3}{4}$ मील आगे पहला लप्चे और तरचोक। $2\frac{1}{2}$ मील कडोली, डेरे।

नीलङ ($7\frac{1}{4}$) (21) [11181] 5 मील ऋषिगंगा पार करके गाँव पहुँचें, इस मार्ग का अंतिम गाँव है, यहाँ पर जाड़ (भोटिए) रहते हैं, खेती यहाँ पर्याप्त होती है। $1\frac{1}{2}$ मील मणि-रिंगुवा, डेरे। $3\frac{3}{4}$ मील मगरू, डेरे। $\frac{3}{4}$ मील संगम—जाह्नवी और मुलिङ नदी का संगम, मुलिङ के किनारे-किनारे होकर एक मार्ग बदरीनाथ जाता है। $\frac{1}{4}$ मील नागतोरू, डेरे।

2. दु सुंदू ($8\frac{1}{2}$) ($29\frac{1}{2}$) $2\frac{1}{2}$ मील जाह्नवी और जधुङ के संगम, दो सुंदू भी कहते हैं। सुंदू = संगम। डेरे, पड़ाव की दीवालें। जधुङ नदी के ऊपर संगम से 2 मील पर जधुङ नामक एक जाड़ों का गाँव है। $2\frac{1}{2}$ मील हिल्दिङ, डेरे। $1\frac{1}{2}$ मील सुनामा, डेरे, इसे सोनम भी कहते हैं। $1\frac{3}{4}$ मील छामरेवासा डेरे, लप्चे, तरचोक, मणि-दीवालें। 3 मील चङमागेरिया, डेरे। $\frac{1}{2}$ मील याङरा, डेरे।

3. तिपानी ($11\frac{1}{4}$) ($40\frac{3}{4}$) 2 मील, तीन नदियों का संगम, डेरे। $1\frac{3}{4}$ मील गुग्गुल सुंदू, डेरे। 1 मील पुलिङ सुंदू [12984], डेरे, विशाल मैदान। $1\frac{1}{2}$ मील दु सुंदू, डेरे। 1 मील टिङटिया, डेरे, पड़ाव की दीवालें, इसे तिङत्ता भी कहते हैं। $1\frac{3}{4}$ मील कैडावास, डेरे।

4. मंडी (खागे के नीचे) (9$\frac{1}{4}$) (50) 2$\frac{1}{4}$ मील डेरे, यहाँ से घाटे की कड़ी चढ़ाई प्रारंभ होती है।

जेलूखागा (घाटा) (3$\frac{1}{4}$) (53$\frac{1}{4}$) [17490] तिब्बती लोग इसे छङ्छोक ला कहते हैं, लप्चे और तरचोक, भारत की सीमा, जून के मध्यं से अक्टूबर के मध्य तक पार करने योग्य, यहाँ से ओप नदी तक बहुत कड़ी और खड़ी उतराई पड़ती है। 1 मील पङ्दे, डेरे। 2$\frac{1}{4}$ मील पिलपिला, तिब्बत की ओर खागे के नीचे।

5. ओप नदी (4$\frac{1}{4}$) (57$\frac{1}{2}$) 1 मील नदी की दोनों ओर डेरे, 2 या 2$\frac{1}{2}$ फीट की गहरी नदी के दाहिने किनारे को पार करें (यहाँ से $\frac{1}{2}$ मील ऊपर नदी पर पुल है)। 4 मील डाक, डेरे। 4 मील फुला ला पड़ाव, डेरे। 1$\frac{1}{4}$ मील फुल ला, लप्चे और तरचोक। 2$\frac{1}{4}$ मील गुरु का पानी, डेरे, पड़ाव की दीवालें। 1 मील जारा, डेरे, पड़ाव की दीवालें।

6. पुलिङ मंडी[1] (16$\frac{1}{4}$) (73$\frac{3}{4}$) 3$\frac{3}{4}$ मील (मंडी तक 1$\frac{1}{4}$ मील कड़ी उतराई)। 1$\frac{1}{4}$ मील एक नदी, 1$\frac{1}{2}$ या 2 फीट गहरी नदी को पार करें, डेरे। 4$\frac{1}{2}$ मील बाबरा, डेरे।

7. शरवाराव[2] (9$\frac{1}{4}$) (83) 3$\frac{1}{2}$ मील 1$\frac{1}{2}$ या 2 फीट गहरी नदी के दाहिने किनारे को पार करें, नदी के दोनों किनारों पर डेरे, पड़ाव की दीवालें। 1$\frac{1}{2}$ मील कड़ी चढ़ाई। $\frac{1}{2}$ मील कड़ी उतराई। $\frac{1}{2}$ मील कड़ी चढ़ाई। 5$\frac{3}{4}$ मील कांचनथंगा के ऊपर, लप्चे और तरचोक। 2 मील बड़े-बड़े दुर्गों के खंडहरों के समान पानी से कटे हुए पहाड़ों के बीच से कड़ी उतराई। 1$\frac{1}{4}$ मील एक सूखे नाले के आर-पार ठुसी ला, डेरे, माना-छबरङ का मार्ग यहाँ पर मार्ग को काटकर आगे जाता है (यहाँ से छबरङ जोङ 3 मील दक्षिण में है)। 1$\frac{1}{2}$ मील बरखू, 15-16 गुफाएँ हैं, शीतकाल में कुछ तिब्बती लोग यहाँ पर ठहरते हैं।

8. थुलिङ (22) (105) 9 मील। देखिए तालिका 15।

9.– 17. ... .

18. कैलास (तरछेन) (138) (243)

----

1. यहाँ पर 2-3 मकान और पड़ाव की दीवालें तथा एक मणि-दीवाल है। यहाँ जौलाई के मध्य से अगस्त के अंत तक नीलङ के जाड़ और रामपुर-बशहर वालों की मंडी लगती है, जहाँ विशेषकर चावल, जौ, फाफर, नमक और ऊन का विनिमय होता है। यहाँ से 2-3 फलाँग नीचे नदी के पार पुलिङ का गाँव है, जिसमें जौ की खेती बहुतायत से होती है, और 10-15 घर हैं।

2. इसे शरबरक या शबरक भी कहते हैं। यहाँ से एक मार्ग माना घाटा और एक सीधा मङनङ को, बिना थुलिङ गए, जाता है। यहाँ से दुपाङ 10 मील और वहाँ से मङनङ 10 मील है।

तालिका 17

श्री कैलास और मानसरोवर का नौवाँ मार्ग

शिमले से गरतोक होकर–445 मील

शिमला (0) (0) [7043] ग्रीष्मकाल में बड़े लाट साहब का निवास-स्थान, बड़ा शहर, यहाँ से पू तक पी0 डब्ल्यू0 डी0 की सड़क है, जो हिंदुस्तानी तिब्बत रोड के नाम से प्रसिद्ध है।

1. फगु (12) (12) रे0।
2. मटियाना (17) (29) रे0।
3. नरकंडा (11) (40) रे0।
4. ठानाधार (11) (51) रे0, सराय, रामपुर-बशहर स्टेट, यहाँ से मार्ग सतलज के बाँएँ किनारे होकर जाता है।
5. नेर्त (11) (62) स्टेट की सराय।
6. रामपुर (9) (71) [3063] शहर।
7. गौरा (7) (78) रे0।
8. सरहन (13) (91) इसे सराहन भी कहते हैं, रे0, यहाँ से चीनी तक सतलज के दोनों ओर सुंदर दृश्य।
9. टरंडा (14) (105) रे0।
10. नीचर (10) (115) [7900] जंगलात का प्रधान कार्यालय, सतलज के दाहिने तट पर।
11. उरनी (13) (128) पी0 रे0।
12. चीनी (15) (143) स्टेट के बँगले, तहसील, चीनी से कनम तक सुंदर दृश्य।

पंगी (5) पी0 रे0।

13. जंगी (10) (158) पी0 रे0।
14. कनम (14) (172) पी0 रे0।

चैसू (10) पी0 रे0 ।

15. पू (6) (188) शहर, अंतिम डा0, यहाँ से आगे के लिए भोजन-सामग्री ले लेनी चाहिए, पी0 सड़क का अंत, यहाँ से 3 मील आगे सतलज को पुल से बाँईं ओर पार करें।
16. ममगीया (10) (198) अंतिम गाँव, गोम्पा, यहाँ से घाटे की चढ़ाई प्रारंभ होती है।

शिपकी घाटा (4) (202) [15400] भारत की सीमा, यह घाटा मई से नवंबर तक पार करने योग्य रहता है।

17. शिपकी पड़ाव (8) (210) [10600] डेरे।

18. कूके (5) (215) गाँव।

19. टियग (15) (230) गाँव, सतलज को पुल से दाहिनी ओर पार करें।

20. मियङ (12) (242) गाँव।

21. शिरिङ ला के तल (8) (250) डेरे, यहाँ से घाटे की चढ़ाई प्रारंभ होती है।

शिरिङ ला [16400] यहाँ से घाटे की उतराई प्रारंभ होती है।

22. नुह (15) (265) गाँव।

23. हुले (12) (277) डेरे।

24. खिनिफुक् (13)(290) गाँव, यहाँ से 2 मील आगे चलकर एक मार्ग दाहिने किनारे से थुलिङ को जाता है।

25. शाङछी जोङ (15) (305) [13760] छबरङ जोङ का ग्रीष्म काल के ठहरने का स्थान।

26. शङ (6) (311) गाँव।

27. एक नदी के पास (14) (325) डेरे। लोआचे ला [18510]।

28. एक नदी के पास (14) (339) डेरे।

आइ लप्चे। झोङछुङ ला [17400]।

29. गरतोक की एक नदी के पास (12) (351) डेरे।

30. गरतोक[1] (9) (360) (15100) पश्चिमी तिब्बत की राजधानी।

31. नोक्यू तसम (6) (366) [15000] तीन घर, गरतोक-ल्हासा के वाणिज्य-मार्ग में यह पहला तसम (ट्रांसपोर्ट और डाक एजेंसी) है।

डोक्यू (8) डेरे।

पार छू (5) नदी की दोनों ओर डेरे, 2 या $2\frac{1}{2}$ फीट गहरी नदी को पार करें।

---

1. यहाँ पर वायसराय के दो भवन, सात-आठ घर, 10 या 15 काले तंबू, 1 गोम्पा (इसमें आठ भिक्षु रहते हैं) और 1 डोङखङ है। वायसराय ग्रीष्म ऋतु में छह महीने तक यहाँ पर रहते हैं। अगस्त के मध्य से लेकर सेप्टेंबर के मध्य तक यहाँ पर एक मंडी लगती है, जिसमें विशेषकर जोहार और नीती के कुछ व्यापारी आते हैं। भाद्रपद पूर्णिमा के अवसर पर यहाँ छोङ्दू नामक घुड़दौड़ का एक मेला लगता है, तब पश्चिमी तिब्बत के चारों गवर्नर (जोङ) या उनके प्रतिनिधि उपस्थित रहते हैं, मेला 3-4 दिन तक रहता है।

   यह पश्चिमी तिब्बत के ब्रिटिश ट्रेड एजेंट का प्रधान स्थान है।

लङ्पोछे छू (3) नदी की दोनों ओर डेरे, 2 या 2½ फीट गहरी नदी को पार करें।

32. छोपता (5) (387) डेरे, यहीं से चरगोत घाटा की चढ़ाई प्रारंभ होती है।

चरगोत ला (2) [16200]।

ङिङ्री (2) उतराई, डेरे।

33. मिसर तसम (14) (405) [14300] तीन घर, ल्हासा के मार्ग में दूसरा तसम।

34. तीर्थपुरी (4) (409) गोम्पा, गर्म सोते, देखिए तालिका 5।

35. दुलचू गोम्पा (14¾) (423¾)।

36. कैलास (तरछेन) (21¼) (445)।

तालिका 18

श्री कैलास और मानसरोवर का दसवाँ मार्ग

शिमले से थुलिङ होकर–473 मील

शिमला (0) (0), देखिए तालिका 17।

1.–23. .... ।

24. खिनिफुक् (290) (290) गाँव, यहाँ से 2 मील आगे चलकर बाँईं ओर का मार्ग गरतोक जाता है।

25. टिबू (20) (310) डेरे।

26. नियङ (9) (319) डेरे। शङ्सी, डेरे।

27. थुलिङ (16) (335), देखिए तालिका 15।

28.-36.........................

37. कैलास (तरछेन) (138) (473)।

तालिका 19

श्री कैलास और मानसरोवर का ग्यारहवाँ मार्ग

काश्मीर-श्रीनगर से लदाख होकर–605 मील

श्रीनगर (0) (0) [5260] भूतल पर स्वर्ग कहलाने वाले काश्मीर की राजधानी।

1. गंदरबल (13) (13) डा0, ता0, रे0।

2. कंगन (11) (24) [5795] डा0, रे0, यहाँ पर 'पासपोर्ट' की जाँच की जाती है।

3. गुंड (13) (37) [6500] डा0।

4. सोनमर्ग (14) (51½) [8750] डा0, ता0, रे0।

5. बालतल (9) (60½) [9450] रे0, गाँव नहीं है, (अमरनाथ की गुफा यहाँ से 12 मील पर है)।

ज़ोज़ी ला (2½) (63) [11578] लदाख का सूबा प्रारंभ होता है। 6 मील मछोई, ता0, रे0, गाँव नहीं है।

6. मटयन (7) (76) रे0।

7. द्रास (12½) (88½) [10636] डा0, ता0, रे0, सराय।

8. समसा-खरबू (22½) (111) रे0।

9. कर्गिल (16¼) (127¼) [18790] डा0, ता0, अ0, रे0, तहसील।

10. मुलबेक (22½) (149¾) [10350] रे0, मार्ग में पहला गोम्पा।

नम्मिक घाटा (6) (13000) (घाटा)।

11. बोध-खरबू (8½) (164¼) रे0, सराय। 10 मील फोतु ला [13446]।

12. लामायुरू (15) (179¼) [11400] 5 मील यह लदाख के बड़े मठों में से एक है। 10¼ मील खालसी, डा0, ता0, (कुछ स्थानों को छोड़कर यहाँ से लगभग 270 मील तक मार्ग सिंधु नदी के किनारे-किनारे है।)

13. नुरला (18¾) (198) 8½ मील रे0।

14. ससपुल (14¾) (212¾) डा0, रे0। 7½ मील बोज़गो, गोम्पा।

15. नीमू (11½) (224¼) 4 मील गोम्पा, रे0 । 13¾ मील पितक, गोम्पा।

16. लेह (लदाख) (17¾) (242) [11503] 4 मील डा0, ता0, रे0, अ0, गोम्पा, काश्मीर स्टेट और ब्रिटिश सरकार के ज्वाइंट कमिश्नर यहाँ रहते हैं, यह एक बड़ी मंडी है। यारकंद, काशगर, तिब्बत और भारत के व्यापार का बड़ा केंद्र है। मार्ग में अंतिम डा0, आगे का सारा प्रबंध यहीं से करना पड़ता है।

17. चूशोट (12) (254) गाँव। 11 मील हेम्मिस का बागीचा, हेम्मिस गोम्पा मार्ग से 1 मील ऊपर है। यह लदाख का सबसे बड़ा और प्रसिद्ध मठ है।

18. मरचलङ (13) (267) 2 मील गाँव। 5 मील उगु का पुल।

19. उपशी (10) (277) 5 मील गाँव। 7 मील मिरू गाँव।

20. ग्या (10) (294) [13500] गाँव। 5 मील शम्रोत, डेरे।

टगलङ-ला (12) (306) [17500] 7 मील चढ़ाई।

21. डेब्रिङ (4) (310) [15780] डेरे। 12 मील पोंगोनागु, डेरे।

22. थुपजे (15) (325) 3 मील डेरे, गोम्पा। पोलोगोंका ला [16400 ?]
23. पूगा (16) (341) [14300] यहाँ एक घर, गर्म सोतें और गंधक की खान है।
24. लङशम (18) (359) चुंगीघर, (सिंधु नदी के पार न्यीमा और मोथ नामक गाँव हैं) यहाँ पर सिंधु नदी का पाट लगभग $\frac{3}{4}$ मील चौड़ा है।
25. डुङटी (18) (377) डेरे।
26. निगूचे (13) (390) डेरे।
27. फुग्चे (14) (404) डेरे।
28. लगनखेल (12) (416) डेरे। 7$\frac{1}{2}$ मील टेटोर-योङमा, डेरे। 1$\frac{1}{2}$ मील टेटोर-कोङमा, डेरे।
29. देमचोक (12) (428) 3 मील गाँव, जौ के खेत, काश्मीर और तिब्बत की सीमा, गाँव से कुछ ऊपर गर्म जल के सोते। 7 मील टमाकोलक, कुछ खेत।
30. टाशीगोङ[1] (19) (447) [13900] 12 मील 20-25 घर का गाँव, बड़ा गोम्पा।
31. लङमर (16) (463) गाँव, खेत के दो-चार टुकड़े, यहाँ से 1 मील आगे गरतोङ नदी के दूसरे तट पर सोहागे की बड़ी-बड़ी खानें हैं।
32. गरगुनसा (18) (481) [14065] पश्चिमी तिब्बत के गरपोन या वायसराय के शीतकाल में 6 महीने तक निवासस्थान, गोम्पा।
33. नमरू (24) (505) गाँव, कुछ खेत, गाँव से कुछ दूर पर गर्म जल के सोते।
34. गरतोक (15) (520) देखिए तालिका 17।
35. -39. ....
40. कैलास (तरछेन) (85) (605)

तालिका 20

श्री कैलास और मानसरोवर का बारहवाँ मार्ग

ल्हासा से ग्यांची और शिगर्ची होकर–800 ? मील

ल्हासा	5. नङछे जोङ	10. पन्नङ जोङ
1. नेथङ	6. रिबुङ	11. शिगर्ची (टाशी ल्हुम्पो)
2. छुशुल	7. ग्यगछे	12. नेथङ गोम्पा
3. कंबा-पाचिक	8. ग्यांची	13. कङछेन गोम्पा
4. पेटिओ	9. टोकरी	

1. यह मठ एक टीले पर स्थित है। पहले यह लदाख का था, परंतु अव सेरा विहार की एक शाखा है। इसके बदले में काश्मीर सरकार को मिसर में कुछ अधिकार मिला है।

14. शिपकी डिङ
15. टाशीगोङ
16. पुङ्छोक् लिङ
17. चकढोङ
18. मोहरी
19. सङलिङ
20. ङवरिङ
21. रलुङ
22. कोनदुन
23. कोरगेप
24. सङसङ
25. शेरू
26. केटोरुङ
27. केटो
28. रूछेन
29. रपका
30. समकू
31. उकशू
32. साका जोङ
33. ललुङ
34. न्युकू
35. नदी का तट
36. लुकचङ
37. तमसकरङ
38. टदुम
39. लुङ-परमा
40. टू टू
41. टुकसुम
42. ङकचकसुङ
43. टमसङ
44. सुमदो
45. ल्होलुङ
46. टक-करपो
47. थोकचेन
48. ङलुकरो
49. परखा
50. कैलास (तरछेन)

तालिका 21

तरछेन से सिंधु नदी का उद्‌गम

ल्हे ला होकर जाना और तोपछेन ला होकर लौटना–92 मील

तरछेन (0) (0) यहाँ से कैलास की परिक्रमा प्रारंभ होती है, देखिए तालिका 2। 5 मील न्यनरी गोम्पा, कैलास का प्रथम मठ। $4\frac{3}{4}$ मील डुङलुङ छू, इस नदी के ऊपर-ऊपर एक मार्ग ब्रह्मपुत्र के उद्‌गम पर जाता है।

डिरफुक् गोम्पा[1] ($12\frac{1}{4}$) ($12\frac{1}{4}$) $2\frac{1}{2}$ मील कैलास का दूसरा मठ, देखिए तालिका 2। कैलास-परिक्रमा के मार्ग को दाहिनी ओर छोड़कर यहाँ से ल्हे ला तक मार्ग उत्तर की ओर ल्हा छू के किनारे-किनारे चलता है। $3\frac{1}{4}$ मील पर दाहिनी ओर सेलुङमा, डेरे। $2\frac{1}{8}$ मील पर बाँईं ओर छुलुङ, डेरे, $1\frac{1}{8}$ मील पर दाहिनी ओर केलुङवा, डेरे, यहाँ से कड़ी चढ़ाई प्रारंभ होती है। $\frac{3}{4}$ मील पर डोलुङवा[2], डेरे, यहाँ से घाटा तक

1. डिरफुक् गोम्पा से सिंगी खंबब् (सिंधु नदी का उद्‌गम) को तीन मार्ग जाते हैं—(1) डुङलुङ छू के किनारे-किनारे डुङलुङ ला होकर, (2) ल्हा छू के किनारे-किनारे छेठी और छेठी लचेन ला होकर, (3) ल्हे ला होकर। तीसरा मार्ग सबसे छोटा, दूसरा लंबा और बहुत विकट, तथा पहला सबसे लंबा है। सिंगी खंबब् से तरछेन लौटने के लिए तोपछेन ला का मार्ग निकट और सुगम है। सिंगी खंबब् के तिब्बती यात्री इस तालिका में दिए हुए मार्ग का अनुसरण करते हैं, क्योंकि ऐसा करने से डोलमा ला की कड़ी चढ़ाई और उतराई को विना पार किए ही कैलास की परिक्रमा की जा सकती है। मैंने भी इसी मार्ग से यात्रा की थी।
2. लुङ, लुङमा, लुङवा या लुङबा ये सभी शब्द उपत्यका (वेली) के पर्यायवाची नाम हैं।

पत्थरों में होकर बहुत कड़ी चढ़ाई पड़ती है।

ल्हे ला ($10\frac{3}{4}$) (23) $3\frac{1}{2}$ मील, इसे लप्चे-चिकपा ला भी कहते हैं, लप्चे, मंडल, यहाँ से $4\frac{1}{2}$ मील तक बहुत कड़ी उतराई, डेरे।

शरशुमी ($5\frac{1}{4}$) $\frac{3}{4}$ मील आगे डेरे। यहाँ से ल्हे ला से आई हुई नदी के किनारे-किनारे लुङ्धेप छू के संगम तक उतराई।

लुङ्धेप छू (6) सामने नदी के पार बाँएँ किनारे पर न्यीमालुङ छू का संगम है। लुङ्धेप छू के किनारे-किनारे आगे बढ़ें।

2. लुङ्धेप[1] ($2\frac{1}{4}$) ($36\frac{1}{2}$) नदी के दोनों किनारे डेरे, 2-3 काले तंबू। 2-3 फीट गहरी नदी को पार करें।

रुङ्मागेम[2] ($6\frac{1}{2}$) कुछ चढ़ाव-उतार, डेरे, नदी को पार करें। $\frac{3}{4}$ मील सिंगीछवा के पहाड़ की रीढ़ तक बहुत कड़ी चढ़ाई। $\frac{3}{4}$ मील बहुत कठिन उतराई, बोखर छू को पार करें।

3. सिंगी खंबब्[3] (2) (46) [16930] $\frac{1}{2}$ मील सिंगी खंबब् या सिंधु के उद्गम, डेरे, आस-पास में अम्दो प्रांत के गड़रियों के काले तंबू हैं। 2 मील रुङ्मागेम, डेरे, नदी के बाँएँ तट को पार करें। 3 मील की कड़ी चढ़ाई। $1\frac{1}{4}$ मील की बहुत कठिन उतराई, लुङ्धेप-ङिङ्री, डेरे। 2 मील लुङ्धेप छू, डेरे, यहाँ से आगे का मार्ग लुङ्धेप छू के किनारे-किनारे जाता है। $4\frac{1}{2}$ मील, न्यिमालुङ छू, इसके बाँएँ तट को पार करें,

---

1. यहाँ से 1 मील नीचे नदी के दाहिने किनारे पर लुङ्धेप-ङिङ्री नामक एक छोटा-सा पहाड़ है, जिसके तल में नदी चौड़ी होकर एक तालाब-सी बन गई है, जो लुङ्धेप-ङिङ्री छो के नाम से पुकारी जाती है।
2. इस नदी का ऊपरी भाग मुंजन छू और नीचे का भाग सिंगी या सिंधु नदी में मिलने तक रूङ्मागेम के नाम से पुकारा जाता है। यहाँ आस-पास में विस्तृत चरागाह हैं। अम्दो प्रांत के चरवाहे हजारों भेड़-बकरियों और सैकड़ों याकों को लेकर यहाँ चराने के लिए आते हैं। सिंगी खंबब् प्रांत के गव्य-पदार्थ अपनी विशेषता के लिए प्रसिद्ध हैं।
3. यहाँ पर स्वच्छ जल के 3 या 4 सोते पृथिवी से निकले हुए हैं। इनके पास ही एक चौकोर मणि-दीवाल है। मणि-यंत्र के छहों अक्षर डेढ़-डेढ़ फीट के लंबे पत्थरों पर खुदे हुए हैं। एक पत्थर पर धर्मचक्र खुदा हुआ है। सोतों के मिश्रित जल का तापक्रम 45^0 था। इन सोतों का जल छोटे-छोटे कुंडों में इकट्ठा हो जाता है, जिनमें घास उगी रहती है। फिर इन कुंडों का जल एक छोटे-से नाले के रूप में आधे मील नीचे बोखर छू में मिलता है। इन सोतों के पास ही 3-4 गज की ऊँचाई में अधित्यका के एक श्वेत चट्टान के किनारे पर मोटे खंभे-जैसे तीन लप्चे या मंडल और कुछ मणि-पत्थर हैं। उनपर तिब्बती यात्री रंग-बिरंगे चिथड़े चढ़ाते हैं। सोतों के उत्तर की ओर के पहाड़ का नाम सिंगी–यूरा है और दक्षिण की ओर बोखर छू के पार के पहाड़ का नाम सिंगी-छवा है। सिंगी खंबब् के ईशान कोण में लामा ला है। इसे पारकर एक मार्ग थोकजलुङ की सोने की खानों को जाता है। सिंगी को सेंगी या सेंगे भी कहते हैं। खंबब् को कुछ पूर्वी तिब्बी खंबा भी कहते हैं। मैं सिंधु नदी के उद्गम पर सन् 1930 की 4 जौलाई को गया था और समीप में 3 दिनों तक ठहरा था।

यहाँ से घाटा की चढ़ाई प्रारंभ होती है। मार्ग से 1 फलाँग नीचे ङ्मिालुङ छू लुङधेप से मिलती है। 4 मील आगे $1\frac{1}{2}$ या 2 फीट गहरी लुङधेप छू के बाँएँ किनारे को पार करें। $1\frac{1}{4}$ मील आगे लुङधेप छू के दाहिने किनारे पर एक नदी मिलती है।

4. तोपछेन ला के नीचे (20) (66) 2 मील तोपछेन ला के नीचे डेरे, (आगे न्यिमालुङ से यहाँ तक मार्ग दलदल होकर है।) यहाँ से बड़े-बड़े पत्थरों के बीच से होकर बहुत कड़ी चढ़ाई, घाटा।

तोपछेन ला (5) (71) बडे-बडे पत्थरों पर होकर 7 मील की बहुत कड़ी उतराई। 5 मील मंद उतराई, यहाँ से कैलास का पूर्वी दृश्य दिखाई पड़ता है।

संगम (13) $\frac{3}{4}$ मील तोपछेन छू और ल्हमछीखिर का संगम, तोपछेन ला से लेकर यहाँ तक स्थान-स्थान पर डेरे और पड़ाव की दीवालें, संगम से कुछ ऊपर 3 फीट गहरी ल्हमछिखिर के दाहिने किनारे को पार करें। यहाँ से कैलास-परिक्रमा का मार्ग मिलता है। $1\frac{1}{2}$ मील ल्हमछिखिर के किनारे जुंठुलफुक् गोम्पा, कैलास का तीसरा मठ, देखिए तालिका 2।

5. तरछेन ($6\frac{1}{2}$) (92)।

तालिका 22

तरछेन से ब्रह्मपुत्र और टग नदी का उद्गम

गुरला ला होकर तकलाकोट लौटना–197 मील

तरछेन (0) (0), देखिए तालिका 2। 3 मील झोङ छू, डेरे, तीन फीट गहरी नदी को पार करें। 3 मील अबङ छू, डेरे, नदी को पार करें। 2 मील फिलुङ-कोङमा छू, डेरे, नदी को पार करें। $\frac{3}{4}$ मील फिलुङ-फरमा छू, डेरे, नदी को पार करें। $2\frac{3}{4}$ मील फिलुङ-योङमा छू, डेरे, नदी को पार करें। $2\frac{3}{4}$ मील ग्युमा छू, डेरे, $2\frac{1}{2}$ फीट गहरी नदी को पार करें। $\frac{1}{4}$ मील क्यो, डेरे।

1. कुगलुङ छू (17) (17) $2\frac{1}{2}$ मील डेरे, नदी को पार करें। $3\frac{3}{4}$ मील लुङनक छू। $2\frac{1}{2}$ मील कुर्क्यल छुंगो। $2\frac{1}{4}$ मील पलचेन छू, डेरे, 2-3 फीट गहरी नदी को पार करें। $1\frac{1}{4}$ मील पलचुङ छू, डेरे, 3 फीट गहरी नदी को पार करें।

2. सेरालुङ गोम्पा (16) (33) $6\frac{1}{4}$ मील मानसरोवर का छठा मठ, देखिए तालिका 3। हरकोङ $3\frac{1}{2}$ मील, काले तंबू। 4 मील छोमोकुर, काले तंबू।

3. नामरदिङ (15) (48) $7\frac{1}{2}$ मील डेरे, पड़ाव की दीवालें, यहाँ नामरदिङ छू को पार करें, यहाँ से मानसरोवर के दर्शन होते हैं।

चङशा ला (4) घाटा तक $1\frac{1}{2}$ मील की कड़ी चढ़ाई और घाटा से $1\frac{1}{2}$ मील तक कठिन उतराई।

छुमिक-थुङटोल[1] ($3\frac{1}{2}$) ($55\frac{1}{2}$) सोता।

लङ्चेन खंबब्[2] ($\frac{3}{4}$) सोता, यहाँ से आगे $1\frac{1}{4}$ मील से 2 मील तक टग नदी के दोनों किनारों और पाट में श्वेत बालू है।

टगरमोछे ($2\frac{3}{4}$) (59) डेरे, पड़ाव की दीवालें, (यहाँ से एक मार्ग टग के किनारे-किनारे लगभग 10 मील कङलुङ कङरी हिमनदियों तक जाता है, यही टग छम्पो का उद्गम-स्थान है।) यहाँ से 1 मील दलदल भूमि में चलकर टगरमोछे छू को पार करें, जो लगभग $\frac{3}{4}$ मील नीचे जाकर टग छम्पो में मिलती है। आगे 1 मील कड़ी चढ़ाई।

टक्करबू ला (2) लप्चे। छोटे-बड़े पत्थरों से ऊँचे-नीचे होकर $5\frac{1}{4}$ मील के बाद चामर, डेरे, मार्ग की बाँईं ओर एक पहाड़ है, जिसकी चोटी पर लप्चे और तरचोक हैं, इस पहाड़ के ठीक दक्षिण की ओर दूर में कङलुङ हिमनदियों का सुंदर दृश्य है, टक्करबू ला और चामर के बीच में कई छोटे-बड़े तालाब हैं।

टग ला (6) (67) [17382] $\frac{3}{4}$ मील लप्चे और तरचोक। $3\frac{1}{2}$ मील तमलुङ छो, इस सरोवर के किनारे-किनारे स्थान-स्थान पर डेरे हैं, शीतकाल में चरवाहे आकर यहाँ ठहरते हैं। इस सरोवर से आगे कई छोटे-छोटे ताल हैं, जो परस्पर मिले हुए हैं। $2\frac{1}{2}$ मील सरोवर के साथ-साथ (तमलुङ छो से एक नदी निकलकर आगे अङसी छू से मिलती है)। $2\frac{1}{2}$ मील के बाद एक मार्ग पूर्व की ओर कोङ्यू छो, बोङबा आदि स्थानों को जाता है। $2\frac{1}{4}$ मील दक्षिण की ओर मंद चढ़ाई है, यहाँ से उत्तर की ओर कोङ्यू छो दिखाई पड़ता है। $2\frac{1}{4}$ मील की क्रमशः साधारण, कठिन और बहुत कठिन उतराई है।

5. अङसी छू (13) (80) नदी की दोनों ओर डेरे हैं, इसका पाट चौड़ा और गंभीर है,

---

1. छू = जल, मिक = आँख, थुङ = देख, टोल = निर्वाण; अर्थात् जो कोई इस नेत्र सदृश स्रोत को देख लेते हैं, वे अवश्यमेव निर्वाण प्राप्त करते हैं। यह ऊँचे पहाड़ों के बीच में टग छङपो के दाहिने किनारे पर है। सोत की चारों ओर 16 गज लंबी और 10 गज चौड़ी मणि-दीवाल है, जिसमें लगे हुए झंडे सोते पर झुके हुए हैं। यह सोता 3-4 फीट गहरा तथा 3 फीट व्यास का है। इसमें तिब्बती यात्रियों द्वारा चढ़ाए हुए, चार साधारण पिरोजे, दो कंकण, कुछ लाल और नीले दाने और कुछ छोटी-मोटी वस्तुएँ हैं, जो स्वच्छ पिरोजे-जैसे निर्मल जल में हस्तगत पदार्थों के समान दिखाई पड़ते हैं। सोते का जल स्वच्छ और निर्मल है। इसके नीचे से जल बाहर निकलकर एक छोटे-से नाले के रूप में कुछ गज नीचे टग में गिरता है। स्वेन हेडिन ने भ्रमवश इसका नाम छक्को रखा था। तिब्बती पुराण में यह लिखा गया है कि गंगा या लङ्चेन खंबब् कैलास से निकलकर यहाँ पर प्रकट होकर फिर यहाँ से दुलचू गोम्पा में प्रकट होती है। यह सोता चेनरेसी (श्वेत), छगनादोर्जे (नीला) और जंबियङ (पीला) पहाड़ों के बीच में है। सोता पहुँचने के मार्ग में और आगे कई मंडल, लप्चे और मणि हैं।
2. सोते के पास एक बड़ा लप्चे है, जिसमें एक लंबी लकड़ी में कई रंग-बिरंगे झंडे लगे हुए हैं। यह सोता काले पत्थरों से निकलकर और उसी प्रकार के पत्थरों में होकर एक छोटे-से नाले के रूप में बहता है।

इसके बीच में ऊपर और नीचे कई तालाब बने हुए हैं, 2- 2½ फीट की गहरी नदी को पार करें। ½ मील नदी की उपत्यका। 1¼ मील मंद और कड़ी चढ़ाई। 2½ मील अधित्यका के ऊपर मंद चढ़ाई, बीच में बाँईं ओर एक तालाब है।

शिबलारिङ्मो ला (4¼) यह घाटा दो घरों के मध्य के संकीर्ण गली की भाँति ऊँचे-ऊँचे दो पहाड़ों के बीच में एक गज चौड़ा है। (घाटे के पास ही दाहिनी ओर एक गहरा तालाब है।) ¾ मील तंग घाटा में पत्थरों से होकर उतराई, यहाँ से बाँईं ओर एक तालाब है। 3¼ मील पत्थरों पर ऊँचे-नीचे होकर मार्ग, आधे मार्ग में चंद्राकार एक सुंदर तालाब है, जिसमें एक द्वीप है। यहीं पर एक छोटी नदी को पार करें। ½ मील चढ़ाई। 1¼ मील बहुत कड़ी उतराई।

चेमायुङ्डुङ छू (5½) नदी का पाट और दाहिना किनारा श्वेत बर्फ से ढका हुआ-सा प्रतीत होता है। अङ्सी की उपत्यका के समान ही चेमायुङ्डुङ की उपत्यका भी कई तालाबों से भरी हुई है।

चेमायुङ्डुङ पू (5½) तमचोक खंबब् की प्रथम हिमनदी, इसकी जिह्वा पर फिसले हुए पहाड़ के टुकड़ों के ढेर लगे हुए हैं। ग्लेशियर के ऊपर दो तालाब बने हुए हैं, यहाँ से मार्ग पश्चिम की ओर मुड़ता है।

6. तमचोक खंबब्[1] (¾) (96) ब्रह्मपुत्र का उद्गम-स्थान।

---

1. ता = अश्व, अमचोक = कान, खंबब् = मुख से निकला हुआ, अर्थात् अश्व–कर्ण–मुख से निकली हुई नदी। एक और व्युत्पत्ति के अनुसार, तमचोक = दिव्य अश्व, खंबब् = मुख से निकला हुआ, अर्थात् दिव्य अश्व के मुख से निकली हुई नदी। यहाँ पर 12 फीट ऊँचा एक बड़ा भारी पत्थर है, जिसके ऊपर दो पादचिह्न हैं। ये नरोपुङ्जुङ के माने जाते हैं। उसपर केवल पत्थरों के ढेरों से चिनी हुई दीवालों की एक छोटी-सी पूर्वाभिमुख कोठरी बनी हुई है। इस कोठरी के ऊपर जंगली याक के दो सींग रखे हुए हैं। बड़े पत्थर से सटी हुई एक छत वाली और दो बिना छत वाली, पत्थरों के ढेर की दीवालों की धर्मशालाएँ हैं। पत्थर की चारों ओर कई मंडल बने हुए हैं। पास ही एक सूखा सोता है, जिसमें ग्रीष्म और वर्षा ऋतु में जल होता है (ऐसा वहाँ के लोगों ने बताया)। नदी यहाँ पर चेमायुङ्डुङ नाम से प्रसिद्ध है, जो उक्त पत्थर से 50 गज की दूरी पर है। इस स्थान से 1 मील ऊपर तमचोक खंबब् नामक एक बड़ी हिमनदी है, जो ब्रह्मपुत्र की प्रधान हिमनदी है। इसमें तमचोक खंबब् या ब्रह्मपुत्र का वास्तविक उद्गम-स्थान है। यह और चेमायुङ्डुङ पू ब्रह्मपुत्र के दोनों कान समझे जाते हैं। ये दोनों चेमायुङ्डुङ पू या केवल चेमायुङ्डुङ के सम्मिलित नाम से प्रसिद्ध हैं। इसे चेमायुंटुङ या चेमायुङ्डुङ भी कहते हैं। चेमा = रेत, युंटुङ = स्वस्तिका। छोरतेन के सामने नदी के दाहिने किनारे पर इन दोनों हिमनदियों के बीच में एक चौड़े सिर वाला शिखर है। तमचोक खंबब् के प्रधान ग्लेशियर के वायव्य कोण में एक और छोटी हिमनदी है, जिसके पीछे अङ्सी हिमनदी है। सन् 1937 के 17, 18 जून को मैं ब्रह्मपुत्र के उद्गम पर था। उस समय नदी का पाट 5 से 20 गज तक चौड़ा, 6 से 7 फीट तक मोटा (तमचोक खंबब् की प्रधान हिमनदी के मुख से) और 3 मील लंबा था और बर्फ से भरा हुआ था। पाट में जमी हुई इस बर्फ के बीच में 3 से 6 फीट चौड़ी और 6 फीट गहरी, बर्फ की खड़ी

शिबलारिङ्मो ला ($11\frac{3}{4}$)

7. अङ्सी छू ($4\frac{1}{4}$) (112) डेरे।

टग ला (13)

8. टगरमोछे (8) (133) डेरे।

छुमिक-थुङ्टोल ($3\frac{1}{2}$) (3) सोता, डेरे। $6\frac{1}{4}$ मील टगपोटोङ, डेरे। $9\frac{1}{2}$ मील टग नदी के बाँएँ किनारे को पार करें, टोमोमोपो के डेरे, उबलते और उछलते हुए गर्म जल के सोते।

9. न्यौंबा-छुजेन ($16\frac{1}{2}$) (153) $\frac{3}{4}$मील टग नदी के दोनों किनारे के गर्म जल के सोते, डेरे, दे० पृष्ठ 108, 265। $3\frac{1}{2}$ मील निमापेंडी छू, नोनोकुर के काले तंबू, देखिए तालिका 3। नदी के बाँएँ किनारे को पार करें। $3\frac{1}{4}$ मील येर्नगो गोम्पा, मानसरोवर का सातवाँ मठ।

10. ठुगोल्हो (9) (162), देखिए तालिका 3। मानसरोवर का आठवाँ मठ, $9\frac{1}{2}$ मील गुरला ला।

11. बलडक ($8\frac{1}{2}$) (180) डेरे।

12. तकलाकोट (16) (196)

तालिका 23
तकलाकोट से मप्चा चुंगो
करनाली का उद्गम–21 मील

तकलाकोट (0) (0), देखिए तालिका 5।

1. हरकोङ छू ($14\frac{1}{4}$) ($14\frac{1}{4}$)

2. मप्चा चुंगो ($8\frac{3}{4}$) (23) सोते।

दीवालों के बीच में नदी प्रवाहित हो रही थी। अगस्त के महीने में 'ञाकोरा' के घुमक्कड़ गड़रिए यहाँ जंगली याकों का, जो यहाँ अधिक हैं, शिकार करने के लिए आते हैं।

स्वेन हेडिन ने भ्रमवश ब्रह्मपुत्र के उद्गम को चेमायुङ्डुङ कङरी में न मानकर कुबी में रखे थे, जिसकी चर्चा मैंने विस्तार से 'ऐक्सप्लोरेशन इन टिबेट' (तिब्बत में अन्वेषण) नामक पुस्तक में की है। चेमायुङ्डुङ की उपत्यका में बहुत अच्छी घास होती है, इसलिए ञाकोरा के चरवाहे यहाँ अधिक आते हैं। नदी की दोनों ओर स्थान-स्थान पर डेरे लगते हैं। नदी का श्वेत बालू 10 मील तक फैला हुआ है, जो दूर से देखने में गिरी हुई बर्फ के समान प्रतीत होता है।

तालिका 24
कैलास से दुलचू
सतलज का उद्गम–21 मील

कैलास (तरछेन) (0) (0)
ल्हा छू ($2\frac{1}{4}$)
करलेब छू (3)
चङजे-चङजू ($7\frac{1}{2}$)
1. दुलचू ($8\frac{1}{4}$) (21), देखिए तालिका 5।

तालिका 25
अल्मोड़े से पिंडारी ग्लेशियर
–74 मील

अल्मोड़ा (0) (0)
1. ताकुला (15) (15) डा0, डाब0, दुकान।
2. बागेश्वर (12) (27) सरयू और गोमती नदी का संगम, डा0, अ0, डाब0, स्कूल, बाजार, मंदिर आदि। दे0 217, तालिका 11।
3. कपकोट (14) (41) डाब0, दुकान, धर्मशाला।
लोहारखेत (9) डाब0, दुकान।
4. ढाकुरी (6) (56) डाब0, दुकान।
खाती (5) डाब0, दुकान।
द्वाली (4) डाब0।
5. फुरकिया (6) (71) डाब0।
पिंडारी ग्लेशियर[1] (3) (74) [12880] बहुत सुंदर हिमनदी।

----

1. ग्लेशियर पहुँचने से एक मील इधर ही एक गुफा है, जो नंदादेवी का शीतकालीन निवास स्थान माना जाता है। ग्लेशियर के पूर्व में नंदाकोट शिखर (22510 फीट), पश्चिम में नंदाकना का शिखर (20700 फीट) और त्रिशूल का शिखर (22300 फीट) और उत्तर में नंदादेवी का शिखर (25640 फीट) है। यहाँ से एक मार्ग कैलास के तीसरे मार्ग में बर्फ से होकर मरतोली गाँव को जाता है। इस मार्ग से पहले-पहल श्री ट्रेल गए थे, इसलिए यह बर्फीला घाटा 'ट्रेल पास' नाम से प्रसिद्ध है।

तालिका 26
श्रीनगर से अमरनाथ

पहलगाँव होकर–59 + $28\frac{3}{4}$ = $87\frac{3}{4}$ मील

श्रीनगर (0) (0) [5260] जम्मू और काश्मीर रियासत की राजधानी। 9 मील पांपुर, यहाँ पर केसर की खेती होती है, जिसके फूल आश्विन पूर्णिमा को तोड़े जाते हैं।

अवंतिपुरा ($18\frac{1}{2}$) ($18\frac{1}{2}$) $9\frac{1}{2}$ मील पुराने मंदिरों के खंडहर। 7 मील संगम—झेलम और विश्वा नदी का संगम। $3\frac{1}{2}$ मील बिजबिहारा, शहर। 4 मील खानाबल, जम्मू से श्रीनगर जाने वाला मार्ग यहाँ पर मिलता है, जम्मू यहाँ से 173 मील की दूरी पर है।

अनंतनाग[1] ($15\frac{1}{2}$) (34) [5300] 1 मील यह इस्लामाबाद भी कहलाता है, शहर। 2 मील गौतमनाग, सोते। $1\frac{1}{2}$ मील बवन, गाँव।

मट्टन[2] ($4\frac{1}{2}$) ($38\frac{1}{2}$) 1 मील अमरनाथ के पंडे यहाँ रहते हैं। $\frac{3}{4}$ मील बुंजू, यहाँ पर मार्ग से दाहिनी ओर के पहाड़ में लगभग 200 गज लंबी गुफा है, जिसमें अँधेरे के कारण दीप या टॉर्च लेकर और कहीं-कहीं पेट के बल रेंगकर जाना पड़ता है।

ऐशमुकाम (9) ($47\frac{1}{2}$) $8\frac{1}{4}$ मील मुसलमानों का एक तीर्थ। $2\frac{1}{2}$ मील गणेशपुरा, मार्तंड की नहर का प्रधान स्थान। 3 मील बटकुट, अमरनाथ के चढ़ावे का तीसरा अंश इस गाँव के मुसलमानों को दिया जाता है।

पहलगाँव[3] ($11\frac{1}{2}$) (59) [7200] 6 मील ठंढे स्थान, दुकान, यहाँ पहलगाँव के 'कैंपिंग ग्राउंड' या डेरे के स्थान हैं। 1 मील पहलगाँव, गाँव। 1 मील पहलगाँव, शेषनाग नदी के पार दाहिने किनारे पर यात्रियों के छप्पर (पिलग्रिम शेड्स) हैं। $2\frac{1}{2}$ मील फ्रिशिन, मार्ग का अंतिम ग्राम।

---

1. यहाँ पर एक पहाड़ की जड़ से कई सोते या नाग निकलते हैं, इसलिए इस स्थान का नाम अनंतनाग पड़ा। इन सोतों के पास एक बड़ा सुंदर कुंड बना हुआ है, जो 4 फीट गहरा है। इस कुंड का जल कुछ नीचे तक दूसरे कुंड में गिरकर वहाँ से एक नदी के रूप में बाहर निकलता है। यहाँ से एक मार्ग अच्छाबल और वेरीनाग को जाता है।
2. यहाँ भी दो कुंड हैं, जिनकी गहराई 12-12 फीट है। यहाँ से 2 मील पर एक पहाड़ के ऊपर प्रसिद्ध मार्तंड के मंदिर के खंडहर हैं, जो 1200 वर्षों का पुराना है। इस मंदिर की नींव 225 फीट लंबी और 150 फीट चौड़ी है।
3. श्रीनगर से यहाँ तक 59 मील मोटरबस चलती है। यहाँ से अमरनाथ तक घोड़े, डाँडी या पालकी पर जा सकते हैं। कुली भी मिल सकते हैं। सारा प्रबंध यहीं से करना पड़ता है, बहुत ठंढा स्थान है। अमरनाथ यहाँ से $28\frac{3}{4}$ मील है। अच्छी तरह से $3\frac{1}{2}$ दिन में वहाँ जा सकते हैं और लौटते समय 2 दिन में शीघ्रता से लौट सकते हैं। वैसे तो श्रावण पूर्णिमा के समय अमरनाथ की यात्रा का पूरा प्रबंध काश्मीर सरकार के 'धर्मार्थ' विभाग की ओर से किया जाता है। उस अवसर पर सारा मार्ग साफ किया जाता है। प्रत्येक पड़ाव पर दुकानें खोल दी जाती

1. चंदनवाड़ी[1] (8½)(67½)[9200] 4 मील यात्रियों के छप्पर। 1½ मील पिशूघाटी[2], यहाँ पर जंगल समाप्त हो जाता है। 2¼ मील जोजीपाल, यहाँ से ¾ मील कड़ी चढ़ाई। 2¼ मील कुट्टा। 1 मील शेषनाग[3] [11730] सरोवर।
2. वौजन (8) (75½) [12230] 1 मील इसे ववजन भी कहते हैं, यात्रियों के छप्पर, यहाँ पर ईंधन का बहुत अभाव है, एक हरी झाड़ी मिलती है, वायु तीव्र चलती है। 1½ मील अश-डढ़ा की, डेरे। 1½ मील महागुनस [14000 ?] कड़ी चढ़ाई, घाटा है, महागुनस की चढ़ाई और उतराई पर थोड़ी दूर तक बर्फ पर चलना पड़ता है, फिर यहाँ पंचतरणी तक लगातार उतराई है, कैलनाड़ तक बहुत कड़ी उतराई है। 1 मील हुकसर । ¾ मील कैलनाड़, नदी, अस्थानमर्ग का मार्ग यहाँ आकर मिलता है। (कैलनाड़ से हत्यारा तालाब 2 मील है, मार्ग चढ़ाई का है। यहाँ पर एक बार बर्फ गिरने से सैकड़ों यात्री मर गए,इसलिए उसका नाम हत्यारा तालाब पड़ा है। ½ मील सस्कटी तक कड़ी चढ़ाई, [13860 फीट], 3 मील बहुत कड़ी उतराई, आस्थानमर्ग। 4 मील कड़ी उतराई, चंदनवाड़ी। कैलनाड़ से चंदनवाड़ी इस मार्ग से कुल 9½ मील है।) यहाँ से पंचतरणी तक नदी को तीन बार इधर और उधर पार करना पड़ता है।

हैं। दरबार की ओर से निश्चित भाव पर वस्तुएँ मिलती हैं। साधु-संन्यासियों के लिए भोजन, वस्त्र, तंबू आदि सभी प्रकार के प्रवंध रहते हैं। 'धर्मार्थ' विभाग के सुपरिटेंडेंट और अन्य कर्मचारी, पुलिस, चलते-फिरते अस्पताल भी यात्रियों के साथ-साथ चलते रहते हैं। श्री 108 शंकराचार्य छड़ी को साथ लेकर पैदल यात्रा करते हुए दशमी तक पहलगाँव पहुँच जाते हैं। अमरनाथ की यात्रा श्रावण पूर्णिमा के अतिरिक्त आषाढ़, भाद्रपद पूर्णिमा या किसी और तिथि में स्वतन्त्र रूप से की जा सकती है।

1. चंदनवाड़ी पहुँचने से कुछ पहले शेषनाग और आस्थानमर्ग नाम की नदियों का संगम है। संगम से कुछ आगे बढ़कर आस्थानमर्ग की नदी को पुल से पार करके चंदनवाड़ी पहुँचते हैं। यहाँ से एक मार्ग आस्थानमर्ग और हत्यारी तालाब होकर अमरनाथ को जाता था, जो अब काश्मीर सरकार ने बंद करा दिया है। यह पड़ाव चीड़ के जंगल के बीच में है। चंदनवाड़ी से कुछ दूर आगे चलकर शेषनाग की नदी पर एक बड़ा भारी हिमखंड गिरकर बर्फ का एक प्राकृतिक पुल बन गया है।
2. चंदनवाड़ी से पिशूघाटी तक बहुत कड़ी चढ़ाई है। परंतु कुछ वर्ष पहले चढ़ाई की कठिनता से बचाने के लिए काश्मीर सरकार की ओर से एक मंद चढ़ाई का मार्ग निर्मित कराया गया है, पर वह लंबा है।
3. शेषनाग का मनोरम तालाब लगभग 6 फलाँग लंबा है और 2फलाँग चौड़ा है। शेषनाग से कुछ मील उत्तर की ओर सुंदर बर्फीली चोटियाँ और कोहेनहार हिमनदी (17000 फीट) हैं, जहाँ से जल आकर पर्वतों के बीच में तालाब बन गया है। इस तालाब से शेषनाग की नदी निकलती है। शेषनाग 11730 फीट की ऊँचाई पर है। आस-पास के पहाड़ों में चूना और 'जिप्सम' होने के कारण इसका जल दूध-जैसा श्वेत होता है। तालाब पर पहुँचने के लिए मार्ग छोड़कर लगभग 1 मील नीचे उतरना पड़ता है। मार्ग से यह तालाब 500 फीट नीचे है। शेषनाग का आध्यात्मिक स्पंदन अमरनाथ से भी बढ़कर है।

2 मील नगारपल, एक बड़ा भारी पत्थर ।

3. पंचतरणी[1] ($8\frac{1}{4}$) ($83\frac{3}{4}$) [12015] $1\frac{1}{2}$ मील, नदी का दाहिने किनारे को पार करें, यात्रियों के छप्पर।

अमरनाथ गुफा[2] (4) ($87\frac{3}{4}$) [12729] गुफा में बर्फ के शिवलिंग। अमरनाथ की गुफा

---

1. पंचतरणी के पड़ाव पर पहुँचने से पहले नदी की पाँचों शाखाओं को पार करना पड़ता है। यह सिंध नदी (झेलम नदी की उपनदी) की उपनदी है। यहाँ से एक मार्ग भैरव घाटी (14350) होकर सीधा अमरनाथ को जाता है, जो 3 मील दूर है। पंचतरणी से प्रातःकाल उठकर अमरनाथ पहुँचकर फिर पंचतरणी लौटना होता है। पंचतरणी से एक मील आगे $\frac{3}{4}$ मील की बहुत कड़ी चढ़ाई है। यहाँ से मार्ग दाहिनी ओर मुड़ जाता है। कुछ स्थानों को छोड़कर यहाँ से अमरनाथ तक अमरावती नदी कई फीट ऊँची बर्फ से ढकी रहती है, जिसके ऊपर होकर मार्ग जाता है। अमरावती गंगा से 1 फर्लांग ऊपर चढ़कर गुफा पर पहुँचते हैं।

2. अमरनाथ की गुफा लगभग 150 फीट लंबी, उतनी ही चौड़ी और उतनी ही ऊँची है। गुफा की संपूर्ण छत और दीवालों से सर्वदा पानी भीतर टपकता रहता है, जिससे सारी गुफा गीली रहती है। प्रतीत होता है, पहाड़ चूने का है। गुफा की दीवाल पर दो छेद हैं, जिसमें से पानी विशेष रूप से निकलता है, जो बाहर आते ही ठंढक के कारण जम जाता है। इन छेदों में से एक बड़ा है, जिसके नीचे बर्फ लिंग के आकार का बन जाता है। वह लिंग अमरनाथ के नाम से प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त अमरनाथ के लिंग की बाँईं ओर गणेश का और दाहिनी ओर पार्वती और भैरव की पृथक्-पृथक् छोटी-छोटी मूर्तियाँ बर्फ की बन जाती हैं। परंतु श्रावण पूर्णिमा तक ये तीनों गल जाते हैं। इसलिए यात्रा के समय पंडे लोग बाहर से बर्फ के टुकड़ों को लाकर उनके किनारों को लोई से ढक लेते हैं। अमरनाथ की गुफा दक्षिणाभिमुख है। सूर्य की किरणें गुफा के भीतर अमरनाथ तक न पहुँचकर पार्श्वों में ही रह जाती हैं। इसलिए गुफा के भीतर के बर्फ का लिंग ग्रीष्म ऋतु में भी नहीं गलता है। अमरनाथ के लिंग के संबंध में यह किंवदंती फैलती आई है कि वह शुक्ल प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक बढ़ता है और कृष्ण प्रतिपदा से लेकर अमावस्या तक पूरा गल जाता है। यह बात केवल काल्पनिक और भ्रमात्मक है। मैंने इस गुफा में 15 दिन तक रहकर निरीक्षण किया और उसी वर्ष आषाढ़, श्रावण और भाद्रपद में जाकर लिंग के स्वरूप के परिमाण को मापा। उस वर्ष लिंग की खड़ी ऊँचाई (पर्पेंडिक्यूलर हाइट) आषाढ़ में $7\frac{1}{2}$ फीट, श्रावण में 4 फीट, और भाद्रपद में 1 फुट रही। आषाढ़ के महीने में लिंग का रूप स्पष्ट था, श्रावण में साधारण और भाद्रपद में लिंग की आकृति विनष्ट होकर केवल बर्फ के एक छोटे-से टुकड़े के रूप में अवशेष रह गई थी। अमरनाथ के तीनों महीनों का परिमाण और तुलनात्मक आकार चित्र-संख्या 116 में दिया गया है। इसलिए उक्त किंवदंती में कितना तथ्य है, इसे पाठकगण स्वयं विचार कर सकते हैं।

अमरनाथ की गुफा के भीतर एक छोटी-सी गुफा में से चूने-जैसे एक श्वेत पदार्थ को विभूति के लिए प्रसाद के रूप में लाते हैं, जिसे श्रावणी के दिन बटकोट के मुसलमान बेचते हैं। रासायनिक परीक्षा द्वारा ज्ञात हुआ कि इसमें 'केलसियम क्लोराईड' प्रधान द्रव्य है और 'केलसियम सलफेट' पर्याप्त परिमाण में है। गुफा के पश्चिम की ओर अमरगंगा नामक एक

के भीतर की छत में एक नहीं, प्रत्युत कई जोड़े कबूतर (काले और भूरे मिले हुए रंग के), कौवे, 'काले कौवे', लाल चोंच और लाल चंगुल, पीली चोंग और लाल चंगुल

छोटी-सी धाग है, जिसमें यात्री लोग स्नान करते हैं।

चंदनवाड़ी से लेकर अमरनाथ और यहाँ से आगे 2–3 मील तक पंजाब के गुज्जर (बकरी चराने वाले) और काश्मीर के चौपान (भेड़ चराने वाले) अपनी भेड़-बकरियों को चराने के लिए, चौमासे में स्थान-स्थान पर डेरा डालकर ठहरते हैं। वे सब मुसलमान हैं।

लगभग 400 वर्ष पहले बटकुट के मुसलमान चरवाहों ने पहले-पहल इस गुफा का पता हिंदुओं को दिया था। इसलिए श्रावणी के अवसर पर जो अमरनाथ के लिंग पर चढ़ावा (रुपया-पैसा) चढ़ाया जाता है, उसके तीन भाग करके एक भाग शंकराचार्य के मठ को, एक भाग पंडों को और एक भाग बटकुट के मुसलमानों को मिलता है। शिवपुराण अथवा किन्हीं अन्य पुराणों में अमरनाथ का वर्णन या उल्लेख नहीं मिलता। काश्मीर के अतिप्राचीन नीलमत पुराण में वहाँ के सभी तीर्थों का वर्णन आता है, उसके 1535वें श्लोक में केवल अमरनाथ का उल्लेख मात्र किया गया है। उसी पुराण में वितस्ता (झेलम) को काश्मीर का सर्वश्रेष्ठ तीर्थ माना गया है, अमरनाथ को नहीं। इसी प्रकार काश्मीर के सुप्रसिद्ध इतिहास राजतरंगिणी के प्रथम भाग में 267वें श्लोक में भी अमरेश्वर का केवल उल्लेख किया गया है। कोई विशेष वर्णन नहीं है। राजतरंगिणी के अंग्रेजी अनुवादक डॉ० स्टेइन ने भी लिखा है—"अमरनाथ के नाममात्र के उल्लेख से पता लगता है कि प्राचीन काल में यह अति साधारण तीर्थ रहा होगा।" एक काश्मीरी पंडित का कहना है कि भवानी-सहस्रनाम नामक पुस्तक में काश्मीर के सभी तीर्थों का उल्लेख है, परंतु अमरनाथ की चर्चा कहीं नहीं है। यह भी कहा जाता है कि अमरनाथ के बारे में जो अमरकथा है, उसे एक काश्मीरी पंडित ने लगभग एक शताब्दी पहले लिखा था। परंतु वह किसी पुराण के अंतर्गत नहीं है। काश्मीर के एक वृद्ध पंडित का कहना है कि लगभग 200 वर्ष पहले काबुल के दीवान नंदराम के एक संबंधी पंडित हरिदास ट्रिकू ने इस गुफा का पता लगाया। उस समय मार्ग भैरो घाटी होकर जाता था। लगभग 100 वर्ष बाद से पहले राजा रणजीत सिंह के संबंधी संतसिंह अमरनाथ के दर्शन के लिए एक दूसरे मार्ग से गए, जिससे होकर आजकल यात्री वहाँ जाते हैं। इसलिए यह मार्ग 'संतसिंह का मार्ग' के नाम से प्रसिद्ध है।

अमरनाथ की गुफा की छत के ऊपर कोई तालाब या सोता नहीं है, क्योंकि गुफा की छत से पहाड़ सीधा खड़ा है और ऊपर कोई समतल मैदान आदि नहीं है। गुफा के नीचे उतरकर अमरावती को पार करना चाहिए। वहाँ से 2–3 फर्लांग आगे जाकर फिर अमरावती को वर्फ के पुल से पार करके लगभग $3\frac{1}{2}$ मील बर्फ और पत्थरों पर होते हुए ज्ञानागंग के किनारे-किनारे बहुत कड़ी चढ़ाई पड़ती है। चढ़ाई समाप्त करके अमरनाथ के घाटे पर पहुँचने पर वहाँ बर्फीले मैदान में ज्ञानसर और सोमसर नामक दो छोटे-छोटे ताल हैं। यहाँ का मार्ग वहुत भयावह, दुर्गम और विपज्जनक है। मैं इन सरों पर सन् 1929 के 23 अगस्त को गया था। उस समय दिन के बारह बजे तापक्रम 34^0 था। यहाँ और अमरनाथ के बीच में मार्ग से दाहिनी ओर थोड़ी ऊँचाई पर कई छोटी-छोटी गुफाएँ हैं, जिनमें से 1 या 2 में बर्फ के लिंग बने हुए हैं। इन सरों से दूसरी ओर उतरकर जोजीला से आगे लदाख के मार्ग पर मटयन

वाले कौवे, गौरैये, उल्लू, मैने और दो अन्य प्रकार के पक्षी हैं। इनके अतिरिक्त गुफा के ऊपर उड़ते हुए चील देखने में आते हैं। गुफा के नीचे बिलों में जंगली चूहे हैं।

तालिका 27

रक्सौल से पशुपतिनाथ

–77 मील

रक्सौल (ब्रिटिश)[1] बी0एन0 डब्ल्यू0 रेलवे का अंतिम स्टेशन, यहाँ से $\frac{1}{2}$ मील पर नेपाल का रक्सौल स्टेशन है। 3$\frac{1}{2}$ मील बीरगंज, स्टेशन, बाजार, धर्मशाला।

1. **अमलेखगंज**[2] (20) (24) यहाँ से नेपाल की 'लाईट रेलवे' आरंभ होती है, बाजार और होटल हैं, यहाँ से चंडी का एक छोटा-सा मंदिर है, पहाड़ पर लगभग 1 फलाँग लंबी दो सुरंगों से होकर मोटर जाती है।

पहुँच सकते हैं।

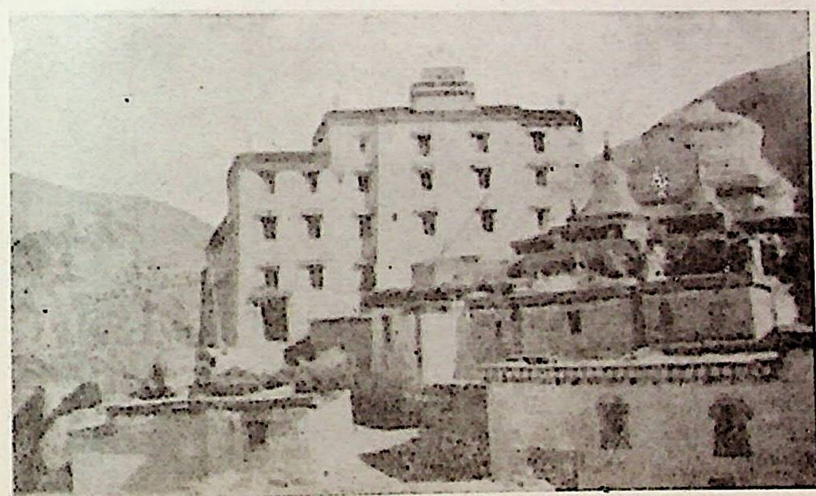
अमरनाथ गुफा के सामने भैरव का पहाड़ है, जिसे पार करके एक मार्ग सीधे पंचतरणी को जाता है। कुछ वर्ष पहले कुछ यात्री मोक्ष प्राप्ति की आशा से पहाड़ की चोटी से नीचे गिरकर प्राणत्याग करते थे। ऐसे ही अमरनाथ की गुफा से गिरकर भी कुछ लोग मरते थे; इसलिए अब भी श्रावण पूर्णिमा के दिन, गुफा से कुछ आगे और भैरव घाटी के मार्ग में पुलिस के आदमी नियुक्त किए जाते हैं, जिससे कोई भी उधर न जा सके और इस प्रकार का कोई उपद्रव न करने पाए। उस दिन सवेरे 7 बजे से यात्रा प्रारंभ होकर दोपहर में 2-3 बजे तक समाप्त हो जाती है और किसी को वहाँ नहीं रहने देते। श्रीनगर से एक मार्ग बालतल होकर अमरनाथ जाता है। ज्येष्ठ या आषाढ़ मास में जब नदी बर्फ से ढकी रहती है, तब इस मार्ग से जाना चाहिए। श्रीनगर से बालतल 50 मील और वहाँ से अमरनाथ 12 मील है।

1. अयोध्या और गोरखपुर होकर या समस्तीपुर और मुजफ्फरपुर होकर रक्सौल पहुँच सकते हैं। यहाँ से $\frac{1}{2}$ मील की दूरी पर नेपाल राज्य का रक्सौल है। यहीं से नेपाल की 'लाईट रेलवे लाईन' प्रारंभ होती है। पशुपतिनाथ या काठमांडू जाने के लिए प्रायः नेपाल सरकार से पासपोर्ट लेना पड़ता है, परंतु शिवरात्रि के अवसर पर सात दिन पहले से लेकर 10 दिन बाद तक, प्रत्येक यात्री को नेपाल दरबार की ओर से पासपोर्ट मिल जाता है। उस समय रक्सौल स्टेशन पर टिकट लेते समय एक छोटे–से नेपाली कागज पर पासपोर्ट मिल जाता है। नेपाली रक्सौल से अमलेखगंज तक लगभग 24 मील तक रेल जाती है। रेल का किराया 1 रुपए है, परंतु यात्रा के दिनों में किराया आधा कर दिया जाता है। यात्रा के दिनों में भीड़ के कारण, बहुधा तीसरे दरजे के यात्रियों से ठसाठस भरे हुए मालगाड़ी के डब्बों में यात्रा करने के लिए बाध्य होना पड़ता है।
2. अमलेखगंज से भीमफेड़ी तक यात्रा के दिनों में लगभग 27 मील तक माल लादने वाली 'बस' चलती है, जिसका भाड़ा आठ आने से 1 रुपए तक होता है। अमलेखगंज में ठहरने के लिए धर्मशाला, होटल और दुकानें हैं।



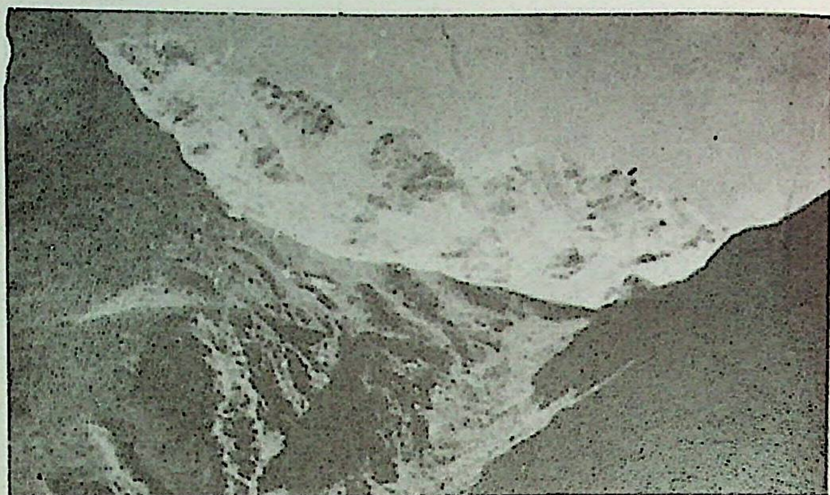
111. गरतोक में छोड्दू (घुड़दौड़) के समय तिब्बती सिपाही

[देखिए पृ० 295



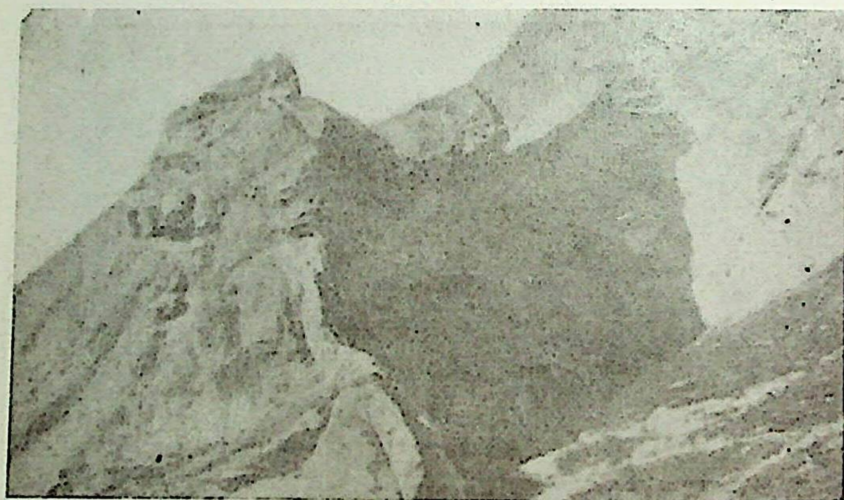
112. लामायूरु गोम्पा, लदाख

[देखिए पृ० 297



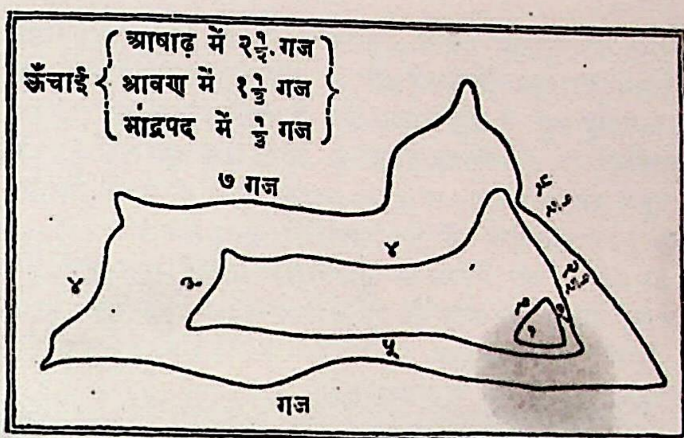
113. पिंडारी ग्लेशियर

[देखिए पृ० 305



114. अमरनाथ की गुफा, काश्मीर

[देखिए पृ० 308



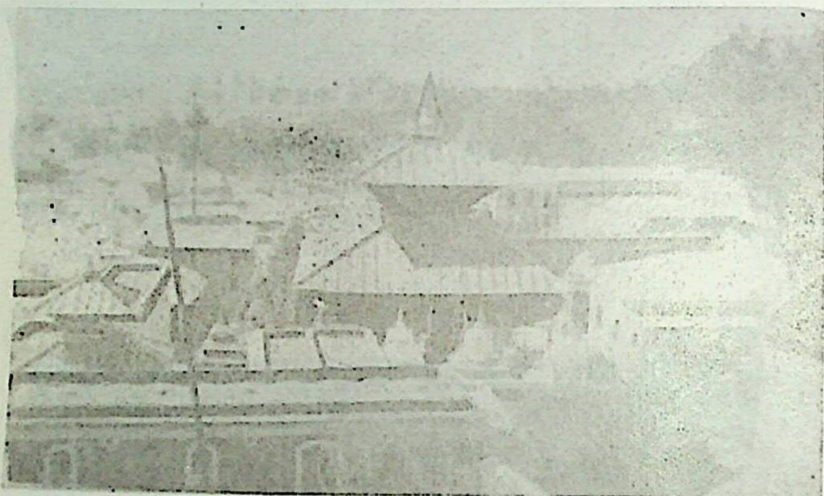
115. विविध मासों में अमरनाथ के लिंग के आकार और परिमाण

[देखिए पृ० 308



116. अमरनाथ की गुफा में बर्फ का शिवलिंग

[देखिए पृ० 309



117. पशुपतिनाथ का मंदिर, काठमांडू

[देखिए पृ० 310

2. भीमफेड़ी[1] (27) (51) 21 मील धर्मशालाएँ, बाजार, यहाँ पासपोर्ट बदलना पड़ता है। यहाँ से आगे नदी को पार करें। 2½ मील चिसागढ़ी, बहुत कड़ी चढ़ाई है, यहाँ पर पासपोर्ट फिर बदलना पड़ता है, एक पुराना किला है, कुछ दुकानें हैं। ½ मील चढ़ाई। 2½ मील बहुत कड़ी उतराई, कुलीखानी का गाँव। ½ मील कुलीखानी, यहाँ पर नदी को पार करके चट्टी, दुकान, धर्मशाला, यात्रियों के लिए तंबू।

3. मारखू (8) (59) 2 मील दुकान, धर्मशालाएँ । ½ मील कड़ी चढ़ाई। 2½ मील चढ़ाई और ½ मील उतराई, चितलंग, इसे चितलांग भी कहते हैं, गाँव। 2 मील चंदनगढ़ी का घाटा, बहुत कड़ी चढ़ाई, यहाँ से नेपाल की दून और दूर के बर्फीले शिखरों की श्रेणियों का सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है। 2½ मील पानीघाट, बहुत कड़ी उतराई, चट्टी, दुकान।

थानकोट (8) (67) ½ मील उतराई, नेपाल सरकार की ओर से साधुओं के लिए लंगर (भोजनालय), यात्रा के दिनों में यहाँ से काठमांडू तक लारी चलती है। 1½ मील 'रोपवे' का स्टेशन। 5 मील पचाली घाट, चुंगी का दफ्तर। ½ मील थापथाली साधुओं का स्थान।

काठमांडू[2] (8) (75) 1 मील काष्ठमंडप या काठमांडव भी कहते हैं, नेपाल की राजधानी है।

---

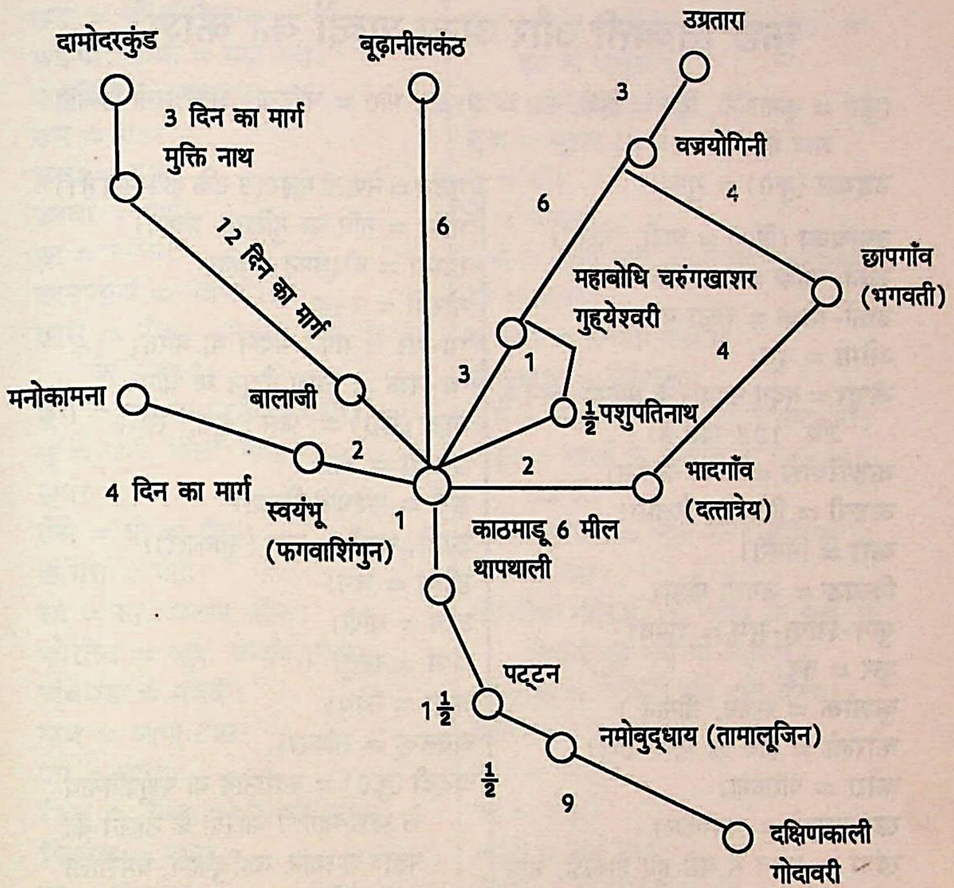
1. भीमफेड़ी से काठमांडू पहुँचने के लिए यहीं से कुली या डाँडी का प्रवंध करना पड़ता है। यहाँ पर धर्मशालाएँ, दुकान आदि हैं। यहाँ काठमांडू तक मार्ग में पड़ाव के स्थानों में धर्मशालाओं के अतिरिक्त नेपाल सरकार की ओर से तंबू और महात्मा और गरीबों के लिए अन्न-क्षेत्र तथा सदावर्त की सुव्यवस्था रहती है। यहाँ पर फिर से पासपोर्ट बदलना पड़ता है। पशुपतिनाथ की यात्रा में केवल भीमफेड़ी से लेकर थानकोट तक 16 मील पैदल या डाँडी पर जाना पड़ता है, शेष सारे मार्ग की यात्रा रेलगाड़ी या मोटर-बस से कर सकते हैं। पैदल मार्ग में लगभग 4 मील की दो कड़ी चढ़ाइयाँ और 5½ मील की दो कड़ी उतराइयाँ हैं। भीमफेड़ी से 1½ मील इधर ही ढोरसुङ नामक स्थान पर 'एलेक्ट्रिक रोपवे' का एक स्टेशन है। यहाँ से 19 मील की दूरी तक (काठमांडू से 5½ मील इधर) माल रात-दिन इस आकाश-तार द्वारा जाता है। पहाड़ के ऊपर बड़े-बड़े लोहे के खंभे गड़े रहते हैं, उन खंभों में तारों की मोटी रस्सी लगी रहती है, जिसमें झूले लटकते रहते हैं। उन्हीं से माल ढोया जाता है। बीच-बीच में उचित स्थानों में 'ट्रांसमीटर्स' होते हैं, जहाँ से इन झूलों के माल की बदली दूसरे स्थानों के लिए की जाती है। जिनके पास सामान का विशेष बोझ हो और उन्हें पास में रखने की विशेष आवश्यकता न हो, तो वे इसपर भेज सकते हैं; परंतु उसको काठमांडू में छुड़ाने में विशेष झंझट पड़ता है। 'रोप लाईन' पर आठ आने मन भाड़ा लगता है।
2. यह नेपाल की राजधानी है। यहाँ पर राजवंशियों के बड़े-बड़े राजप्रासाद, पुराने हिंदू और बौद्ध मंदिर हैं। यहाँ गोरखनाथ के भी कई मंदिर हैं। बाजार पुराने ढंग के हैं। यहाँ शिवरात्रि के दिन 'परेड' के मैदान में शाम 3½ बजे एक वृहद प्रदर्शन होता है। मैदान के चारों ओर 3 या 4 बजे के लगभग 4000-5000 गोरखे सिपाहियों के साथ बड़े और छोटे जंगी लाट, पाँच सरकार और तीन सरकार उपस्थित होते हैं। उस समय पशुपतिनाथ के सम्मानार्थ (सलामी के रूप में) लगातार 10 मिनट तक बंदूकों की फायर होती है और बीच-बीच में तोपें भी छूटती रहती हैं। इसके बाद सभी अफसर मैदान के पूर्व भाग में स्थित भद्रकाली के मंदिर की प्रदक्षिणा करके अपने-अपने स्थान पर चले जाते हैं। यहाँ से गौरीशंकर के बर्फीले युगल-शिखर दिखाई पड़ते हैं।

4. पशुपतिनाथ[1] (2) (77) काठमांडू नगर से लगभग 2 मील पर पूर्व में पशुपतिनाथ का मंदिर है।

नेपाल के महाराज को पाँच सरकार कहते है। अर्थात् उनके नाम के पहले 5 श्री लिखा जाता है तथा उनके महामंत्री तीन सरकार कहे जाते हैं और उनके नाम के पहले 3 श्री लिखा जाता है। यथार्थ में मंत्री ही वहाँ के सर्वेसर्वा हैं और महाराज, अर्थात् 5 सरकार, तो नाममात्र के लिए हैं। नेपाल के राज्य के अपने सिक्के अलग हैं। नेपाली रुपया साढ़े बारह आने के बराबर होता है। पैसे भी मोटे और पतले होते हैं, जो ताँबे के बने होते हैं।

1. मंदिर वाग्मती नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है। मंदिर के ऊपर लकड़ी की सुदंर कारीगरी है और भीतर लगभग एक गज का ऊँचा लिंग है, जिसके चारों ओर मुख हैं। यहाँ के पुजारी दक्षिणी होते हैं। मंदिर के सामने पश्चिम की ओर पीतल का.एक बड़ा नंदी है। इसके अतिरिक्त महात्माओं के कई स्थान हैं। यात्रा के समय महात्माओं की भिक्षा का प्रबंध नेपाल सरकर की ओर से रहता है। शिवरात्रि के तीसरे या चौथे दिन साधुओं को नेपाल सरकार की ओर से मार्ग-व्यय के लिए 1 रुपए से लेकर 50 रुपए तक विदाई मिलती है। शिवरात्रि के अवसर पर मंदिर में बहुत भीड़ रहती है तथा रातभर दीपाराधन और जागरण होता है। मेला चार-पाँच दिनों तक रहता है। मंदिर के ठीक सामने वाग्मती या बाघमती के बाँएँ किनारे पर नेपाल के दिवंगत महाराजाओं की समाधियों की पंक्तियाँ हैं। बाघमती यहाँ पर दो ऊँचे पहाड़ों के बीच में होकर बहती है। यात्रा के दिनों में नदी में $1\frac{1}{2}$ फीट से अधिक जल नहीं रहता। यहाँ से $\frac{1}{2}$ मील ईशान कोण में गुह्येश्वरी देवी का स्थान है, जो अष्टादश देवीपीठों में एक माना जाता है। वहाँ से $\frac{3}{4}$ या 1 मील उत्तर में बोधा नामक एक भारी स्तूप है। इसे कुछ लोग महाबोधि भी कहते हैं। कहा जाता है कि इसे महाराज अशोक ने बनवाया था। इसके चारों ओर मकान बने हुए हैं, जिनमें रहने वाले विशेषकर तिब्बती हैं। काठमांडू से $2\frac{1}{2}$ मील दक्षिण में पट्टन नामक शहर है, जिसे ललित पट्टन या अशोक पट्टन भी कहते हैं। इसे महाराज अशोक ने बसाया था। यहाँ से $\frac{1}{2}$ मील आगे एक सुप्रसिद्ध बौद्ध मंदिर है। (महाबोधि) जिस पर कई बौद्ध-मूर्तियाँ खुदी हुई हैं। इसे कुछ लोग नमोबुद्धाय भी कहते हैं। काठमांडू के पश्चिम में एक पहाड़ की चोटी पर स्वयंभू नामक एक बड़ा बौद्ध स्तूप है। इनके अतिरिक्त काठमांडू के आस-पास में बालाजी, बूढ़ा नीलकंठ, वज्रयोगिनी, उग्रतारा, भगवती, दत्तात्रेय, दक्षिण काली, गोदावरी आदि कई तीर्थ हैं। काठमांडू के आस-पास कई स्थानों में रुद्राक्ष के पेड़ होते हैं। परंतु भारत में प्रयोग होने वाले रुद्राक्ष विशेषकर सुमात्रा, जावा आदि द्वीपों से आयात होते हैं। 12 दिन के मार्ग पर मुक्तिनाथ नामक एक तीर्थ है, जहाँ से 2-3 दिन के मार्ग पर गंडकी नदी का उद्गम—दामोदरकुंड है, जहाँ पर शालग्राम मिलते हैं। मुक्तिनाथ से एक मार्ग खोचारनाथ होकर कैलास और मानसरोवर जाता है, परंतु यह मार्ग बहुत लंबा और कष्टप्रद है। इसलिए कुछ साधुओं के अतिरिक्त अन्य कोई उस मार्ग से नहीं जाता।

पशुपतिनाथ की यात्रा का समय शीतकाल होने के कारण वहाँ पर अत्यधिक ठंढ पड़ती है तथा कभी-कभी बर्फ भी गिरती है, इसलिए यात्रियों को चाहिए कि वे अपने साथ पर्याप्त कंबल, लोई और गर्म कपड़े लेते जायँ, जिससे वहाँ की कड़ी शीत का सामना कर सकें।



7. काठमांडू और आस-पास के तीर्थ

12 ~~दिन का मार्ग~~

1~~2 दिन का~~ मार्ग

परिशिष्ट 1

कुछ तिब्बती और अन्य शब्दों का कोश

(कु0 = कुमाऊँनी, हि0 = हिंदी, सं0 = संस्कृत, भो0 = भोटिया। अन्य सभी तिब्बती शब्द हैं।)

उड्यार (कु0) = गुफा।

उपत्यका (हिं0) = घाटी, 'वेली'।

उर्को-कोङ = बड़ा वायसराय।

उर्को-योक = छोटा वायसराय।

ओमा = दूध।

कंजूर = बुद्ध भगवान के श्रीमुख-वचन के ग्रंथ, 108 खंड हैं।

कङरिंपोछे = पवित्र कैलास।

कङरी = हिमनदी, कैलास।

करा = मिसरी।

कियङ = जंगली घोड़ा।

कुन-शोक्-सुम् = शपथ।

कुर = तंबू।

कुशोक = साहब, श्रीमान ।

कोरलो = हाथ का मणि-चोंगा।

कोरा = परिक्रमा।

खमजमभो = नमस्कार।

खंपा = भारत में बसे हुए तिब्बती, खम नामक सूबा के निवासी।

खङबा = घर।

खतक = देवताओं, लामाओं या अफसरों को माला के स्थान पर दिए जाने वाले हल्की बिनाई के कपड़े।

खिर = लाना।

खी = कुत्ता।

गङरी = हिमनदी, कैलास।

गरपोन = वायसराय।

गाड़ (कु0) = छोटी–सी पहाड़ी नदी।

गोकपा = तिब्बती लहसुन।

गुटंग = नेपाली मोहर (3 टंके के समान है।)

गोपा = गाँव का मुखिया, प्रधान।

गोम्पा = बौद्धमठ, विहार।

गोरमो = रुपया।

ग्य-गर = सफेद मैदान या भारत।

ग्य-नक = काला मैदान या चीन।

घाटा (हिं0) = 'पास', धुरा, 'ला'।

ङङबा = हंस।

ङरी = पश्चिमी तिब्बत।

ङाटो, सङी = कल (भूतकाल)।

ङीमा = दिन।

ङुल = चाँदी।

चंपा = सत्तू।

चंबा = मैत्रेय।

चक्टक् = साँकल।

चट्टी (कु0) = बदरीनाथ या पशुपतिनाथ के यात्रा-मार्ग में यात्रियों के ठहरने का पड़ाव या स्थान, जहाँ दुकान, धर्मशाला आदि होते हैं।

चकटा = दियासलाई।

चकङ = नित्य पूजा का देव-मंदिर।

चम = कितना, श्रीमती।

चम-कुशोक = मेमसाहिबा, श्रीमती।

चिमा-करा = चीनी।

चेनरेसी = अवलोकितेश्वर।

चेमा = रेत।

चेमानेङा = पाँच रंग की रेत।

चोङा = पूर्णिमा।

चोमो = भिक्षुणी।

छक्छल-गङ = जहाँ से साष्टांग दंडवत् प्रणाम किया जाता है।
छङ = जौ की शराब।
छङपो, छम्पो = बड़ी नदी।
छङरिङ = पुरस्कार।
छन = रात।
छबो = गरम।
छरबा = वर्षा।
छा = नमक।
छानादोर्जे = वज्रपाणि।
छासू = टैक्स कलक्टर, कर एकत्रित करने वाला।
छुरा = दूध या मट्ठे की पनीर।
छू = पानी, नाला, नदी, गाड़।
छूमर = घी।
छेमे = घी का दीया।
छोंगरा = मंडी।
छो = सर, तालाब, झील।
छोरतेन = स्तूप, समाधि, चैत्य।
जंबयङ = मंजुश्री।
जब = आधा टंका।
जा = चाय।
जिंबू = तिब्बत की जंगली प्याज।
जिलब = प्रसाद।
जू = नमस्कार।
जोङ, जोङपोन = गवर्नर।
झब्बू = याक और भारतीय गाय के संयोग से उत्पन्न हुआ बैल।
टंका, टंगा = तिब्बत का चाँदी का सिक्का, जो दो आने के बराबर होता है।
टमो = ठंढ।
टिमा = मलाई।
टुलकू लामा = अवतारी लामा।
टे = खच्चर ।
ठुआं, ठुमा = एक वीर्यवर्धक औषधि।
ट्रमा = मटर
डजङ = मठ का प्रधान व्यवस्थापक।
डमा = एक प्रकार का काँटेदार पौधा, जो हरा भी जलता है।
डाबा = साधारण भिक्षु।
डुक = भूटान (राज्य)।
डू = जौ।
डे = चावल।
डेमो = चमरी गाय, चँवरी गाय, सुरागाय।
डो = जाओ।
डोकपा = तिब्बती गड़रिया।
डोङखङ = धर्मशाला।
ढक = नेपाली रुपया, (6 टंके के समान है।)
तंजूर = शास्त्रों के अनुवाद के ग्रंथ, 235 खंड हैं।
तजम, तरजम = पोस्ट-स्टेज ऑफिसर या ऑफिस।
तमचोक खंबब् = अश्व के मुख से निकली हुई नदी या ब्रह्मपुत्र।
तरचोक = रंगबिरंगे झंडे और तोरण।
तरचेमा = चूक।
तरा = मट्ठा।
ता = घोड़ा।
तालो = इस वर्ष।
तिसी = कैलास।
तो, दो = पत्थर।
थंका = चित्रपट, 'बैनर पेंटिंग'।
थंगा = अधित्यका।
थुकपा = सत्तू, छुरा और मांस के साथ बनाया हुआ लेई-जैसा भोज्य पदार्थ।
दङ = कल (भविष्य)।
दलाई लामा = गुरु-समुद्र, तिब्बत का राजा।
दावा = मास।
दिरिङ = आज।
दुक् = है।

दून (हिं0) = विशाल घाटी।
दुवङ = देवमंदिर।
नमकङ = अमावस्या।
ननिङ = गत वर्ष।
नेर्पा = 'सेक्रेटरी', मंत्री।
न्यीमा = दिन, सूर्य।
पर = फोटो।
पुरम = गुड़।
पोंबो = अफसर।
पो = धूप
पो, पोयुल = तिब्बत।
पोमो = स्त्री।
फगबे = आटा।
फिंग = सेंवई।
फुक् = गुफा।
फुलदो = आग में जलाया हुआ सेरु छा।
बोत, बोद-युल = तिब्बत।
बोधिसत्व (सं0) = बुद्धत्व प्राप्त करने का अधिकारी।
भोट (हिं0) = भारत की सीमा के प्रांत।
भोटिया (हिं0) = भोट प्रांत के निवासी।
मंडी (हिं0) = हाट।
मंडल = एक के ऊपर एक रखे हुए दस-पंद्रह पत्थरों का ढेर।
मगपोन = पटवारी।
मणि = 'ॐ म णि प द्मे 'हुं' मंत्र।
मणि-पत्थर (हिं0) = जिस पत्थर पर मणिमंत्र खुदा हुआ हो।
मणि-दीवाल (हिं0) जिस दीवाल पर मणि-पत्थर रखे हुए हों।
मणि–चोंगे (हिं0) = जिस चोंगे में कागजों पर लिखे हुए कई हजार मणि-मंत्र डालकर एक ध्रुव पर घुमाए जाते हैं।
मप्चा खंबब् = मयूर के मुख से निकली हुई नदी या करनाली।
मफम् = मानसरोवर।
मयुर = जमे हुए मानसरोवर के ऊपर की दरारें या फाड़।
मर = मक्खन।
मरकू = तेल।
मवङ = मानसरोवर।
मि-दुक् = नहीं।
मी = पुरुष।
मे = आग, नहीं।
मेन = औषधि।
यंबू = नेपाल।
याक = तिब्बत का बैल, चँवरी बैल, सुराबैल।
याङ्ती (भो0) = नदी।
युङछोङ = तिब्बत का सरकारी व्यापारी।
युल = गाँव।
रा = बकरी।
रिन्पोछै, रिम्पोछे = रत्न, मणि, पवित्र।
री = पहाड़।
रे = सूती कपड़ा।
लङगक छो = रावणह्रद, राक्षसताल, रक्कसताल, लंका-सर।
लङचेन खंबब् = हस्ति के मुख से निकली हुई नदी या सतलज।
लम = मार्ग।
लप्चे = पत्थरों का ढेर।
लबू = मूली।
ला = घाटा, जी, मोमबत्ती।
लामा = आचार्य कोटि के भिक्षु।
लुक = भेड़।
लुंग, लुंगबा, लुंगवा, लुंगमा = घाटी, वेली।
ल्हखङ = देव-मंदिर।
ल्हम = तिब्बती ऊनी जूता।
ल्हरची = कस्तूरी।
ल्हा = देवता।

ल्हो = वर्ष।
शंपजे = पाद-चिह्न।
शाक्य थुब्बा = शाक्य मुनि या बुद्ध भगवान।
शींग = पेड़ या लकड़ी।
शोक = आओ।
श्या = मांस।
श्यो = दही।
संपो, सम्पो = बड़ी नदी या ब्रह्मपुत्र।
सपटा = मानचित्र।
सराय (हिं०) = धर्मशाला।
सा = वार।
सिंगी खंबब् = सिंह के मुख से निकली हुई नदी या सिंधु नदी।
सुग = दर्द।
सेर = स्वर्ण।
सेरु छा = एक प्रकार का सोडा।
स्रोत या सोता (हिं०) = चश्मा, 'स्प्रिंग', इसे काश्मीर में नाग कहते हैं।
हूण, हूण देश (हिं०, भो०) = तिब्बत।
हूणिया (हिं०, भो०) = तिब्बती।

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	20	30
चिक	ञी	सुम	शी	ङा	ठुग	दुन	गे	गु	चू	ञिशु	सुमचू

40	50	60	70	80	90	100
शिमचू	मपचू	टुगचू	दुनचू	गेचू	गुपचू	ग्या थंबा

200	1000	10000	100000	1000000	10000000
ञीग्या	तोंग	ठी	बुम्	तुंग्युर	छीवा

$\frac{1}{2}$	$2\frac{1}{2}$	$3\frac{1}{2}$	$4\frac{1}{2}$
फेका या छेका	छेदंग-सुम	छेदंग-शी	छेदंग ङा

परिशिष्ट 2

पुरङ दून के गाँवों के नाम

करनाली नदी के बाँएँ किनारे पर नीचे से ऊपर—1. शर (7 घर), 2. खोचार (100 घर), ये दोनों तरछेन लब्रङ के अधिकार में हैं। इनके बाद नालुङ्बा छू है। 3. लीलो (गोम्पा और 4 घर), 4. कङजे (6), ये दोनो कङजे नाम से पुकारे जाते हैं और तोयो मगपोन के अधिकार में हैं। पास ही कङजे छू है। 5. गेजिन (7), 6. तोजा (5), ये दोनों परखा तसम के अधिकार में हैं। पास ही गेजिन छू है। 7. थाँयप (7), 8. सूजे (10), 9. छुलुङ (10), यहाँ किरोङ मगपोन का घर है। 10. मफुक (60), 11. कुंगरतो (6), 12. डंगेछिन (20), ये छह गाँव किरोङ मगपोन के अधिकार में हैं। पास ही कुंगरलुङ्बा या डंगेछिन छू है, जिसके दाहिने तट पर छगंग है और जहाँ पर गर्मी के दिनों में नेपालियों की मंडी लगती है। 13. छोरतेन छेमो (6), 14. खेले (2), 15. तोपा (5), यहाँ तोयो मगपोन का घर और जोरावर सिंह की समाधि है। 16. लगुन (4), 17. शुलुङ (5), इनके पास ही गरू छू है। 18. गरू (3), 19. ठेजी गोंबा (3), 20. देलालिङ (4), यहाँ गुरु फोंबा का छोरतेन है। 21. लीं या तोयोलिङ (7 ?), ये नौ गाँव तोयो के नाम से पुकारे जाते हैं और तोयो मगपोन के अधिकार में हैं। 22. रोनम (3), इसके बाद रिंगुंग छू है। 23. रिंगुंग (4), इसके बाद फुरबू छू है। 24. फुरबू या बुरफू (1), 25. दुङमर (11), ये चार रिंगुंग नाम से पुकारे जाते हैं और तरछेन लब्रङ और पुरङ जोङ, इन दोनों के अधिकार में हैं। इनके बाद बलडक छू है। 26. करदुङ (7), यह परखा तसम के अधिकार में है।

करनाली नदी के दाहिने किनारे पर ऊपर से नीचे—27. हरकोङ (1), पुरङ जोङ के अधिकार में है। 28. दोह (9), यह तरछेन लब्रङ के अधिकार में है। 29. सलङ (4), यह गेङटा गोम्पा के अधिकार में है। इनके बाद यङसे छू है। 30. गुकुङ या कुंफुर (30), यह किरोङ मगपोन के अधिकार में है। यहाँ सब घर गुफाओं में हैं। एक गोम्पा भी गुफा में है, जो डेकुङ विहार की शाखा है। 31. तकलाखर या तकलाकोट (3), सिंबिलिङ गोम्पा, साक्या गोम्पा और जोङ के कोट हैं। पहाड़ के नीचे भोटिए व्यापारियों की मंडी है। 32. पीलीफुक (30), यहाँ भी सब घर गुफाओं में हैं, यह ठिथी और तोयो मगपोनों के अधिकार में है। 33. छुङ्डुर (10), 34. यीडी (2), ये दोनों यीडी और टगला छू के बीच में हैं। 35. दुलुम (3), 36 टाशीगोङ (2), 37. छिलचुङ (3), 38. मगरुम या ठिथी (30), 39. नाई (7), 40. गुनम (4), 41. रीलाशर (3), 42. छुमिथङ (6), ये दस गाँव ठिथी के नाम से पुकारे जाते हैं। इनमें से टाशीगोङ गरतोक के ऊपर के टाशीगोङ गोम्पा के अधिकार में है, बाकी नौ गाँव ठिथी मगपोन के अधिकार में हैं। तोयो, किरोङ और ठिथी ये तीनों पट्टी मिलकर छोसुम कहलाते हैं। इसी नाम से इनकी सम्मिलित एक पंचायत है। 43. फुलक (3), 44. छोकरो (3), यहाँ छोकरो छू है। 45. तोगङ (4), 46. शिदीखर (3), गाँव के ऊपर गोम्पा और खर (कोट) है। 47. दोर्जेगङ (4), 48. मयुल (2), इनके बाद लोक छू है। 49. लोक या लो (20), 50. लुकपू (3), ये आठ गाँव सिंबिलिङ गोम्पा के अधिकार में हैं।

परिशिष्ट 3
चित्र-सूची

1. कैलास-शिखर।
2. हिज हाइनेस यशस्वी महाराज श्री सर कृष्णकुमार सिंह जी, के० सी० एस० आई०, महाराज साहब, भावनगर (काठियावाड़)।
3. पूज्यपाद श्री 1108 स्वामी ज्ञानानन्द जी महाराज।
4. तरबोछे (ध्वजा) और कैलास-शिखर।
5. धनोल्टी के जंगल में बरवारी (जिला भागलपुर) के राजा साहब श्री भूपेंद्रनाथ सिंह जी तथा लेखक।
6. वैशाख पूर्णिमा के दिन कैलास के पश्चिम में ध्वजारोहण–समारोह।
7. गौरीकुंड।
8. गौरीकुंड में गिरने वाले हिमखंड।
9. दक्षिणी पादतल से कैलास-शिखर का दृश्य।
10. कैलास-शिखर के पूर्वी पार्श्व में गिरता हुआ एक बहुत बड़ा हिमखंड।
11. सिंगी खंबब् के सोते—सिंधु नदी का उद्गम।
12. चेमायुङ्डुङ्-पू हिमनदी—ब्रह्मपुत्र के उद्गम की एक हिमनदी।
13. तमचोक खंबब् कङ्री हिमनदी—ब्रह्मपुत्र के उद्गम की मुख्य हिमनदी।
14. कङ्लुङ्-कङ्री की हिमनदियाँ—टग नदी का उद्गम।
15. लाचातो-द्वीप पर हंस।
16. लाचातो—राक्षसताल का छोटा द्वीप।
17. राक्षसताल से सतलज का निकास।
18. तोप्सेरमा—राक्षसताल का बड़ा द्वीप।
19. गंगा छू के मुखद्वार से कैलास का दृश्य।
20. शीतकाल में मानसरोवर पर सूर्योदय।
21. शीतकाल में जमे हुए मानसरोर में टेढ़े-मेढ़े हिमखंड।
22. दरार-रहित राक्षसताल—लाचातो से तोप्सेरमा की ओर।
23. दूसरे कोने में जमा हुआ रावणह्रद और कैलास-शिखर।
24. शीतकाल में 'जेब्रा' के समान बर्फ की धाराओं से युक्त राक्षसताल का दक्षिणी तट।
25. एक कोने में तरंगों से युक्त राक्षसताल और मांधाता।
26. शीतकाल में जमे हुए मानसरोवर में बड़े-बड़े सीधे हिमखंड।
27. दरार और फाड़ों से युक्त, जमा हुआ मानसरोवर।
28. एक तिब्बती थंका (चित्रपट) से कैलास-मानसखंड।
29. चोंगों में चाय का मंथन।
30. तिब्बती काला तंबू।
31. ठुगोल्हो में चाय की केटली बनाना।
32. बालों का शृंगार।
33. तिब्बती पहनावे में ग्रंथकार।
34. छोरतेन—तिब्बती स्तूप।
35. करदुङ् गोम्पा।
36. कंजूर के राज-संस्करण का एक पृष्ठ।
37. मणि-मंत्र—ॐ मणि पद्मे हुं ह्रीं।
38. गरतोक के मेले में तिब्बती भद्र महिलाएँ।
39. सिंबिलिङ् गोम्पा, तकलाकोट।
40. सिंबिलिङ् गोम्पा के कुछ भिक्षु।
41. सिंबिलिङ् गोम्पा में बुद्ध भगवान की मूर्ति।

42. तांत्रिक क्रिया के अवसर पर बनी हुई सत्तू और मक्खन की रंग-बिरंगी मूर्तियाँ, सिंबिलिङ गोम्पा।
43. खोचार गोम्पा।
44. खोचार गोम्पा में सिंहासन।
45. मंजुश्री की मूर्ति, खोचारनाथ।
46. दारमा का कस्तूरी का नाभा।
47. याक—तिब्बती बैल।
48. ऊन की कटाई।
49. पोताला राजप्रासाद, ल्हासा।
50. पुरङ-तकलाकोट का जोङपोन (गवर्नर)।
51. जोङपोन की धर्मपत्नी।
52. तोयो में जनरल जोरावर सिंह की समाधि।
53. टंका—दोनों ओर से।
54. स्वेडन देश के विख्यात अन्वेषक तथा भूगोलशास्त्रज्ञ डॉ0 स्वेन हेडिन।
55. ज्ञान-नौका—'सेलिंग-डिंघी-कम-मोटर बोट'।
56. जागेश्वर।
57. छिप्लाकोट—ककरोलाकीद का तालाब, पीछे पंचचूल्ही के हिमाच्छादित शिखर।
58. भोटिया बच्चे, चौदाँस।
59. भोटिया स्त्रियाँ, चौदाँस।
60. भोटिया व्यापारियों की भेड़-बकरियाँ लीपूलेख घाटा पार कर रही हैं।
61. तकलाकोट—गोम्पा और जोङ, पीछे का दृश्य।
62. गुकुङ—गुफाओं में स्थित एक गाँव।
63. मंडी में गुड़, चाय और कपड़ों की गठरियाँ।
64. गुरला ला घाटा से मांधाता का दृश्य।
65. तीर्थपुरी का प्रधान गोम्पा।
66. गुफा में स्थित दूसरा गोम्पा।
67. तीर्थपुरी गोम्पा के नीचे डोलमा का एक प्रतीक।
68. तीर्थपुरी के गर्म जल के सोते।
69. तरछेन।
70. सरयू नदी पर लोहे का झूलानुमाँ पुल।
71. काली और गौरी नदी का संगम—जौलजीबी।
72. अंतरिक्ष में लटक रहा है—रस्सी का पुल, धारचूला।
73. कालापानी के स्रोत—काली नदी का उद्गम।
74. हिमालय की मालगाड़ी—भेड़-बकरियाँ।
75. परबू में जोरावर सिंह के तोड़े हुए दुर्ग के खंडहर।
76 न्यनरी गोम्पा—श्री कैलास का पहला मठ।
77. न्यनरी गोम्पा से कैलास और गोंबोफेंग (रावण-पर्वत)।
78. कैलास की पीठ—पश्चिमी दृश्य।
79. कैलास के वायव्य कोण का दृश्य।
80. डिरफुक् गोम्पा—कैलास का दूसरा मठ।
81. पूर्णिमा की चाँदनी में कैलास की दिव्य छटा।
82. अवलोकितेश्वर और मंजुश्री शिखरों की मध्यवर्ती हिम-पीठिका पर स्थित कैलास का दृश्य।
83. खंडोखङ्लम ला।
84. डोलमा ला।
85. उछलती-कूदती हुई धौलीगंगा।
86. मप्चा चुंगो स्रोत—करनाली का उद्गम।
87. ज्ञानिमा मंडी।
88. जंठुलफुक् गोम्पा—कैलास का तीसरा

मठ।
89. गेङ्टा गोम्पा—कैलास का चौथा मठ।
90. सिलुङ गोम्पा—कैलास का पाँचवाँ मठ।
91. सिलुङ गोम्पा से कैलास का दक्षिणी दृश्य।
92. गोछुल गोम्पा—पुनीत मानसरोवर का पहला मठ।
93. च्यू गोम्पा—मानसरोवर का दूसरा मठ और गंगा छू।
94. चेरकिप गोम्पा—मानसरोवर का तीसरा मठ।
95. लङ्पोना गोम्पा—मानसरोवर का चौथा मठ।
96. पोनरी गोम्पा—मानसरोवर का पाँचवाँ मठ।
97. सेरालुङ गोम्पा—मानसरोवर का छठा मठ।
98. पुरुव छोङ्रा में एक नेपाली व्यापारी का तंबू।
99. येर्नगो गोम्पा—मानसरोवर का सातवाँ मठ।
100. ठुगोल्हो गोम्पा—मानसरोवर का आठवाँ मठ।
101. ठुगोल्हो से कैलास तथा मानसरोवर का दृश्य।
102. केदारनाथ का मंदिर और पीछे के हिम-शिखरों का दृश्य।
103. मिलम ग्लेशियर या गौरी की हिमनदी।
104. बर्फ का पुल, नकुला।
105. नीती घाटा।
106. बदरीनाथ का मंदिर।
107. थुलिङ मठ।
108. गंगोत्तरी।
109. गंगोत्तरी में गंगादेवी का मंदिर।
110. गोमुख और सतोपंथ के हिमशिखर।
111. गरतोक में छोङ्दू (घुड़दौड़) के समय तिब्बती सिपाही ।
112. लामायूरु गोम्पा, लदाख।
113. पिंडारी ग्लेशियर।
114. अमरनाथ की गुफा, काश्मीर।
115. विविध मासों में अमरनाथ के लिंग के आकार।
116. अमरनाथ की गुफा में बर्फ का शिवलिंग।
117. पशुपतिनाथ का मंदिर, काठमांडू।

मानचित्र (पुस्तक के अंत में)

1. लाचातो—राक्षसताल का छोटा द्वीप।
2. तोप्सेरमा—राक्षसताल का बड़ा द्वीप।
3. मानसरोवर कैसे जमा।
4. मानसरोवर में दरारें।
5. मानसरोवर कैसे पिघला।
6. श्री कैलास और मानसरोवर जाने के पहले मार्ग की उतराई-चढ़ाईयों का ग्राफ।
7. काठमांडू और आसपास के तीर्थ, दे० पृ० 313।

(चित्र 28 का विवरण)

1. श्री कैलास-शिखर।
2. तिजुङ।
3. छेरिङ-चेङा।
4. न्यनरी।
5. पोनरी।
6. गुरला मांधाता।
7. गौरीकुंड।
8. छो कपाला।
9. कुर्क्यल छुंगो।
10. मानसरोवर।
11. रावणह्रद।
12. लाचातो।
13. तोप्सेरमा।
14. ल्हा छू।
15. तरछेन छू।
16. झोङ छू।
17. गंगा छू।
18. समो छम्पो।
19. टग छम्पो।
20. नमरेल्डी छू।
21. तरछेन।
22. परखा।
23. न्यनरी गोम्पा।
24. जुंठुलफुक् गोम्पा।
25. गेङ्टा गोम्पा।
26. सिलुङ गोम्पा।
27. गोछुल गोम्पा।
28. च्यू गोम्पा।
29. चेरकिप गोम्पा।
30. लङपोना गोम्पा।
31. पोनरी गोम्पा।
32. सेरालुङ गोम्पा।
33. येर्नगो गोम्पा।
34. ठुगोल्हो गोम्पा।
35. छपगे गोम्पा।
36. तरछेन छकछंल-गङ।
37. तरबोछे (ध्वजा)।
38. छोरतेन-कङनी।
39. शपजे।
40. हनुमानजू।
41. सेरदुङ-चुकसुम।
42. डोलमा ला।
43. शपजे-डकथोक।
44. सेरा ला छकछल-गङ।

परिशिष्ट 4

आधुनिक पैमाना

पृष्ठ सं0 33

239 मील = 344.16 कि0मी0
32 मील = 46.88 कि0मी0
64 मील = 92.16 कि0मी0
12 मील = 17.28 कि0मी0
111 मील = 159.84 कि0मी0
65 मील = 93.60 कि0मी0
38 मील = 54.72 कि0मी0
600 मील = 864.00 कि0मी0
230 मील = 331.20 कि0मी0
210 मील = 302.40 कि0मी0
200 मील = .288.00 कि0मी0
160 मील = 230.40 कि0मी0
158 मील = 227.52 कि0मी0
238 मील = 342.72 कि0मी0
248 मील = 357.12 कि0मी0
445 मील = 640.80 कि0मी0
473 मील = 681.12 कि0मी0
605 मील = 871.20 कि0मी0

पृष्ठ सं0 34

800 मील = 1152.00 कि0मी0
92 मील = 132.48 कि0मी0
197 मील = 283.68 कि0मी0
21 मील = 30.24 कि0मी0
74 मील = 106.56 कि0मी0
59 मील = 84.96 कि0मी0
$28\frac{3}{4}$ मील = 41.40 कि0मी0
$87\frac{3}{4}$ मील = 126.36 कि0मी0
77 मील = 110.88 कि0मी0

पृष्ठ सं0 37

1600 मील = 2304.00 कि0मी0
300 मील = 432.00 कि0मी0
29141 फीट = 8742.30 मीटर
28250 फीट = 8475.00 मीटर
28146 फीट = 8443.80 मीटर
27790 फीट = 8337.00 मीटर
26795 फीट = 8038.50 मीटर
26660 फीट = 7998.00 मीटर
26291 फीट = 7887.30 मीटर
25645 फीट = 7693.50 मीटर
25447 फीट = 7634.10 मीटर
25355 फीट = 7606.50 मीटर
24472 फीट = 7341.60 मीटर
23930 फीट = 7179.00 मीटर
23184 फीट = 6955.20 मीटर
23440 फीट = 7032.00 मीटर
29002 फीट = 8700.60 मीटर

पृष्ठ सं0 38

23406 फीट = 7021.80 मीटर
22490 फीट = 6747.00 मीटर
23360 फीट = 7008.00 मीटर
23240 फीट = 6972.00 मीटर
22650 फीट = 6795.00 मीटर
22510 फीट = 6753.00 मीटर
22028 फीट = 6608.40 मीटर
25000 फीट = 7500.00 मीटर
20000 फीट = 6000.00 मीटर

पृष्ठ सं0 40

240 मील = 345.60 कि.मी.
800 मील = 1152.00 कि.मी.

पृष्ठ सं0 41

32 मील = 46.08 कि0मी0
20 मील = 28.80 कि0मी0
22028 फीट = 6608.40 मीटर

पृष्ठ सं0 42

54 मील = 77.76 कि0मी0

200 वर्गमील = 414.71 वर्गकिमी0
14940 फीट = 4482.00 मीटर
300 फीट = 90.00 मीटर

पृष्ठ सं0 47

28 मील = 40.32 कि0मी0
10 फीट = 3.00 मीटर
20 फीट = 6.00 मीटर

पृष्ठ सं0 49

200 गज = 180.00 मीटर

पृष्ठ सं0 50

$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
$4\frac{3}{4}$ मील = 6.84 कि0मी0

पृष्ठ सं0 51

660 फीट = 198.00 मीटर
1320 फीट = 396.00 मीटर
17000 फीट = 5100.00 मीटर
18000 फीट = 5400.00 मीटर
7 सेर = 6.720 कि0ग्रा0

पृष्ठ सं0 52

54 मील = 77.76 कि0मी0
16 मील = 23.04 कि0मी0
10 मील = 14.40 कि0मी0
13 मील = 18.72 कि0मी0
15 मील = 21.60 कि0मी0
14 मील = 20.16 कि0मी0
200 मील = 288.00 कि0मी0
80 मील = 115.20 कि0मी0
64 मील = 92.16 कि0मी0

पृष्ठ सं0 53

37 मील = 53.28 कि0मी0
62 मील = 89.28 कि0मी0
63 मील = 90.72 कि0मी0

पृष्ठ सं0 54

30 मील = 43.20 कि0मी0

पृष्ठ सं0 55

1700 मील = 2448.00 कि0मी0
1680 मील = 2419.20 कि0मी0
900 मील = 1296.00 कि0मी0
600 मील = 864.00 कि0मी0
1514 मील = 218.16 कि0मी0

पृष्ठ सं0 56

19000 फीट = 5700.00 मीटर

पृष्ठ सं0 57

$1\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
6 मील = 8.64 कि0मी0

पृष्ठ सं0 58

77 मील = 110.88 कि0मी0
18 मील = 25.92 कि0मी0
22 मील = 31.68 कि0मी0
$28\frac{1}{2}$ मील = 41.04 कि0मी0
$8\frac{1}{2}$ मील = 12.24 कि0मी0
17 मील = 24.48 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0

पृष्ठ सं0 61

6 मील = 8.64 कि0मी0
40 फीट = 12.00 मीटर
100 फीट = 30.00 मीटर
2 फीट = .60 मीटर
4 फीट = 1.20 मीटर

पृष्ठ सं0 62

15000 फीट = 4500.00 मीटर
14900 फीट = 4470.00 मीटर
100 गज = 90.00 मीटर

पृष्ठ सं0 63

$\frac{1}{2}$ मील = 720 मीटर
2 मील = 2.88 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
100 गज = 90.00 मीटर
10 गज = 9.00 मीटर
3 फलांग = 540.00 मीटर

पृष्ठ सं0 66

135 मील = 194.40 कि0मी0

पृष्ठ सं0 70

16000 फीट = 4800.00 मीटर

पृष्ठ सं0 71

20 फीट = 6.00 मीटर
30 फीट = 9.00 मीटर
$\frac{1}{4}$ इंच = 6.25 मि0मी0

पृष्ठ सं0 73

60 मील = 86.40 कि0मी0
63 मील = 90.72 कि0मी0
1000 मील = 1440.00 कि0मी0
1500 फीट = 450.00 मीटर

पृष्ठ सं0 74

50 फीट = 15.00 मीटर

पृष्ठ सं0 76

800 मील = 1152.00 कि0मी0
53 मील = 76.32 कि0मी0

पृष्ठ सं0 79

10 फीट = 3.00 मीटर
18 फीट = 5.40 मीटर
50 गज = 45.00 मीटर
100 गज = 90.00 मीटर

पृष्ठ सं0 82

2 फीट = 60.00 से0मी0
6 फीट = 1.80 मीटर

पृष्ठ सं0 84

54 मील = 77.76 कि0मी0
77 मील = 110.88 कि0मी0
13 मील = 18.72 कि0मी0
14 मील = 20.16 कि0मी0
17 मील = 24.48 कि0मी0
16 मील = 23.04 कि0मी0
10 मील = 14.40 कि0मी0
15 मील = 21.60 कि0मी0
18 मील = 25.92 कि0मी0
22 मील = 31.68 कि0मी0
28 मील = 40.32 कि0मी0
$8\frac{1}{2}$ मील = 12.24 कि0मी0
200 वर्गमील = 414.00 वर्गकि0मी0
140 वर्गमील = 290.00 वर्गकि0मी0
300 फीट = 90.00 मीटर
$\frac{2}{3}$ इंच = 16.00 मि0मी0
1 इंच = 2.50 से0मी0

पृष्ठ सं0 85

3 फीट = 90.00 से0मी0
4 फीट = 1.20 मीटर
10 फीट = 3.00 मीटर
21 फीट = 6.30 मीटर
20 घन फीट =
50 घन फीट =
5 फीट = 1.50 मीटर
60 फीट = 18.00 मीटर
$\frac{2}{3}$ इंच = 16.00 मि0मी0
1 इंच = 2.50 से0मी0

पृष्ठ सं0 86

$\frac{1}{2}$ मील = 720.00 मीटर
1 फीट = 30.00 से0मी0
2 फीट = 60.00 से0मी0
3 फीट = 90.00 से0मी0
6 फीट = 1.80 मीटर
8 फीट = 2.40 मीटर
30 फीट = 9.00 मीटर
50 गज = 45.00 मीटर

पृष्ठ सं0 93

$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
5 गज = 4.50 मीटर
6 फीट = 1.80 मीटर
90 फीट = 27.00 मीटर
2 फीट = 60.00 से0मी0
1 फीट = 30.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 99

814000वर्गमील= 1687910 वर्गकि0मी0

800 मील = 1152.00 कि0मी0
1400 मील = 2016.00 कि0मी0
12000 फीट = 3600.00 मीटर
16000 फीट = 4800.00 मीटर
17000 फीट = 5100.00 मीटर

पृष्ठ सं0 100

144 मील = 207.36 कि0मी0
150 मील = 216.00 कि0मी0
200 मील = 288.00 कि0मी0
90 मील = 129.60 कि0मी0
100 मील = 144.00 कि0मी0
217 मील = 312.48 कि0मी0
307 मील = 442.08 कि0मी0
360 मील = 518.40 कि0मी0
1630 वर्गमील = 3380 वर्गकि0मी0
17390 फीट = 5217.00 मीटर

पृष्ठ सं0 101

25355 फीट = 7606.50 मीटर
22650 फीट = 6795.00 मीटर
22160 फीट = 6648.00 मीटर
22028 फीट = 6608.40 मीटर
20000 फीट = 6000.00 मीटर

पृष्ठ सं0 103

2 गज = 1.80 मीटर
3 गज = 2.70 मीटर
1 फीट = 30.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 104

16000 फीट = 4800.00 मीटर
17000 फीट = 5100.00 मीटर
15000 फीट = 4500.00 मीटर
2 फीट = 60.00 से0मी0
3 फीट = 90.00 से0मी0
525 औंस = 14.88375 कि0ग्रा0
14.9163 लीटर

पृष्ठ सं0 106

16 सेर = 14.400 कि0ग्रा0
1 मील = 2.88 कि0मी0
140 मील = 216.00 कि0मी0
525 औंस = 14.88375 कि0ग्रा0
16 सेर = 14.400 कि0ग्रा0
10 सेर = 9.00 कि0ग्रा0
20 सेर = 18.00 कि0ग्रा0

पृष्ठ सं0 107

3 मील = 4.32 कि0मी0

पृष्ठ सं0 109

44 मील = 63.36 कि0मी0
12 मील = 17.28 कि0मी0
8 फीट = 2.40 मीटर
6 फीट = 1.80 मीटर

पृष्ठ सं0 111

16 मील = 23.04 कि0मी0

पृष्ठ सं0115

12000 फीट = 3600.00 मीटर
2 फीट = 0.60 मीटर
2½ फीट = 0.75 मीटर

पृष्ठ सं0124

1 गज = 90.00 मीटर
10 फीट = 3.00 मीटर
20 फीट = 6.00 मीटर

पृष्ठ सं0126

100 मील = 144.00 कि0मी0

पृष्ठ सं0 130

2 फीट = 60.00 से0मी0

पृष्ठ सं0137

12 मील = 17.28 कि0मी0

पृष्ठ सं0138

1 मील = 1.44 कि0मी0
2 गज = 1.80 मीटर
3 गज = 2.70 मीटर

पृष्ठ सं0 140

12 मील = 17.28 कि0मी0

200 गज = 180.00 मीटर

पृष्ठ सं0 141

7 फीट = 2.10 मीटर

8 फीट = 2.40 मीटर

6 फीट = 1.80 मीटर

4 फीट = 1.20 मीटर

5 फीट = 1.50 मीटर

पृष्ठ सं0 142

5 फीट = 1.50 मीटर

20 फीट = 6.00 मीटर

22 फीट = 6.60 मीटर

80 फीट = 24.00 मीटर

पृष्ठ सं0 143

1 मील = 1.44 कि0मी0

पृष्ठ सं0 144

12000 फीट = 3600.00 मीटर

16000 फीट = 4800.00 मीटर

पृष्ठ सं0 145

17000 फीट = 5100.00 मीटर

8000 फीट = 2400.00 मीटर

12000 फीट = 3600.00 मीटर

2 फीट = 60.00 से0मी0

3 फीट = 90.00 से0मी0

पृष्ठ सं0146

50 फीट = 15.00 मीटर

60 फीट = 18.00 मीटर

पृष्ठ सं0 147

$\frac{1}{2}$ तोला = 6 ग्राम

$2\frac{1}{2}$ तोला = 30 ग्राम

5 तोला = 60 ग्राम

$3\frac{3}{4}$ तोला = 45 ग्राम

2 औंस = 56.70 ग्राम

पृष्ठ सं0 150

$\frac{1}{4}$ ग्रेन = 0.0162 ग्राम

$\frac{1}{2}$ ग्रेन = 0.0324 ग्राम

पृष्ठ सं0 151

2 सेर = 1.920 कि0ग्रा0

2 मन = 76.800 कि0ग्रा0

3 मन = 1.152 कुन्तल

16000 फीट = 4800.00 मीटर

17000 फीट = 5100.00 मीटर

10000 फीट = 3000.00 मीटर

1 फुट = 30.00 से0मी0

2 फीट = 60.00 से0मी0

$2\frac{1}{2}$ फीट = 75.00 से0मी0

पृष्ठ सं0152

1 फीट = 30.00 से0मी0

पृष्ठ सं0154

1 सेर = 900.00 ग्राम

$1\frac{1}{2}$ सेर = 1.440 कि0ग्रा0

2 आना = 12 नए पैसे

4 आना = 25 नए पैसे

8 आना = 50 नए पैसे

पृष्ठ सं0155

5 मन = 1.920 कुन्तल

पृष्ठ सं0 156

4 आना = 25 नए पैसे

12 आना = 75 नए पैसे

8 आना = 50 नए पैसे

2 आना = 12 नए पैसे

2 सेर = 1.800 कि0ग्रा0

1 सेर = 0.900 कि0ग्रा0

पृष्ठ सं0157

2 आना = 12 नए पैसे

3 आना = 18 नए पैसे

1 आना = 6 नए पैसे

6 आना = 37 नए पैसे

1 तोला = 12 ग्राम

पृष्ठ सं0 160

125 मील = 180.00 कि0मी0

85 मील = 122.40 कि0मी0
39 मील = 56.16 कि0मी0
11000 फीट = 3300.00 मीटर
पृष्ठ सं0 162
10 मील = 14.40 कि0मी0
11 मील = 15.84 कि0मी0
पृष्ठ सं0 163
216 मील = 311.04 कि0मी0
100 मील = 144.00 कि0मी0
144 मील = 207.36 कि0मी0
8 मील = 11.52 कि0मी0
पृष्ठ सं0165
30 मील = 43.20 कि0मी0
65 मील = 93.60 कि0मी0
पृष्ठ सं0171
1 तोला = 12.00 ग्राम
1 2/8 तोला = 15.00 ग्राम
2 3/4 तोला = 33.00 ग्राम
पृष्ठ सं0175
3 1/4 मील = 4.68 कि0मी0
पृष्ठ सं0180
200 मील = 288.00 कि0मी0
पृष्ठ सं0185
5 1/2 मन = 2.112 कुन्तल
7 पौंड = 3.17513 कि.ग्रा.
10 फीट = 3.00 मीटर
4 1/3 फीट = 1.30 मीटर
2 1/3 फीट = 70.00 से0मी0
350 फीट = 105.00 मीटर
पृष्ठ सं0191
239 मील = 344.16 कि0मी0
230 मील = 331.20 कि0मी0
210 मील = 302.40 कि0मी0
200 मील = 288.00 कि0मी0
160 मील = 230.40 कि0मी0
158 मील = 227.52 कि0मी0
238 मील = 342.72 कि0मी0
243 मील = 349.92 कि0मी0
445 मील = 640.80 कि0मी0
473 मील = 681.12 कि0मी0
16750 फीट = 5025 मीटर
18510 फीट = 5553.00 मीटर
17590 फीट = 5277.00 मीटर
18500 फीट = 5550.00 मीटर
18300 फीट = 5490.00 मीटर
13600फीट = 4080.00 कि0मी0
16200 फीट = 4860.00 मीटर
16350 फीट = 4905.00 मीटर
16390 फीट = 4917.00 मीटर
18400 फीट = 5520.00 मीटर
17490 फीट = 5247.00 मीटर
15400 फीट = 4620.00 मीटर
16400 फीट = 4920.00 मीटर
18510 फीट = 5553.00 मीटर
15100 फीट = 4530.00 मीटर
16200 फीट = 4860.00 मीटर
11578 फीट = 3473.00 मीटर
13000 फीट = 3900.00 मीटर
17890 फीट = 5367.00 मीटर
पृष्ठ सं0192
605 मील = 871.12 कि0मी0
525 मील = 756.00 कि0मी0
800 मील = 1152.00 कि0मी0
13446 फीट = 4033.80 मीटर
17500 फीट = 5250.00 मीटर
पृष्ठ सं0193
3 गज = 2.70 मीटर
4 गज = 3.60 मीटर

पृष्ठ सं0195

10000 फीट = 3000.00 मीटर

पृष्ठ सं0196

90 मील = 129.60 कि0मी0

3) = 3.00 रुपए

11) = 0.50 नए पैसे

100 पौंड = 45.359 कि0ग्रा0

पृष्ठ सं0197

55 मील = 79.20 कि0मी0

32 मील = 46.08 कि0मी0

1 मन = 38.400 कि0ग्रा0

2 मन = 76.800 कि0ग्रा0

) = रुपए का चिह्न

1) = पच्चीस नए पैसे

11) = पचास नए पैसे

111) = पचहत्तर नए पैसे

पृष्ठ सं0 203

25 सेर = 24.00 कि0ग्रा0

पृष्ठ सं0 204

147½ मील = 212.40 कि0मी0

43½ मील = 62.64 कि0मी0

19 मील = 27.36 कि0मी0

210 मील = 302.40 कि0मी0

पृष्ठ सं0 206

10000 फीट = 3000.00 मीटर

1 फर्लांग = 180.00 मीटर

2 फर्लांग = 360.00 मीटर

3 फर्लांग = 540.00 मीटर

पृष्ठ सं0 208

1 सेर = 0.960 कि0ग्रा0

1½ सेर = 1.875 कि0ग्रा0

3 सेर = 2.880 कि0ग्रा0

4 सेर = 3.840 कि0ग्रा0

5 सेर = 4.800 कि0ग्रा0

1। सेर = 1.200 कि0ग्रा0

1।। सेर = 1.875 कि0ग्रा0

11) = पचास नए पैसे

111=) = 87 नए पैसे

211) = दो रुपए पचास नए पैसे

पृष्ठ सं0 209

3 सेर = 2.880 कि0ग्रा0

5 सेर = 4.800 कि0ग्रा0

1। सेर = 1.200 कि0ग्रा0

1।। सेर = 1.440 कि0ग्रा0

1 सेर = 960.00 ग्राम

पृष्ठ सं0 210

15000 फीट = 4500.00 मीटर

पृष्ठ सं0 212

762 मील = 1097.28 कि0मी0

66 मील = 95.04 कि0मी0

399 मील = 574.56 कि0मी0

291 मील = 419.04 कि0मी0

222 मील = 319.68 कि0मी0

5 मील = 7.20 कि0मी0

88 मील = 126.72 कि0मी0

12 मील = 17.28 कि0मी0

15 मील = 21.60 कि0मी0

3 मील = 4.32 कि0मी0

50 गज = 45.00 मीटर

12) = 12 रुपए

7) = 7 रुपए

6) = 6 रुपए

4) = 4 रुपए

3) = 3 रुपए

पृष्ठ सं0 213

2।। मील = 3.60 कि0मी0

16 मील = 23.04 कि0मी0

41 मील = 59.04 कि0मी0

12 मील = 17.28 कि0मी0

9।। मील = 13.68 कि0मी0

10 मील = 14.40 कि0मी0
8 आना = 50 नए पैसे
5210 फीट = 1563.00 मीटर
5494 फीट = 1648.20 मीटर

पृष्ठ सं 214

14 मील = 20.16 कि0मी0
24 मील = 34.56 कि0मी0
50 मील = 72.00 कि0मी0
13 मील = 18.72 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$ मील = 3.96 कि0मी0
7702 फीट = 2310.60 मीटर

पृष्ठ सं 215

3 मील = 4.32 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$4\frac{1}{2}$ मील = 6.48 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
5 मील = 7.20 कि0मी0
4 मील = 5.76 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
6 मील = 8.64 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील = 5.04 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
$3\frac{1}{4}$ मील = 4.68 कि0मी0

पृष्ठ सं0 216

3 मील = 4.32 कि0मी0
30 मील = 43.20 कि0मी0
18 मील = 25.92 कि0मी0
$6\frac{1}{2}$ मील = 9.36 कि0मी0
2 फर्लांग = 360.00 मीटर
3 फर्लांग = 540.00 मीटर
1 फर्लांग = 180.00 मीटर
1 गज = 90.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 217

42 मील = 60.48 कि0मी0
11 मील = 15.84 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
5 मील = 7.20 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
10 मील = 14.44 कि0मी0
20 मील = 28.80 कि0मी0
27 मील = 38.88 कि0मी0
23 मील = 33.12 कि0मी0
47 मील = 67.68 कि0मी0
3200 फीट = 1056.00 मीटर
7 सेर = 6.720 कि0ग्रा0
10 सेर = 9.600 कि0ग्रा0

पृष्ठ सं0 218

6 मील = 8.64 कि0मी0
13 मील = 18.72 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
2 फर्लांग = 360.00 मीटर
2 गज = 1.80 मीटर

पृष्ठ सं 219

114 मील = 164.16 कि0मी0
42 मील = 60.48 कि0मी0
5 मील = 7.20 कि0मी0
55 मील = 79.20 कि0मी0
21 मील = 30.24 कि0मी0
$9\frac{1}{2}$ मील = 13.68 कि0मी0
14400 फीट = 4320.00 मीटर
14000 फीट = 4200.00 मीटर
840 फीट = 252.00 मीटर

1020 फीट = 306.00 मीटर
60 गज = 54.00 मीटर
80 गज = 72.00 मीटर

पृष्ठ सं0 220

1 गज = 90.00 से0मी0
24 फीट = 7.20 मीटर
9 फीट = 7.70 मीटर
6 फीट = 1.80 मीटर
12 फीट = 3.60 मीटर
4 फीट = 1.20 मीटर

पृष्ठ सं0 221

12 मील = 17.28 कि0मी0
8 सेर = 7.68 कि0ग्रा0

पृष्ठ सं0 222

1 मन = 38.400 कि0ग्रा0

पृष्ठ सं0 224

7000 फीट = 2100.00 मीटर
8000 फीट = 2400.00 मीटर
4 फीट = 1.20 मीटर

पृष्ठ सं0 226

$31\frac{1}{2}$ मील = 45.36 कि0मी0
$20\frac{1}{2}$ मील = 29.52 कि0मी0
3 मील = 4.32 कि0मी0
8000 फीट = 2400.00 मीटर
16750 फीट = 5025.00 मीटर
सहस्त्र फीट = हजारों फीट

पृष्ठ सं0 227

12 मील = 17.28 कि0मी0
10 मील = 14.40 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
10000 फीट = 3000.00 मीटर
2 सेर = 1.92 कि0ग्रा0
4 फीट = 3.84 कि0ग्रा0

पृष्ठ सं0 228

62 मील = 89.28 कि0मी0
49 मील = 70.56 कि0मी0
27 मील = 38.88 कि0मी0
28 मील = 40.32 कि0मी0
114 मील = 164.16 कि0मी0
$24\frac{3}{4}$ मील = 35.64 कि0मी0
3 मील = 4.32 कि0मी0
4 मील = 5.76 कि0मी0
16200 फीट = 4860.00 मीटर

पृष्ठ सं0 229

76 मील = 109.44 कि0मी0
65 मील = 93.60 कि0मी0
28 मील = 40.32 कि0मी0
49 मील = 70.56 कि0मी0

पृष्ठ सं0 231

10 मील = 14.40 कि0मी0
14 मील = 20.16 कि0मी0
21 मील = 30.24 कि0मी0

पृष्ठ सं0 232

32 मील = 46.08 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील = 5.04 कि0मी0
54 मील = 77.76 कि0मी0
200 गज = 180.00 मीटर
18600 फीट = 5580.00 मीटर

पृष्ठ सं0 233

3 मील = 4.32 कि0मी0
16000 फीट = 4800.00 मीटर
17000 फीट = 5100.00 मीटर

पृष्ठ सं0 239

239 मील = 344.16 कि0मी0
41 मील = 59.04 कि0मी0
88 मील = 126.72 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0

$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
8$\frac{1}{2}$ मील = 12.24 कि0मी0
5 मील = 7.20 कि0मी0
13$\frac{1}{2}$ मील = 19.44 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
5$\frac{1}{2}$ मील = 7.92 कि0मी0
7 मील = 10.08 कि0मी0
6 मील = 8.64 कि0मी0
5414 फीट = 1624.20 मीटर
4000 फीट = 1200.00 मीटर
6000 फीट = 1800.00 मीटर
7913 फीट = 2373.90 मीटर
5 फलांग = 900.00 मीटर

पृष्ठ सं0 240

2$\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
16 मील = 23.04 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
2$\frac{3}{4}$ मील = 3.96 कि0मी0
18$\frac{3}{4}$ मील = 27.00 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
1$\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
5$\frac{1}{4}$ मील = 7.56 कि0मी0
24 मील = 34.56 कि0मी0
26$\frac{1}{2}$ मील = 38.16 कि0मी0
3$\frac{1}{2}$ मील = 5.04 कि0मी0
30 मील = 43.20 कि0मी0
6 मील = 8.64 कि0मी0
36 मील = 51.84 कि0मी0
1$\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0

पृष्ठ सं0 241

1$\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
3 मील = 4.32 कि0मी0
39 मील = 56.16 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
23 मील = 33.12 कि0मी0
6$\frac{3}{4}$ मील = 9.72 कि0मी0
3$\frac{1}{4}$ मील = 4.68 कि0मी0
42$\frac{1}{4}$ मील = 60.84 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
1$\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
44 मील = 63.36 कि0मी0
2$\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
44$\frac{3}{4}$ मील = 64.44 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
8$\frac{1}{2}$ मील = 12.24 कि0मी0
5$\frac{1}{2}$ मील = 7.92 कि0मी0
3 मील = 4.32 कि0मी0
8 मील = 11.52 कि0मी0
2$\frac{1}{4}$ मील = 3.24 कि0मी0
6$\frac{1}{2}$ मील = 9.36 कि0मी0
11 मील = 15.84 कि0मी0
53 मील = 76.32 कि0मी0
10 मील = 14.40 कि0मी0
13 मील = 18.72 कि0मी0
12 मील = 17.28 कि0मी0
15 मील = 21.60 कि0मी0
50 मील = 72.00 कि0मी0
14 मील = 20.16 कि0मी0
25 मील = 36.00 कि0मी0
18 मील = 25.92 कि0मी0
42 मील = 60.48 कि0मी0
7000 फीट = 2100.00 मीटर

पृष्ठ सं0 242

1 मील = 1.44 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0

$7\frac{3}{4}$ मील	=	11.16 कि0मी0
$51\frac{3}{4}$ मील	=	74.52 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
28 मील	=	40.32 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
12 मील	=	17.28 कि0मी0
$47\frac{3}{4}$ मील	=	68.76 कि0मी0
$59\frac{3}{4}$ मील	=	86.04 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
$59\frac{1}{2}$ मील	=	85.68 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
62 मील	=	89.28 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
7 मील	=	10.08 कि0मी0
69 मील	=	99.36 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
8 मील	=	11.52 कि0मी0
16 मील	=	23.04 कि0मी0
3000 फीट	=	900.00 मीटर
3400 फीट	=	1020.00 मीटर
6400 फीट	=	1920.00 मीटर
6000 फीट	=	1800.00 मीटर
5000 फीट	=	1500.00 मीटर
30 फीट	=	9.00 मीटर
17 फीट	=	5.10 मीटर
$7\frac{1}{2}$ फीट	=	2.25 मीटर
$3\frac{1}{2}$ फीट	=	1.05 मीटर
10 फीट	=	3.00 मीटर

पृष्ठ सं0 243

$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
74 मील	=	106.56 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0
8 मील	=	11.52 कि0मी0
$9\frac{1}{2}$ मील	=	13.68 कि0मी0
$6\frac{1}{2}$ मील	=	9.36 कि0मी0
91 मील	=	131.04 कि0मी0
2100 फीट	=	630.00 मीटर

पृष्ठ सं0 244

$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
$6\frac{1}{2}$ मील	=	9.36 कि0मी0
$80\frac{1}{2}$ मील	=	115.92 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0
$86\frac{1}{2}$ मील	=	124.56 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
$90\frac{1}{2}$ मील	=	130.32 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील	=	2.52 कि0मी0
3000 फीट	=	900.00 मीटर

पृष्ठ सं0 245

2 मील	=	2.88 कि0मी0
$92\frac{1}{2}$ मील	=	133.32 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
8 मील	=	11.52 कि0मी0
$100\frac{1}{2}$ मील	=	144.72 कि0मी0

$9\frac{1}{2}$ मील = 13.68 कि0मी0
5500 फीट = 1650.00 मीटर

पृष्ठ सं0 246

$1\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
3 मील = 4.32 कि0मी0
6 मील = 8.64 कि0मी0
$106\frac{1}{2}$ मील = 153.36 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
$109\frac{1}{2}$ मील = 157.68 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
111 मील = 159.84 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$111\frac{3}{4}$ मील = 160.92 कि0मी0
$112\frac{1}{4}$ मील = 161.64 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$ मील = 3.96 कि0मी0
1 फर्लांग = 180.00 मीटर
3600 फीट = 1080.00 मीटर
600 फीट = 180.00 मीटर
6900 फीट = 3070.00 मीटर
6698 फीट = 2009.00 मीटर
8400 फीट = 2520.00 मीटर
9068 फीट = 2720.40 मीटर
9840 फीट = 2952.00 मीटर

पृष्ठ सं0 247

$3\frac{1}{4}$ मील = 4.68 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
11 मील = 15.80 कि0मी0
$123\frac{1}{4}$ मील = 177.48 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$\frac{3}{8}$ मील = 0.54 कि0मी0
$5\frac{3}{4}$ मील = 8.28 कि0मी0
129 मील = 185.76 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील = 0.18 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$131\frac{1}{2}$ मील = 189.36 कि0मी0
7000 फीट = 2100.00 मीटर
8000 फीट = 2400.00 मीटर
70 फीट = 21.00 मीटर
2000 फीट = 600.00 मीटर
100 गज = 90.00 मीटर

पृष्ठ सं0 248

$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
$131\frac{1}{2}$ मील = 189.60 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$8\frac{3}{4}$ मील = 12.60 कि0मी0
$840\frac{1}{4}$ मील = 1209.96 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$\frac{3}{8}$ मील = 0.54 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
5 मील = 7.20 कि0मी0
$145\frac{1}{4}$ मील = 209.16 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील = 180.00 मीटर
1 फर्लांग = 180.00 मीटर
3 फर्लांग = 0.54 कि0मी0
7200 फीट = 2160.00 मीटर
8000 फीट = 2400.00 मीटर
8800 फीट = 2640.00 मीटर
10500 फीट = 3150.00 मीटर
10320 फीट = 3096.00 मीटर

पृष्ठ सं0 249

$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0

$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$18\frac{1}{2}$ मील = 26.64 कि0मी0
7 मील = 10.08 कि0मी0
13 मील = 18.72 कि0मी0
2 फलांग = 360.00 मीटर
3 फलांग = 540.00 मीटर
200 फीट = 60.00 मीटर
9990 फीट = 2997.00 मीटर

पृष्ठ सं0 250

$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
11 मील = 15.84 कि0मी0
$156\frac{1}{4}$ मील = 225.00 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$4\frac{1}{4}$ मील = 6.12 कि0मी0
$160\frac{1}{2}$ मील = 231.12 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील = 180.00 मीटर
2 फलांग = 360.00 मीटर
12000 फीट = 3600.00 मीटर
3 फीट = 90.00 से0मी0
4 फीट = 1.20 मीटर

पृष्ठ सं0 251

$\frac{3}{8}$ मील = 540.00 मीटर
$4\frac{1}{4}$ मील = 6.12 कि0मी0
$160\frac{1}{2}$ मील = 231.12 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
5 मील = 7.20 कि0मी0
$165\frac{1}{2}$ मील = 238.32 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
6 मील = 8.64 कि0मी0
$171\frac{1}{2}$ मील = 246.96 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 360.00 मीटर
15000 फीट = 4500.00 मीटर
14800 फीट = 4440.00 मीटर
16750 फीट = 5025.00 मीटर
14000 फीट = 4200.00 मीटर
2 फलांग = 360.00 मीटर
3 फलांग = 540.00 मीटर

पृष्ठ सं0 252

$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
$5\frac{1}{4}$ मील = 7.56 कि0मी0
$176\frac{3}{4}$ मील = 254.52 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील = 0.18 कि0मी0
$\frac{3}{8}$ मील = 0.54 कि0मी0
3 मील = 4.32 कि0मी0
$177\frac{3}{4}$ मील = 255.96 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
$8\frac{1}{2}$ मील = 12.24 कि0मी0
$188\frac{1}{4}$ मील = 271.08 कि0मी0
12 मील = 17.28 कि0मी0
13100 फीट = 3930.00 मीटर
14000फीट = 4200.00 मीटर
2 फीट = 60.00 से0मी0
300 फीट = 90.00 मीटर

पृष्ठ सं0 253

1 मील = 1.44 कि0मी0
$4\frac{1}{2}$ मील = 6.48 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील = 3.24 कि0मी0

$192\frac{3}{4}$ मील	=	277.56 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	360.00 मीटर
$197\frac{1}{4}$ मील	=	284.04 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील	=	18000 मीटर
$\frac{3}{8}$ मील	=	540 मीटर
4 मील	=	5.76 कि0मी0
$201\frac{1}{4}$ मील	=	289.80 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$9\frac{3}{4}$ मील	=	14.04 कि0मी0
15000 फीट	=	4500.00 मीटर
16200 फीट	=	4860.00 मीटर
22 फीट	=	6.60 मीटर
100 गज	=	90.00 मीटर
50 गज	=	45.00 मीटर

पृष्ठ सं0 254

$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
$210\frac{1}{4}$ मील	=	302.76 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
$214\frac{1}{4}$ मील	=	308.52 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$3\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 कि0मी0
$5\frac{1}{2}$ मील	=	7.92 कि0मी0
12 मील	=	17.28 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
$9\frac{1}{2}$ मील	=	13.68 कि0मी0
$21\frac{1}{2}$ मील	=	30.96 कि0मी0
$24\frac{1}{4}$ मील	=	35.28 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	360.00 मीटर
3 फलांग	=	540.00 मीटर
4 फलांग	=	720.0 मीटर
200 गज	=	180.00 मीटर
14950 फीट	=	4485.00 मीटर
15100 फीट	=	4530.00 मीटर
150 फीट	=	45.00 मीटर

पृष्ठ सं0 255

$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$8\frac{1}{4}$ मील	=	11.88 कि0मी0
$222\frac{1}{2}$ मील	=	320.40 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
$231\frac{1}{2}$ मील	=	333.36 कि0मी0
$7\frac{1}{2}$ मील	=	10.80 कि0मी0
239 मील	=	344.16 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
2 फलांग	=	0.36 कि0मी0
15090 फीट	=	4527.00 मीटर
15100 फीट	=	4530.00 मीटर

पृष्ठ सं0 256

32 मील	=	46.08 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
$3\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
5 मील	=	7.72 कि0मी0

$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
200 गज = 180.00 मीटर
15100 फीट = 4530.00 मीटर
54 इंच = 1.35 मीटर
20 इंच = 0.50 मीटर

पृष्ठ सं0 257

2 मील = 2.88 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील = 3.24 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
$7\frac{1}{4}$ मील = 10.44 कि0मी0
$12\frac{1}{4}$ मील = 17.64 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील = 0.18 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
700 फीट = 210.00 मीटर
16400 फीट = 4920.00 मीटर

पृष्ठ सं0 258

1 मील = 1.44 कि0मी0
34 मील = 48.96 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$ मील = 2.96 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील = 0.18 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$5\frac{3}{4}$ मील = 8.28 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
1 फलांग = 0.18 कि0मी0
2 फलांग = 0.36 कि0मी0

पृष्ठ सं0 259

$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
4 मील = 5.76 कि0मी0
$16\frac{1}{4}$ मील = 23.40 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$60\frac{1}{2}$ मील = 87.12 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील = 5.04 कि0मी0
20 गज = 18.00 मीटर
4 गज = 3.60 मीटर
5 गज = 4.50 मीटर
18200 फीट = 5460.00 मीटर

पृष्ठ सं0 260

$9\frac{1}{4}$ मील = 13.32 कि0मी0
$25\frac{3}{4}$ मील = 37.08 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
3 मील = 4.32 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$6\frac{1}{4}$ मील = 9.00 कि0मी0
32 मील = 46.08 कि0मी0
6 मील = 8.64 कि0मी0
13 मील = 18.72 कि0मी0
4 मील = 5.76 कि0मी0
$8\frac{1}{2}$ मील = 12.24 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील = 3.24 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
$\frac{5}{8}$ मील = 0.90 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील = 0.36 कि0मी0
7 फीट = 2.10 मीटर

पृष्ठ सं0 261

$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0

2	मील	=	2.88 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$	मील	=	3.24 कि0मी0
$7\frac{3}{4}$	मील	=	11.16 कि0मी0
$4\frac{1}{4}$	मील	=	6.12 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$	मील	=	5.04 कि0मी0
18	मील	=	25.92 कि0मी0

पृष्ठ सं0 262

68	मील	=	97.92 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$	मील	=	1.80 कि0मी0
$\frac{3}{4}$	मील	=	1.08 कि0मी0
$\frac{1}{4}$	मील	=	0.36 कि0मी0
1	मील	=	1.44 कि0मी0
$\frac{1}{2}$	मील	=	0.72 कि0मी0
2	फर्लांग	=	180.00 मीटर
200	गज	=	180.00 मीटर
8	गज	=	7.20 मीटर
10	गज	=	9.00 मीटर
50	गज	=	45.00 मीटर

पृष्ठ सं0 263

$8\frac{1}{2}$	मील	=	12.24 कि0मी0
$\frac{1}{4}$	मील	=	0.36 कि0मी0
$\frac{1}{2}$	मील	=	0.72 कि0मी0
$\frac{3}{4}$	मील	=	1.08 कि0मी0
2	मील	=	2.88 कि0मी0
4	मील	=	5.76 कि0मी0
$12\frac{1}{2}$	मील	=	18.00 कि0मी0
1	मील	=	1.44 कि0मी0
$4\frac{1}{2}$	मील	=	6.48 कि0मी0
17	मील	=	24.48 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$	मील	=	3.60 कि0मी0
$4\frac{5}{8}$	मील	=	6.66 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$	मील	=	1.८0 कि0मी0
8	मील	=	11.52 कि0मी0
25	मील	=	36.00 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$	मील	=	2.16 कि0मी0
50	गज	=	45.00 मीटर
$3\frac{1}{2}$	फीट	=	1.05 मीटर
19664	फीट	=	5899.2 मीटर

पृष्ठ सं0 264

$1\frac{3}{4}$	मील	=	2.52 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$	मील	=	3.24 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$	मील	=	2.16 कि0मी0
$\frac{1}{4}$	मील	=	0.36 कि0मी0
$\frac{1}{2}$	मील	=	0.72 कि0मी0
1	मील	=	1.44 कि0मी0
$11\frac{3}{4}$	मील	=	16.92 कि0मी0
$36\frac{3}{4}$	मील	=	52.92 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$	मील	=	1.80 कि0मी0
6	मील	=	8.64 कि0मी0
3	मील	=	4.32 कि0मी0
2	मील	=	2.88 कि0मी0
$\frac{3}{4}$	मील	=	1.08 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$	मील	=	3.96 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$	मील	=	3.60 कि0मी0
$17\frac{1}{4}$	मील	=	24.84 कि0मी0
$3\frac{3}{4}$	मील	=	5.40 कि0मी0
$6\frac{3}{4}$	मील	=	9.00 कि0मी0
16	मील	=	23.04 कि0मी0
2	फीट	=	60.00 से0मी0
3	फीट	=	90.00 से0मी0
$2\frac{1}{2}$	फीट	=	75.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 265

1	मील	=	1.44 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$	मील	=	2.16 कि0मी0
2	मील	=	2.18 कि0मी0
$\frac{3}{4}$	मील	=	1.08 कि0मी0
$4\frac{1}{4}$	मील	=	6.12 कि0मी0
$\frac{1}{2}$	मील	=	0.72 कि0मी0
3	मील	=	4.32 कि0मी0
4	मील	=	5.76 कि0मी0

2 मील	=	2.88 कि0मी0
63 मील	=	90.72 कि0मी0
5 फीट	=	1.50 मीटर
6 फीट	=	1.80 मीटर

पृष्ठ सं0 266

2 मील	=	2.88 कि0मी0
$14\frac{3}{4}$ मील	=	21.24 कि0मी0
$50\frac{1}{2}$ मील	=	72.72 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
8 मील	=	11.52 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
$53\frac{3}{4}$ मील	=	77.40 कि0मी0
$5\frac{1}{2}$ मील	=	7.92 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
$9\frac{3}{4}$ मील	=	14.04 कि0मी0

पृष्ठ सं0 267

$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
$10\frac{1}{4}$ मील	=	14.46 कि0मी0
64 मील	=	92.16 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
100 गज	=	90.00 मीटर
200 गज	=	180.00 मीटर
2 फीट	=	60.00 से0मी0
3 फीट	=	90.00 से0मी0
60 फीट	=	18.00 मीटर

पृष्ठ सं0 268

54 मील	=	77.76 कि0मी0
16 मील	=	23.04 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0
13 मील	=	18.72 कि0मी0
15 मील	=	21.60 कि0मी0
77 मील	=	110.88 कि0मी0
200 वर्ग मील	=	414.72 वर्ग किमी0
140 वर्ग मील	=	290.30 वर्ग किमी0
300 फीट	=	90.00 मीटर

पृष्ठ सं0 269

12 मील	=	17.28 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील	=	0.18 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
$\frac{3}{8}$ मील	=	0.54 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
2 मीला	=	2.88 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0
100 गज	=	90.00 मीटर
6 फीट	=	1.80 मीटर
25 फीट	=	7.50 मीटर

पृष्ठ सं0 270

1 मील	=	1.44 कि0मी0
$3\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 कि0मी0
8 मील	=	11.52 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
$11\frac{1}{4}$ मील	=	16.20 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
12 मील	=	17.28 कि0मी0

पृष्ठ सं० 271

111 मील	=	159.84 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0.मी0
$14\frac{1}{4}$ मील	=	20.52 कि0मी0
$6\frac{3}{4}$ मील	=	9.72 कि0मी0
23 मील	=	33.12 कि0मी0
2 फर्लांग	=	0.36 कि0मी0
4 फीट	=	1.20 मीटर
3 फीट	=	90.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 272

$3\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 कि0मी0
$28\frac{3}{4}$ मील	=	41.40 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
7 मील	=	10.08 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$ मील	=	3.96 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
44 मील	=	63.36 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
49 मील	=	70.56 कि0मी0
$4\frac{1}{2}$ मील	=	6.48 मीटर
$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$64\frac{1}{4}$ मील	=	92.52 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
3 फीट	=	90.00 से0मी0
4 फीट	=	1.20 मीटर
15100 फीट	=	4530.00 मीटर

पृष्ठ सं0 273

$8\frac{1}{4}$ मील	=	11.88 कि0मी0
76 मील	=	109.44 कि0मी0
$5\frac{1}{4}$ मील	=	7.56 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
$90\frac{3}{4}$ मील	=	130.68 कि0मी0
$7\frac{1}{2}$ मील	=	10.80 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
111 मील	=	159.84 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
$15\frac{1}{2}$ मील	=	22.32 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
$11\frac{3}{4}$ मील	=	16.92 कि0मी0
$26\frac{1}{4}$ मील	=	37.80 कि0मी0
28 मील	=	40.32 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील	=	180.00 मीटर
$\frac{1}{16}$ मील	=	90.00 मीटर
$\frac{3}{16}$ मील	=	270.0 मीटर
1 फर्लांग	=	180.00 मीटर
14600 फीट	=	4380.00 मीटर
14820 फीट	=	4446.00 मीटर
4 फीट	=	1.20 मीटर
$3\frac{1}{2}$ फीट	=	1.05 मीटर
1 फीट	=	30.00 से0मी0
2 फीट	=	60.00 से0मी0
3 फीट	=	90.00 से0मी0
$2\frac{1}{2}$ फीट	=	75.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 274

65 मील	=	93.60 कि0मी0

$10\frac{1}{2}$ मील = 15.12 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$11\frac{1}{4}$ मील = 16.20 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$ मील = 2.96 कि0मी0
14 मील = 20.16 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील = 2.52 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
10 मील = 14.40 कि0मी0
24 मील = 34.56 कि0मी0
$4\frac{1}{2}$ मील = 6.48 कि0मी0
4 मील = 5.76 कि0मी0
1 फलांग = 180.00 मीटर
2 फीट = 60.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 275

$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
$9\frac{1}{4}$ मील = 13.32 कि0मी0
$35\frac{1}{4}$ मील = 50.76 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील = 3.24 कि0मी0
$6\frac{1}{4}$ मील = 9.00 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
3 मील = 4.32 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
51 मील = 73.44 कि0मी0
$\frac{3}{8}$ मील = 0.54 कि0मी0
$\frac{1}{8}$ मील = 180 मीटर
50 गज = 45.00 मीटर
6 फीट = 1.80 मीटर
2 फीट = 60.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 276

2 मील = 2.88 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
4 मील = 5.76 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
$5\frac{1}{4}$ मील = 7.57 कि0मी0
65 मील = 93.60 कि0मी0
1 फलांग = 180.00 मीटर
$3\frac{1}{2}$ फीट = 5.04 कि0मी0
4 फीट = 1.20 मीटर
3 फीट = 90.00 से0मी0
2 फीट = 60.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 277

38 मील = 54.72 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील = 3.24 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
$8\frac{3}{4}$ मील = 12.60 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$6\frac{1}{2}$ मील = 9.36 कि0मी0
$21\frac{3}{4}$ मील = 31.32 कि0मी0
3 मील = 4.32 कि0मी0
$9\frac{1}{2}$ मील = 13.68 कि0मी0
4 मील = 5.76 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
3 फीट = 90.00 से0मी0
$2\frac{1}{2}$ फीट = 75.00 से0मी0
2 फीट = 60.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 278

600 मील = 864.00 कि0मी0

$8\frac{1}{2}$ मील	=	12.24 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$ मील	=	3.96 कि0मी0
$5\frac{1}{4}$ मील	=	7.57 कि0मी0
24 मील	=	34.56 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
$42\frac{1}{4}$ मील	=	40.84 कि0मी0
7 मील	=	10.08 कि0मी0
$51\frac{3}{4}$ मील	=	74.52 कि0मी0
$7\frac{3}{4}$ मील	=	11.16 कि0मी0
62 मील	=	89.28 कि0मी0
74 मील	=	106.56 कि0मी0
$6\frac{1}{2}$ मील	=	9.36 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0
$90\frac{1}{2}$ मील	=	130.32 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
8 मील	=	11.52 कि0मी0
$100\frac{1}{2}$ मील	=	144.72 कि0मी0
$109\frac{1}{2}$ मील	=	157.68 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
11 मील	=	15.84 कि0मी0
$123\frac{1}{4}$ मील	=	177.48 कि0मी0
$5\frac{3}{4}$ मील	=	8.28 कि0मी0
$131\frac{1}{2}$ मील	=	189.36 कि0मी0
$8\frac{3}{4}$ मील	=	12.60 कि0मी0
$145\frac{1}{4}$ मील	=	209.16 कि0मी0
$156\frac{1}{4}$ मील	=	225.00 कि0मी0
$9\frac{1}{4}$ मील	=	13.32 कि0मी0
$165\frac{1}{2}$ मील	=	238.32 कि0मी0
$176\frac{3}{4}$ मील	=	254.52 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
191 मील	=	275.04 कि0मी0
$3\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 कि0मी0
$205\frac{1}{4}$ मील	=	295.56 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
$9\frac{3}{4}$ मील	=	14.04 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
$225\frac{3}{4}$ मील	=	325.08 कि0मी0
$4\frac{1}{2}$ मील	=	6.48 कि0मी0
$11\frac{1}{4}$ मील	=	16.20 कि0मी0
$241\frac{1}{2}$ मील	=	347.76 कि0मी0
$8\frac{1}{4}$ मील	=	11.88 कि0मी0
$252\frac{3}{4}$ मील	=	363.96 कि0मी0

पृष्ठ सं0 279

$21\frac{1}{2}$ मील	=	30.96 कि0मी0
$288\frac{3}{4}$ मील	=	415.80 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
$7\frac{1}{4}$ मील	=	10.44 कि0मी0
301 मील	=	433.44 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
$9\frac{1}{4}$ मील	=	13.32 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$317\frac{1}{2}$ मील	=	457.20 कि0मी0
$11\frac{1}{2}$ मील	=	16.56 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$ मील	=	3.96 कि0मी0
$331\frac{3}{4}$ मील	=	477.72 कि0मी0
$8\frac{1}{2}$ मील	=	12.24 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
$347\frac{3}{4}$ मील	=	500.76 कि0मी0
$9\frac{3}{4}$ मील	=	14.04 कि0मी0
$5\frac{1}{2}$ मील	=	7.92 कि0मी0
$364\frac{3}{4}$ मील	=	525.24 कि0मी0
$4\frac{1}{2}$ मील	=	6.48 कि0मी0
$382\frac{1}{2}$ मील	=	550.80 कि0मी0

16 मील = 23.04 कि0मी0
$398\frac{1}{2}$ मील = 573.84 कि0मी0
12 मील = 17.28 कि0मी0
$410\frac{1}{2}$ मील = 591.12 कि0मी0
$5\frac{1}{4}$ मील = 7.57 कि0मी0
$427\frac{3}{4}$ मील = 615.96 कि0मी0
6 मील = 8.64 कि0मी0
$9\frac{1}{2}$ मील = 13.68 कि0मी0
443 मील = 637.92 कि0मी0
11 मील = 15.84 कि0मी0
454 मील = 653.76 कि0मी0
$13\frac{3}{4}$ मील = 19.80 कि0मी0
$467\frac{3}{4}$ मील = 673.56 कि0मी0
$8\frac{1}{4}$ मील = 11.88 कि0मी0
476 मील = 685.44 कि0मी0
$13\frac{3}{4}$ मील = 19.80 कि0मी0
$489\frac{3}{4}$ मील = 705.24 कि0मी0
9 मील = 12.96 कि0मी0
$498\frac{3}{4}$ मील = 718.20 कि0मी0
10 मील = 14.40 कि0मी0
$508\frac{3}{4}$ मील = 732.60 कि0मी0
$16\frac{1}{2}$ मील = 23.76 कि0मी0
$525\frac{1}{4}$ मील = 756.36 कि0मी0
$537\frac{3}{4}$ मील = 774.36 कि0मी0
$10\frac{1}{4}$ मील = 14.76 कि0मी0
$547\frac{1}{2}$ मील = 788.40 कि0मी0
557 मील = 802.08 कि0मी0
$18\frac{1}{4}$ मील = 26.28 कि0मी0
$575\frac{1}{4}$ मील = 828.36 कि0मी0
$15\frac{1}{2}$ मील = 22.32 कि0मी0
$590\frac{3}{4}$ मील = 850.68 कि0मी0
600 मील = 864.00 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
239 मील = 344.16 कि0मी0
230 मील = 331.20 कि0मी0
210 मील = 302.40 कि0मी
200 मील = 288.00 कि0मी0

पृष्ठ सं0 280

160 मील = 230.40 कि0मी0
158 मील = 227.52 कि0मी0
238 मील = 343.72 कि0मी0
243 मील = 349.92 कि0मी0
445 मील = 640.80 कि0मी0
473 मील = 681.12 कि0मी0
605 मील = 871.20 कि0मी0
525 मील = 756.00 कि0मी0
800 मील = 1152.00 कि0मी0
32 मील = 46.08 कि0मी0
54 मील = 77.76 कि0मी0
77 मील = 110.88 कि0मी0
46 मील = 66.24 कि0मी0
92 मील = 132.48 कि0मी0
22 मील = 31.68 कि0मी0
65 मील = 93.60 कि0मी0
23 मील = 33.12 कि0मी0
16 मील = 23.04 कि0मी0
28 मील = 40.32 कि0मी0
21 मील = 30.24 कि0मी0
38 मील = 54.72 कि0मी0
27 मील = 38.88 कि0मी0
76 मील = 109.44 कि0मी0
49 मील = 70.56 कि0मी0
34 मील = 48.96 कि0मी0
12 मील = 17.28 कि0मी0
$38\frac{1}{2}$ मील = 55.44 कि0मी0
$33\frac{1}{2}$ मील = 48.24 कि0मी0
100 मील = 144.00 कि0मी0
$7\frac{3}{4}$ मील = 11.16 कि0मी0
6 मील = 8.64 कि0मी0
18 मील = 25.92 कि0मी0

41 मील	=	59.04 कि0मी0
86 मील	=	123.84 कि0मी0
73 मील	=	105.12 कि0मी0
118$\frac{1}{2}$ मील	=	170.64 कि0मी0
145 मील	=	208.80 कि0मी0
133$\frac{1}{2}$ मील	=	192.24 कि0मी0
167$\frac{1}{2}$ मील	=	241.20 कि0मी0
148$\frac{1}{2}$ मील	=	213.84 कि0मी0
19 मील	=	27.36 कि0मी0
164 मील	=	236.16 कि0मी0
98$\frac{1}{2}$ मील	=	141.84 कि0मी0
123 मील	=	177.12 कि0मी0
101 मील	=	145.44 कि0मी0
608 मील	=	875.52 कि0मी0
13 मील	=	18.72 कि0मी0
18 मील	=	25.92 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
16 मील	=	23.04 कि0मी0
15 मील	=	21.60 कि0मी0
25 मील	=	36.00 कि0मी0

पृष्ठ सं0 281

230 मील	=	331.20 कि0मी0
100$\frac{1}{2}$ मील	=	144.72 कि0मी0
9$\frac{1}{2}$ मील	=	13.68 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
112$\frac{1}{2}$ मील	=	162.00 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
14 मील	=	20.16 कि0मी0
126$\frac{1}{2}$ मील	=	182.16 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
12 मील	=	17.28 कि0मी0
138$\frac{1}{2}$ मील	=	199.44 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0
11 मील	=	15.84 कि0मी0
155$\frac{1}{2}$ मील	=	223.92 कि0मी0
5$\frac{1}{2}$ मील	=	7.92 कि0मी0
161 मील	=	281.84 कि0मी0
165 मील	=	237.60 कि0मी0
4$\frac{1}{2}$ मील	=	6.48 कि0मी0
175 मील	=	252.00 कि0मी0
13 मील	=	18.72 कि0मी0
6$\frac{1}{2}$ मील	=	9.36 कि0मी0
18$\frac{1}{2}$ मील	=	26.64 कि0मी0
18150 फीट	=	5445.00 मीटर
18510 फीट	=	5553.00 मीटर

पृष्ठ सं0 282

12 मील	=	17.28 कि0मी0
187 मील	=	269.28 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
192 मील	=	276.48 कि0मी0
16$\frac{1}{4}$ मील	=	23.40 कि0मी0
208$\frac{1}{4}$ मील	=	299.88 कि0मी0
21$\frac{3}{4}$ मील	=	31.32 कि0मी0
230 मील	=	331.20 कि0मी0
210 मील	=	302.40 कि0मी0
6$\frac{1}{2}$ मील	=	9.36 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
2$\frac{3}{4}$ मील	=	3.96 कि0मी0
2$\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
14$\frac{3}{4}$ मील	=	21.24 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
5$\frac{1}{4}$ मील	=	7.57 कि0मी0
1$\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
4$\frac{1}{2}$ मील	=	6.48 कि0मी0
27 मील	=	38.88 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
11 मील	=	15.84 कि0मी0

41 मील	=	59.04 किमी0
$3\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 किमी0
$7\frac{3}{4}$ मील	=	11.16 किमी0
52 मील	=	74.88 किमी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.80 किमी0
2 मील	=	2.88 किमी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 किमी0
3200 फीट	=	960.00 मीटर
6900 फीट	=	2070.00 मीटर

पृष्ठ सं0 283

7 मील	=	10.08 किमी0
59 मील	=	84.96 किमी0
4 मील	=	5.76 किमी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 किमी0
2 मील	=	2.88 किमी0
$2\frac{3}{4}$ मील	=	3.96 किमी0
$5\frac{1}{4}$ मील	=	7.57 किमी0
$77\frac{1}{4}$ मील	=	111.24 किमी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 किमी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 किमी0
$1\frac{3}{4}$ मील	=	2.52 किमी0
$89\frac{1}{4}$ मील	=	128.52 किमी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 किमी0
1 मील	=	1.44 किमी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 किमी0
12 मील	=	17.28 किमी0
3280 फीट	=	984.00 मीटर
8600 फीट	=	2580.00 मीटर
12200 फीट	=	3660.00 मीटर
11070फीट	=	3321.00 मीटर

पृष्ठ सं0 284

$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 किमी0
2 मील	=	2.88 किमी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 किमी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 किमी0
3 मील	=	4.32 किमी0
$106\frac{3}{4}$ मील	=	153.72 किमी0
$5\frac{3}{4}$ मील	=	8.28 किमी0
1 मील	=	1.44 किमी0
$115\frac{3}{4}$ मील	=	166.68 किमी0
6 मील	=	8.64 किमी0
7 मील	=	10.08 किमी0
1 फर्लांग	=	180.00 मीटर
2 गज	=	1.80 मीटर
3 गज	=	2.70 मीटर
11232 फीट	=	3369.60 मीटर
13720 फीट	=	4116.00 मीटर
24 फीट	=	7.20 मीटर
16 फीट	=	4.80 मीटर
450 फीट	=	135.00 मीटर
225 फीट	=	67.50 मीटर

पृष्ठ सं0 285

$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 किमी0
1 मील	=	1.44 किमी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 किमी0
$6\frac{1}{2}$ मील	=	9.36 किमी0
$122\frac{1}{2}$ मील	=	176.40 किमी0
2 मील	=	2.88 किमी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 किमी0
$125\frac{3}{4}$ मील	=	181.08 किमी0
$129\frac{1}{2}$ मील	=	186.48 किमी0
5 मील	=	7.20 किमी0
$134\frac{1}{2}$ मील	=	193.68 किमी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 किमी0
3 मील	=	4.32 किमी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 किमी0
$12\frac{3}{4}$ मील	=	18.36 किमी0
1 फर्लांग	=	180 मीटर
15010 फीट	=	4503.00 मीटर
17950 फीट	=	5385.00 मीटर

18500 फीट	=	5550.00 मीटर	7 मील	=	10.08 कि0मी0
18300 फीट	=	5490.00 मीटर	2 मील	=	2.88 कि0मी0
16390 फीट	=	4917.00 मीटर	18 मील	=	25.92 कि0मी0
3 फीट	=	0.90 मीटर	34 मील	=	48.96 कि0मी0
2 फीट	=	0.60 मीटर	5 मील	=	7.20 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ फीट	=	45 से0मी0	$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
पृष्ठ सं0 286			$9\frac{1}{2}$ मील	=	13.68 कि0मी0
12 मील	=	17.28 कि0मी0	$43\frac{1}{2}$ मील	=	62.64 कि0मी0
$146\frac{1}{2}$ मील	=	210.96 कि0मी0	$8\frac{1}{4}$ मील	=	11.88 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0	$51\frac{3}{4}$ मील	=	74.52 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0	$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0	$2\frac{3}{4}$ मील	=	3.96 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0	$4\frac{3}{4}$ मील	=	6.84 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0	$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
$3\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 कि0मी0	$15\frac{3}{4}$ मील	=	22.68 कि0मी0
158 मील	=	227.52 कि0मी0	$67\frac{1}{2}$ मील	=	97.20 कि0मी0
$11\frac{3}{4}$ मील	=	16.92 कि0मी0	$4\frac{1}{4}$ मील	=	6.12 कि0मी0
172 मील	=	247.68 कि0मी0	$4\frac{1}{2}$ मील	=	6.98 कि0मी0
$16\frac{1}{4}$ मील	=	23.40 कि0मी0	72 मील	=	103.68 कि0मी0
$188\frac{1}{4}$ मील	=	271.08 कि0मी0	$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
$21\frac{3}{4}$ मील	=	31.32 कि0मी0	12 मील	=	17.28 कि0मी0
210 मील	=	302.40 कि0मी0	84 मील	=	120.96 कि0मी0
200 मील	=	288.00 कि0मी0	$8\frac{3}{4}$ मील	=	12.60 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0	$11\frac{1}{2}$ मील	=	16.56 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0	$95\frac{1}{2}$ मील	=	137.52 कि0मी0
6200 फीट	=	1860.00 मीटर	$6\frac{1}{2}$ मील	=	9.36 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ फीट	=	45.00 से0मी0	$5\frac{3}{4}$ मील	=	8.28 कि0मी0
2 फीट	=	60.00 से0मी0	$7\frac{1}{2}$ मील	=	10.80 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ फीट	=	75.00 से0मी0	14 मील	=	20.16 कि0मी0
3 फीट	=	90.00 से0मी0	$109\frac{1}{2}$ मील	=	157.68 कि0मी0
पृष्ठ सं0 287			$5\frac{1}{2}$ मील	=	7.92 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0	115 मील	=	165.60 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0	$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
16 मील	=	23.04 कि0मी0	$14\frac{1}{4}$ मील	=	20.52 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0	19 मील	=	27.36 कि0मी0

$148\frac{1}{2}$ मील	=	213.84 कि0मी0
164 मील	=	236.16 कि0मी0
$6\frac{1}{2}$ मील	=	9.36 कि0मी0
10150 फीट	=	3045.00 मीटर
10317 फीट	=	3095.10 मीटर
14703 फीट	=	4410.60 मीटर
16600 फीट	=	4980.00 मीटर
3 फीट	=	0.90 मीटर

पृष्ठ सं0 288

19 मील	=	27.36 कि0मी0
134 मील	=	192.96 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
$7\frac{1}{4}$ मील	=	10.44 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
$4\frac{1}{4}$ मील	=	6.12 कि0मी0
149 मील	=	214.56 कि0मी0
$3\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 कि0मी0
$9\frac{1}{4}$ मील	=	13.32 कि0मी0
162 मील	=	233.28 कि0मी0
$16\frac{1}{4}$ मील	=	23.40 कि0मी0
$178\frac{1}{4}$ मील	=	256.68 कि0मी0
$21\frac{3}{4}$ मील	=	31.32 कि0मी0
200 मील	=	288.00 कि0मी0
160 मील	=	230.40 कि0मी0
$43\frac{1}{2}$ मील	=	62.64 कि0मी0
7 मील	=	10.08 कि0मी0
$50\frac{1}{2}$ मील	=	72.72 कि0मी0
$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
$53\frac{3}{4}$ मील	=	77.40 कि0मी0
$5\frac{3}{4}$ मील	=	8.28 कि0मी0
$59\frac{1}{2}$ मील	=	85.68 कि0मी0
32 मील	=	46.08 कि0मी0
30 फीट	=	9.00 मीटर
2 फीट	=	0.6. मीटर
3 फीट	=	0.90 मीटर
$2\frac{1}{2}$ फीट	=	75.00 से0मी0
16200 फीट	=	4860 मीटर

पृष्ठ सं0 289

$5\frac{1}{2}$ मील	=	7.92 कि0मी0
65 मील	=	93.60 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
$68\frac{1}{2}$ मील	=	98.64 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0
$78\frac{1}{2}$ मील	=	113.04 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$6\frac{1}{2}$ मील	=	9.36 कि0मी0
$15\frac{3}{4}$ मील	=	22.68 कि0मी0
$94\frac{1}{4}$ मील	=	135.72 कि0मी0
$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
15 मील	=	21.60 कि0मी0
$109\frac{1}{4}$ मील	=	157.32 कि0मी0
$12\frac{3}{4}$ मील	=	18.36 कि0मी0
132 मील	=	190.08 कि0मी0
$16\frac{1}{4}$ मील	=	23.40 कि0मी0
$138\frac{1}{4}$ मील	=	199.08 कि0मी0
$21\frac{3}{4}$ मील	=	31.32 कि0मी0
160 मील	=	230.40 कि0मी0
158 मील	=	227.52 कि0मी0
$42\frac{1}{2}$ मील	=	61.20 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0
$48\frac{1}{2}$ मील	=	69.84 कि0मी0
7 मील	=	10.08 कि0मी0
$55\frac{1}{2}$ मील	=	79.92 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
$7\frac{1}{2}$ मील	=	10.80 कि0मी0
63 मील	=	90.72 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0

95 मील	=	136.80 कि0मी0
16350 फीट	=	4905.00 मीटर
16390 फीट	=	4917.00 मीटर
14250 फीट	=	4275.00 मीटर

पृष्ठ सं0 290

238 मील	=	342.72 कि0मी0
168 मील	=	241.92 कि0मी0
164 मील	=	236.16 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
$9\frac{1}{2}$ मील	=	13.68 कि0मी0
$11\frac{1}{2}$ मील	=	16.56 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
$8\frac{1}{2}$ मील	=	12.24 कि0मी0
20 मील	=	28.80 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$28\frac{1}{2}$ मील	=	41.04 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
$37\frac{1}{2}$ मील	=	54.00 कि0मी0
8 मील	=	11.52 कि0मी0
$45\frac{1}{2}$ मील	=	66.52 कि0मी0
16 मील	=	23.04 कि0मी0
$61\frac{1}{2}$ मील	=	88.56 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0
$71\frac{1}{2}$ मील	=	102.96 कि0मी0
22 मील	=	31.68 कि0मी0
93 मील	=	133.92 कि0मी0
7 मील	=	10.08 कि0मी0
100 मील	=	144.00 कि0मी0
10500 फीट	=	3150.00 मीटर
18400 फीट	=	5520.00 मीटर
16400 फीट	=	4920.00 मीटर
12200 फीट	=	3660.00 मीटर

पृष्ठ सं0 291

13 मील	=	18.72 कि0मी0
113 मील	=	162.72 कि0मी0
14 मील	=	20.16 कि0मी0
127 मील	=	182.88 कि0मी0
2 मील	=	2.80 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0
7 गज	=	6.30 मीटर
8 गज	=	7.20 मीटर
150 गज	=	135.00 मीटर
3 गज	=	2.70 मीटर
4 गज	=	3.60 मीटर
3 फीट	=	0.90 मीटर
4 फीट	=	1.20 मीटर
14000 फीट	=	4200.00 मीटर
6 फीट	=	1.80 मीटर

पृष्ठ सं0 292

$6\frac{1}{2}$ मील	=	9.76 कि0मी0
$133\frac{1}{2}$ मील	=	192.24 कि0मी0
$103\frac{1}{2}$ मील	=	149.04 कि0मी0
238 मील	=	342.72 कि0मी0
243 मील	=	349.92 कि0मी0
145 मील	=	208.80 कि0मी0
110 मील	=	158.40 कि0मी0
13 मील	=	18.72 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
$7\frac{1}{4}$ मील	=	10.44 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$ मील	=	3.96 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
$13\frac{1}{2}$ मील	=	19.44 कि0मी0

$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
21 मील	=	30.24 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
$3\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील	=	0.36 कि0मी0
$8\frac{1}{2}$ मील	=	12.24 कि0मी0
$29\frac{1}{2}$ मील	=	42.48 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
$1\frac{3}{4}$ मील	=	2.52 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$11\frac{1}{4}$ मील	=	16.20 कि0मी0
$40\frac{3}{4}$ मील	=	58.68 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
11181 फीट	=	3354.30 मीटर
12984 फीट	=	3895.20 मीटर

पृष्ठ सं0 293

$9\frac{1}{4}$ मील	=	13.32 कि0मी0
50 मील	=	72.00 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
$53\frac{1}{4}$ मील	=	76.68 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
$4\frac{1}{4}$ मील	=	6.12 कि0मी0
$57\frac{1}{2}$ मील	=	82.80 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0
$16\frac{1}{4}$ मील	=	23.40 कि0मी0
$73\frac{3}{4}$ मील	=	106.20 कि0मी0
$3\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 कि0मी0
$4\frac{1}{2}$ मील	=	6.48 कि0मी0

83 मील	=	119.52 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
$5\frac{3}{4}$ मील	=	8.28 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
22 मील	=	31.68 कि0मी0
105 मील	=	151.20 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
138 मील	=	198.72 कि0मी0
243 मील	=	349.92 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0
2 फर्लांग	=	0.36 कि0मी0
3 फर्लांग	=	0.54 कि0मी0
17490फीट	=	5247.00 मीटर
$1\frac{1}{2}$ फीट	=	45.00 से0मी0
2 फीट	=	60.00 से0मी0
$2\frac{1}{2}$ फीट	=	75.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 294

445 मील	=	640.80 कि0मी0
12 मील	=	17.28 कि0मी0
17 मील	=	24.48 कि0मी0
29 मील	=	41.76 कि0मी0
11 मील	=	15.84 कि0मी0
40 मील	=	57.60 कि0मी0
51 मील	=	73.44 कि0मी0
62 मील	=	89.28 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
71 मील	=	102.24 कि0मी0
7 मील	=	10.08 कि0मी0
78 मील	=	112.32 कि0मी0
13 मील	=	18.92 कि0मी0
91 मील	=	131.04 कि0मी0
14 मील	=	20.16 कि0मी0
105 मील	=	151.20 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0

115 मील	=	165.60 कि0मी0
13 मील	=	18.72 कि0मी0
128 मील	=	184.32 कि0मी0
15 मील	=	21.60 कि0मी0
143 मील	=	205.92 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
158 मील	=	227.52 कि0मी0
14 मील	=	20.16 कि0मी0
172 मील	=	247.68 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0
188 मील	=	270.72 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
198 मील	=	285.12 कि0मी0
7043 फीट	=	2112.90 मीटर
3063 फीट	=	918.90 मीटर
7900 फीट	=	2370.00 मीटर

पृष्ठ सं0 295

4 मील	=	5.76 कि0मी0
202 मील	=	290.88 कि0मी0
8 मील	=	11.52 कि0मी0
210 मील	=	302.40 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
215 मील	=	303.60 कि0मी0
15 मील	=	21.16 कि0मी0
230 मील	=	331.20 कि0मी0
12 मील	=	17.28 कि0मी0
242 मील	=	348.48 कि0मी0
250 मील	=	360.00 कि0मी0
265 मील	=	381.60 कि0मी0
277 मील	=	398.88 कि0मी0
13 मील	=	18.72 कि0मी0
290 मील	=	417.72 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
305 मील	=	439.20 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0
311 मील	=	447.84 कि0मी0
14 मील	=	20.16 कि0मी0
325 मील	=	468.00 कि0मी0
339 मील	=	488.16 कि0मी0
351 मील	=	505.44 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
360 मील	=	518.40 मीटर
366 मील	=	527.04 कि0मी0
15400 फीट	=	4620.00 मीटर
10600 फीट	=	3180.00 मीटर
16400 फीट	=	4920.00 मीटर
13760 फीट	=	4128.00 मीटर
18510 फीट	=	5553.00 मीटर
17400 फीट	=	5220.00 मीटर
15100 फीट	=	4530.00 मीटर
15000 फीट	=	4500.00 मीटर
2 फीट	=	60.00 से0मी0
$2\frac{1}{2}$ फीट	=	75.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 296

3 मील	=	4.32 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
387 मील	=	557.28 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
14 मील	=	20.16 कि0मी0
405 मील	=	583.20 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
409 मील	=	588.96 कि0मी0
$14\frac{3}{4}$ मील	=	21.24 कि0मी0
$423\frac{3}{4}$ मील	=	610.20 कि0मी0
$21\frac{1}{4}$ मील	=	30.60 कि0मी0
445 मील	=	640.80 कि0मी0
473 मील	=	681.12 कि0मी0
290 मील	=	417.60 कि0मी0
20 मील	=	28.80 कि0मी0
310 मील	=	446.40 कि0मी0

9 मील	=	12.96 कि0मी0	164$\frac{1}{4}$ मील	=	236.52 कि0मी0
319 मील	=	459.36 कि0मी0	15 मील	=	21.60 कि0मी0
16 मील	=	23.04 कि0मी0	179$\frac{1}{4}$ मील	=	258.12 कि0मी0
335 मील	=	482.40 कि0मी0	5 मील	=	7.20 कि0मी0
138 मील	=	198.72 कि0मी0	10$\frac{1}{4}$ मील	=	14.76 कि0मी0
605 मील	=	871.20 कि0मी0	270 मील	=	388.80 कि0मी0
13 मील	=	18.72 कि0मी0	18$\frac{3}{4}$ मील	=	27.00 कि0मी0
16200 फीट	=	4860.00 मीटर	198 मील	=	285.12 कि0मी0
14300 फीट	=	4290.00 मीटर	14$\frac{3}{4}$ मील	=	21.24 कि0मी0
5260 फीट	=	1578.00 कि0मी0	212$\frac{3}{4}$ मील	=	306.36 कि0मी0
2 फीट	=	60.00 से0मी0	7$\frac{1}{2}$ मील	=	10.80 कि0मी0
2$\frac{1}{2}$ फीट	=	75.00 से0मी0	11$\frac{1}{2}$ मील	=	16.56 कि0मी0
पृष्ठ सं0 297			224$\frac{1}{4}$ मील	=	322.92 कि0मी0
11 मील	=	15.84 कि0मी0	4 मील	=	5.76 कि0मी0
24 मील	=	34.56 कि0मी0	13$\frac{3}{4}$ मील	=	19.80 कि0मी0
13 मील	=	18.72 कि0मी0	17$\frac{3}{4}$ मील	=	25.56 कि0मी0
37 मील	=	53.28 कि0मी0	242 मील	=	348.48 कि0मी0
14 मील	=	20.16 कि0मी0	12 मील	=	17.28 कि0मी0
51$\frac{1}{2}$ मील	=	74.16 कि0मी0	254 मील	=	365.76 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0	11 मील	=	15.84 कि0मी0
60$\frac{1}{2}$ मील	=	87.12 कि0मी0	1 मील	=	1.44 कि0मी0
2$\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0	267 मील	=	384.48 कि0मी0
63 मील	=	90.72 कि0मी0	2 मील	=	2.88 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0	10 मील	=	14.40 कि0मी0
7 मील	=	10.08 कि0मी0	277 मील	=	388.80 कि0मी0
76 मील	=	109.44 कि0मी0	7 मील	=	10.08 कि0मी0
12$\frac{1}{2}$ मील	=	18.00 कि0मी0	294 मील	=	423.36 कि0मी0
88$\frac{1}{2}$ मील	=	127.44 कि0मी0	306 मील	=	440.64 कि0मी0
22$\frac{1}{2}$ मील	=	32.40 कि0मी0	310 मील	=	446.40 कि0मी0
111 मील	=	159.84 कि0मी0	5795 फीट	=	1738.50 मीटर
16$\frac{1}{4}$ मील	=	23.40 कि0मी0	6500 फीट	=	1950.00 मीटर
127$\frac{1}{4}$ मील	=	183.20 कि0मी0	8750 फीट	=	2625.00 मीटर
149$\frac{3}{4}$ मील	=	215.64 कि0मी0	9450 फीट	=	2835.00 मीटर
6 मील	=	8.64 कि0मी0	11578 फीट	=	3473.40 मीटर
8$\frac{1}{2}$ मील	=	12.24 कि0मी0	10636 फीट	=	3190.80 मीटर

18790 फीट	=	5637.00 मीटर
10350 फीट	=	3105.00 मीटर
13000 फीट	=	3900.00 मीटर
13446 फीट	=	4033.80 मीटर
11400 फीट	=	3420.00 मीटर
11503 फीट	=	3450.90 मीटर
13500 फीट	=	4050.00 मीटर
17500 फीट	=	5250.00 मीटर
15780 फीट	=	4734.00 मीटर

पृष्ठ सं0 298

15 मील	=	21.60 कि0मी0
325 मील	=	468.00 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
16 मील	=	23.04 कि0मी0
341 मील	=	491.04 कि0मी0
18 मील	=	25.92 कि0मी0
359 मील	=	516.96 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
377 मील	=	542.88 कि0मी0
13 मील	=	18.72 कि0मी0
390 मील	=	561.60 कि0मी0
14 मील	=	20.16 कि0मी0
404 मील	=	581.76 कि0मी0
12 मील	=	17.28 कि0मी0
416 मील	=	599.04 कि0मी0
$7\frac{1}{2}$ मील	=	10.80 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
428 मील	=	616.32 कि0मी0
7 मील	=	10.08 कि0मी0
19 मील	=	27.36 कि0मी0
447 मील	=	643.68 कि0मी0
463 मील	=	666.72 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
481 मील	=	692.64 कि0मी0
24 मील	=	34.56 कि0मी0

505 मील	=	727.20 कि0मी0
520 मील	=	748.80 कि0मी0
85 मील	=	122.40 कि0मी0
605 मील	=	871.20 कि0मी0
800 मील	=	1152.00 कि0मी0
16400 फीट	=	4920.00 कि0मी0
14300 फीट	=	4290.00 मीटर
13900 फीट	=	4170.00 मीटर
14065 फीट	=	4219.50 मीटर

पृष्ठ सं0 299

92 मील	=	132.48 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
$4\frac{3}{4}$ मील	=	5.40 कि0मी0
$12\frac{1}{4}$ मील	=	17.64 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
$2\frac{1}{8}$ मील	=	3.06 कि0मी0
$1\frac{1}{8}$ मील	=	1.62 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0

पृष्ठ सं0 300

$10\frac{3}{4}$ मील	=	15.48 कि0मी0
23 मील	=	33.12 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
$4\frac{1}{2}$ मील	=	6.48 कि0मी0
$5\frac{1}{4}$ मील	=	7.57 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
$36\frac{1}{2}$ मील	=	52.56 कि0मी0
$6\frac{1}{2}$ मील	=	9.36 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
46 मील	=	66.24 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील	=	1.80 कि0मी0

1 मील = 1.44 कि0मी0
3 गज = 2.70 मीटर
4 गज = 3.60 मीटर
16930 फीट = 50790.00 मीटर
2 फीट = 60.00 से0मी0
3 फीट = 90.00 से0मी0
$1\frac{1}{2}$ फीट = 45.00 से0मी0
$1\frac{1}{4}$ फीट = 37.50 से0मी0
1 फीट = 30.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 301

4 मील = 5.76 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
20 मील = 28.80 कि0मी0
66 मील = 95.04 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
5 मील = 7.20 कि0मी0
71 मील = 102.24 कि0मी0
7 मील = 10.08 कि0मी0
13 मील = 18.72 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील = 2.16 कि0मी0
$6\frac{1}{2}$ मील = 9.36 कि0मी0
92 मील = 132.48 कि0मी0
197 मील = 283.68 कि0मी0
3 मील = 4.32 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$ मील = 3.96 कि0मी0
$\frac{1}{4}$ मील = 0.36 कि0मी0
17 मील = 24.48 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
$3\frac{3}{4}$ मील = 5.40 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
16 मील = 23.04 कि0मी0
33 मील = 47.52 कि0मी0
$6\frac{1}{4}$ मील = 9.00 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील = 5.04 कि0मी0
4 मील = 5.76 कि0मी0
15 मील = 21.60 कि0मी0
48 मील = 69.12 कि0मी0
$7\frac{1}{2}$ मील = 10.80 कि0मी0
3 फीट = 0.90 मीटर
$2\frac{1}{2}$ फीट = 0.75 मीटर
$1\frac{1}{2}$ फीट = 45.00 से0मी0
2 फीट = 60.00 से0मी0

पृष्ठ सं0 302

$3\frac{1}{2}$ मील = 5.04 कि0मी0
$55\frac{1}{2}$ मील = 79.92 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील = 1.08 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
2 मील = 2.88 कि0मी0
$2\frac{3}{4}$ मील = 3.96 कि0मी0
59 मील = 84.96 कि0मी0
10 मील = 14.00 कि0मी0
1 मील = 1.44 कि0मी0
$5\frac{1}{4}$ मील = 7.57 कि0मी0
6 मील = 8.64 कि0मी0
67 मील = 96.48 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील = 3.24 कि0मी0
13 मील = 18.72 कि0मी0
80 मील = 115.20 कि0मी0
16 गज = 14.40 मीटर
10 गज = 9.00 मीटर
17382 फीट = 5214.60 मीटर
3 फीट = 0.90 मीटर
4 फीट = 1.20 मीटर

पृष्ठ सं0 303

$\frac{1}{2}$ मील = 0.72 कि0मी0
$1\frac{1}{4}$ मील = 1.80 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील = 3.60 कि0मी0
$4\frac{1}{4}$ मील = 6.12 कि0मी0

$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
$5\frac{1}{2}$ मील	=	7.92 कि0मी0
96 मील	=	138.24 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
50 गज	=	45.00 मीटर
5 गज	=	4.50 मीटर
20 गज	=	18.00 मीटर
2 फीट	=	0.60 मीटर
$2\frac{1}{2}$ फीट	=	0.75 मीटर
12 फीट	=	3.60 मीटर
6 फीट	=	1.80 मीटर
7 फीट	=	2.10 मीटर
3 फीट	=	0.90 मीटर

पृष्ठ सं0 304

$11\frac{3}{4}$ मील	=	16.92 कि0मी0
$4\frac{1}{4}$ मील	=	6.12 कि0मी0
112 मील	=	161.28 कि0मी0
13 मील	=	18.72 कि0मी0
8 मील	=	11.52 कि0मी0
133 मील	=	191.52 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$6\frac{1}{4}$ मील	=	9.00 कि0मी0
$9\frac{1}{2}$ मील	=	13.68 कि0मी0
$16\frac{1}{2}$ मील	=	23.76 कि0मी0
153 मील	=	220.76 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
$3\frac{1}{4}$ मील	=	4.68 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
162 मील	=	233.28 कि0मी0
$8\frac{1}{2}$ मील	=	12.24 कि0मी0
180 मील	=	259.20 कि0मी0
16 मील	=	23.04 कि0मी0
196 मील	=	282.24 कि0मी0
21 मील	=	30.24 कि0मी0
$14\frac{1}{4}$ मील	=	20.52 कि0मी0
$8\frac{3}{4}$ मील	=	12.60 कि0मी0
23 मील	=	33.12 कि0मी0
10 मील	=	14.40 कि0मी0

पृष्ठ सं0 305

21 मील	=	30.24 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$7\frac{1}{2}$ मील	=	10.80 कि0मी0
$8\frac{1}{4}$ मील	=	11.88 कि0मी0
74 मील	=	106.56 कि0मी0
15 मील	=	21.60 कि0मी0
12 मील	=	17.28 कि0मी0
27 मील	=	38.88 कि0मी0
14 मील	=	20.16 कि0मी0
41 मील	=	59.04 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0
56 मील	=	80.64 कि0मी0
5 मील	=	7.20 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
71 मील	=	102.24 कि0मी0
12880 फीट	=	3864.00 मीटर
22510 फीट	=	6753.00 मीटर
20700 फीट	=	6210.00 मीटर
22300 फीट	=	6690.00 मीटर
25640 फीट	=	7692.00 मीटर

पृष्ठ सं0 306

59 मील	=	84.96 कि0मी0
$28\frac{3}{4}$ मील	=	41.40 कि0मी0
$87\frac{3}{4}$ मील	=	126.36 कि0मी0
9 मील	=	12.96 कि0मी0
$18\frac{1}{2}$ मील	=	26.64 कि0मी0

$9\frac{1}{2}$ मील	=	13.68 कि0मी0
7 मील	=	10.08 कि0मी0
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
173 मील	=	249.12 कि0मी0
$15\frac{1}{2}$ मील	=	22.32 कि0मी0
34 मील	=	48.96 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
$4\frac{1}{2}$ मील	=	6.48 कि0मी0
$38\frac{1}{2}$ मील	=	55.44 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
$47\frac{1}{2}$ मील	=	68.40 कि0मी0
$8\frac{1}{4}$ मील	=	11.88 कि0मी0
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$11\frac{1}{2}$ मील	=	16.56 कि0मी0
59 मील	=	84.96 कि0मी0
6 मील	=	8.64 कि0मी0
$28\frac{3}{4}$ मील	=	41.40 कि0मी0
200 गज	=	180.00 मीटर
5260 फीट	=	1578.00 मीटर
5300 फीट	=	1590.00 मीटर
7200 फीट	=	2160.00 मीटर
4 फीट	=	1.20 मीटर
12 फीट	=	3.60 मीटर
225 फीट	=	67.50 मीटर
150 फीट	=	45.00 मीटर

पृष्ठ सं0 307

$8\frac{1}{2}$ मील	=	12.24 कि0मी0
$67\frac{1}{2}$ मील	=	97.20 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
$2\frac{1}{4}$ मील	=	3.24 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
8 मील	=	11.52 कि0मी0
$75\frac{1}{2}$ मील	=	108.72 कि0मी0
1 मील	=	1.44 कि0मी0
2 मील	=	2.88 कि0मी0
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.77 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$9\frac{1}{2}$ मील	=	13.68 कि0मी0
6 फलांग	=	1.08 कि0मी0
2 फलांग	=	0.36 कि0मी0
9200 फीट	=	2760.00 मीटर
11730 फीट	=	3519.00 मीटर
12320 फीट	=	3696.00 मीटर
14000 फीट	=	4200 मीटर
13860 फीट	=	4158.00 मीटर
17000 फीट	=	5100.00 मीटर
11730 फीट	=	3519.00 मीटर
500 फीट	=	150.00 मीटर

पृष्ठ सं0 308

$8\frac{1}{4}$ मील	=	11.88 कि0मी0
$83\frac{3}{4}$ मील	=	120.60 कि0मी0
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि0मी0
4 मील	=	5.76 कि0मी0
$87\frac{3}{4}$ मील	=	126.36 कि0मी0
3 मील	=	4.32 कि0मी0
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि0मी0
1 फलांग	=	180.00 मीटर
12015 फीट	=	3604.50 मीटर
12729 फीट	=	3818.70 मीटर
14350 फीट	=	4305.00 मीटर
150 फीट	=	45.00 मीटर
$7\frac{1}{2}$ फीट	=	2.25 मीटर
4 फीट	=	1.20 मीटर
1 फीट	=	30.00 से0मी0

पृष्ठ सं० 309

2 मील	=	2.88 कि०मी०
3 मील	=	4.32 कि०मी०
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि०मी०
2 फर्लांग	=	0.36 कि०मी०
3 फर्लांग	=	0.54 कि०मी०

पृष्ठ सं० 310

77 मील	=	110.88 कि०मी०
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि०मी०
$3\frac{1}{2}$ मील	=	5.04 कि०मी०
20 मील	=	28.80 कि०मी०
24 मील	=	34.56 कि०मी०
50 मील	=	72.00 कि०मी०
12 मील	=	17.28 कि०मी०
27 मील	=	38.88 कि०मी०
1 फर्लांग	=	180.00 कि०मी०

पृष्ठ सं० 311

27 मील	=	38.88 कि०मी०
51 मील	=	73.44 कि०मी०
21 मील	=	30.24 कि०मी०
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि०मी०
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि०मी०
8 मील	=	11.52 कि०मी०
59 मील	=	84.96 कि०मी०
2 मील	=	2.88 कि०मी०
67 मील	=	96.48 कि०मी०
$1\frac{1}{2}$ मील	=	2.16 कि०मी०
5 मील	=	7.20 कि०मी०
75 मील	=	108.00 कि०मी०
1 मील	=	1.44 कि०मी०
4 मील	=	5.76 कि०मी०
$5\frac{1}{2}$ मील	=	7.92 कि०मी०
16 मील	=	23.04 कि०मी०
19 मील	=	27.36 कि०मी०

पृष्ठ सं० 312

2 मील	=	2.88 कि०मी०
77 मील	=	110.88 कि०मी०
$\frac{1}{2}$ मील	=	0.72 कि०मी०
$\frac{3}{4}$ मील	=	1.08 कि०मी०
1 मील	=	1.44 कि०मी०
$2\frac{1}{2}$ मील	=	3.60 कि०मी०
$1\frac{1}{2}$ फीट	=	0.45 मीटर

पृष्ठ सं० 313

6 मील	=	8.64 कि०मी०

:: पैमाना ::

यहाँ पाठकों की सुविधा के लिए पैमाना दे देना उपयुक्त होगा।

1 मील = 1.44 कि०मी०

1 मील =1600 गज = 1440 मीटर

1 फर्लांग = 200 गज=180 मीटर

1 गज = 90 से०मी०

1 पौंड =453.59 ग्राम

1 औंस = $\frac{1}{16}$ पौंड =437.5 ग्रेन = 28.412 मि०ली० = 28.35 ग्राम

1 ग्रेन =0.0648 ग्रा०

1 मि०ग्रा० = $\frac{1}{60}$ ग्रेन

1 ड्राम = 60 बूँद, (60 ग्रेन), 8 ड्राम = 1 औंस

1 मन =38.400 कि०ग्रा०

1 सेर = 960 ग्रा०

1 छटाँक = 60 ग्राम